संभोग से समाधि की और—(1)

Posted on सितम्बर 5, 2010by sw anand prashad



संभोग से समाधि की और--ओशो

संभोग : परमात्मा की सृजन-ऊर्जा—(भाग–1)

मेरे प्रिय आत्मन,

प्रेम क्या है?

जीना और जानना तो आसान है, लेकिन कहना बहुत कठिन है। जैसे कोई मछली से पूछे कि सागर क्या है? तो मछली कह सकती है, यह है सागर, यह रहा चारों और , वही है। लेकिन कोई पूछे कि कहो क्या है, बताओ मत, तो बहुत कठिन हो जायेगा मछली को। आदमी के जीवन में जो भी श्रेष्ठ है, सुन्दर है, और सत्य है; उसे जिया जा सकता है, जाना जा सकता है। हुआ जा सकता है। लेकिन कहना बहुत कठिन बहुत मुश्किल है।/

और दुर्घटना और दुर्भाग्य यह है कि जिसमें जिया जाना चाहिए, जिसमें हुआ जाना चाहिए, उसके संबंध में मनुष्य जाति पाँच छह हजार साल से केवल बातें कर रही है। प्रेम की बात चल रही है, प्रेम के गीत गाये जा रहे है। प्रेम के भजन गाये जा रहे है। और प्रेम मनुष्य के जीवन में कोई स्थान नहीं है।

अगर आदमी के भीतर खोजने जायें तो प्रेम से ज्यादा असत्य शब्द दूसरा नहीं मिलेगा। और जिन लोगों ने प्रेम को असत्य सिद्ध कर दिया है और जिन्होंने प्रेम की समस्त धाराओं को अवरूद्ध कर दिया है.....ओर बड़ा दुर्भाग्य यह है कि लोग समझते है कि वे ही प्रेम के जन्मदाता है।

धर्म-प्रेम की बातें करता है, लेकिन आज तक जिस प्रकार का धर्म मनुष्य जाति के ऊपर दुर्भाग्य की भांति छाया हुआ है। उस धर्म ने मनुष्य के जीवन से प्रेम के सारे द्वार बंद कर दिये है। और न उस संबंध में पूरब और पश्चिम में फर्क है न हिन्दुस्तान और न अमरीका में कोई फर्क है।

मनुष्य के जीवन में प्रेम की धारा प्रकट ही पायी। और नहीं हो पायी तो हम दोष देते है कि मनुष्य ही बुरा है, इसलिए नहीं प्रकट हो पाया। हम दोष देते है कि यह मन ही जहर है, इसलिए प्रकट नहीं हो पायी। मन जहर नहीं है। और जो लोग मन को जहर कहते रहे है, उन्होंने ही प्रेम को जहरीला कर दिया,प्रेम को प्रकट नहीं होने दिया है।

मन जहर हो कैसे सकता है? इस जगत में कुछ भी जहर नहीं है। परमात्मा के इस सारे उपक्रम में कुछ भी विष नहीं है, सब अमृत है। लेकिन आदमी ने सारे अमृत को जहर कर लिया है और इस जहर करेने में शिक्षक, साधु, संत और तथाकथित धार्मिक लोगों का सबसे ज्यादा हाथ है।

इस बात को थोड़ा समझ लेना जरूरी है। क्योंकि अगर यह बात दिखाई न पड़े तो मनुष्य के जीवन में कभी भी प्रेम...भविष्य में भी नहीं हो सकेगा। क्योंकि जिन कारणों से प्रेम नहीं पैदा हो सका है, उन्ही कारणों को हम प्रेम प्रकट करने के आधार ओर कारण बना रहे है।

हालतें ऐसी है कि गलत सिद्धांतों को अगर हजार वर्षों तक दोहराया जाये तो फिर यह भूल ही जाते है कि सिद्धांत गलत है। और दिखाई पड़ने लगता है कि आदमी गलत है। क्योंकि वह उन सिद्धांतों को पूरा नहीं कर पा रहा है।

मैंने सुना है, एक सम्राट के महल के नीचे से एक पंखा बेचने वाला गुजरता था। और जोर से चिल्ला रहा था कि अनूठे और अद्भुत पंखे मैंने निर्मित किये है। ऐसे पंखे कभी नहीं बनाये गये। ये पंखे कभी देखे भी नहीं गये है। सम्राट ने खिड़की से झांक कर देखा कि कौन है। जो अनूठे पंखे ले आया है। सम्राट के पास सब तरह के पंखे थे—दुनिया के कोने-कोने में जो मिल सकते थे। और नीचे देखा, गलियारे में खड़ा हुआ एक आदमी है, साधारण दो-दो पैसे के पंखे होंगे और चिल्ला रहा है—अनूठे, अद्वितीय।

उस आदमी को ऊपर बुलाया गया और पूछा गया, इन पंखों में ऐसी क्या खूबी है? दाम क्या है इन पंखों के? उस पंखे वाले ने कहा कि महाराज, दाम ज्यादा नहीं है। पंखे को देखते हुए दाम कुछ भी नहीं है। सिर्फ सौ रूपये का पंखा है।

सम्राट ने कहा, सौ रूपये का, यह दो पैसे का पंखा, जो बजार में जगह-जगह मिलता है, और सौ रूपये दाम। क्या है इसकी खूबी?

उस आदमी ने कहां ये पंखा सौ वर्ष चलता है सौ वर्ष के लिए गारंटी है। सौ वर्ष से कम में खराब नहीं होता हे।

सम्राट ने कहा, इसको देख कर तो ऐसा नहीं लगता है, कि सप्ताह भी चल जाये पूरा तो मुश्किल है। धोखा देने की कोशिश कर रहे हो? सरासर बेईमानी और वह भी सम्राट के सामने।

उस आदमी ने कहा,आप मुझे भली भांति जानते है। इसी गलियारे में रोज पंखे बेचता हूं। सौ रूपये दाम है इसके और सौ वर्ष न चले तो जिम्मेदार मै हूं। रोज तो नीचे मौजूद होता हूं। फिर आप सम्राट है, आपको धोखा देकर जाऊँगा कहां?

वह पंखा खरीद लिया गया। सम्राट को विश्र्वास तो न था। लेकिन आश्चर्य भी था कि यह आदमी सरासर झूठ बोल रहा है, किस बल पर बोल रहा है। पंखा सौ रूपये में खरीद लिया गया और उससे कहा गया कि सातवें दिन तुम उपस्थित हो जाना।

दो चार दिन में पंखे की डंडी बहार निकल गई। सातवें दिन तो वह बिलकुल मुर्दा हो गया। लेकिन सम्राट ने सोचा शायद पंखे वाला आयेगा नहीं।

लेकिन ठीक सातवें दिन वह पंखे वाला हाजिर हो गया और उसने कहा: कहो महाराज, उन्होंने कहा: कहना नहीं है,यह पंखा पडा हुआ है टूटा हुआ। यह सात दिन में ही यह गति हो गयी। तुम कहते थे, सौ साल चलेगा। पागल हो या धोखेबाज? क्या हो?

उस आदमी ने कहा कि 'मालूम होत है आपको पंखा झलना नहीं आता। पंखा तो सौ साल चलता ही। पंखा तो गारन्टीड है। आप पंखा झलते कैसे थे?

सम्राट ने कहा, और भी सुनो,अब मुझे यह भी सीखना पड़ेगा कि पंखा कैसे किया जाता है।

उस आदमी ने कहां की कृपा कर के बतलाईये की इस पंखे की ऐसी गति सात दिन में ऐसी कैसे बना दी आपने? किस भांति पंखा किया है?

सम्राट ने पंखा उठाकर करके दिखाया कि इस भांति मैंने पंखा किया है।

तो उस आदमी ने कहा कि समझ गया भूल। इस तरह नहीं किया जाता पंखा।

सम्राट ने कहा तो किस तरह किया जाता है। और क्या तरिका है पंखा झलने का?

उस आदमी ने कहां कि ‘पंखा पकड़ी ये सामने और सिर को हिलाइयें। पंखा सौ वर्ष चलेगा। आप समाप्त हो जायेंगे,लेकिन पंखा बचेगा। पंखा गलत नहीं है। आपके झलने का ढंग गलत है।

यह आदमी पैदा हुआ है—पाँच छह जार, दस हजार वर्ष की संस्कृति का यह आदमी फल है। लेकिन संस्कृति गलत नहीं है, यह आदमी गलत है। आदमी मरता जा रहा है रोज और संस्कृति की दुहाई चलती चली जाती है। कि महान संस्कृति महान धर्म, महान सब कुछ। और उसका यह फल है आदमी। और उसी संस्कृति से गुजरा है और परिणाम है उसका लेकिन नहीं आदमी गलत है और आदमी को बदलना चाहिए अपने को।

और कोई कहने की हिम्मत नहीं उठाता कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि दस हजार वर्षो में जो संस्कृति और धर्म आदमी को प्रेम से नहीं भर पाय, वह संस्कृति और धर्म गलत तो नहीं है। और अगर दस हजार वर्षों में आदमी प्रेम से नहीं भर पाया तो आगे कोई संभावना है, इस धर्म और इसी संस्कृति के आधार पर की आदमी कभी प्रेम से भा जाए?

दस हजार साल में जो नहीं हो पाय, वह आगे भी दस हजार वर्षों में होने वाला नहीं है। क्योंकि आदमी यही है, कल भी यही होगा आदमी हमेशा से यही है, और हमेशा यही होगा। और संस्कृति और धर्म जिनके हम नारे दिये चले जा रहे है, और संत और महात्मा जिनकी दुहाइयां दिये चले जा रहे है। सोचने के लिए भी तैयार नहीं है कि कहीं बुनियादी चिंतन की दिशा ही तो गलत नहीं है?

मैं कहना चाहता हूं कि वह गलत है। और गलत—सबूत है यह आदमी। और क्या सबूत होता है गलत का?

एक बीज को हम बोये और फल ज़हरीले और कड़वे हो तो क्या सिद्ध होता है? सिद्ध होता है कि वह बीज जहरीला और कड़वा रहा होगा। हालांकि बीज में पता लगाना मुश्किल है कि उससे जो फल पैदा होगें,वे कड़वे पैदा होंगे। बीज में कुछ खोजबीन नहीं की जा सकती। बीज को तोड़ो-फोड़ो कोई पता नहीं चल सकता है कि इससे जो फल पैदा होते होंगे। वे कड़वे होंगे। बीज को बोओ,सौ वर्ष लग जायेंगे—वृक्ष होगा, बड़ा होगा,आकाश में फैलेगा, तब फल आयेंगे और तब पता चलेगा कि वे कड़वे है।

दस हजार वर्ष में संस्कृति और धर्म के जो बीज बोये गये है, वह आदमी उसका फल है। और यह कड़वा है। और घृणा से भरा हुआ है। लेकिन उसी की दुहाई दिये चले जाते है हम और सोचते है उसमे प्रेम हो जायगा। मैं आपसे कहना चाहता हूं,उससे प्रेम नहीं हो सकता है।

क्योंकि प्रेम के पैदा होने की जो बुनियादी संभावना है, धर्मों ने उसकी ही हत्या कर दी है। और उसमें जहर घोल दिया है।

मनुष्य से भी ज्यादा प्रेम पशु और पक्षियों और पौधों में दिखाई पड़ता है; जिनके पास न कोई संस्कृति है, न कोई धर्म है, संस्कृत और संस्कृति और सभ्य मनुष्यों की बजाय असभ्य और जंगल के आदमी में ज्यादा प्रेम दिखाई पड़ता है। जिसके पास न कोई विकसित धर्म है, न कोई सभ्यता है, न कोई संस्कृति है। जितना आदमी सभ्य, सुसंस्कृत और तथा कथित धर्मों के प्रभाव में मन्दिर ओर चर्च में पार्थना करने लगता है, उतना ही प्रेम से शून्य क्यों होता चला जाता है।

जरूर कुछ कारण है। और दो कारणों पर मैं विचार करना चाहता हूं। अगर वे ख्याल में आ जाएं तो प्रेम के अवरूद्ध स्त्रोत फूट सकते है। और प्रेम की गंगा बह सकती है। वह हर आदमी के भीतर है उसे कहीं से लाना नहीं है।

प्रेम कोई ऐसी बात नहीं है कि कहीं खोजने जाना है उसे। वह प्राणों की प्यास है प्रत्येक के भीतर, वह प्राणों की सुगंध है प्रत्येक के भीतर। लेकिन चारों तरफ परकोटा है उसके और वह प्रकट नहीं हो पाता। सब तरफ पत्थर की दीवाल है और वह झरने नहीं फूट पाते। तो प्रेम की खोज और प्रेम की साधना कोई पाजीटिव, कोई विधायक खोज और साधना नहीं है कि हम जायें और कही प्रेम सीख लें।

एक मूर्तिकार एक पत्थर को तोड़ रहा था। कोई देखने गया थ कि मूर्ति कैसे बनायी जाती है। उसने देखा कि मूर्ति तो बिलकुल नहीं बनायी जा रही है। सिर्फ छैनी और हथौड़े से पत्थर तोड़ा जा रहा था। उस आदमी ने पूछा ''यह क्या कर रहे हो, मूर्ति नहीं बनाओगे, मैं तो मूर्ति बनाते देखने के लिया आया था, आप तो केवल पत्थर तोड़ रहे है।''

और उस मूर्ति कार ने कहा कि मूर्ति तो पत्थर के भीतर छिपी है, उसे बनाने की जरूरत नहीं है, सिर्फ उसके ऊपर जो व्यर्थ पत्थर जुड़ा है उसे अलग कर देने की जरूरत है और मूर्ति प्रकट हो जायेगी। मूर्ति बनायी नही जाती है मूर्ति सिर्फ आविष्कृत होती है। डिस्क वर होती है। अनावृत होती है, उघाड़ी जाती है।

मनुष्य के भीतर प्रेम छिपा है, सिर्फ उघाड़ने की बात है। उसे पैदा करने का सवाल नहीं है। अनावृत करने की बात है। कुछ है, जो हमने ऊपर ओढा हुआ है। जो उसे प्रकट नहीं होने देता?

एक चिकित्सक से जाकर आप पूछे कि स्वास्थ क्या है? और दुनियां का कोई चिकित्सक नहीं बता सकता है कि स्वास्थ क्या है। बड़े आश्चर्य कि बात है। स्वास्थ पर ही तो सारा चिकित्सा शास्त्र खड़ा है। सारी मेडिकल साइंस खड़ी है। और कोई नहीं बात सकता है कि स्वास्थ क्या है। लेकिन चिकित्सक से पूछो कि स्वास्थ क्या है। तो वह कहेगा, बीमारियों के बाबत हम बात सकते है कि बीमारियां क्या है, उनके लक्षण हमें पता है। एक-एक बीमारी की अलग-अलग परिभाषा हमें पता है। स्वास्थ? स्वास्थ का हमें कोई भी पता नहीं है। इतना हम कहा सकते है कि जब कोई बीमारी नहीं होती है। वह स्वास्थ्य है। स्वास्थ्य तो मनुष्य के भीतर छिपा है। इसलिए मनुष्य की परिभाषा के बाहर है। बीमारी बहार से आती है। इसलिए बाहर से परिभाषा की जा सकती है। स्वास्थ्य भीतर से आता है। कोई भी परिभाषा नहीं की जा सकती है। इतना ही हम कह सकते है कि बीमारियों का अभाव स्वास्थ्य है। लेकिन यह क्या स्वास्थ्य कि परिभाषा हुई? स्वास्थ्य के संबंध में तो हमने कुछ भी नहीं कहा। कहा है बीमारियां नहीं है। तो बीमारियों के संबंध में कहा। सच यह है कि स्वास्थ्य पैदा नहीं करना होता हे। यह तो छिप जाता है बीमारियों में या हट जात है तो प्रकट हो जाता है। स्वास्थ्य हममें हे।

स्वास्थ्य हमारा स्वभाव है।

प्रेम हममें है, प्रेम हमारा स्वभाव है।

इसलिए यह बात गलत है कि मनुष्य को समझाया जाए कि तुम प्रेम पैदा करो। सोचना यह है कि प्रेम पैदा क्यों नहीं हो पा रहा है। क्या बाधा है, अड़चन क्या है, रूकावट कहां डाल दी गई है। अगर कोई भी रूकावट न हो तो प्रेम प्रगट होता ही, उसे सिखाने की और समझाने की कोई भी जरूरत नहीं है।

अगर मनुष्य के ऊपर गलत संस्कृति और गलत संस्कार की धाराएं और बाधाएं न हों, तो हर आदमी प्रेम को उपलब्ध होगा ही। यह अनिवार्यता है। प्रेम से कोई बच ही नहीं सकता। प्रेम स्वभाव है।

गंगा बहती है हिमालय से। बहेगी गंगा, उसके प्राण है। उसके पास जल है। वह बहेगी और सागर को खोज ही लेगी। न किसी पुलिस वाले से पूछेगी, न किसी पुरोहित से पूछेगी कि सागर कहां है। देखा किसी गंगा को चौरास्ते पर खड़े होकर पुलिस वाले से पूछते कि सागर कहां है? उसके प्राणों में ही छिपी है सागर की खोज। और ऊर्जा है तो पहाड़ तोड़गी, मैदान तोड़गी, और पहुंच जायेगी सागर तक। सागर कितना ही दूर हो, कितना ही छिपा हो, खोज ही लेगी। और कोई रास्ता नहीं है। कोई गाईड़ बुक नहीं है। कि जिससे पता लगा ले कि कहां से जान है। लेकिन पहुंच जाती है।

लेकिन बाँध बना दिये जाएं,चारों और परकोटे उठा दिये जाएं? प्रकृति की बाधाओं को तो तोड़कर गंगा सागर तक पहुंच जाती है। लेकिन आदमी की इंजीनियरिंग की बाधाएं खड़ी कर दी जाएं तो हो सकता है कि गंगा सागर तक न पहुंच पाए यह भेद समझ लेना जरूरी है।

प्रकृति की कोई भी बाधा असल में बाधा नहीं है, इसलिए गंगा सागर तक पहुंच जाती है। हिमालय को काटकर पहुंच जाती है। लेकिन अगर आदमी ईजाद करे,इंतजाम करे,तो गंगा को सागर तक नहीं भी पहुंचने दे सकता है।

प्रकृति को तो एक सहयोग है, प्रकृति तो एक हार्मनी हे। वहां जो बाधा भी दिखाई पड़ती है, वह भी शायद शक्ति को जगाने के लिए चुनौती है। वह जो विरोध भी दिखाई पड़ता है, वह भी शायद भीतर प्राणों में जो छिपा है, उसे प्रकट करने के लिए बुलावा है। वहां हम बीज को दबाते हैं जमीन में। दिखाई पड़ता है कि जमीन की एक पर्त बीज के ऊपर पड़ी है, बाधा दे रही है। अगर वह पर्त न हो ती तो बीज अंकुरित भी नहीं हो पाएगा। ऐसा दिखाई पड़ता है कि एक पर्त जमीन की बीज को नीचे दबा रही है। लेकिन वह पर्त दबा इसलिए रही है। ताकि बीज दबे, गले और टूट जाये और अंकुरित हो जाये। ऊपर से दिखायी पड़ता है कि वह जमीन बाधा दे रही है। लेकिन वह जमीन मित्र है और सहयोग कर रही है बीज को प्रकट करने में।

प्रकृति तो एक हार्मनी है, एक संगीत पूर्ण लयबद्धता है। (क्रमश: अगले अंक में..........पढे।

–ओशो
संभोग से समाधि की और

भारतीय विद्या भवन,बम्बई,

28 अगस्त 1968,

प्रवचन—1

संभोग से समाधि की और—2

Posted on सितम्बर 6, 2010by sw anand prashad

संभोग से समाधि की ओर--ओशो

संभोग : परमात्मा की सृजन-ऊर्जा—(2)

लेकिन आदमी ने जो-जो निसर्ग के ऊपर इंजीनियरिंग की है, जो-जो उसने अपने अपनी यांत्रिक धारणाओं को ठोकने की और बिठाने की कोशिश की है, उससे गंगाए रूक गयी है। जगह-जगह अवरूद्ध हो गयी है। और फिर आदमी को दोष दिया जा रहा है। किसी बीज को दोष देने की जरूरत नहीं है। अगर वह पौधा न बन पाया, तो हम कहेंगे कि जमीन नहीं मिली होगी ठीक से, पानी नहीं मिला होगा ठीक से। सूरज की रोशनी नहीं मिली होगी ठीक से।

लेकिन आदमी के जीवन में खिल न पाये फूल प्रेम का तो हम कहते है कि तुम हो जिम्मेदार। और कोई नहीं कहता कि भूमि नहीं मिली होगी, पानी नहीं मिला होगा ठीक से, सूरज की रोशनी नहीं मिली होगी ठीक से। इस लिए वह आदमी का पौधा अवरूद्ध हो गया, विकसित नहीं हो पाया, फूल तक नहीं पहुंच पाया।
मैं आपसे कहना चाहता हूं कि बुनियादी बाधाएं आदमी ने खड़ी की है। प्रेम की गंगा तो बह सकती है और परमात्मा के सागर तक पहुंच सकती है। आदमी बना इसलिए है कि वह बहे और प्रेम बढ़े और परमात्मा तक पहुंच जाये। लेकिन हमने कौन सी बाधाएं खड़ी कर ली?

पहली बात, आज तक मनुष्य की सारी संस्कृति यों ने सेक्स का, काम का, वासना का विरोध किया है। इस विरोध ने मनुष्य के भीतर प्रेम के जन्म की संभावना तोड़ दी, नष्ट कर दी। इस निषेध ने....क्योंकि सचाई यह है कि प्रेम की सारी यात्रा का प्राथमिक बिन्दु काम है, सेक्स है।

प्रेम की यात्रा का जन्म, गंगो त्री—जहां से गंगा पैदा होगी प्रेम की—वह सेक्स है, वह काम है।

और उसके सब दुश्मन है। सारी संस्कृतियां,और सारे धर्म, और सारे गुरु और सारे महात्मा–तो गंगो त्री पर ही चोट कर दी। वहां रोक दिया। पाप है काम, जहर है काम, अधम है काम। और हमने सोचा भी नहीं कि काम की ऊर्जा ही, सेक्स एनर्जी ही, अंतत: प्रेम में परिवर्तित होती है और रूपांतरित होती है।

प्रेम का जो विकास है, वह काम की शक्ति का ही ट्रांसफॉमेंशन है। वह उसी का रूपांतरण है।

एक कोयला पडा हो और आपको ख्याल भी नहीं आयेगा कि कोयला ही रूपांतरित होकर हीरा बन जाता है। हीरे और कोयले में बुनियादी रूप से कोई फर्क नहीं है। हीरे में भी वे ही तत्व है, जो कोयले में है। और कोयला ही हजारों साल की प्रक्रिया से गुजर कर हीरा बन जाता है। लेकिन कोयले की कोई कीमत नहीं है, उसे कोई घर में रखता भी है तो ऐसी जगह जहां कि दिखाई न पड़े। और हीरे को लोग छातियों पर लटकाकर घूमते है। जिससे की वह दिखाई पड़े। और हीरा और कोयला एक ही है, लेकिन कोई दिखाई नहीं पड़ता है कि इन दोनों के बीच अंतर-संबंध है, एक यात्रा है। कोयले की शक्ति ही हीरा बनती है। अगर आप कोयले के दुश्मन हो गये—जो कि हो जाना बिलकुल आसान है। क्योंकि कोयले में कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता है—तो हीरे के पैदा होने की संभावना भी समाप्त हो गयी, क्योंकि कोयला ही हीरा बन सकता है।

सेक्स की शक्ति ही, काम की शक्ति ही प्रेम बनती है।

लेकिन उसके विरोध में—सारे दुश्मन है उसके, अच्छे आदमी उसके दुश्मन है। और उसके विरोध में प्रेम के अंकुर भी नहीं फूटने दिये है। और जमीन से, प्रथम से, पहली सीढ़ी से नष्ट कर दिया भवन को। फिर वह हीरा नहीं पाता कोयला, क्योंकि उसके बनने के लिए जो स्वीकृति चाहिए,जो उसका विकास चाहिए जो उसको रूपांतरित करने की प्रक्रिया चाहिए, उसका सवाल ही नहीं उठता। जिसके हम दुश्मन हो गये, जिसके हम शत्रु हो गये, जिससे हमारी द्वंद्व की स्थिति बन गयी हो और जिससे हम निरंतर लड़ने लगे—अपनी ही शक्ति से आदमी को लड़ा दिया गया है। सेक्स की शक्ति से आदमी को लड़ा दिया गया है। और शिक्षाऐं दी जाती है कि द्वंद्व छोड़ना चाहिए, कानफ्लिक्ट्स छोड़नी चाहिए, लड़ना नहीं चाहिए। और सारी शिक्षाऐं बुनियाद में सिखा रही है कि लड़ों।

मन जहर है तो मन से लड़ों। जहर से तो लड़ना पड़ेगा। सेक्स पाप है तो उससे लड़ों। और ऊपर से कहा जा रहा है कि द्वंद्व छोड़ो। जिन शिक्षाओं के आधार पर मनुष्य द्वंद्व से भर रहा है। वे ही शिक्षाऐं दूसरी तरफ कह रही है कि द्वंद्व छोड़ो। एक तरफ आदमी को पागल बनाओ और दूसरी तरफ पागलख़ाने खोलों कि बीमारियों का इलाज यहां किया जाता है। एक बात समझ लेना जरूरी है इस संबंध।

मनुष्य कभी भी काम से मुक्त नहीं हो सकता। काम उसके जीवन का प्राथमिक बिन्दु है। उसी से जन्म होता है। परमात्मा ने काम की शक्ति को ही, सेक्स को ही सृष्टि का मूल बिंदू स्वीकार किया है। और परमात्मा जिसे पाप नहीं समझ रहा है, महात्मा उसे पाप बात रहे है।

अगर परमात्मा उसे पाप समझता है तो परमात्मा से बड़ा पापी इस पृथ्वी पर, इस जगत में इस विश्व में कोई नहीं है।

फूल खिला हुआ दिखाई पड़ रहा है। कभी सोचा है कि फूल का खिल जाना भी सेक्सुअल ऐक्ट है, फूल का खिल जाना भी काम की एक घटना है, वासना की एक घटना है। फूल में है क्या—उसके खिल जाने में? उसके खिल जाने में कुछ भी नहीं है। वे बिंदु है पराग के, वीर्य के कण है जिन्हें तितलियों उड़ा कर दूसरे फूलों पर ले जाएंगी और नया जन्म देगी।

एक मोर नाच रहा है—और कवि गीत गा रहा है। और संत भी देख कर प्रसन्न हो रहा हे—लेकिन उन्हें ख्याल नहीं कि नृत्य एक सेक्सुअल ऐक्ट है। मोर पुकार रहा है अपनी प्रेयसी को या अपने प्रेमी को। वह नृत्य किसी को रिझाने के लिए है? पपीहा गीत गा रहा है, कोयल बोल रही है, एक आदमी जवान हो गया है, एक युवती सुन्दर होकर विकसित हो गयी है। ये सब की सब सेक्सुअल एनर्जी की अभिव्यंजना है। यह सब का सब काम का ही रूपांतरण है। यह सब का सब काम की ही अभिव्यक्त,काम की ही अभिव्यंजना है।

सारा जीवन, सारी अभिव्यक्ति सारी फ्लावरिगं काम की है।

और उस काम के खिलाफ संस्कृति और धर्म आदमी के मन में जहर डाल रहे है। उससे लड़ाने की कोशिश कर रहे है। मौलिक शक्ति से मनुष्य को उलझा दिया है। लड़ने के लिए, इसलिए मनुष्य दीन-हीन, प्रेम से रिक्त और खोटा और ना-कुछ हो गया है।

काम से लड़ना नहीं है, काम के साथ मैत्री स्थापित करनी है और काम की धारा को और ऊचाई यों तक ले जाना है।

किसी ऋषि ने किसी बधू को नव वर और वधू को आशीर्वाद देते हुए कहा था कि तेरे दस पुत्र पैदा हो और अंतत: तेरा पति ग्यारहवां पुत्र बन जाये।

वासना रूपांतरित हो तो पत्नी मां बन सकती है।

वासना रूपांतरित हो तो काम प्रेम बन सकता है।

लेकिन काम ही प्रेम बनता है, काम की ऊर्जा ही प्रेम की ऊर्जा में विकसित होती है।

लेकिन हमने मनुष्य को भर दिया है, काम के विरोध में। इसका परिणाम यह हुआ है कि प्रेम तो पैदा नहीं हो सका, क्योंकि वह तो आगे का विकास था, काम की स्वीकृति से आता है।

प्रेम तो विकसित नहीं हुआ और काम के विरोध में खड़े होने के कारण मनुष्य का चित ज्यादा कामुक हो गया, और सेक्सुअल होता चला गया। हमारे सारे गीत हमारी सारी कविताएं हमारे चित्र, हमारी पेंटिंग, हमारे मंदिर, हमारी मूर्तियां सब घूम फिर कर सेक्स के आस पास केंद्रित हो गयी है। हमार मन ही सेक्स के आसपास केंद्रित हो गया है। इस जगत में कोई भी पशु मनुष्य की भांति सेक्सुअल नही है। मनुष्य चौबीस घंटे सेक्सुअल हो गया है। उठते-बैठते, सोते जागते,सेक्स ही सब कुछ हो गया है। उसके प्राण में एक घाव हो गया है—विरोध के कारण, दुश्मनी के कारण, शत्रुता के कारण। जो जीवन का मूल था, उससे मुक्त तो हुआ नहीं जा सकता था। लेकिन उससे लड़ने की चेष्टा में सारा जीवन रूग्ण जरूर हो सकता था, वह रूग्ण हो गया है।

और यह जो मनुष्य जाति इतनी कामुक दिखाई पड़ रही है, इसके पीछे तथाकथित धर्मों और संस्कृति का बुनियादी हाथ है। इसके पीछे बुरे लोगों का नहीं, सज्जनों और संतों का हाथ है। और जब तक मनुष्य जाति सज्जनों और संतों के अनाचार से मुक्त नहीं होगी तब तक प्रेम के विकास की कोई संभावना नहीं है।

मुझे एक घटना याद आती है। एक फकीर अपने घर से निकला था। किसी मित्र के पास मिलने जा रहा था। निकला है घोड़े पर चढ़ा हुआ है, अचानक उसके बचपन का एक दोस्त घर आकर सामने खड़ा हो गया है। उसने कहा कि दोस्त, तुम घर पर रुको, बरसों से प्रतीक्षा करता था कि तुम आओगे तो बैठेंगे और बात करेंगे। और दुर्भाग्य कि मुझे किसी मित्र से मिलने जाना है। मैं वचन दे चुका हूं। वो वहां मेरी राह ताकता होगा। मुझे वहां जाना ही होगा। घण्टे भर में जल्दी से जल्दी लोट कर आने की कोशिश करूंगा। तुम तब तक थोड़ा विश्राम कर लो।

उसके मित्र ने कहा मुझे तो चैन नहीं है, अच्छा होगा कि मैं तुम्हारे साथ ही चला चलू। लेकिन उसने कहा कि मेरे कपड़े गंदे हो गये है। रास्ते की धूल के कारण, अगर तुम्हारे पास कुछ अच्छे कपड़े हो तो दे दो मैं पहन लूं। और साथ हो जाऊँ।

निश्चित था उस फकीर के पास। किसी सम्राट ने उसे एक बहुमूल्य कोट, एक पगड़ी और एक धोती भेंट की थी। उसने संभाल कर रखी थी कि कभी जरूरत पड़ेगी तो पहनूंगा। वह जरूरत नहीं आयी। निकाल कर ले आया खुशी में।

मित्र ने जब पहन लिए तब उसे थोड़ी ईर्ष्या पैदा हुई। मित्र ने पहनी तो मित्र सम्राट मालूम होने लगा। बहुमूल्य कोट था, पगड़ी थी, धोती थी, शानदार जूते थे। और उसके सामने ही वह फकीर बिलकुल नौकर-चाकर दीन-हीन दिखाई पड़ने लगा। और उसने सोचा कि यह तो बड़ी मुशिकल हो गई, यह तो गलत हो गया। जिनके घर मैं जा रहा हूं,उन सब का ध्यान इसी पर

जायेगा। मेरी तरह तो कोई देखेगा भी नहीं। अपने ही कपड़े....ओर आज अपने ही कपड़ों के कारण मैं दीन-हीन हो जाऊँगा। लेकिन बार-बार मन को समझाता कि मुझे ऐसा नहीं सोचना चाहिए मैं तो एक फकीर हूं—आत्मा परमात्मा की बातें करने वाला। क्या रखा है कोट में,पगड़ी में,पगड़ी में छोड़ो। पहने रहने दो। कितना फर्क पड़ता है। लेकिन जितना समझाने की कोशिश की ,कोट-पगड़ी, में क्या रखा है—कोट,पगड़ी,कोट पगड़ी ही उसके मन में घूमने लगी।

मित्र दूसरी बात करने लगा। लेकिन वह भीतर तो....ऊपर कुछ और दूसरी बातें कर रहा है,लेकिन वहां उसका मन नहीं है। भीतर उसके बस कोट और पगड़ी। रास्ते पर जो भी आदमी देखता, उसको कोई नहीं देखता। मित्र की तरफ सबकी आंखें जाती। वह बड़ी मुश्किल में पड़ गया यह तो आज भूल कर ली—अपने हाथों से भूल कर ली।

जिनके घर जाना था, वहां पहुंचा। जाकर परिचय दिया कि मेरे मित्र है जमाल, बचपन के हम दोस्त हे, बहुत प्यारे आदमी है। और फिर अचानक अनजाने मुंह से निकल गया कि रह गये कपड़े मेरे है। क्योंकि मित्र भी, जिनके घर गये थे, वह भी उसके कपड़ों को देख रहा था। और भीतर उसके चल रहा था कोट-पगड़ी,मेरी कोट-पगड़ी। और उन्हीं की वजह से मैं परेशान हो रहा हूं। निकल गया मुंह से की रह गये कपड़े, कपड़े मेरे है।

मित्र भी हैरान हुआ। घर के लोग भी हैरान हुए कि यह क्या पागलपन की बात है। ख्याल उसको भी आया बोल जाने के बाद। तब पछताया कि ये तो भूल हो गई। पछताया तो और दबाया अपने मन को। बाहर निकल कर क्षमा मांगने लगा कि क्षमा कर दो, गलती हो गयी। मित्र ने कहा, कि मैं तो हैरान हुआ कि तुमसे निकल कैसे गया। उसने कहा कुछ नहीं, सिर्फ जूबान थी चुक गई। हालांकि की जबान की चूक कभी भी नहीं होती। भीतर कुछ चलता होता है, तो कभी-कभी बेमौके जबान से निकल जाता है। चुक कभी नहीं होती है, माफ कर दो, भूल हो गई। कैसे यह क्या ख्याल आ गया, कुछ समझ में नहीं आता है। हालांकि पूरी तरह समझ में आ रहा था ख्याल कैसे आया है।

दूसरे मित्र के घर गये। अब वह तय करता है रास्ते में कि अब चाहे कुछ भी हो जाये, यह नहीं कहना है कि कपड़े मेरे है। पक्का कर लेता है अपने मन को। घर के द्वार पर उसने जाकर बिल्कुल दृढ़ संकल्प कर लिया कि यह बात नहीं उठानी है कि कपड़े मेरे है। लेकिन उस पागल को पता नहीं कि वह जितना ही दृढ़ संकल्प कर रहा है इस बात का, वह दृढ़ संकल्प बता रहा है, इस बात को कि उतने ही जोर से उसके भीतर यह भावना घर कर रही है कि ये कपड़े मेरे है।

आखिर दृढ़ संकल्प किया क्यों जाता है?

एक आदमी कहता है कि मैं ब्रह्मचर्य का दृढ़ व्रत लेता हूं, उसका मतलब है कि उसके भीतर कामुकता दृढता से धक्के मार रही है। नहीं तो और कारण क्या है? एक आदमी कहता है कि मैं कसम खाता हूं कि आज से कम खाना खाऊंगा। उसका मतलब है कि कसम खानी पड़ रही है। ज्यादा खानें का मन है उसका। और तब अनिवार्य रूपेण द्वंद्व पैदा होता है। जिससे हम लड़ना चाहते है, वहीं हमारी कमजोरी है। और तब द्वंद्व पैदा हो जाना स्वाभाविक है।

वह लड़ता हुआ दरवाजे के भीतर गया, संभल-संभल कर बोला कि मेरे मित्र है। लेकिन जब वह बोल रहा है, तब उसको कोई भी नहीं देख रहा है। उसके मित्र को उस धर के लोग देख रहे है। तब फिर उसे ख्याल आया—मेरा कोट, मेरी पगड़ी। उसने कहा कि दृढ़ता से कसम खायी है। इसकी बात ही नहीं उठानी है। मेरा क्या है—कपड़ा-लत्ता। कपड़े लत्ते किसी के होत है। यह तो सब संसार है, सब तो माया है। लेकिन यह सब समझ रहा है। लेकिन असलियत तो बाहर से भीतर,भीतर से बाहर हो रही है। समझाया कि मेरे मित्र है, बचपन के दोस्त है, बहुत प्यारे आदमी है। रह गये कपड़े उन्ही के है, मेरे नहीं है। पर घर के लोगो को ख्याल आया कि ये क्या–-''कपड़े उन्हीं के है, मेरे नहीं है'' —आज तक ऐसा परिचय कभी देखा नही गया था।

बाहर निकल कर माफ़ी मांगने लगा कि बड़ी भूल हुई जो रही है, मैं क्या करूं, क्या न करूं, यह क्या हो गया है मुझे। आज तक मेरी जिंदगी में कपड़ों ने इस तरह से मुझे पकड़ लिया है। पहले तो ऐसे कभी नहीं पकड़ा था। लेकिन अगर तरकीब उपयोग में करें तो कपड़े भी पकड़ सकते है। मित्र ने कहा, मैं जाता नहीं तुम्हारे साथ। पर वह हाथ जोड़ने लगा कि नहीं ऐसा मत करो। जीवन भर के लिए दुःख रह जायेगा की मैंने क्या दुर्व्यवहार किया। अब मैं कसम खाता हूं की कपड़े की बात ही नहीं उठाऊंगा। मैं बिलकुल भगवान की कसम खाता हूं। कपड़ों की बात ही नहीं उठानी।

आकर कसम खाने वालों से हमेशा सावधान रहना जरूरी है, क्योंकि जो भी कसम खाता है, उसके भीतर उस कसम से भी मजबूत कोई बैठा है। जिसके खिलाफ वह कसम खा रहा है। और वह जो भीतर बैठा है, वह ज्यादा भीतर है। कसम ऊपर है और बाहर है। कसम चेतन मन से खायी गयी है। ओ जो भीतर बैठा है हव अचेतन की परतों तक समाया हुआ है। अगर मन के दस हिस्से कर दें तो कसम एक हिस्से ने खाई है। नौ हिस्सा उलटा भीतर खड़ा हुआ है। ब्रह्मचर्य की कसमें एक हिस्सा खा रहा है मन का और नौ हिस्सा परमात्मा की दुहाई दे रहा है। वह जो परमात्मा ने बनाया है, वह उसके लिए ही कहे चले जा रहा है।

गये तीसरे मित्र के घर। अब उसने बिलकुल ही अपनी सांसों तक का संयम कर रखा है।

संयम आदमी बड़े खतरनाक होते है। क्योंकि उनके भीतर ज्वालामुखी उबल रहा है, ऊपर से वह संयम साधे हुए है।

और इस बात को स्मरण रखना कि जिस चीज को साधना पड़ता है—साधने में इतना श्रम लग जाता है कि साधना पूरे वक्त हो नहीं सकती। फिर शिथिल होना पड़ेगा, विश्राम करना पड़ेगा। अगर मैं जोर से मुट्ठी बाँध लूं तो कितनी देर बाँधे रह सकता हूं। चौबीस घंटे, जितनी जोर से बाधूंगा उतना ही जल्दी थक जाऊँगा और मुट्ठी खुल जायेगी। जिस चीज में भी श्रम करना पड़ता है जितना ज्यादा श्रम करना पड़ता है उतनी जल्दी थकान आ जाती है। शक्ति खत्म हो जाती है। और उल्टा होना शुरू हो जाता है। मुट्ठी बांधी जितनी जोर से , उतनी ही जल्दी मुट्ठी खुल जायेगी। मुट्ठी खुली रखी जा सकती है। लेकिन बाँध कर नहीं रखी जा सकती है। जिस काम में श्रम पड़ता है उस काम को आप जीवन नहीं बना सकते। कभी सहज नहीं हो सकता है वह काम। श्रम पड़ेगा तो फिर विश्राम का वक्त आयेगा ही।

इसलिए जितना सधा संत है उतना ही खतरनाक आदमी होता है। क्योंकि उसके विश्राम का वक्त आयेगा। चौबीस घंटे भी तो उसे शिथिल होना ही पड़ेगा। उसी बीच दुनिया भी के पाप उसके भीतर खड़े हो जायेंगे। नर्क सामने आ जायेगा।

तो उसने बिलकुल ही अपने को सांस-सांस रोक लिया और कहा कि अब कसम खाता हूं इन कपड़ों की बात ही नहीं करनी।

लेकिन आप सोच लें उसकी हालत, अगर आप थोड़े बहुत भी धार्मिक आदमी होंगे, तो आपको अपने अनुभव से भी पता चल सकता है। उसकी क्या हालत हुई होगी। अगर आपने कसम खायी हो, व्रत लिए हों संकल्प साधे हों तो आपको भली भांति पता होगा कि भीतर क्या हालत हो जाती है।

भीतर गया। उसके माथे से पसीना चूँ रहा था। इतना श्रम पड़ रहा है। मित्र डरा हुआ है उसके पसीने को देखकर। उसकी सब नसें खिंची हुई है। वह बाल रहा है एक-एक शब्द कि मेरे मित्र है, बड़े पुराने दोस्त है। बहुत अच्छे आदमी है। और एक क्षण को वह रुका। जैसे भीतर से कोई जोर का धक्का आया हो और सब बह गया। बाढ़ आ गयी हो और सब बह गया हो। और उसने कहा कि रह गयी कपड़ों की बात, तो मैंने कसम खा ली है कि कपड़ों की बात ही नहीं करनी है।

तो यह जो आदमी के साथ हुआ है वह पूरी मनुष्य जाति के साथ सेक्स के संबंध में हो गया है। सेक्स को औब्सैशन बना दिया है। सेक्स को रोग बना दिया है, धाव बना दिया है और सब विषाक्त कर दिया है।

छोटे-छोटे बच्चों को समझाया जा रहा है कि सेक्स पाप है। लड़कियों को समझाया जा रहा है, लड़कों को समझाया जो रहा के सेक्स पाप है। फिर वह लड़की जवान होती है। इसकी शादी होती है, सेक्स की दुनिया शुरू होती है। और इन दोनों के भीतर यह भाव है कि यह पाप है। और फिर कहा जायेगा स्त्री को कि पति को परमात्मा मानों। जो पाप में ले जा रहा है। उसे परमात्मा कैसे माना जा सकता है। यह कैसे संभव है कि जो पाप में घसीट रहा है वह परमात्मा है। और उस लड़के से कहा जायेगा उस युवक को कहा जायेगा कि तेरी पत्नी है, तेरी साथिन है, तेरी संगिनी है। लेकिन वह नर्क में ले जा रही है। शास्त्रों में लिखा है कि स्त्री नर्क का द्वार है। यह नर्क का द्वार संगी और साथिनी, यह मेरा आधा अंग—यह नर्क का द्वार। मुझे उसे में धकेल रहा है। मेरा आधा अंग। इस के साथ कौन सा सामंजस्य बन सकता है।

सारी दुनिया का दाम्पत्य जीवन नष्ट किया है इस शिक्षा ने। और जब दम्पति का जीवन नष्ट हो जाये तो प्रेम की कोई संभावना नहीं है। क्योंकि वह पति और पत्नी प्रेम न करें सकें एक दूसरे को जो कि अत्यन्त सहज और नैसर्गिक प्रेम है। तो फिर कौन और किसको प्रेम कर सकेगा। इस प्रेम को बढ़ाया जा सकता है। कि पत्नी और पति का प्रेम इतना विकसित हो, इतना उदित हो इतना ऊंचा बने कि धीरे-धीरे बाँध तोड़ दे और दूसरों तक फैल जाये। यह हो सकता है। लेकिन इसको समाप्त ही कर दिया जाये,तोड़ ही दिया जाये, विषाक्त कर दिया जाये तो फैलेगा क्या, बढ़ेगा क्या?

—ओशो

संभोग से समाधि की और—(3)

Posted on सितम्बर 7, 2010by sw anand prashad

संभोग से समाधि की और--ओशो

संभोग : परमात्मा की सृजन उर्जा—3

रामानुज एक गांव से गुजर रहे थे। एक आदमी ने आकर कहा कि मुझे परमात्मा को पाना है। तो उन्होंने कहां कि तूने कभी किसी से प्रेम किया है? उस आदमी ने कहा की इस झंझट में कभी पडा ही नहीं। प्रेम वगैरह की झंझट में नहीं पडा। मुझे तो परमात्मा का खोजना है।

रामानुज ने कहा: तूने झंझट ही नहीं की प्रेम की? उसने कहा, मैं बिलकुल सच कहता हूं आपसे।

वह बेचारा ठीक ही कहा रहा था। क्योंकि धर्म की दुनिया में प्रेम एक डिस्कवालिफिकेशन है। एक अयोग्यता है।
तो उसने सोचा की मैं कहूं कि किसी को प्रेम किया था, तो शायद वे कहेंगे कि अभी प्रेम-व्रेम छोड़, वह राग-वाग छोड़,पहले इन सबको छोड़ कर आ, तब इधर आना। तो उस बेचारे ने किया भी हो तो वह कहता गया कि मैंने नहीं किया है। ऐसा कौन आदमी होगा,जिसने थोड़ा बहुत प्रेम नहीं किया हो?

रामानुज ने तीसरी बार पूछा कि तू कुछ तो बता, थोड़ा बहुत भी, कभी किसी को? उसने कहा, माफ करिए आप क्यों बार-बार वही बातें पूछे चले जा रहे है? मैंने प्रेम की तरफ आँख उठा कर नहीं देखा। मुझे तो परमात्मा को खोजना है।

तो रामानुज ने कहा: मुझे क्षमा कर, तू कहीं और खोज। क्योंकि मेरा अनुभव यह है कि अगर तूने किसी को प्रेम किया हो तो उस प्रेम को फिर इतना बड़ा जरूर किया जा सकता है कि वह परमात्मा तक पहुंच जाए। लेकिन अगर तूने प्रेम ही नहीं किया है तो तेरे पास कुछ है नहीं जिसको बड़ा किया जा सके। बीज ही नहीं है तेरे पास जो वृक्ष बन सके। तो तू जा कहीं और पूछ।

और जब पति और पत्नी में प्रेम न हो, जिस पत्नी ने अपने पति को प्रेम न किया हो और जिस पति ने अपनी पत्नी को प्रेम न किया हो, वे बेटों को, बच्चों को प्रेम कर सकते है। तो आप गलत सोच रहे है। पत्नी उसी मात्रा में बेटे को प्रेम करेगी, जिस मात्रा में उसने अपने पति को प्रेम किया है। क्योंकि यह बेटा पति का फल है: उसका ही प्रति फलन है, उसका ही रीफ्लैक्शन है। यह एक बेटे के प्रति जो प्रेम होने वाला है, वह उतना ही होगा,जितना उसके पति को चहा और प्रेम किया है। यह पति की मूर्ति है, जो फिर से नई होकर वापस लौट आयी है। अगर पति के प्रति प्रेम नहीं है, तो बेटे के प्रति प्रेम सच्चा कभी भी नहीं हो सकता है। और अगर बेटे को प्रेम नहीं किया गया—पालन पोसना और बड़ा कर देना प्रेम नहीं है— तो बेटा मां को कैसे कर सकता है। बाप को कैसे कर सकता है।

यह जो यूनिट है जीवन का—परिवा, वह विषाक्त हो गया है। सेक्स को दूषित कहने से, कण्डेम करने से, निन्दित करने से।

और परिवार ही फैल कर पुरा जगत है विश्व है।

और फिर हम कहते है कि प्रेम बिलकुल दिखाई नहीं पड़ता है। प्रेम कैसे दिखाई पड़ेगा? हालांकि हर आदमी कहता है कि मैं प्रेम करता हूं। मां कहती है, पत्नी कहती है, बाप कहता है, भाई कहता है। बहन कहती है। मित्र कहते है। कि हम प्रेम करते है। सारी दुनिया में हर आदमी कहता है कि हम प्रेम करते है। दुनिया में इकट्ठा देखो तो प्रेम कहीं दिखाई ही नहीं पड़ता। इतने लोग अगर प्रेम करते है। तो दुनिया में प्रेम की वर्षा हो जानी चाहिए, प्रेम की बाढ़ आ जानी चाहिए, प्रेम के फूल खिल जाने चाहिए थे। प्रेम के दिये ही दिये जल जाते। घर-घर प्रेम का दीया होता तो दूनिया में इकट्ठी इतनी प्रेम की रोशनी होती की मार्ग आनंद उत्सव से भरे होते।

लेकिन वहां तो घृणा की रोशनी दिखाई पड़ती है। क्रोध की रोशनी दिखाई पड़ती है। युद्धों की रोशनी दिखाई पड़ती है। प्रेम का तो कोई पता नहीं चलता। झूठी है यह बात और यह झूठ जब तक हम मानते चले जायेंगे,जब तक सत्य की दिशा में खोज भी नहीं हो सकती। कोई किसी को प्रेम नहीं कर रहा।

और जब तक काम के निसर्ग को परिपूर्ण आत्मा से स्वीकृति नहीं मिल जाती है, तब तक कोई किसी को प्रेम कर ही नहीं सकता। मैं आपसे कहाना चाहता हूं कि काम दिव्य है, डिवाइन है।

सेक्स की शक्ति परमात्मा की शक्ति है, ईश्वर की शक्ति है।

और इसलिए तो उससे ऊर्जा पैदा होती है। और नये जीवन विकसित होते है। वही तो सबसे रहस्यपूर्ण शक्ति है, वहीं तो सबसे ज्यादा मिस्टीरियस फोर्स है। उससे दुश्मनी छोड़ दें। अगर आप चाहते है कि कभी आपके जीवन में प्रेम की वर्षा हो जाये तो उससे दुश्मनी छोड़ दे। उसे आनंद से स्वीकार करें। उसकी पवित्रता को स्वीकार करें, उसकी धन्यता को स्वीकार करें। और खोजें उसमें और गहरे और गहरे—तो आप हैरान हो जायेंगे। जितनी पवित्रता से काम की स्वीकृति होगी, उतना ही काम पवित्र होता हुआ चला जायेगा। और जितना अपवित्रता और पाप की दृष्टि से काम का विरोध होगा, काम उतना ही पाप-पूर्ण और कुरूप होता चला जायेगा।

जब कोई अपनी पत्नी के पास ऐसे जाये जैसे कोई मंदिर के पास जा रहा है। जब कोई पत्नी अपने पति के पास ऐसे जाये जैसे सच में कोई परमात्मा के पास जा रहा हो। क्योंकि जब दो प्रेमी काम से निकट आते है जब वे संभोग से गुजरते है तब सच में ही वे परमात्मा के मंदिर के निकट से गुजर रह है। वहीं परमात्मा काम कर रहा है, उनकी उस निकटता में। वही परमात्मा की सृजन-शक्ति काम कर रही है।

और मेरी अपनी दृष्टि यह है कि मनुष्य को समाधि का, ध्यान का जो पहला अनुभव मिला है कभी भी इतिहास में,तो वह संभोग के क्षण में मिला है और कभी नहीं। संभोग के क्षण में ही पहली बार यह स्मरण आया है आदमी को कि इतने आनंद की वर्षा हो सकती है।

और जिन्होंने सोचा, जिन्होंने मेडिटेट किया, जिन लोगों ने काम के संबंध पर और मैथुन पर चिंतन किया और ध्यान किया, उन्हें यह दिखाई पडा कि काम के क्षण में, मैथुन के क्षण में मन विचारों से शून्य हो जाता है। एक क्षण को मन के सारे विचार रूक जाते है। और वह विचारों का रूक जाना और वह मन का ठहर जाना ही आनंद की वर्षा का कारण होता है।

तब उन्हें सीक्रेट मिल गया, राज मिल गया कि अगर मन को विचारों से मुक्त किया जा सके किसी और विधि से तो भी इतना ही आनंद मिल सकता है। और तब समाधि और योग की सारी व्यवस्थाएं विकसित हुई। जिनमें ध्यान और सामायिक और मेडिटेशन और प्रेयर (प्रार्थना) इनकी सारी व्यवस्थाएं विकसित हुई। इन सबके मूल में संभोग का अनुभव है। और फिर मनुष्य को अनुभव हुआ कि बिना संभोग में जाये भी चित शून्य हो सकता है। और जा रस की अनुभूति संभोग में हुई थी। वह बिना संभोग के भी बरस सकती है। फिर संभोग क्षणिक हो सकता है। क्योंकि शक्ति और उर्जा का वहाँ बहाव और निकास है। लेकिन ध्यान सतत हो सकता है।

तो मैं आपसे कहना चाहता हूं, कि एक युगल संभोग के क्षण में जिस आनंद को अनुभव करता है, उस आनंद को एक योगी चौबीस घंटे अनुभव कर सकता है। लेकिन इन दोनों आनंद में बुनियादी विरोध नहीं है। और इसलिए जिन्होंने कहा कि विषया नंद और ब्रह्मानंद भाई-भाई है। उन्होंने जरूर सत्य कहा है। वह सहोदर है, एक ही उदर से पैदा हुए है, एक ही अनुभव से विकसित हुए है। उन्होंने निश्चित ही सत्य कहां है।

तो पहला सूत्र आपसे कहना चाहता हूं। अगर चाहते है कि पता चले कि प्रेम क्या है—तो पहला सूत्र है काम की पवित्रता, दिव्यता, उसकी ईश्वरीय अनुभूति की स्वीकृति होगी। उतने ही आप काम से मुक्त होते चले जायेगे। जितना अस्वीकार होता है, उतना ही हम बँधते है। जैसा वह फकीर कपड़ों से बंध गया था।

जितना स्वीकार होता है उतने हम मुक्त होते है।

अगर परिपूर्ण स्वीकार है, टोटल एक्सेप्टेबिलिटी है जीवन की, जो निसर्ग है उसकी तो आप पाएंगे.....वह परिपूर्ण स्वीकृति को मैं आस्तिकता व्यक्ति को मुक्त करती है।

नास्तिक मैं उनको कहता हूं, जो जीवन के निसर्ग को अस्वीकार करते है, निषेध करते है। यह बुरा है, पाप है, यह विष है, यह छोड़ो , वह छोड़ो। जो छोड़ने की बातें कर रहे है, वह ही नास्तिक है।

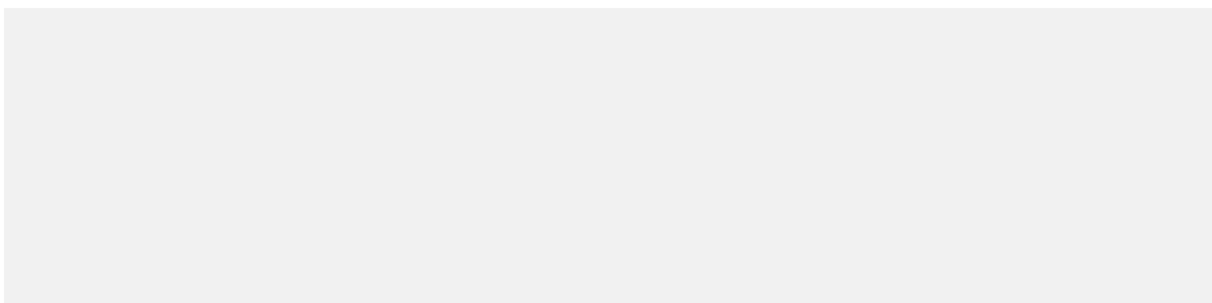
जीवन जैसा है, उसे स्वीकार करो और जीओं उसकी परिपूर्णता में। वही परिपूर्णता रोज-रोज सीढ़ियां ऊपर उठती जाती है। वही स्वीकृति मनुष्य को ऊपर ले जाती है। और एक दिन उसके दर्शन होते है,जिसका काम में पता भी नहीं चलता था। काम अगर कोयला था तो एक दिन हीरा भी प्रकट होता है प्रेम का। तो पहला सूत्र यह है।

दूसरा सूत्र आपसे कहना चाहता हूं, और वह दूसरा सूत्र संस्कृति ने, आज तक की सभ्यता ने और धर्मों ने हमारे भीतर मजबूत किया है। दूसरा सूत्र भी स्मरणीय है, क्योंकि पहला सूत्र तो काम की ऊर्जा को प्रेम बना देगा। और दूसरा सूत्र द्वार की तरह रोके हुए है उस ऊर्जा को बहने से—वह बह नहीं पायेगी। (क्रमश: अगल अंक में पढ़े.......)

—ओशो

संभोग से समाधि की और— (4)

Posted on सितम्बर 8, 2010by sw anand prashad



संभोग से समाधि की ओर--ओशो

संभोग : परमात्मा की सृजन-ऊर्जा—4

वह दूसरा सूत्र है मनुष्य का यह भाव कि 'मैं हूं', ''ईगो'', उसका अहंकार, कि मैं हूं। बुरे लोग तो कहते है कि मैं हूं। अच्छे लोग और जोर से कहते है ''मैं हूं''—और मुझे स्वर्ग जाना है

और मोक्ष जाना है और मुझे यह करना है और मुझे वह करना है। कि मैं हूं—वह ''मैं'' खड़ा है वहां भीतर।

और जिस आदमी का ''मैं'' जितना मजबूत होगा, उतनी ही उस आदमी की सामर्थ्य दूसरे से संयुक्त हो जाने की कम होती है। क्योंकि ''मैं'' एक दीवान है, एक घोषणा है कि ''मैं हूं''। मैं की घोषणा कह देती है; तुम-तुम हो, मैं-मैं हूं। दोनों के बीच फासला है। फिर मैं कितना ही प्रेम करूं और आपको अपनी छाती से लगा लूं, लेकिन फिर भी हम दो है। छातियां कितनी ही निकट आ जायें। फिर भी बीच मैं फासला है—मैं से तुम तक का। तुम-तुम हो मैं-मैं ही हूं। इसलिए निकटता अनुभव भी निकट नहीं ला पाते। शरीर पास बैठ जाते है। आदमी दूर बने रहते है। जब तक भीतर ''मैं'' बैठा हुआ है, तब तक ''दूसरे'' का भाव नष्ट नहीं होता।
सार्त्र ने कहीं एक अद्‌भुत वचन कहा है। कहा है कि ''दि अदर इज़ हेल'' वह जो दूसरा है वह नर्क है। लेकिन सार्त्र ने यह नहीं कहा कि ''व्हाई दी अदर इज़ अदर'' वह दूसरा-दूसरा क्यों है। वह दूसरा-दूसरा इसलिए है के मैं-मैं हूं। और जब मैं ''मैं'' हूं दूनिया में हर चीज दूसरी है, भिन्न है। और जब तक भिन्नता है, तब तक प्रेम का अनुभव नहीं हो सकता।

प्रेम है एकात्म का अनुभव।

प्रेम है इस बात का अनुभव कि गिर गयी दीवाल और दो ऊर्जाऐं मिल गयीं और संयुक्त हो गयी।

जब यही अनुभव एक व्यक्ति और समस्त के बीच फलित होता है। तो उस अनुभव को मैं कहता हूं—परमात्मा। और जब दो व्यक्ति के बीच फलित होता है तो मैं उसे कहता हूं—प्रेम।

अगर मेरे और किसी दूसरे व्यक्ति के बीच यह अनुभव फलित हो जाये कि हमारी दीवालें गिर जायें, हम किसी भीतर के तल पर एक हो जायें; एक संगीत, एक धारा एक प्राण, तो यह अनुभव है प्रेम।

और ऐसा ही अनुभव मेरे और समस्त के बीच घटित हो जाये कि मैं विलीन हो जाऊँ और सब और मैं एक हो जाऊँ तो यह अनुभव है परमात्मा।

इसलिए मैं कहता हूं कि प्रेम है सीढ़ी और परमात्मा है उस यात्रा की अंतिम मंजिल। यह कैसे संभव है कि दूसरा मिट जाए, जब तक मैं न मिटू? जब तक दूसरा कैसे मिट सकता है? वह दूसरा पैदा किया है मेरे ''मैं'' की प्रतिध्वनि ने। जितना जोर से मैं चिल्लाता हूं के मैं, उतने ही जोर से वह दूसरा पैदा हो जाता है। वह दूसरा प्रतिध्वनि है, उस तरफ 'इको' हो रह है मेरे ''मैं'' की। और यह अंहकार,यह ''ईगो'' द्‌वार पर दीवाल बनकर खड़ी है।

और 'मैं' है क्या? कभी सोचा आपने यह 'मैं' है क्या? आपका हाथ है; ''मैं'', आपका पैर है, आपका मस्तिष्क है, आपका ह्रदय है, क्या है आपका मैं?

अगर आप एक क्षण भी शांत होकर भीतर खोजने जायेंगे कि कहां है ''मैं'' कौन सी चीज है मैं, तो आप एक दम हैरान रह जायेगे कि भीतर कोई ''मैं'' खोज से मिलने का नहीं है। जितना गहरा खोजते जाओगे, उतना ही पाओगे, कि भीतर एक सन्नाटा और शून्य है, वहां कोई मैं नहीं है, वहां कोई ''आई'' वहां कोई ''ईगो'' नहीं है।

एक भिक्षु हुआ नाग सेन उसे एक दिन सम्राट मिलिन्द ने निमंत्रण दिया था कि तुम आओ दरबार में। जो राजदूत गया था निमंत्रण देने, उसने नाग सेन को कहा कि भिक्षु नाग सेन, आपको बुलाया है सम्राट मिलिन्द ने। मैं निमंत्रण देने आया हूं। तो नाग सेन कहने लगा, मैं चलूंगा जरूर; लेकिन एक बात विनय कर दूँ; पहले ही कह दूँ कि भिक्षु नाग सेन जैसा कोई है नहीं। यह केवल एक नाम है, कामचलाऊ नाम। आप कहते है तो मैं चलूंगा जरूर,लेकिन ऐसा कोई आदमी कहीं है नहीं।

राज दूत ने जाकर सम्राट को कहा की बड़ा अजीब आदमी है वह। वह कहने लगा कि मैं चलूंगा जरूर,लेकिन ध्यान रहे कि भिक्षु नाग सेन जैसा कहीं कोई है नहीं, यह केवल एक कामचलाऊ नाम है। सम्राट ने कहा, अजीब सी बात है, जब वह कहता है, मैं चलूंगा। आयेगा वह।

वह आया भी रथ र बैठकर। सम्राट ने द्वार पर स्वागत किया और कहा भिक्षु नाग सेन, हम स्वागत करते है आपका।

वह हंसने लगा। उसने कहा,स्वागत स्वीकार करता हूं। लेकिन स्मरण रहे भिक्षु नाग सेन जैसा कोई आदमी नहीं है।

सम्राट कहने लगा बड़ी अजीब पहली है। आगर आप-आप नहीं है तो कौन है? कौन आया है इस रथ पर बैठ कर, कौन स्वागत स्वीकार रहा है, कौन दे रहा है उत्तर?

नाग सेन मुड़ा और उसने कहा, देखते है, सम्राट मिलिन्द, यह रथ खड़ा है जिस पर मैं बैठ कर आय हूं। सम्राट ने कहां, हाँ यह रथ है। तो भिक्षु ने कहां की घोड़ों को निकला कर अलग कर दिया जाये, घोड़े अलग कर दिये, तब भिक्षु नाग सेन ने सम्राट से पूछा की क्या ये घोड़ रथ है?

सम्राट ने कहां, घोड़े रथ कैसे हो सकते है? घोड़े अलग कर दिये गये, सामने के डंडे जिनसे घोड़े बंधे थे, खिंचवा लिए गये।

उसने पूछा क्या ये रथ है?

सिर्फ दो डंडे रथ कैसे हो सकते है? डंडे अलग कर दिये गये, चाक निकलवा दिये गये, और एक-एक अंग रथ का निकलता चला गया। और एक-एक अंग पर सम्राट को कहना पडा कि नहीं, ये रथ नहीं है। फिर आखिर पीछे शून्य बच गया, वहां कुछ भी नहीं बचा।

भिक्षु नाग सेन पूछने लगा, रथ कहां है अब? रथ कहा है अब, और जितनी चीजें मैंने निकालीं, तुमने कहा ये भी रथ नहीं, ये भी रथ नहीं, ये रथ गया कहां, अब ये रथ कहां है?

तो सम्राट चौक कर खड़ा हो गया—रथ एक जोड़ था। रथ कुछ चीजों का संग्रह-मात्र था। रथ का अपना होना नही है, कोई ''ईगो'' नहीं है। रथ एक जोड़ है।

आप खोजें कहां है आपका ''मैं'' और आप पायेंगे कि अनंत शक्तियों के एक जोड़ है; मैं कहीं भी नहीं है। और एक-एक अंग आप सोचते चले जायें तो एक-एक अंग समाप्त होता चला जाता है, फिर पीछे शून्य रह जाता है। उसी शून्य से प्रेम का जन्म होता है। क्योंकि वह शून्य आप नहीं है वह शून्य परमात्मा है।

एक आदमी ने गांव में एक मछलियों की दूकान खोली थी। बड़ी दुकान थी। उस गांव में पहली दुकान थी। तो उसने एक बहुत खूबसूरत तख्ती बनवायी और उस पर लिखवाया—"फ्रेश फिश सोल्ड हियर"—यहां ताजी मछलियाँ बेची जाती है।

पहले ही दिन दुकान खुला और एक आदमी आया ओर कहने लगा, "फ्रेश फिश सोल्ड हियर"? ताजी मछलियाँ? कहीं बासी मछलियाँ भी बेची जाती है? ताजा लिखने की क्या जरूरत है?

दुकानदार ने सोचा कि बात तो ठीक है। इससे और व्यर्थ बातों का ख्याल पैदा होता है। उसने "फ्रेश" अलग कर दिया, ताजा अलग कर दिया। तख्ती रह गयी "फिश सोल्ड हियर" मछलियाँ बेची जाती है। मछलियाँ यहां बेची जाती है।

दूसरे दिन एक बूढ़ी औरत आयी और उसने कहां कि मछलियाँ यहां बेची जाती है—"फिश सोल्ड हियर" कहीं और भी बेची जाती है।

तो उस आदमी ने कहा की यह ”हियर” बिलकुल फिजूल है, उसने तख्ती पर से एक शब्द और अलग कर दिया। रह गया ”फिश सोल्ड”।

तीसरे दिन एक आदमी आया और कहने लगा ”फिश सोल्ड” मछलियाँ बेची जाती है? मुफ्त में देते हो क्या?

आदमी ने कहा, यह ”सोल्ड” भी खराब है, उसने सोल्ड को भी अलग कर दिया। अब रह गई ”फिश”

अगले दिन एक बूढ़ा आदमी आया और कहने लगा, ”फिश”? अंधे को भी मीलों दूर से पता चल जाता है, कि यहां मछलियाँ मिलती है। ये तख्ती काहे को लटका रखी है ?

''फिश'' भी चली गयी। खाली तख्ती रह गई।

अगले दिन एक आदमी आया, वह कहने लगा, यह तख्ती किस लिए लगी है? दूर से देखने में पता नहीं चलता की यहां दुकान भी है। यह तख्ती दुकान की आड़ करती है। उस दिन वह तख्ती भी चली गई। वहां अब कुछ भी नहीं रहा। इलीमिनेशन होता गया। एक-एक चीज हटती चली गयी। पीछे जो शेष रह गया वह है, शुन्य।

उस शुन्य से प्रेम का जन्म होता है, क्योंकि उस शून्य में दूसरे के शून्य से मिलने की क्षमता है। सिर्फ शून्य ही शून्य से मिल सकता है, और कोई नहीं। दो शून्य मिल सकते है। दो व्यक्ति नहीं। दो इन्डीवीज्युल नहीं मिल सकते; दो वैक्यूम, दो एमप्टीनेसेस मिल सकते है; क्योंकि बाधा अब कोई नहीं है। शून्य की कोई दीवाल नहीं होती और हर चीज की दीवाल होती है।

तो दूसरी बात स्मरणीय है कि व्यक्ति जब मिटता है, नहीं रह जाता,पाता है कि ''हूं'' है ही नहीं। तो है, वह ''मैं नहीं है, जो है वह ''सब'' है। तब द्वार गिरता है, दीवाल टूटती है,है,ब वह गंगा बहती है, जो भीतर छिपी है और तैयार है। वह शून्य की प्रतीक्षा कर रही है। कि कोई शून्य हो जाये तो उससे बह उठूं।

हम एक कुआं खोदते है, पानी भीतर है। पानी कहीं से लाना नहीं होता है। लेकिन बीच में मिट्टी-पत्थर पड़े है। उनको निकलना है, करते क्या है हम? करते है हम—एक शून्य बनाते है, एक खाली जगह बनाते है। एक एमप्टीनेस बनाते है। कुआं खोदने का मतलब है: खाली जगह बनाना, ताकि खाली जगह में जो भीतर छीपा हुआ है, पानी, वह प्रकट हो जाये, स्पेस पा

जाये। वह भीतर है, उसको जगह चाहिए प्रकट होने को । जगह नहीं मिल रही है। भरा हुआ है कुआं मिट्टी पत्थर हमने अलग कर दिये, वह पानी उबल कर बाहर आ गया।

आदमी के भीतर प्रेम भरा हुआ है, स्पेस चाहिए,जगह चाहिए, जहां वह प्रकट हो जाये।

और हम भरे हुए है अपने को ''मैं'' से। और आदमी चिल्लाये चला जा रहा है ''मैं''। और स्मरण रखें जब आपकी आत्मा चिल्लाती है मैं, तब तक आप मिट्टी-पत्थर से भरे हुए कुएं है। आप के कुएं में प्रेम के झरने कभी नहीं दिखाई देते। नहीं फूटते, नहीं फूट सकते।

मैंने सूना है एक बहुत पुराना वृक्ष था। आकाश में सम्राट की तरह उसके हाथ फैले हुए थे। उस पर फल आते थे तो दूर-दूर से पक्षी सुगंध लेते आते थे। उस पर फूल लगते थे तो तितलियां उड़ती चली आती थी। उसकी छाया, उसके फैले हाथ, हवाओं में उसका वह खड़ा रूप आकाश में बड़ा सुन्दर लगता था। एक छोटा सा बच्चा उसकी छाया में रोज खेलने आता था। उस बड़े वृक्ष को उस छोटे बच्चे से प्रेम हो गया।

बड़ों को छोटों से प्रेम हो सकता है। अगर बड़ों को पता न हो कि हम बड़े है। वृक्ष को कोई पता नहीं था कि मैं बड़ा हूं, वह पता सिर्फ आदमियों को होता है। इसलिए उसका प्रेम मर गया है, और वृक्ष अभी निर्दोष है निष्कलुष है उन्हें नहीं पता की मैं बड़ा हूं।

अहंकार हमेशा अपने से बड़ों से प्रेम करने की कोशिश करता है। अहंकार हमेशा अपनों से बड़ों से संबंध जोड़ता है। प्रेम के लिए कोई बड़ा छोटा नहीं है। जो आ जाएं, उसी से संबंध जूड़ जाता है।

वह एक छोटा सा बच्चा खेलने आता था, उस वृक्ष के पास। उस वृक्ष का उससे प्रेम हो गया। लेकिन वृक्ष की शाखाएं ऊपर थीं। बच्चा छोटा था तो वृक्ष अपनी शाखाएं उसके लिए नीचे झुकाता, ताकि वह फल तोड़ सके, फूल तोड़ सके।

प्रेम हमेशा झुकने को राज़ी है, अहंकार कभी भी नहीं झुकने को राज़ी होता है।

अहंकार के पास जायेंगे तो अहंकार के हाथ और ऊपर उठ जायेंगे। ताकि आप उन्हें छू न सकें। क्योंकि जिसे छू लिया जाये। वह छोटा आदमी है। जिसे न छुआ जा सके, दूर सिंहासन पर दिल्ली में हो, वह आदमी बड़ा आदमी है।

उस वृक्ष की शाखाएं नीचे झुक आती थी, जब वह बच्चा खेलता हुआ आता उस वृक्ष के पास, और वह जब उसका फूल तोड़ता, तब वह वृक्ष अंदर तक सिहर जाता, प्रेम की छुअन से

सराबोर हो जाता। और खुशी के मारे उसकी शाखाएं नाचने झूमने लगती। उसके प्राण आनंद से भर जाते।

प्रेम जब भी कुछ दे पाता है तो खुश हो जाता है।

अहंकार जब भी कुछ ले पाता है, तभी खुश होता है।

फिर वह बच्चा बड़ा होने लगा। वह कभी उसकी छाया में सोता, कभी उसके फल खाता, कभी उसके फूलों का ताज बनाकर पहनता, वृक्ष उसे जंगल के सम्राट के रूप में देख कर गद्‌द गद हो जोता।

प्रेम के फूल जिसके पास भी बरसतें हैं, वही सम्राट हो जाता है, वृक्ष के प्राण आनंद से भर जाते, उसकी छूआन उसे अन्दर तक गुदगुदा जाती। हवा जब उसके पता को छूती तो उससे मधुर गान निकलता। नये-नये गीत फूटते उस बच्चे के संग।

वह लड़का कुछ और बड़ा हुआ। वह वृक्ष के उपर चढ़ने लगा। उसकी शाखाओं से झुलने लगा। वह उस की विशाल शाखाओं पर लेट कर विश्राम करता। वृक्ष आनंदित हो उठता। प्रेम आनंदित होता है जब प्रेम किसी के लिए छाया बन जाता है।

अहंकार आनंदित होता है जब किसी की छाया छीन लेता है।

लड़का धीरे-धीरे बड़ा होता चला गया। दिन पर दिन बीतते ही चले गये, मानों समय को पंख लग गये। ऋतु पर ऋतु बदलती चली गयी। वृक्ष को पता ही नहीं चला उस समय का। जब हम आनंद में होते है तो समय की गति तेज हो जाती है। मानों उसके पंख लग गये हो। तब लड़का बड़ा हो गया तो उसे और दूसरे काम भी उसकी दुनियां में आ गये। महत्वकांक्षाएं आ गई। उसे परीक्षाए पास करनी थी। उसे मित्रों के साथ भी खेलना था। पढ़ाई में सब को पछाड़ कर अव्वल आना था। धीरे-धीरे उसका आना कम से कमतर होता चला गया। कभी आता कभी नहीं आता। लेकिन वृक्ष तो हमेशा उसकी राह ताकता रहता। की वह कब आये और उसके उपर चढ़े उसकी टहनीयों से खोले, उसके फूल तोड़े। उसके फल खाये। लेकिन वह हफ्तों महीनों बाद कभी आता। वृक्ष उसकी प्रतीक्षा करता कि वह आये। वह आये। उसके सारे प्राण पुकारते कि आओ-आओ।

प्रेम निरंतर प्रतीक्षा करता है कि आओ-आओ।

प्रेम एक प्रतीक्षा है, एक अवेटिंग है।

लेकिन वह कभी आता, कभी नहीं आता, तो वृक्ष उदास रहने लगा।

प्रेम की एक ही उदासी है जब वह बांट नहीं सकता। तब वह उदास हो जाता है। जब वह दे नहीं पाता, तो उदास हो जाता है।

और प्रेम की एक ही धन्यता है कि जब वह बांट देता है, लुटा देता है तो आनंदित हो जाता है।

फिर लड़का और बड़ा होता चला गया। और वृक्ष के पास आने के दिन कम होत चले गये।

जो आदमी जितना बड़ा होता चला जाता है महत्वाकांक्षा के जगत में, प्रेम के निकट आने की सुविधा उतनी ही कम होती चली जाती है। उस लड़के की महत्वाकांक्षा बढ़ रही थी। कहां अब वृक्ष के पास जाना।

फिर एक दिन वह वहां से निकला जा रहा था, तो उस वृक्ष ने उसे पुकार की सुनो। हवाओं ने पत्तों ने उसकी आवाज को गुंजायमान किया। तुम आते नहीं, मैं प्रतीक्षा करता हूं, मैं रोज तुम्हारी राह देखता हूं, कि तुम इधर आओ, मेरी आंखें थक जाती है। पर तुम अब इधर नहीं आते क्यों?

उस लड़के ने एक बार घुर कर देखा उस वृक्ष को और कहां की क्या है तुम्हारे पास। जो मैं आऊं,मुझे तो रूपये चाहिए।

हमेशा अहंकार पूछता है, कि क्या हे तुम्हारे पास, जो मैं आऊं। अहंकार मांगता है कि कुछ हो तो मैं आऊं। न कुछ हो तो आने की जरूरत नहीं है।

अहंकार एक प्रयोजन है, एक परपज़ है। प्रयोजन पूरा होता है तो मैं आऊं। अगर कोई प्रयोजन न हो तो आने की जरूरत क्या है।

और प्रेम निष्प्रयोजन है। प्रेम का कोई प्रयोजन नहीं। प्रेम अपने में ही अपना प्रयोजन है, वह बिलकुल पर्पजलेस है।

वृक्ष तो चौंक गया। उसने कहा, तुम तभी आओगे, जब मैं तुम्हें कुछ दूँ। मैं तुम्हें सब दे सकता हूं। क्योंकि प्रेम कुछ भी रोकना नहीं चाहता। जो रो ले वह प्रेम नहीं है। अहंकार रोकता है। प्रेम तो बेशर्त देता है। लेकिन ये रूपये तो मेरे पास नहीं है। ये रूपये तो आदमी की ईजाद है। उसी का रोग है अभी हमे नहीं लगा। हम बचे है अभी।

उस वृक्ष ने कहां, इस लिए तो देखो हम इतने आनंदित है। पर मनुष्य के संग साथ रह कर हम उसके रोक को पाल लेते है। वरना तो हमारे उत्सव को देखो इन खीलें फूलों को देखो, इतने विशाल तने, इनकी छाया। इनपर पक्षियों का चहकना। अपने घर बनाना। खेलना नाचना। कलरव करना। देखो हम कितने नाचते है आकाश में , कितने गीत गाते है। क्योंकि हमारे पास पैसा नहीं है। हम आदमी की तरह दीन-हीन मंदिरों में बैठ कर, शांति की कामना करते है। कि कैसे पाई जाये। सर टरकाते है उसके चरणों में कि हमें कुछ तो दो हम पड़े है तेरे द्वार...पर हमारे पास पैसा नहीं है।

तो उसने कहा, फिर क्यों आऊं में तुम्हारे पास। जहां पर रूपये है मुझे तो वहीं जाना है। तुम समझते नहीं हमारी मजबूरी, क्योंकि तुम्हें पैसे की जरूरत नहीं है। पानी तुम्हें कुदरत से मिल जाता है, जिस मिट्टी पर तुम खड़े हो वह तुम्हें मुफ्त में मिल गई है। हवा, धूप जो तुम्हें पोशण देती है उसके लिए तुम्हें कुछ देना नहीं होता। पर हमें तो सब पैसे से ही लेना है, हमारा जीवन तो पैसे से ही चला है.....अब ये बात तुम्हें कैसे समझाऊं।

अहंकार रूपये मांगता है। क्योंकि रूपया शक्ति है, सुरक्षा है।

उस वृक्ष ने बहुत सोचा, फिर उसे ख्याल आया....तो तुम एक काम तो कर सकते हो, मेरे सारे फल तोड़ कर ले जाओ ओर बेच दो उसे बाजार में, फिर तुम्हें शायद पैसा मिल जाये।

उस लड़के की आंखों में चमक आ गई। उसे तो ये ख्याल ही नहीं आया था। वह खुशी से राजा हो गया। वह चढ़ गया उस वृक्ष पर और तोड़ने लगा फल, पर आज उसके हाथों में कुरता थी, उसके चढ़ने से भी उस वृक्ष को कुछ भारी पन लग रहा था। उसने फलों के साथ तोड़ डालें हजारों पत्ते, टहनीया, वृक्ष को पीड़ा होती पर वह यह जान कर आनंदित होता की ये पीड़ा उसके प्रेमी ने ही तो दी है। प्रेम पीड़ा में भी आनंद देख लेता है। और अहंकार उदारता में भी दु:ख। लेकिन फिर भी वह वृक्ष खुश था कि इस बहाने उसे उस का संग साथ तो मिला।

टूटकर भी प्रेम आनंदित हो जाता है।

अहंकार पाकर भी आनंदित नहीं होता। पाकर भी दु:खी होता है। ओर उस लड़के ने तो धन्यवाद भी नहीं दिया और सारे फल ले कर चल दिया बाजार की और। वृक्ष उसे निहारता रहा। जाते हुए देखता रहा, अपने को तृप्त करता रहा पर उसने एक बार भी पीछे मुड़ कर नहीं देखा।

लेकिन उस वृक्ष को पता भी नहीं चला। उसे तो धन्यवाद मिल गया इसी में कि उस लड़के ने उसके प्रेम को स्वीकार किया। और उससे फल तोड़े और उन्हें बेचकर उसे धन मिल जायेगा। वह यह सोच-सोच कर गद्द गद हो रहा था।

लेकिन इसके बाद भी वह लड़का बहुत दिनों तक नहीं आया। उसके पास रूपये थे,और रुपयों से रूपये पैदा करने की कोशिश में वह लग गया। वह भूल ही गया उस बात को। कि वह पैसा उसे उसी वृक्ष के प्रेम की देन है। सालों गुजर गये।

और धीरे-धीरे वृक्ष की उदासी उसके पत्तों पर भी उभरने लगी। तेज हवा ये उसे खड़खड़ाती जरूर पर अब उनमें वह लय वदिता नहीं थी। एक मुर्दे की सी खड़खड़ाहट थी। वह इस लिए जीवत भी की उसके प्राणों में रस का संचार हाँ रहा था। उसके प्राणा को रस बार-बार पुकारता उस लड़के को की तू मेरे पास आ मैं तुझे अपना रस दूँगा। जैसे किसी मां के स्तन में दूध भरा हो और उसका बेटा खो जाये। और उसके प्राण तड़प रहे है कि उसका बेटा कहां है जिसे वह खोजें, जो उसे हलका कर दे। निर्भार कर दे। ऐसा उस वृक्ष के प्राण पीड़ित होने लगे कि वह आये—आये,आये। उसके प्राणों की सारी आवाज में यही गुंज रहा था। आओ-आओ।

बहुत दिनों के बाद वह आया। वह लड़का प्रौढ़ हो गया था। वृक्ष ने उससे कहा आओ मेरे पास। मेरे आलिंगन में आओ। उसने कहा छोड़ो,यह बकवास। यह बचपन की बातें है। अब में बड़ा हो गया हुं मेरे कंधों पर घर गृहस्थी का बोझ आ गये है। ये सब तुम नहीं समझ सकते।

अहंकार प्रेम को पागलपन समझता है। बचपन की बातें समझता है।

उस वृक्ष ने कहा, आओ मेरी डलियों से झूलों—नाचो, चढ़ो मुझ पर। दौड़ों भागों....

उसने कहा छोड़ो भी ये फजूल की सब बातें,क्या रखा इन सब में। समय खराब करना ही है। मुझे एक मकार बनाना है। तुम मुझे मकान दे सकते हो?

वृक्ष ने कहा, मकान? वह क्या होता है, हम तो कोई मकान नहीं बनाते। क्यों बनाओगे तूम मकान। क्या काम आयेगा। और भी पशु पक्षी भी मकान, घोसला बनाते, है चींटियाँ, दीमक,पर वह तो आदमी की तरह दुःखी नहीं होती। वह तो बड़े आनंद उत्सव से उसके बनाने कास आनंद लेती है। फिर तुम इतने उदास क्यों है? लेकिन एक बात हो सकती है, मैं क्या सहायता कर सकता हूं तुम्हारे मकान बनाने के लिए.....कोई हो तो कहो।

वह आदमी थोड़ी देर के लिए तो चुप हो गया। उसके दिल की बात ज़ुंबाँ पर आते-आते रूक गई। पर वह साहस कर के कहने लगा। तुम अपनी शाखाएं मुझे दे दो तो में अपने मकान की छात आराम से डाल सकता हूं। वृक्ष मुस्कुराया और कहने लगा तो इसमें इतना सोचने की क्या बता है। तुम ले सकते हो मेरी शाखाएं। मैं तुम्हारे किसी भी काम आ सकूँ तो अपने को धन्य ही मानूँगा। और मुझे लगेगा की तुमने मुझे प्यार किया।

और वह आदमी गया और कुल्हाड़ी लेकिर आ गया और उसने उस वृक्ष की शाखाएं काट डाली। वृक्ष एक ठूंठ रह गया। एक दम मृत प्राय, नग्न, पर फिर भी वह वृक्ष आनंदित था।

प्रेम सदा आनंदित रहता है। चाहे उसके अंग भी काटे जायें। लेकिन कोई ले जाये, कोई ले जाये, कोई बांट ले, कोई सम्मिलित हो जाये, कोई साझीदार हो जाये।

और उस आदमी ने पीछे मुड़ कर इस बार भी नहीं देखा।

और वक्त गुजरता गया। वह ठूंठ राह देखता रहा, वह चिल्लाना चाहता था। कहना चाहता था, अपने ह्रदय की पुकार, पर अब उसके पास पत्ते भी नहीं थे। शाखाएं भी नहीं थी। हवाएँ आती और वह उनसे बात भी नहीं कर पाता था। बुला भी नहीं पाता था अपने प्रेमी को। लेकिन प्राणों में अब भी एक गुंज थी आओ-आओ....एक बार फिर आओ।

और बहुत दिन बीत गये। तब वह बच्चा अब बूढा आदमी हो गया था। वह निकल रहा था उसके पास से। और वह वृक्ष के पास आकर खड़ा हो गया। बहुत दिनों बाद आये, पर तुम्हें मेरी याद सताती तो है। कहो सब ठीक है। कैसे उदास हो। कमर झुक गई है। बाल सफेद हो गये। आंखों पर चशमा लगा गया है। उसने कहा में प्रदेश जाना चाहता हूं। यहां इतनी मेहनत की कुछ नहीं मिला। वहां जा कर खूब धन कमाऊगां। पर मैं नदी पर नहीं कर सकता। उसके लिए नाव चाहिए। तुम अपना तना मुझे दे दो तो मैं नाव बना जा सकता हूं। नाव तो तुम मेरी बना सकते हो, पर मुझे भूल मत जाना वहां जाकर। मुझे तुम्हारी बहुत याद आती है। तुम लोट कर जरूर इधर आना। मैं यहां तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगा।

और उसने उस वृक्ष के तने को काट कर नाव बना ली। वहां रह गया एक छोटा सा ठूंठ, और वह आदमी दूर यात्रा पर निकल गया। और वह ठूंठ उसकी प्रतीक्षा करता रहा की अब आयेगा। अब आयेगा। लेकिन अब तो उसके पास कुछ भी नहीं था। उसे देने की लिए शायद वह कभी इधर नहीं आयेगा। क्योंकि अहंकार वहीं आता है। जहां कुछ पाने को है। अहंकार वहीं नहीं जाता,जहां कुछ पाने को नहीं है।

मैं उस ठूंठ के पास एक रात मेहमान हुआ था। तो वह ठूंठ मुझसे बोला कि वह मेरा मित्र अब तक नहीं आया। और मुझे बड़ी पीड़ा होती है। की वह ठीक से तो है। वह मेरे तने की नाव बना कर परदेश गया था। कही मेरे तने में कोई छेद तो नहीं था। मुझे रात दिन यही चिंता सताये जाती है। बस एक बार यह पता चल जाये की वह जहां भी है खुश है। तो में तृप्त हो जाऊँगा। एक खबर मुझे भर कोई ला दे। अब मैं मरने के करीब हूं। इतना पता चल जाये कि वह सकुशल है, फिर कोई बात नहीं। फिर सब ठीक है। अब तो मेरे पास देने को कुछ नहीं है। इसलिए बूलाऊं भी तो शायद वह नहीं आयेगा। क्योंकि वह केवल लेने की ही भाषा समझता है।

अहंकार लेने की भाषा समझता है।

प्रेम देने की भाषा है।

इससे ज्यादा ओर कुछ भी मैं नहीं कहूंगा।

जीवन एक ऐसा वृक्ष बन जाये और उस वृक्ष की शाखाएं अनंत तक फैल जायें। सब उसकी छाया में हों और सब तक उसकी बाँहें फैल जायें तो पता चल सकता है कि प्रेम क्या है।

प्रेम का कोई शस्त्र नहीं है। न कोई परिभाषा है। नहीं प्रेम का कोई सिद्धांत ही है।

तो मैं बहुत हैरानी में था कि क्या कहूंगा आपसे की प्रेम क्या है, तो बताना मुश्किल है। आकर बैठ सकता हूं—और अगर मेरी आंखों में वह दिखाई पड़ जाये तो दिखाई पड़ सकता है। अगर मेरे हाथों में दिखाई पड़ जाये तो दिखाई पड़ सकता है। मैं कह सकता हूं ये है प्रेम ।

लेकिन प्रेम क्या है? अगर मेरी आँख में न दिखाई पड़े मेरे हाथ में न दिखाई पड़े, तो शब्दों में तो बिलकुल भी दिखाई नहीं पडा सकता है कि प्रेम क्या है।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत-बहुत अनुगृहित हूं, और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करे।

—ओशो

Posted on सितम्बर 9, 2010by sw anand prashad

संभोग से समाधि की और--ओशो

संभोग: अहं-शून्यता की झलक—1

मेरे प्रिय आत्मन,

एक सुबह, अभी सूरज भी निकलन हीं था। और एक मांझी नदी के किनारे पहुंच गया था। उसका पैर किसी चीज से टकरा गया। झुककर उसने देखा। पत्थरों से भरा हुआ एक झोला पडा था। उसने अपना जाल किनारे पर रख दिया,वह सुबह के सूरज के उगने की प्रतीक्षा करने लगा। सूरज ऊग आया,वह अपना जाल फेंके और मछलियाँ पकड़े। वह जो झोला उसे पडा हुआ मिला था, जिसमें पत्थर थे। वह एक-एक पत्थर निकालकर शांत नदी में फेंकने लगा। सुबह के सन्नाटे में उन पत्थरों के गिरने की छपाक की आवाज उसे बड़ी मधुर लग रही थी। उस पत्थर से बनी लहरे उसे मुग्ध कर रही थी। वह एक-एक कर के पत्थर फेंकता रहा।

धीरे-धीरे सुबह का सूरज निकला, रोशनी हुई। तब तक उसने झोले के सारे पत्थर फेंक दिये थे। सिर्फ एक पत्थर उसके हाथ में रह गया था। सूरज की रोशनी मे देखते ही जैसे उसके हृदय की धड़कन बंद हो गई। सांस रूक गई। उसने जिन्हें पत्थर समझा कर फेंक दिया था। वे हीरे-जवाहरात थे। लेकिन अब तो अंतिम हाथ में बचा था, और वह पूरे झोले को फेंक चूका था। और वह रोने लगा, चिल्लाने लगा। इतनी संपदा उसे मिल गयी थी कि अनंत जन्मों के लिए काफी थी, लेकिन अंधेरे में, अंजान अपरिचित, उसने उस सारी संपदा को पत्थर समझकर फेंक दिया था।

लेकिन फिर भी वह मछुआ सौभाग्यशाली था, क्योंकि अंतिम पत्थर फेंकने से पहले सूरज निकल आया था और उसे दिखाई पड़ गया था कि उसके हाथ में हीरा है। साधारणतया सभी लोग इतने भाग्यशाली नहीं होते। जिंदगी बीत जाती है, सूरज नहीं निकलता, सुबह नहीं होती, सूरज की रोशनी नहीं आती। और सारे जीवन के हीरे हम पत्थर समझकर फेंक चुके होते है।

जीवन एक बड़ी संपदा है, लेकिन आदमी सिवाय उसे फेंकने और गंवाने के कुछ भी नहीं करता है।

जीवन क्या है, यह भी पता नहीं चल पाता और हम उसे फेंक देते है। जीवन में क्या छिपा है, कौन से राज, कौन से रहस्य, कौन सा स्वर्ग, कौन सा आनंद, कौन सी मुक्ति, उन सब का कोई भी अनुभव नहीं हो पाता और जीवन हमारे हाथ से रिक्त हो जाता है।

इन आने वाले तीन दिनों में जीवन की संपदा पर ये थोड़ी सी बातें मुझे कहानी है। लेकिन जो लोग जीवन की संपदा को पत्थर मान कर बैठे है। वे कभी आँख खोलकर देख पायेंगे कि जिन्हें उन्होंने पत्थर समझा है, वह हीरे-माणिक है, यह बहुत कठिन है। और जिन लोगो ने जीवन को पत्थर मानकर फेंकन में ही समय गंवा दिया है। अगर आज उनसे कोई कहने जाये कि जिन्हें तुम पत्थर समझकर फेंक रहे थे। वहां हीरे-मोती भी थे तो वे नाराज होंगे। क्रोध से भर जायेंगे। इसलिए नहीं कि जो बात कही गयी है वह गलत है, बल्कि इसलिए कि यह बात इस बात का स्मरण दिलाती है। कि उन्होंने बहुत सी संपदा फेंक दी।

लेकिन चाहे हमने कितनी ही संपदा फेंक दी हो, अगर एक क्षण भी जीवन का शेष है तो फिर भी हम कुछ बचा सकते है। और कुछ जान सकते है और कुछ पा सकते है। जीवन की खोज में कभी भी इतनी देर नहीं होती कि कोई आदमी निराश होने का कारण पाये।

लेकिन हमने यह मान ही लिया है—अंधेरे में, अज्ञान में कि जीवन में कुछ भी नहीं है सिवाय पत्थरों के। जो लोग ऐसा मानकर बैठ गये है, उन्होंने खोज के पहले ही हार स्वीकार कर ली है।

मैं इस हार के संबंध में, इस निराशा के संबंध के, इस मान ली गई पराजय के संबंध में सबसे पहले चेतावनी यह देना चाहता हूं के जीवन मिटटी और पत्थर नहीं है। जीवन में बहुत कुछ है। जीवन मिटटी और पत्थर के बीच बहुत कुछ छिपा है। अगर खोजने वाली आंखें हो तो जीवन से वह सीढ़ी भी निकलती है, जो परमात्मा तक पहुँचती है। इस शरीर में भी,जो देखने पर हड्डी मांस और चमड़ी से ज्यादा नहीं है। वह छिपा है, जिसका हड्डी, मांस और चमड़ी से कोई संबंध नहीं है। इस साधारण सी देह में भी जो आज जन्मती है कल मर जाती है। और मिटटी हो जाती है। उसका वास है—जो अमृत है, जो कभी जन्मता नहीं और कभी समाप्त नहीं होता है।

रूप के भीतर अरूप छिपा है और दृश्य के भीतर अदृश्य का वास है। और मृत्यु के कुहासे में अमृत की ज्योति छीपी है। मृत्यु के धुएँ में अमृत की लौ भी छिपी हुई है। वह फ्लेम वह ज्योति भी छिपी है, जिसकी की कोई मृत्यु नहीं है।

यह यात्रा कैसे हो सकती है कि धुएँ के भीतर छिपी हुई ज्योति को जान सकें, शरीर के भीतर छिपी हुई आत्मा को पहचान सकें, प्रकृति के भीतर छिपे हुए परमात्मा के दर्शन कर सकें। उस संबंध में ही तीन चरणों में मुझे बातें करनी है।

पहली बात,हमने जीवन के संबंध में ऐसे दृष्टिकोण बना लिए है, हमने जीवन के संबंध में ऐसी धारणाएं बना ली है। हमने जीवन के संबंध में ऐसा फलसफा खड़ा कर रखा है कि उस दृष्टिकोण और धारणा के कारण ही जीवन के सत्य को देखने से हम वंचित रह जाते है। हमने मान ही लिया है कि जीवन क्या है—बिना खोजें, बिना पहचाने, बिना जिज्ञासा किये, हमने जीवन के संबंध में कोई निश्चित बात ही समझ रखी है

हजारों वर्षों से हमें एक बात मंत्र की तरह पढ़ाई जाती है। जीवन आसार है, जीवन व्यर्थ हे, जीवन दुःख है। सम्मोहन की तरह हमारे प्राणों पर यह मंत्र दोहराया गया है कि जीवन व्यर्थ है, जीवन आसार है, जीवन छोड़ने योग्य है। यह बात सुन-सुन कर धीरे-धीरे हमारे प्राणों में पत्थर की तरह मजबूत होकर बैठ गयी है। इस बात के कारण जीवन आसार दिखाई पड़ने लगा है। जीवन दुःख दिखाई पड़ने लगा है। इस बात के कारण जीवन ने सारा आनंद, सारा प्रेम,सारा सौंदर्य खो दिया है। मनुष्य एक कुरूपता बन गया है। मनुष्य एक दुःख का अड्डा बन गया है।

और जब हमने यह मान ही लिया कि जीवन व्यर्थ, आसार है, तो उसे सार्थक बनाने की सारी चेष्टा भी बंद हो गयी हो तो आश्चर्य नहीं है। अगर हमने यह मान ही लिया है कि जीवन एक कुरूपता है ताक उसके भीतर सौंदर्य की खोज कैसे हो सकती है। और अगर हमने यह मान ही लिया है कि जीवन सिर्फ छोड़ देने योग्य है, तो जिसे छोड़ ही देना है। उसे सजाना, उसे खोजना, उसे निखारना,इसकी कोई भी जरूरत नहीं है।

हम जीवन के साथ वैसा व्यवहार कर रहे है, जैसा कोई आदमी स्टेशन पर विश्रामालय के साथ व्यवहार करता है। वेटिंग रूम के साथ व्यवहार करता है। वह जानता है कि क्षण भर हम इस वेटिंग में ठहरे हुए है। क्षण भर बाद छोड़ देना है, इस वेटिंग रूम का प्रयोजन क्या है? क्या अर्थ है? वह वहां मूंगफली के छिलके भी डालता है। पान भी थूक देता है। गंदा भी करता है और सोचता है मुझे क्या प्रयोजन। क्षण भर बाद मुझे चले जाना है।

जीवन के संबंध में भी हम इसी तरह का व्यवहार करते है। जहां से हमें क्षण भर बाद चले जाना है। वहां सुन्दर और सत्य की खोज और निर्माण करने की जरूरत क्या है?

लेकिन मैं आपसे कहना चाहता हूं, जिंदगी जरूर हमें छोड़ कर चले जाना है; लेकिन जो असली जिंदगी है, उसे हमें कभी भी छोड़ने का कोई उपाय नहीं है। हम घर छोड़ देंगे,यह स्थान छोड़

देंगे; लेकिन जो जिंदगी का सत्य है, वह सदा हमारे साथ होगा। वह हम स्वयं है। स्थान बदल जायेंगे बदल जायेंगे, लेकिन जिंदगी...जिंदगी हमारे साथ होगी। उसके बदलने का कोई उपाय नहीं है।

और सवाल यह नहीं है कि जहां हम ठहरे थे उसे हमनें सुंदर किया था, जहां हम रुके थे वहां हमने प्रीतिकर हवा पैदा की थी। जहां हम दो क्षण को ठहरे थे वहां हमने आनंद की गीत गाया था। सवाल यह नहीं है कि वहां आनंद का गीत हमने गाया था। सवाल यह है कि जिसने आनंद का गीत गया था, उसके भीतर आनंद के और बड़ी संभावनाओं के द्वार खोल लिए। जिसने उस मकान को सुंदर बनाया था। उसने और बड़े सौंदर्य को पाने की क्षमता उपलब्ध कर ली है। जिसने दो क्षण उस वेटिंग रूम में भी प्रेम के बीताये थे, उसने और बड़े पर को पाने की पात्रता अर्जित कर ली है।

हम जो करते है उसी से हम निर्मित होते है। हमारा कृत्य अंततः हमें निर्मित करता है। हमें बनाता है। हम जो करते है, वहीं धीरे-धीरे हमारे प्राण और हमारी आत्मा का निर्माता हो जाता है। जीवन के साथ हम क्या कर रहे है,इस पर निर्भर करेगा कि हम कैसे निर्मित हो रहे है। जीवन के साथ हमारा क्या व्यवहार है, इस पर निर्भर होगा कि हमारी आत्मा किन दिशाओं में यात्रा करेगी। किन मार्गों पर जायेगी। किन नये जगत की खोज करेगी।

जीवन के साथ हमारा व्यवहार हमें निर्मित करता है—यह अगर स्मरण हो, तो शायद जीवन को आसार, व्यर्थ माने की दृष्टि हमें भ्रांत मालूम पड़ें; तो शायद हमें जीवन को दुःख पूर्ण मानने की बात गलत मालूम पड़े, तो शायद हमें जीवन से विरोध रूख अधार्मिक मालूम पड़े।

लेकिन अब तक धर्म के नाम पर जीवन का विरोध ही सिखाया गया है। सच तो यह है कि अब तक का सारा धर्म मृत्यु वादी है, जीवन वादी नहीं, उसकी दृष्टि में मृत्यु के बाद जो है, वहीं महत्वपूर्ण है, मृत्यु के पहले जो है वह महत्वपूर्ण नहीं है। अब तक के धर्म की दृष्टि में मृत्यु की पूजा है, जीवन का सम्मान नहीं। जीवन के फूलों का आदर नहीं, मृत्यु के कुम्हला गये, जा चुके, मिट गये, फूलों की क़ब्रों की , प्रशंसा और श्रद्धा है।

अब तक का सारा धर्म चिन्तन कहता है कि मृत्यु के बाद क्या है—स्वर्ग,मोक्ष, मृत्यु के पहले क्या है। उससे आज तक के धर्म को कोई संबंध नहीं रहा है।

और मैं आपसे कहना चाहता हूं कि मृत्यु के पहले जो है, अगर हम उसे ही संभालने मे असमर्थ है, तो मृत्यु के बाद जो है उसे हम संभालने में कभी भी समर्थ नहीं हो सकते। मृत्यु के पहले जो है अगर वहीं व्यर्थ छूट जाता है, तो मृत्यु के बाद कभी भी सार्थकता की कोई गुंजाइश कोई पात्रता, हम अपने में पैदा नहीं करा सकेंगे। मृत्यु की तैयारी भी इस जीवन में

जो आसपास है मौजूद है उस के द्वारा करनी है। मृत्यु के बाद भी अगर कोई लोक है, तो उस लोक में हमें उसी का दर्शन होगा। जो हमने जीवन में अनुभव किया है। और निर्मित किया है। लेकिन जीवन को भुला देने की,जीवन को विस्मरण कर देने की बात ही अब तक नहीं की गई।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि जीवन के अतिरिक्त न कोई परमात्मा है, न हो सकता है।

मैं आपसे यह भी कहना चाहता हूं कि जीवन को साध लेना ही धर्म की साधना है और जीवन में ही परम सत्य को अनुभव कर लेना मोक्ष को उपल्बध कर लेने की पहली सीढ़ी है।

जो जीवन को ही चूक जाते है वह और सब भी चूक जायेगा,यह निश्चित है।

लेकिन अब तक का रूख उलटा रहा है। वह रूख कहता है, जीवन को छोड़ो। वह रूख कहता है जीवन को त्यागों। वह यह नहीं कहता है कि जीवन में खोजों। वह यह नहीं कहता है कि जीवन को जीने की कला सीख़ों। वह यह भी नहीं कहता है कि जीवन को जीने पर निर्भर करता है कि जीवन कैसा मालुम पड़ता है। अगर जीवन अंधकार पूर्ण मालूम पड़ता है, तो वह जीने का गलत ढंग है। यही जीवन आनंद की वर्षा भी बन सकता है। आगर जीने का सही ढंग उपलब्ध हो जाये।

धर्म जीवन की तरफ पीठ कर लेना नहीं है, जीवन की तरफ पूरी तरह आँख खोलना है।

धर्म जीवन से भागना नहीं है, जीवन को पूरा आलिंगन में ले लेना है।

धर्म है जीवन का पूरा साक्षात्कार।

यही शायद कारण है कि आज तक के धर्म में सिर्फ बूढ़े लोग ही उत्सुक रहे है। मंदिरों में जायें, चर्चों में, गिरजा घरों में, गुरु द्वारों में—और वहां वृद्ध लोग दिखाई पड़ेंगे। वहां युवा दिखाई नहीं पड़ते, वहां बच्चे दिखाई नहीं पड़ते,क्या करण है?

एक ही कारण है। अब तक का हमारा धर्म सिर्फ बूढ़े लोगों का धर्म है। उन लोगों का धर्म है, जिनकी मौत करीब आ रही है। और अब मौत से भयभीत हो गये है, मौत के बाद की चिंता के संबंध में आतुर है, और जानना चाहते है कि मौत के बाद क्या है।

जो धर्म मौत पर आधारित है, वह धर्म पूरे जीवन को कैसे प्रभावित कर सकेगा। जो धर्म मौत का चिंतन करता है, वह पृथ्वी को धार्मिक कैसे बना सकता है।

वह नहीं बना सका। पाँच हजार वर्षों की धार्मिक शिक्षा के बाद भी पृथ्वी रोज-रोज अधार्मिक होती जा रही है। मंदिर है, मसजिदें है, चर्च है, पुजारी है, पुरोहित है, सन्यासी है, लेकिन पृथ्वी धार्मिक नहीं हो सकी है। और नहीं हो सकेगी। क्योंकि धर्म का आधार ही गलत है। धर्म कार आधार जीवन नहीं है, धर्म का आधार मृत्यु है। धर्म का आधार खिलते हुए फूल नहीं है, कब्र है। जिस धर्म का आधार मृत्यु है, वह धर्म अगर जीवन के प्राणों को स्पंदित न कर पाता हो, तो इसमें आश्चर्य क्या है? जिम्मेवारी किस की है?

मैं इन तीन दिनों में जीवन के धर्म के संबंध में बात करना चाहता हूं और इसीलिए पहला सूत्र समझ लेना जरूरी है। और इस सूत्र के संबंध में आज तक छिपाने की, दबाने की, भूल जाने की चेष्टा की गयी है। लेकिन जानने और खोजने की नहीं। और उस भूलने और विस्मृत कर देने की चेष्टा के दुष्परिणाम सारे जगत में व्याप्त हो गये है।

मनुष्य के सामान्य जीवन के में केंद्रीय तत्व क्या है—परमात्मा? आत्मा? सत्य?

नहीं,मनुष्य के प्राणों में, सामान्य मनुष्य के प्राणों में,जिसने कोई खोज नहीं की, जिसने कोई यात्रा नहीं की। जिसने कोई साधना नहीं की। उसके प्राणों की गहराई में क्या है—प्रार्थना? पूजा? नहीं,बिलकुल नहीं।

अगर हम सामान्य मनुष्य के जीवन-ऊर्जा में खोज करें,उसकी जीवन शक्ति को हम खोजने जायें तो न तो वहां परमात्मा है, न वहां पूजा है, न प्रार्थना है,न ध्यान है, वहां कुछ और ही दिखाई देता है, जो दिखाई पड़ता है उसे भूलने की चेष्टा की गई है। उसे जानने और समझने की नहीं।

वहां क्या दिखाई पड़ेगा अगर हम आदमी के प्राणों को चीरे और फाड़े और वहां खोजें? आदमी को छोड़ दें, अगर आदमी से इतन जगत की भी हम खोज-बीन करें तो वहां प्राणों की गहराईयों में क्या मिलेगा? अगर हम एक पौधे की जांच-बीन करें तो क्या मिलेगा? एक पौधा क्या कर रहा है?

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)
(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

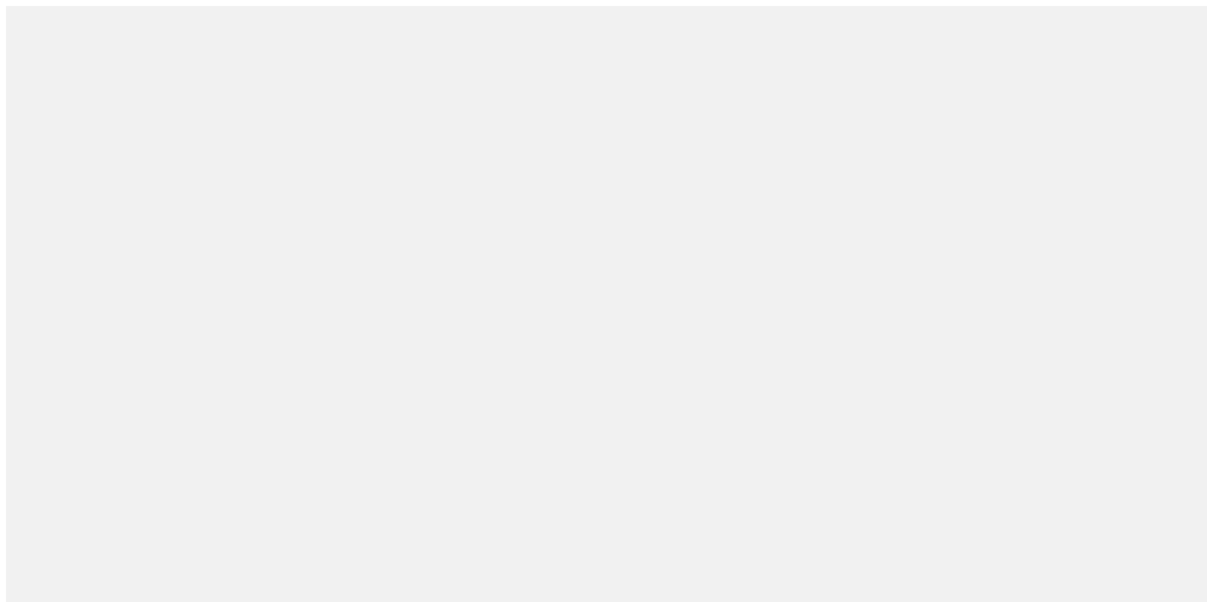
ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

28—सितम्बर—1968,

संभोग से समाधि की ओर—(6)

Posted on सितम्बर 10, 2010by sw anand prashad



संभाग से समाधि की और--ओशो

संभोग : अहं-शून्यता की झलक—2

एक पौधा पूरी चेष्टा कर रहा है—नये बीज उत्पन्न करने की, एक पौधा के सारे प्राण,सारा रस , नये बीज इकट्ठे करने, जन्म नें की चेष्टा कर रहा है। एक पक्षी क्या कर रहा है। एक पशु क्या कर रहा है।

अगर हम सारी प्रकृति में खोजने जायें तो हम पायेंगे, सारी प्रकृति में एक ही, एक ही क्रिया जोर से प्राणों को घेर कर चल रही है। और वह क्रिया है सतत-सृजन की क्रिया। वह क्रिया है ''क्रिएशन'' की क्रिया। वह क्रिया है जीवन को पुनरुज्जीवित, नये-नये रूपों में जीवन देने की क्रिया। फूल बीज को संभाल रहे है, फल बीज को संभाल रहे है। बीज क्या करेगा? बीज फिर पौधा बनेगा। फिर फल बनेगा।

अगर हम सारे जीवन को देखें, तो जीवन जन्म ने की एक अनंत क्रिया का नाम है। जीवन एक ऊर्जा है, जो स्वयं को पैदा करने के लिए सतत संलग्न है और सतत चेष्टा शील है। आदमी के भीतर भी वहीं है। आदमी के भीतर उस सतत सृजन की चेष्टा का नाम हमने 'सेक्स' दे रखा है, काम दे रखा है। इस नाम के कारण उस ऊर्जा को एक गाली मिल गयी है। एक अपमान । इस नाम के कारण एक निंदा का भाव पैदा हो गया है। मनुष्य के भीतर भी

जीवन को जन्म देने की सतत चेष्टा चल रही है। हम उसे सेक्स कहते है, हम उसे काम की शक्ति कहते है।

लेकिन काम की शक्ति क्या है?

समुद्र की लहरें आकर टकरा रही है समुद्र के तट से हजारों वर्षों से। लहरें चली आती है, टकराती है, लौट जाती है। फिर आती है, टकराती है लौट जाती है। जीवन भी हजारों वर्षों से अनंत-अनंत लहरों में टकरा रहा है। जरूर जीवन कहीं उठना चाहता होगा। यह समुद्र की लहरें, जीवन की ये लहरें कहीं ऊपर पहुंचना चाहती है; लेकिन किनारों से टकराती है और नष्ट हो जाती है। फिर नयी लहरें आती है, टकराती है और नष्ट हो जाती है। यह जीवन का सागर इतने अरबों बरसों से टकरा रहा है, संघर्ष ले रहा है। रोज उठता है, गिर जाता है, क्या होगा प्रयोजन इसके पीछे? जरूर इसके पीछे कोई बृहत्तर ऊँचाइयों को छूने का आयोजन चल रहा होगा। जरूर इसके पीछे कुछ और गहराइयों को जानने का प्रयोजन चल रहा है। जरूर जीवन की सतत प्रक्रिया के पीछे कुछ और महान तर जीवन पैदा करने का प्रयास चल रहा है।

मनुष्य को जमीन पर आये बहुत दिन नहीं हुए है, कुछ लाख वर्ष हुए। उसके पहले मनुष्य नहीं था। लेकिन पशु थे। पशु को आये हुए भी बहुत ज्यादा समय नहीं हुआ। एक जमाना था कि पशु भी नहीं था। लेकिन पौधे थे। पौधों को भी आये बहुत समय नहीं हुआ। एक समय था जब पौधे भी नहीं थे। पहाड़ थे। नदिया थी, सागर थे। पत्थर थे। पत्थर, पहाड़ और नदियों की जो दुनिया थी वह किस बात के लिए पीड़ित थी?

वह पौधों को पैदा करना चाहती थी। पौधे धीरे-धीरे पैदा हुए। जीवन ने एक नया रूप लिया। पृथ्वी हरियाली से भर गयी। फूल खिल गये।

लेकिन पौधे भी अपने से तृप्त नहीं थे। वे सतत जीवन को जन्म देते है। उसकी भी कोई चेष्टा चल रही थी। वे पशुओं को पक्षियों को जन्म देना चाहते है। पशु, पक्षी पैदा हुए।

हजारों लाखों बरसों तक पशु, पक्षियों से भरा था यह जगत, लेकिन मनुष्य को कोई पता नहीं था। पशुओं और पक्षियों के प्राणों के भीतर निरंतर मनुष्य भी निवास कर रहा था। पैदा होने की चेष्टा कर रहा था। फिर मनुष्य पैदा हुआ।

अब मनुष्य किस लिए?

मनुष्य निरंतर नये जीवन को पैदा करने के लिए आतुर है। हम उसे सेक्स कहते है, हम उसे काम की वासना कहते है। लेकिन उस वासना का मूल अर्थ क्या है? मूल अर्थ इतना है कि

मनुष्य अपने पर समाप्त नहीं होना चाहता, आगे भी जीवन को पैदा करना चाहता है। लेकिन क्यों? क्या मनुष्य के प्राणों में, मनुष्य के ऊपर किसी 'सुपरमैन' को, किसी महा मानव को पैदा करने की कोई चेष्टा चल रही है?

निश्चित ही चल रही है। निश्चित ही मनुष्य के प्राण इस चेष्टा में संलग्न है कि मनुष्य से श्रेष्ठतर जीवन जन्म पा सके। मनुष्य से श्रेष्ठतर प्राणी आविर्भूत हो सके। नीत्से से लेकर अरविंद तक, पतंजलि से लेकिर बर ट्रेन्ड रसल तक। सारे मनुष्य के प्राणों में एक कल्पना, एक सपने की तरह बैठी रही कि मनुष्य से बड़ा प्राणी पैदा कैसे हो सके। लेकिन मनुष्य से बड़ा प्राणी पैदा कैसे होगा?

हमने तो हजारों वर्षों से इस पैदा होने की कामना को ही निंदित कर रखा है। हमने तो सेक्स को सिवाय गाली के आज तक दूसरा कोई सम्मान नहीं दिया। हम तो बात करने मैं भयभीत होते है। हमने तो सेक्स को इस भांति छिपा कर रख दिया है, जैसे वह है ही नहीं। जैसे उसका जीवन में कोई स्थान नहीं है। जब कि सच्चाई यह है कि उससे ज्यादा महत्वपूर्ण मनुष्य के जीवन में ओर कुछ भी नहीं है। लेकिन उसको छिपाया है दबाया है, क्यों?

दबाने और छिपाने से मनुष्य सेक्स से मुक्त नहीं हो गया, बल्कि और भी बुरी तरह से सेक्स से ग्रसित हो गया। दमन उलटे परिणाम लाता है।

शायद आप में से किसी ने एक फ्रैंच वैज्ञानिक कुये के एक नियम के संबंध में सुना होगा। वह नियम है ''लॉ ऑफ रिवर्स एफेक्ट''। कुये ने एक नियम ईजाद किया है, 'विपरीत परिणाम का'। हम जो करना चाहते है, हम इस ढंग से कर सकते है। कि जो हम परिणाम चाहते है, उसके उल्टा परिणाम हो जाये।

एक आदमी साइकिल चलाना सीखता है। बड़ा रास्ता है। चौड़ा रास्ता है। एक छोटा सा पत्थर रास्ते के किनारे पडा हुआ है। वह साइकिल चलाने वाला घबराता है। की मैं कहीं उस पत्थर से न टकरा जाऊँ। अब इतना चौड़ा रास्ता पडा है। वह साइकिल चलने वाला अगर आँख बंध कर के भी चलाना चाहे तो भी उस पत्थर से टकराने की संभावना न के बराबर है। इसका सौ में से एक ही मौका है वह पत्थर से टकराये। इतने चौड़े रास्ते पर कहीं से भी निकल सकता है लेकिन वह देखकर घबराता है। कि कहीं पत्थर से टकरा न जाऊँ। और जैसे ही वह घबराता है, मैं पत्थर से न टकरा जाऊँ। सारा रास्ता विलीन हो जाता है। केवल पत्थर ही दिखाई दिया। अब उसकी साइकिल का चाक पत्थर की और मुड़ने लगा। वह हाथ पैर से घबराता है। उसकी सारी चेतना उस पत्थर की और देखने लगती है। और एक सम्मोहित हिप्रोटाइज आदमी कि तरह वह पत्थर की तरफ खिंच जाता है। और जा कर पत्थर से टकरा जाता है। नया साईकिल सीखने वाला उसी से टकरा जाता है जिससे बचना चाहता है। लैम्पो

से टकरा जाता है, खम्बों से टकरा जाता है, पत्थर से टकरा जाता है। इतना बड़ा रास्ता था कि अगर कोई निशानेबाज ही चलाने की कोशिश करता तो उस पत्थर से टकरा सकता था। लेकिन यह सिक्खड़ आदमी कैसे उस पत्थर से टकरा गया।

कुये कहता है कि हमारी चेतना का एक नियम है: लॉ ऑफ रिवर्स एफेक्ट, हम जिस चीज से बचना चाहते है, चेतना उसी पर केंद्रित हो जाती है। और परिणाम में हम उसी से टकरा जाते है। पाँच हजार साल से आदमी सेक्स से बचना चाह रहा है। और परिणाम इतना हुआ की गली कूचे हर जगह जहां भी आदमी जाता है वहीं सेक्स से टकरा जाता है। लॉ ऑफ रिवर्स एफेक्ट मनुष्य की आत्मा को पकड़े हुए है।

क्या कभी आपने वह सोचा है कि आप चित को जहां से बचाना चाहते है, चित वहीं आकर्षित हो जाता है। वहीं निमंत्रित हो जात है। जिन लोगो ने मनुष्य को सेक्स के विरोध में समझाया, उन लोगों ने ही मनुष्य को कामुक बनाने का जिम्मा भी अपने ऊपर ले लिया है।

मनुष्य की अति कामुकता गलत शिक्षाओं का परिणाम है।

और आज भी हम भयभीत होते है कि सेक्स की बात न की जाये। क्यों भयभीत होते है? भयभीत इसलिए होते है कि हमें डर है कि सेक्स के संबंध में बात करने से लोग और कामुक हो जायेंगे।

मैं आपको कहना चाहता हूं कि यह बिलकुल ही गलत भ्रम है। यह शत-प्रतिशत गलत है। पृथ्वी उसी दिन सेक्स से मुक्त होगी, जब हम सेक्स के संबंध में सामान्य, स्वास्थ बातचीत करने में समर्थ हो जायेंगे।

जब हम सेक्स को पूरी तरह से समझ सकेंगे, तो ही हम सेक्स का अतिक्रमण कर सकेंगे।

जगत में ब्रह्मचर्य का जन्म हो सकता है। मनुष्य सेक्स के ऊपर उठ सकता है। लेकिन सेक्स को समझकर, सेक्स को पूरी तरह पहचान कर, उस की ऊर्जा के पूरे अर्थ, मार्ग, व्यवस्था को जानकर, उसके मुक्त हो सकता है।

आंखे बंद कर लेने से कोई कभी मुक्त नहीं हो सकता। आंखें बंद कर लेने वाले सोचते हों कि आंखे बंद कर लेने से शत्रु समाप्त हो गया है। मरुस्थल में शुतुरमुर्ग भी ऐसा ही सोचता है। दुश्मन हमने करते है तो शुतुरमुर्ग रेत में सर छिपा कर खड़ा हो जाता है। और सोचता है कि जब दुश्मन मुझे दिखाई नहीं देता ताक मैं दुशमन को कैसे दिखाई दे नहीं सकता। लेकिन

यह वर्क—शुतुरमुर्ग को हम क्षमा भी कर सकते है। आदमी को क्षमा नहीं किया जा सकता है।

सेक्स के संबंध में आदमी ने शुतुरमुर्ग का व्यवहार किया है। आज तक। वह सोचता है, आँख बंद कर लो सेक्स के प्रति तो सेक्स मिट गया। अगर आँख बंद कर लेने से चीजें मिटती तो बहुत आसान थी जिंदगी। बहुत आसान होती दुनिया। आँख बंद करने से कुछ मिटता नहीं है। बल्कि जिस चीज के संबंध में हम आँख बंद करते है। हम प्रमाण देते है कि हम उस से भयभीत है। हम डर गये है। वह हमसे ज्यादा मजबूत है। उससे हम जीत नहीं सकते है, इसलिए आँख बंद करते है। आँख बंद करना कमजोरी का लक्षण है।

और सेक्स के बाबत सारी मनुष्य जाति आँख बंद करके बैठ गयी है। न केवल आँख बंद करके बैठ गयी है, बल्कि उसने सब तरह की लड़ाई भी सेक्स से ली है। और उसके परिणाम, उसके दुष्परिणाम सारे जगत में ज्ञात है।

अगर सौ आदमी पागल होते है, तो उनमें से 98 आदमी सेक्स को दबाने की वजह से पागल होते है। अगर हजारों स्त्रियों हिस्टीरिया से परेशान है तो उसमें से सौ में से 99 स्त्रियों के पीछे हिस्टीरिया के मिरगी के बेहोशी के, सेक्स की मौजूदगी है। सेक्स का दमन मौजूद है।

अगर आदमी इतना बेचैन, अशांत इतना दुःखी और पीड़ित है तो इस पीडित होने के पीछे उसने जीवन की एक बड़ी शक्ति को बिना समझे उसकी तरफ पीठ खड़ी कर ली है। उसका कारण है। और परिणाम उलटे आते है।

अगर हम मनुष्य का साहित्य उठाकर कर देखें, अगर किसी देवलोक से कभी कोई देवता आये या चंद्रलोक से या मंगलग्रह से कभी कोई यात्री आये और हमारी किताबें पढ़े, हमारा साहित्य देखे, हमारी कविता पढ़, हमारे चित्र देखे तो बहुत हैरान हो जायेगा। वह हैरान हो जायेगा यह जानकर कि आदमी का सारा साहित्य सेक्स पर केंद्रित है? आदमी की हर कविताएं सेक्सुअल क्यों है? आदमियों की सारी कहानियां, सारे उपन्यास सेक्सुअल क्यों है। आदमी की हर किताब के उपर नंगी औरत की तस्वीर क्यों है? आदमी की हर फिल्म नंगे आदमी की फिल्म क्यों है। वह बहुत हैरान होगा। अगर कोई मंगल से आकर हमें इस हालत में देखेगा तो बहुत हैरान होगा। वह सोचगा, आदमी सेक्स के सिवाय क्या कुछ भी नहीं सोचता? और आदमी से अगर पूछेगा, बातचीत करेगा तो बहुत हैरान हो जायेगा।

आदमी बातचीत करेगा आत्मा की, परमात्मा की, स्वर्ग की, मोक्ष की, सेक्स की कभी कोई बात नहीं करेगा। और उसका सारा व्यक्तित्व चारों तरफ से सेक्स से भरा हुआ है। वह मंगलग्रह

का वासी तो बहुत हैरान होगा। वह कहेगा, बात चीत कभी नहीं कि जाती जिस चीज की , उसको चारों तरफ से तृप्त करने की हजार-हजार पागल कोशिशें क्यों की जा रही है?

आदमी को हमने ''परवर्ट'' किया है, विकृत किया है और अच्छे नामों के आधार पर विकृत किया है। ब्रह्मचर्य की बात हम करते है। लेकिन कभी इस बात की चेष्टा नहीं करते कि पहले मनुष्य की काम की ऊर्जा को समझा जाये, फिर उसे रूपान्तरित करने के प्रयोग भी किये जा सकते है। बिना उस ऊर्जा को समझे दमन की संयम की सारी शिक्षा, मनुष्य को पागल, विक्षिप्त और रूग्ण करेगी। इस संबंध में हमें कोई भी ध्यान नहीं है। यह मनुष्य इतना रूग्ण, इतना दीन-हीन कभी भी न था, इतना 'पायजनस' भी न था। इतना दुःखी भी न था।

मैं एक अस्पताल के पास से निकलता था। मैंने एक तख्ते पर अस्पताल के एक लिखी हुई सूचना पढ़ी। लिखा था तख्ती पर—''एक आदमी को बिच्छू ने काटा है, उसका इलाज किया गया है। वह एक दिन में ठीक होकर घर वापस चला गया। एक दूसरे आदमी को सांप ने काटा था। उसका तीन दिन में इलाज किया गया। और वह स्वास्थ हो कर घर वापिस चला गया। उस पर तीसरी सुचना थी कि एक और आदमी को पागल कुत्ते ने काट लिया था। उस का दस दिन में इलाज हो रहा है। वह काफी ठीक हो गया है और शीध्र ही उसके पूरी तरह ठीक हो जाने की उम्मीद है। और उस पर चौथी सूचना लिखी थी, कि एक आदमी को एक आदमी ने काट लिया था। उसे कई सप्ताह हो गये। वह बेहोश है, और उसके ठीक होने की कोई उम्मीद नहीं है।

मैं बहुत हैरान हुआ। आदमी का काटा हुआ इतना जहरीला हो सकता है।

लेकिन अगर हम आदमी की तरफ देखोगें तो दिखाई पड़ेगा—आदमी के भीतर बहुत जहर इकट्ठा हो गया है। और उस जहर के इकट्ठे हो जाने का पहला सुत्र यह है कि हमने आदमी के निसर्ग को, उसकी प्रकृति को स्वीकार नहीं किया है। उसकी प्रकृति को दबाने और जबरदस्ती तोड़ने की चेष्टा की है। मनुष्य के भीतर जो शक्ति है। उस शक्ति को रूपांतरित करने का, ऊंचा ले जाने का, आकाशगामी बनाने का हमने कोई प्रयास नहीं किया। उस शक्ति के ऊपर हम जबरदस्ती कब्जा करके बैठ गये है। वह शक्ति नीचे से ज्वालामुखी की तरह उबल रही है। और धक्के दे रही है। वह आदमी को किसी भी क्षण उलटा देने की चेष्टा कर रही है। और इसलिए जरा सा मौका मिल जाता है तो आपको पता है सबसे पहली बात क्या होती है।

अगर एक हवाई जहाज गिर पड़े तो आपको सबसे पहले उस हवाई जहाज में अगर पायलट हो ओर आप उसके पास जाएं—उसकी लाश के पास तो आपको पहला प्रश्न क्या उठेगा, मन

में। क्या आपको ख्याल आयेगा—यह हिन्दू है या मुसलमान? नहीं। क्या आपको ख्याल आयेगा कि यह भारतीय है या कि चीनी? नहीं। आपको पहला ख्याल आयेगा—वह आदमी है या औरत? पहला प्रश्न आपके मन में उठेगा, वह स्त्री है या पुरूष? क्या आपको ख्याल है इस बात का कि वह प्रश्न क्यों सबसे पहले ख्याल में आता है? भीतर दबा हुआ सेक्स है। उस सेक्स के दमन की वजह से बाहर स्त्रीयां और पुरूष अतिशय उभर कर दिखायी पड़ती है।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

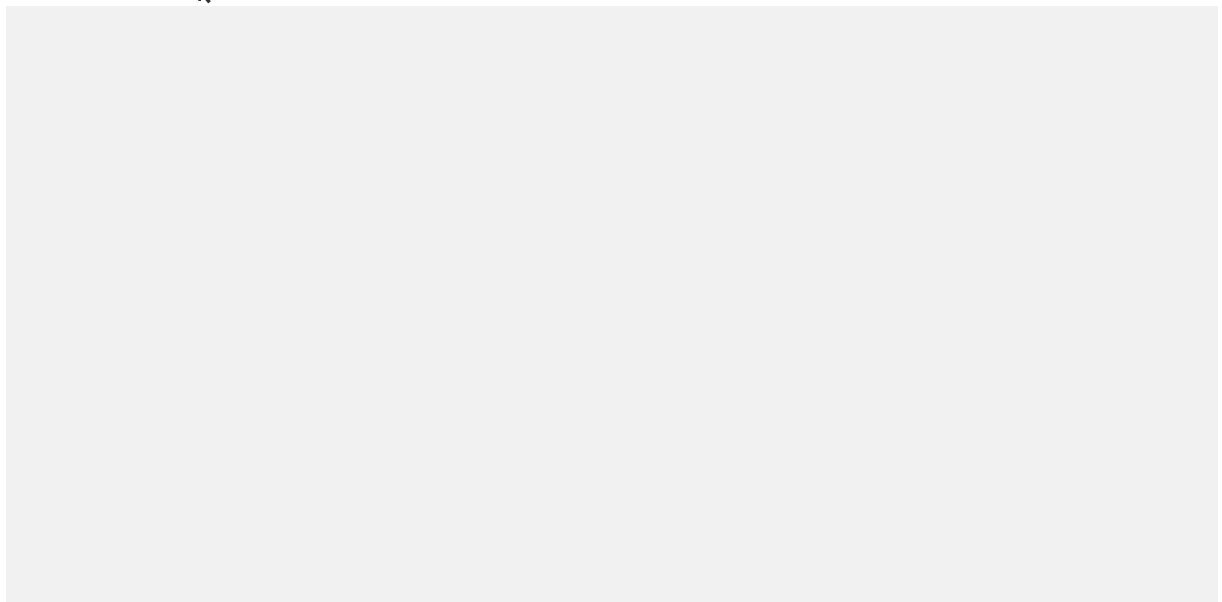
गोवा लिया टैंक, बम्बई,

28—सितम्बर—1968,

संभोग से समाधि की ओर—(7)

Posted on सितम्बर 13, 2010by sw anand prashad

संभोग : अहं-शून्यता की झलक—3



संभोग से समाधि कीओर--7

क्या आपने कभी सोचा है? आप किसी आदमी का नाम भूल सकते है, जाति भूल सकते है। चेहरा भूल सकते है? अगर मैं आप से मिलूं या मुझे आप मिलें तो मैं सब भूल सकता हूं—कि

आपका नाम क्या था,आपका चेहरा क्या था, आपकी जाति क्या थी, उम्र क्या थी आप किस पद पर थे—सब भूल सकते है। लेकिन कभी आपको ख्याल आया कि आप यह भूल सके है कि जिस से आप मिले थे वह आदमी था या औरत? कभी आप भूल सकते है इस बात को कि जिससे आप मिले थे, वह पुरूष है या स्त्री? नहीं यह बात आप कभी नहीं भूल सके होगें। क्या लेकिन? जब सारी बातें भूल जाती है तो यह क्यों नहीं भूलता?

हमारे भीतर मन में कहीं सेक्स बहुत अतिशय हो बैठा है। वह चौबीस घंटे उबल रहा है। इसलिए सब बातें भूल जाती है। लेकिन यह बात नहीं भूलती है। हम सतत सचेष्ट है। यह पृथ्वी तब तक स्वस्थ नहीं हो सकेगी, जब तक आदमी और स्त्रियों के बीच यह दीवार और यह फासला खड़ा हुआ है। यह पृथ्वी तब तक कभी भी शांत नहीं हो सकेगी,जब तक भीतर उबलती हुई आग है और उसके ऊपर हम जबरदस्ती बैठे हुए है। उस आग को रोज दबाना पड़ता है। उस आग को प्रतिक्षण दबाये रखना पड़ता है। वह आग हमको भी जला डालती है। सारा जीवन राख कर देती है। लेकिन फिर भी हम विचार करने को राज़ी नहीं होते। यह आग क्या थी?

और मैं आपसे कहता हूं अगर हम इस आग को समझ लें, तो यह आग दुश्मन नहीं दोस्त है। अगर हम इस आग को समझ लें तो यह हमें जलायेगी नहीं, हमारे घर को गर्म भी कर सकती है। सर्दियों में,और हमारी रोटियाँ भी सेक सकती है। और हमारी जिंदगी में सहयोगी और मित्र भी हो सकती है।

लाखों साल तक आकाश में बिजली चमकती थी। कभी किसी के ऊपर गिरती थी और जान ले लेती थी। कभी किसी ने सोचा भी नथा कि एक दिन घर के पंखा चलायेगी यह बिजली। कभी यह रोशनी करेगी अंधेरे में, यह किसी ने नहीं सोचा था। आज—आज वही बिजली हमारी साथी हो गयी है। क्यों?

बिजली की तरफ हम आँख मूंदकर खड़े हो जाते तो हम कभी बिजली के राज को न समझ पाते और न कभी उसका उपयोग कर पाते। वह हमारी दुश्मन ही बनी रहती। लेकिन नहीं, आदमी ने बिजली के प्रति दोस्ताना भाव बरता। उसने बिजली को समझने की कोशिश की, उसने प्रयास किया जानने के और धीरे-धीरे बिजली उसकी साथी हो गयी। आज बिना बिजली के क्षण भर जमीन पर रहना मुश्किल हो जाये।

मनुष्य के भीतर बिजली से भी अधिक ताकत है सेक्स की।

मनुष्य के भीतर अणु की शक्ति से भी बड़ी शक्ति है सेक्स की।

कभी आपने सोचा लेकिन, यह शक्ति क्या है और कैसे इसे रूपान्तरित करें? एक छोटे-से अणु में इतनी शक्ति है कि हिरोशिमा का पूरा का नगर जिस में एक लाख आदमी भस्म हो गये। लेकिन क्या आपने सोचा कि मनुष्य के काम की ऊर्जा का एक अणु एक नये व्यक्ति को जन्म देता है। उस व्यक्ति में गांधी पैदा हो सकता है, उस व्यक्ति में महावीर पैदा हो सकता है। उस व्यक्ति में बुद्ध पैदा हो सकता है, क्राइस्ट पैदा हो सकता है, उससे आइन्सटीन पैदा हो सकता है। और न्यूटन पैदा हो सकता है। एक छोटा सा अणु एक मनुष्य की काम ऊर्जा का, एक गांधी को छिपाये हुए है। गांधी जैसा विराट व्यक्ति पैदा हो सकता है।

लेकिन हम सेक्स को समझने को राज़ी नहीं है। लेकिन हम सेक्स की ऊर्जा के संबंध में बात करने की हिम्मत जुटाने को राज़ी नहीं है। कौन सा भय हमें पकड़े हुए है कि जिससे सारे जीवन का जन्म होता है। उस शक्ति को हम समझना नहीं चाहते?कौन सा डर है कौन सी घबराहट है?

मैंने पिछली बम्बई की सभा में इस संबंध में कुछ बातें कहीं थी। तो बड़ी घबराहट फैल गई। मुझे बहुत से पत्र पहुंचे कि आप इस तरह की बातें मत करें। इस तरह की बात ही मत करें। मैं बहुत हैरान हुआ कि इस तरह की बात क्यों न की जाये? अगर शक्ति है हमारे भीतर तो उसे जाना क्यों न जाये? क्यों ने पहचाना जाये? और बिना जाने पहचाने, बिना उसके नियम समझे,हम उस शक्ति को और ऊपर कैसे ले जा सकते है? पहचान से हम उसको जीत भी सकते है, बदल भी सकते है, लेकिन बिना पहचाने तो हम उसके हाथ में ही मरेंगे और सड़ेंगे, और कभी उससे मुक्त नहीं हो सकते।

जो लोग सेक्स क संबंध में बात करने की मनाही करते है, वे ही लोग पृथ्वी को सेक्स के गड्ढे में डाले हुए है। यह मैं आपसे कहना चाहता हूं, जो लोग घबराते है और जो समझते है कि धर्म का सेक्स से कोई संबंध नहीं, वह खुद तो पागल है ही, वे सारी पृथ्वी को पागल बनाने में सहयोग कर रहे है।

धर्म का संबंध मनुष्य की ऊर्जा के ''ट्रांसफॉर्मेशन'' से है। धर्म का संबंध मनुष्य की शक्ति को रूपांतरित करने से है।

धर्म चाहता है कि मनुष्य के व्यक्तित्व में जो छिपा है, वह श्रेष्ठतम रूप से अभिव्यक्त हो जाये। धर्म चाहता है कि मनुष्य का जीवन निम्न से उच्च की एक यात्रा बने। पदार्थ से परमात्मा तक पहुंच जाये।

लेकिन यह चाह तभी पूरी हो सकती है.....हम जहां जाना चाहते है, उस स्थान को समझना उतना उपयोगी नहीं है। जितना उस स्थान को समझना उपयोगी है। क्योंकि यह यात्रा कहां से शुरू करनी है।

सेक्स है फैक्ट, सेक्स जो है वह तथ्य है मनुष्य के जीवन का। और परमात्मा अभी दूर है। सेक्स हमारे जीवन का तथ्य हे। इस तथ्य को समझ कर हम परमात्मा की यात्रा चल सकते है। लेकिन इसे बिना समझे एक इंच आगे नहीं जा सकते। कोल्हू के बेल कि तरह इसी के आप पास घूमते रहेंगे।

मैंने पिछली सभा में कहा था, कि मुझे ऐसा लगता है। हम जीवन की वास्तविकता को समझने की भी तैयारी नहीं दिखाते। तो फिर हम और क्या कर सकते है। और आगे क्या हो सकता है। फिर ईश्वर की परमात्मा की सारी बातें सान्त्वना ही, कोरी सान्त्वना की बातें है और झूठ है। क्योंकि जीवन के परम सत्य चाहे कितने ही नग्न क्यों न हो, उन्हें जानना ही पड़ेगा। समझना ही पड़ेगा।

तो पहली बात तो यह जान लेना जरूरी है कि मनुष्य का जन्म सेक्स में होता है। मनुष्य का सारा जीवन व्यक्तित्व सेक्स के अणुओं से बना हुआ है। मनुष्य का सारा प्राण सेक्स की उर्जा से भरा हुआ है। जीवन की उर्जा अर्थात काम की उर्जा। यह तो काम की ऊर्जा है, यह जा सेक्स की ऊर्जा है, यह क्या है? यह क्यों हमारे जीवन को इतने जोर से आंदोलित करती है? क्यों हमारे जीवन को इतना प्रभावित करती है? क्यों हम धूम-धूम कर सेक्स के आस-पास, उसके ईद-गिर्द ही चक्कर लगाते है। और समाप्त हो जाते है। कौन सा आकर्षण है इसका?

हजारों साल से ऋषि,मुनि इंकार कर रहे है, लेकिन आदमी प्रभावित नहीं हुआ मालूम पड़ता। हजारों साल से वे कह रहे है कि मुख मोड़ लो इससे। दूर हट जाओ इससे। सेक्स की कल्पना और काम वासना छोड़ दो। चित से निकाल डालों ये सारे सपने।

लेकिन आदमी के चित से यह सपने निकले ही नहीं। कभी निकल भी नहीं सकते है इस भांति। बल्कि मैं तो इतना हैरान हुआ हूं—इतना हैरान हुआ हूं। वेश्याओं से भी मिला हुं, लेकिन वेश्याओं ने मुझसे सेक्स की बात नहीं की। उन्होंने आत्म, परमात्मा के संबंध में पूछताछ की। और मैं साधु संन्यासियों से भी मिला हूं। वे जब भी अकेले में मिलते है तो सिवाये सेक्स के और किसी बात के संबंध में पूछताछ नहीं करते। मैं बहुत हैरान हुआ। मैं हैरान हुआ हूं इस बात को जानकर कि साधु-संन्यासियों को जो निरंतर इसके विरोध में बोल रहे है, वे खुद ही चितके तल पर वहीं ग्रसित है। वहीं परेशान है। तो जनता से आत्मा परमात्मा की बातें करते है, लेकिन भीतर उनके भी समस्या वही है।

होगी भी। स्वाभाविक है, क्योंकि हमने उस समस्या को समझने की भी चेष्टा नहीं की है। हमने उस ऊर्जा के नियम भी जानने नहीं चाहे है। हमने कभी यह भी नहीं पूछा कि मनुष्य का इतना आकर्षण क्यों है। कौन सिखाता है, सेक्स आपको।

सारी दूनिया तो सीखने के विरोध में सारे उपाय करती है। मॉ-बाप चेष्टा करते है कि बच्चे को पता न चल जाये। शिक्षक चेष्टा करता है। धर्म शास्त्र चेष्टा करते है कहीं स्कूल नहीं, कहीं कोई युनिवर्सिटी नहीं। लेकिन आदमी अचानक एक दिन पाता है कि सारे प्राण काम की आतुरता से भर गये है। यह कैसे हो जाता है। बिना सिखाये ये क्या होता है।

सत्य की शिक्षा दी जाती है। प्रेम की शिक्षा दी जाती है। उसका तो कोई पता नहीं चलता। सेक्स का आकर्षण इतना प्रबल है, इतना नैसर्गिक केंद्र क्या है, जरूर इसमें कोई रहस्य है और इसे समझना जरूरी है। तो शायद हम इससे मुक्त भी हो सकते है।

पहली बात तो यह है कि मनुष्य के प्राणों में जो सेक्स का आकर्षण है। वह वस्तुत: सेक्स का आकर्षण नहीं है। मनुष्य के प्राणों में जो काम वासना है, वह वस्तुत: काम की वासना नहीं है, इसलिए हर आदमी काम के कृत्य के बाद पछताता है। दुःखी होता है पीडित होता है। सोचता है कि इससे मुक्त हो जाऊँ। यह क्या है?

लेकिन आकर्षण शायद कोई दूसरा है। और वह आकर्षण बहुत रिलीजस, बहुत धार्मिक अर्थ रखता है। वह आकर्षण यह है.....कि मनुष्य के सामान्य जीवन में सिवाय सेक्स की अनुभूति के वह कभी भी अपने गहरे से गहरे प्राणों में नहीं उतर पाता है। और किसी क्षण में कभी गहरे नहीं उतरता है। दुकान करता है, धंधा करता है। यश कमाता है, पैसा कमाता है, लेकिन एक अनुभव काम का, संभोग का, उसे गहरे ले जाता है। और उसकी गहराई में दो घटनायें घटती है, एक संभोग के अनुभव में अहंकार विसर्जित हो जाता है। ''इगोलेसनेस'' पैदा हो जाती है। एक क्षण के लिए अहंकार नहीं रह जाता, एक क्षण को यह याद भी नहीं रह जाता कि मैं हूं।

क्या आपको पता है, धर्म में श्रेष्ठतम अनुभव में 'मैं' बिलकुल मिट जाता है। अहंकार बिलकुल शून्य हो जाता है। सेक्स के अनुभव में क्षण भर को अहंकार मिटता है। लगता है कि हूं या नहीं। एक क्षण को विलीन हो जाता है मेरा पन का भाव।

दूसरी घटना घटती है। एक क्षण के लिए समय मट जाता है ''टाइमलेसनेस'' पैदा हो जाती है। जीसस ने कहा है समाधि के संबंध में: ''देयर शैल बी टाईम नौ लांगर''। समाधि का जो अनुभव है वहां समय नहीं रह जाता है। वह कालातीत है। समय बिलकुल विलीन हो जाता है। न कोई अतीत है, न कोई भविष्य—शुद्ध वर्तमान रह जाता है।

सेक्स के अनुभव में यह दूसरी घटना घटती है। न कोई अतीत रह जाता है , न कोई भविष्य। मिट जाता है, एक क्षण के लिए समय विलीन हो जाता है।

यह धर्म अनुभूति के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है—इगोलेसनेस, टाइमलेसनेस।

दो तत्व है, जिसकी वजह से आदमी सेक्स की तरफ आतुर होता है और पागल होता है। वह आतुरता स्त्री के शरीर के लिए नहीं है पुरूष के शरीर के लिए स्त्री की है। वह आतुरता शरीर के लिए बिलकुल भी नहीं है। वह आतुरता किसी और ही बात के लिए है। वह आतुरता है—अहंकार शून्यता का अनुभव, समय शून्यता का अनुभव।

लेकिन समय-शून्य और अहंकार शून्य होने के लिए आतुरता क्यों है? क्योंकि जैसे ही अहंकार मिटता है, आत्मा की झलक उपलब्ध होती है। जैसे ही समय मिटता है, परमात्मा की झलक मिलनी शुरू हो जाती है।

एक क्षण की होती है यह घटना, लेकिन उस एक क्षण के लिए मनुष्य कितनी ही ऊर्जा, कितनी ही शक्ति खोने को तैयार है। शक्ति खोने के कारण पछतावा है बाद में कि शक्ति क्षीण हुई शक्ति का अपव्यय हुआ। और उसे पता हे कि शक्ति जितनी क्षीण होती है मौत उतनी करीब आती है।

कुछ पशुओं में तो एक ही संभोग के बाद नर की मृत्यु हो जाती है। कुछ कीड़े तो एक ही संभोग कर पाते है और संभोग करते ही समाप्त हो जाते है। अफ्रीका में एक मकड़ा होता है। वह एक ही संभोग कर पाता है और संभोग की हालत में ही मर जाता है। इतनी ऊर्जा क्षीण हो जाती है।

मनुष्य को यह अनुभव में आ गया बहुत पहले कि सेक्स का अनुभव शक्ति को क्षीण करता है। जीवन ऊर्जा कम होती है। और धीरे-धीरे मौत करीब आती है। पछतावा है आदमी के प्राणों में, पछताने के बाद फिर पाता है घड़ी भर बाद कि वही आतुरता है। निश्चित ही इस आतुरता में कुछ और अर्थ है, जो समझ लेना जरूरी है।

सेक्स की आतुरता में कोई 'रिलीजस' अनुभव है, कोई आत्मिक अनुभव हे। उस अनुभव को अगर हम देख पाये तो हम सेक्स के ऊपर उठ सकते है। अगर उस अनुभव को हम न देख पाये तो हम सेक्स में ही जियेंगे और मर जायेंगे। उस अनुभव को अगर हम देख पाये—अँधेरी रात है और अंधेरी रात में बिजली चमकती है। बिजली की चमक अगर हमें दिखाई पड़ जाये और बिजली को हम समझ लें तो अंधेरी रात को हम मिटा भी सकते है। लेकिन

अगर हम यह समझ लें कि अंधेरी रात के कारण बिजली चमकती है तो फिर हम अंधेरी रात को और धना करने की कोशिश करेंगे, ताकि बिजली की चमक और गहरी हो।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि संभोग का इतना आकर्षण क्षणिक समाधि के लिए है। और संभोग से आप उस दिन मुक्त होंगे। जिस दिन आपको समाधि बिना संभोग के मिलना शुरू हो जायेगी। उसी दिन संभोग से आप मुक्त हो जायेंगे, सेक्स से मुक्त हो जायेंगे।

क्योंकि एक आदमी हजारा रूपये खोकर थोड़ा सा अनुभव पाता हो और कल हम उसे बता दें कि रूपये खोने की कोई जरूरत नहीं है, इस अनुभव की जो खदानें भरी पड़ी है। तुम चलो इस रास्ते से और उस अनुभव को पा लो। तो फिर वह हजार रूपये खोकर उस अनुभव को खरीदने बाजार में नहीं जायेगा।

सेक्स जिस अनुभूति को लाता है। अगर वह अनुभूति किन्हीं और मार्गों से उपलब्ध हो सके, तो आदमी को चित सेक्स की तरफ बढ़ना, अपने आप बंद हो जाता है। उसका चित एक नयी दिशा लेनी शुरू कर देता है।

इस लिए मैं कहता हूं कि जगत में समाधि का पहला अनुभव मनुष्य को सेक्स से ही उपलब्ध हुआ है।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

28—सितम्बर—1968,

संभोग से समाधि की ओर—(8)

Posted on सितम्बर 15, 2010by sw anand prashad

संभोग से समाधि की ओर--ओशे

संभोग : अहं-शून्यता की झलक—4

लेकिन वह बहुत महंगा अनुभव है, वह अति महंगा अनुभव है। और दूसरा कारण है कि वह अनुभव से ही अपलब्ध हुआ है। एक क्षण से ज्यादा गहरा नहीं हो सकता है। एक क्षण को झलक मिलेगी और हम वापस अपनी जगह लोट आयेंगे। एक क्षण को किसी लोक में उठ जाते है। किसी गहराई पर, किसी पीक एक्सापिरियंस पर, किसी शिखर पर पहुंचना होता है। और हम पहुंच भी नहीं पाते और वापस गिर जाते है। जैसे समुद्र की लहर आकाश में उठती है, उठ भी नहीं पाती है, पहुंच भी नहीं पाती है, और गिरना शुरू हो जाती है।

ठीक हमारा सेक्स का अनुभव—बार-बार शक्ति को इक्ट्ठा करके हम उठने की चेष्टा करते है। किसी गहरे जगत में, किसी ऊंचे जगत में एक क्षण को हम उठ भी नहीं पाते और सब लहरें बिखर जाती है। हम वापस अपनी जगह खड़े हो जाते है। और उतनी शक्ति और ऊर्जा को गंवा देते है।

लेकिन अगर सागर की लहर बर्फ का पत्थर बन जाये और बर्फ हो जाये तो फिर उसे नीचे गिरने की कोई जरूरत नहीं है। आदमी का चित जब तक सेक्स की तरलता में बहता है, तब तक वापस उठता है, गिरता है। उठता है, गिरता है, सारा जीवन यही कहता है।

और जिस अनुभव के लिए इतना आकर्षण है—इगोलेसनेस के लिए—अहंकार शून्य हो जाये, मैं आत्मा को जान लूं। समय मिट जाये और मैं उसको जान लूं। जो इंटरनल है, जो टाइम लेस है। उसको जान लूं। जो समय के बाहर है, अनंत और अनादि है। उसे जानने की चेष्टा में सारा जगत सेक्स के केंद्र पर घूम रहा है।

लेकिन अगर हम इस घटना के विरोध में खड़े हो जायें सिर्फ, तो क्या होगा? तो क्या हम उस अनुभव को पा लेंगे जो सेक्स से एक झलक की तरह दिखाई पड़ता था? नहीं, अगर हम सेक्स के विरोध में खड़े हो जाते है तो सेक्स ही हमारी चेतना को केंद्र बन जाता है, हम सेक्स से मुक्त नहीं हो सकते है। और उस से बंध जाते है। वह लॉ ऑफ रिवर्स इफेक्ट काम शुरू कर

देता है। फिर हम उससे बंध गये। फिर हमने भोगने की कोशिश करते है। और जितनी हम कोशिश करते है, उतने ही बँधते चले जाते है।

एक आदमी बीमार था और बीमारी कुछ उसे ऐसी थी कि दिन रात उसे भूख लगता थी। सच तो यह है कि उसे बीमारी कुछ भी नहीं थी। भोजन के संबंध में उसने कुछ विरोध की किताबें पढ़ ली थी। उसने पढ़ लिया था कि भोजन पाप है। उपवास पुण्य है। कुछ भी खाना हिंसा है। जितना वह यह सोचने लगा कि भोजन करना पाप है, उतना ही भूख को दबाने लगा। जितना भूख को दबाने लगा, भूख असर्ट करने लगी। जो से प्रकट होने लगी। तो वह दो चार दिन उपवास करता था और एक दिन पागल की तरह से कुछ भी खा जाता था। जब कुछ भी खा लेता था तो बहुत दुख होता था। क्योंकि फिर खाने की तकलीफ झेलनी पड़ती थी। फिर पश्चाताप में दो-चार दिन उपवास करता था। और फिर कुछ भी खा लेता था। आखिर उसने तय किया कि यह घर रहते हुए न हो सकेगा ठीक मुझे जंगल चल जान चाहिए।

वह पहाड़ पर गया। एक हिल स्टेशन पर जाकर एक कमरे में रहा। घर के लोग भी परेशान हो गये। उसकी पत्नी ने यह सोच कर की शायद वह पहाड़ पर अब जाकर भोजन की बीमारियों से मुक्त हो जायेगा। उसने बहुत से फूल पहाड़ पर भिजवाये। और कहलवाया कि मैं बहुत खुश हूं कि तुम शायद पहाड़ से स्वस्थ होकर लौटोगे। मैं शुभ कामना के रूप में ये फूल भेज रही हूं।

उस आदमी का वापस तार आय। तार में लिख था—''मेनी थैंक्स फॉर दी फ्लावर्स, दे आर सो डैलिसियस'' उसने तार किया कि बहुत धन्यवाद फूलों के लिए, बड़े स्वादिष्ट है। वह फूलों को खा गया, वहां पहाड़ पर जो फूल उसको भेजे गये थे। अब कोई आदमी भोजन से लड़ाई शुरू कर देगा। वह फूलों को खा सकता है।

आदमी सेक्स से लड़ाई शुरू किया ओर उसने क्या-क्या सेक्स के नाम पर खाया,इसका आपने कभी हिसाब लगाया? आदमी को छोड़ कर, सभ्य आदमी को छोड़ कर, होमोसेक्सुअलिटी कहीं है? जंगल में आदिवासी रहते है, उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की कि होमोसेक्सुअलिटी भी कोई चीज होती है। कि पुरूष और के साथ संभोग कर सकता है। ये सब कल्पना के बहार की बात है। मैं आदि वासियों के पास रहा हूं, मैंने कहां की सभ्य लोग इस तरह भी करते है, वे कहने लगे हमारे विश्वास के बहार की बात है। यह कैसे हो सकता है?

लेकिन अमेरिका में उन्होंने आंकड़े निकाले है—पैंतीस प्रतिशत लोग होमोसेक्सुअल है। और बेल्जियम और स्वीडन और हॉलैंड में होमोसेक्सुअल के क्लब हे, सोसाइटी है, अख़बार निकलते है और सरकार से यह दावा करते है कि होमोसेक्सुअलिटी के ऊपर से कानून उठा दिया जाना

चाहिए। हम तो यह मानते है होमोसेक्सुअलिटी ठीक है। इसलिए हमको हक मिलना चाहिए। कोई कल्पना नहीं कर सकता कि यह होमोसेक्सुअलिटी कैसे पैदा हो गई। सेक्स के बाबत लड़ाई का यह परिणाम है।

जिन सभ्य समाज है, उतनी वेश्याएं है। कभी आपने सोचा कि वेश्याएं कैसे पैदा हो गयी? किसी आदिवासी गांव में जाकर वेश्या खोज सकते हे आप। आज भी बस्तर के गांव में वेश्या खोजनी मुश्किल है। और कोई कल्पना में भी मानने को राज़ी नहीं होगा कि स्त्रीयां ऐसी भी हो सकती है। जो अपनी इज्जत बेचती हो। अपना संभोग बेचती हो। लेकिन सभ्य आदमी जितना सभ्य होता चला गया। उतनी वेश्याएं बढ़ती चली गयी—क्यों?

यह फूलों को खाने की कोशिश शुरू हुई है। और आदमी की जिंदगी में कितने विकृत रूप से सेक्स ने जगह बनायी है, इसका अगर हम हिसाब लगाने चलेंगे तो हैरान रह जायेंगे कि आदमी को क्या हुआ है? इसका जिम्मा किस पर, किन लोगों पर।

इसका जिम्मा उन लोगों पर है, जिन्होंने आदमी को—सेक्स को समझना नहीं लड़ना सिखाया। जिन्होंने सप्रेशन सिखाया है, जिन्होंने दमन सिखाया हे। दमन के कारण सेक्स की शक्ति जगह-जगह से फूट कर गलत रास्तों से बहनी शुरू हो गयी है। हमारा सारा समाज रूग्ण और पीड़ित हो गया है। इस रूग्ण समाज को अगर बदलना है तो हमें यह स्वीकार कर लेना होगा कि कास का आकर्षण है।

क्यों है काम का आकर्षण?

काम के आकर्षण का जो बुनियादी आधार है, उस आधार को अगर हम पकड़ लें तो मनुष्य को हम काम के जगत से उपर उठा सकते है। और मनुष्य निश्चित काम के जगत से ऊपर उठ जाये, तो ही राम का जगत शुरू होता है।

खजुराहो के मंदिरों के सामने मैं खड़ा था। दस-पाँच मित्रों को लेकर मैं वहां गया था। खजुराहो के मंदिर के चारों तरफ की दीवाल पर जो मैथुन चित्र है, काम-वासनाओं की मूर्तियां है। मेरे मित्र कहने लगे कि मंदिर के चारों तरफ यह क्या है ?

मैंने उनसे कहा, जिन्होंने यह मंदिर बनाये थे वे बड़े समझदार थे। उनकी मान्यता थी कि जीवन की बाहर की परिधि पर काम है। और जो लोग अभी काम से उलझे है, उनको मंदिर में भीतर प्रवेश का कोई हक नहीं है।

फिर मैंने अपने मित्र से कहा भीतर चलें, फिर उन्हें भीतर लेकर गया। वहां तो कोई काम प्रतिमा न थी। वहां भगवान की मूर्ति थी। वे कहने लगे कि भीतर कोई प्रतिमा नहीं है। मैंने उनसे कहां कि जीवन की बाहर की परिधि काम वासना है। जीवन की बाहर की परिधि दीवाल पर काम-वासना है। जीवन के भीतर भगवान का मंदिर हे। लेकिन जो अभी कामवासना में उलझे है, वे भगवान के मंदिर में प्रवेश के अधिकारी नहीं हो सकते है। उन्हें अभी बहार की दिवाल का ही चक्कर लगाना पड़ेगा।

जिन लोगों ने ये मंदिर बनवाया था, वे बड़े समझदार थे। यह मंदिर एक ''मेडिटेशन मंदिर'' था। यह मंदिर एक ध्यान का केंद्र था। जो लोग आते थे, उनसे वे कहते थे। बाहर पहले मैथुन के ऊपर ध्यान करो, पहले सेक्स को समझो और जब सेक्स को पूरी तरह समझ जाओ और तुम पाओ कि मन उससे मुक्त हो गया है, तब तुम भीतर आ जाना। फिर भीतर भगवान से मिलना हो सकता है।

लेकिन धर्म के नाम पर हमने सेक्स को समझने की स्थिति पैदा नहीं की,सेक्स की शत्रुता पैदा कर दी। सेक्स को समझो मत,आँख बंद कर लो और घुस जाओ भगवान के मंदिर में आँख बद करके। आँख बंद करके कभी कोई भगवान के मंदिर में जा सका है। और आँख बंद करके अगर आप भगवान के मंदिर में पहुंच भी गये तो बंद आँख में आपको भगवान दिखाई नहीं पड़ेंगे। जिससे आप भागकर आये है। वही दिखायी पड़ता रहेगा। आप उसी से बंधे रह जायेंगे।

शायद कुछ लोग मेरी बातें सुनकर समझते है कि मैं सेक्स का पक्षपाती हूं। मेरी उसका कारण शायद लोग समझते है कि मैं सेक्स का प्रचार कर रहा हूं। अगर कोई ऐसा समझता हो तो उसने मुझे कभी सूना ही नहीं है, ऐसा उससे कह देना।

इस समय पृथ्वी पर मुझसे ज्यादा सेक्स का दुश्मन आदमी खोजना मुश्किल है। और उसका कारण यह है कि मैं जो बात कह रहा हूं, अगर वह समझी जा सकी तो मनुष्य जाति को सेक्स से उपर उठाया जा सकता है। अन्यथा नहीं।

और जिन थोथे लोगों को हमने समझा है कि वे सेक्स के दुश्मन थे। वे सेक्स के दुश्मन नहीं थे। उन्होंने सेक्स में आकर्षण पैदा कर दिया है। सेक्स से मुक्ति पैदा नहीं की। सैक्स से आकर्षण पैदा हो गया है, विरोध के कारण।

मुझसे एक आदमी ने कहा कि जिस चीज का विरोध न हो, उसके करने में कोई रस नहीं रह जाता है। चोरी के फल खाने में जितने मधुर और मीठे होते है। उतने बाजार से खरीदे गये फल कभी नहीं होते। इसीलिए अपनी पत्नी उतनी मधुर कभी नहीं मालूम पड़ती, जितनी

पड़ोसी की पत्नी मालूम पड़ती है। वे चोरी के फल है, वे वर्जित फल है। और सेक्स को हमने एक ऐसी स्थिति दे दी, एक ऐसा चोरी का जामा पहना दिया, एक ऐसे झूठ के लिबास में छिपा दिया,ऐसी दीवालों में खड़ा कर दिया कि उसने हमें तीव्र रूप से आकर्षित कर लिया है।

बर्ट्रेन्ड रसल ने लिखा है कि जब मैं छोटा बच्चा था। विक्टोरिया का जमाना था। स्त्रियों के पैर भी दिखायी नहीं पड़ते थे। वे कपड़ा पहनती थी। जो जमीन पर घिसटता था और पैर नहीं दिखायी देते थे। अगर कभी किसी स्त्री का अंगूठा दिख जाता था तो आदमी आतुर होकर अंगूठा देखने लगता था। और काम वासना जग जाती थी। और रसल कहता है कि अब स्त्रीयां करीब-करीब आधी नंगा घूम रही है। और उसका पैर पूरा दिखाई पड़ रहा है। लेकिन कोई असर नहीं होता। तो रसल ने लिखा हे कि इससे यह सिद्ध होता है कि हम जिन चीजों को जितना ज्यादा छिपाते है, उन चीजों में उतना ही कुत्सित आकर्षण पैदा होता है।

अगर दुनिया को सेक्स से मुक्त करना है, तो बच्चों को ज्यादा देर घर में नग्न रहने की सुविधा होनी चाहिए। जब तक बच्चे घर में नग्न खेल सकें—लड़के और लड़कियां—उन्हें नग्न खेलने देना चाहिए। ताकि वह एक दूसरे के शरीर से भली भांति परिचित हो जाये। कर रास्तों पर उनको किसी स्त्री को धक्का देने की जरूरत नही पड़े। ताकि वह एक दूसरे के शरीर से इतने परिचित हो जायें। कि किसी किताब पर नंगी औरत की तस्वीर छापने की कोई जरूरत न रह जाये। वे शरीर से इतने परिचित हो जायें कि शरीर का कुत्सित आकर्षण विलीन हो जाये।

बड़ी उलटी दुनियां है। जिन लोगों ने शरीर को ढाँक कर, छिपाकर, खड़ा कर दिया है। उन्हीं लोगों ने शरीर को इतना आकर्षित

बच्चे नग्न होने चाहिए। देर तक नग्न खेलने चाहिए। लड़के और लड़कियां—एक दूसरे को नग्नता में देखना चाहिए, ताकि उनके पीछे कोई भी पागलपन न रह जाये। और उसके इस पागलपन का जीवन भर रोग उनके भीतर न चलता रहे। लेकिन वह रोग चल रहा है और उस रोग को हम बढ़ाये चले जा रहे है। उस रोग के फिर हम नये-नये रास्ते खोजते है।

गंदी किताबें छपती है। जो लोग गीता के कवर में भी भीतर रखकर पढ़ते है। बाइबिल में दबा लेते है। और पढ़ते है। ये गंदी किताबें है। तो हम कहते है कि गंदी किताबें बंद होनी चाहिए। लेकिन हम कभी नहीं पूछते कि गंदी किताबें पढ़ने वाला आदमी पैदा क्यों हो गया है? हम कहते है नंगी तस्वीरें दीवालों पर नहीं लगनी चाहिए। लेकिन हम कभी नहीं पूछते कि नंगी तस्वीरें कौन आदमी देखने को आता है?

वही आदमी आता है जो स्त्रीयों के शरीर को देखने से वंचित रह गया है। एक कुतूहल जाग गया है। क्या है स्त्री का शरीर।

और मैं आपसे कहता हूं वस्त्रों ने स्त्री के शरीर को जितना सुंदर बना दिया है। उतना सुंदर स्त्री का शरीर है नहीं। वस्त्रों में ढाँक कर शरीर छिपा नहीं है। और उधड़ कर प्रगट हुआ हे। ये सारी की सारी चिंतना हमारी विपरीत फल ले आयी हे। इसलिए आज एक बात आपसे कहना चाहता हूं पहले दिन की चर्चा में वह यह—सेक्स क्या है? उसका आकर्षण क्यों है? उसकी विकृति क्यों पैदा हुई? अगर हम ये तीन बातें ठीक से समझ लें तो मनुष्य का मन इनके ऊपर उठ सकता है। उठना चाहिए। उठने की जरूरत है।

लेकिन उठने की चेष्टा गलत परिणाम लायी है। क्यों कि हमनें लड़ाई खड़ी की है। हमने मैत्री खड़ी नहीं की है। दुश्मनी खड़ी की है। सप्रेशन खड़ा नहीं किया, दमन किया है। समझ पैदा नहीं की।

अंडरस्टैंडिंग चाहिए, सप्रेशन नहीं।

समझ चाहिए। जितनी गहरी समझ होगी मनुष्य उतना ही ऊपर उठता है। जितनी कम समझ होगी, उतना ही मनुष्य दबाने की कोशिश करता है। और दबाने के कभी सफल परिणाम,स्वस्थ परिणाम उपलब्ध नहीं होते। मनुष्य के जीवन की सबसे बड़ी ऊर्जा है काम। लेकिन काम पर रूक जाना है। काम को राम तक ले जाना है।

सेक्स को समझना है, ताकि ब्रह्मचर्य फलित हो सके। सेक्स को जानना है, ताकि हम सेक्स से मुक्त हो सके। और ऊपर उठ सकें। लेकिन शायद ही आदमी.....जीवन भर अनुभव से गुजरता है। शायद ही उसने समझने की कोशिश की हो कि संभोग के भीतर समाधि का क्षण भी का अनुभव हे। वही अनुभव खींच रहा है। वही अनुभव आकर्षित कर रहा हे। वही अनुभव प्रकार रहा है। आओ ध्यानपूर्वक इस अनुभव को जान लेना है कि कौन सा अनुभव मुझे आकर्षित कर रहा है। कौन मुझे खींच रहा है।

और मैं आपसे कहता हूं उस अनुभव को पाने के सुगम रास्ते है। ध्यान, योग, सामायिक, प्रार्थना—सब उस अनुभव को पाने के मार्ग है। लेकिन वही अनुभव हमें आकर्षित कर रहा है। यह सोच लेना जान लेना जरूरी है।

एक मित्र ने मुझे लिखा—क्या आपने ऐसी बातें कहीं—कि मां के साथ बेटी बैठी थी, वह सुन रही है। बाप के साथ बेटी बैठी सुन रही है। ऐसी बातें सब के सामने नहीं कहनी चाहिए। मैंने उनसे कहा, आप बिलकुल पागल है। अगर मां समझदार होगी, तो उसके पहले कि बेटी सेक्स

की दुनिया में उतर जाये, उसे सेक्स के संबंध में अपने अनुभव समझा देगी। ताकि वह अंजान अधकच्चा, अपरिपक्व सेक्स के गलत रास्तों पर न चली जाये। अगर बात योग्य है और समझदार है। तो आपने बेटे को अपने सारे अनुभव बता देगा। ताकि बेटे और बेटियाँ गलत रास्ते पर न चल सके। जीवन उनका विकृत न हो जाये।

लेकिन मजा यह है कि न बाप को कोई गहरा अनुभव है, न मां का कोई गहरा अनुभव हे। वे खुद भी सेक्स के तल से ऊपर नहीं उठ सके। इसलिए घबराते है कि कहीं सेक्स की बात सुनकर बच्चे भी इसी तल में न उलझ जायें।

लेकिन मैं आपसे कहता हूं कि आप किसकी बात सुनकर उलझे थे। आप अपने आप उलझ गये थे। बच्चे भी अपने आप उलझ जायेंगे। यह हो भी सकता है कि अगर उन्हें समझ दी जाये विचार दिया जाये,बोध दिया जाये। तो वह अपनी उर्जा को व्यर्थ करने से बच जाये। उर्जा को बचा सके, रूपांतरित कर सकें।

रास्तों के किनारे पर कोयले का ढेर लगा होता है। वैज्ञानिक कहते है कि कोयला ही हजारों साल में हीरा बन जाता है। कोयले और हीरे में कोई रासायनिक फर्क नहीं है। कोई केमिकल भेद नहीं है। कोयले के भी परमाणु वही है। जो हीरे के है। कोयले का भी रसायनिक मौलिक संगठन वही है जो हीरे का है। जो हीरे का है। हीरा कोयले का ही रूपांतरित—बदला हुआ रूप है।

मैं आपसे कहना चाहता हूं कि सेक्स कोयले की तरह है। ब्रह्मचर्य हीरे की तरह है। लेकिन वह कोयले का ही बदला हुआ रूप है। वह कोयले का दुश्मन नहीं है हीरा। वह कोयले की ही बदलाहट है। वह कोयले का ही रूपांतरण है। वह कोयले को ही समझकर नहीं दिशाओं में ले गयी यात्रा हे।

सेक्स का विरोध नहीं है ब्रह्मचर्य, सेक्स का ही रूपांतरण है, ट्रांसफॉर्मेशन है।

और जो सेक्स का दुश्मन है, वह कभी ब्रह्मचर्य को उपलब्ध नहीं हो सकता है। ब्रह्मचर्य की दिशा में जाना हो और जाना जरूरी है, क्योंकि ब्रह्मचर्य का मतलब क्या है?

ब्रह्मचर्य का इतना मतलब है कि यह अनुभव अपलब्ध हो जाये। जो ब्रह्मा की चर्या जैसा है। जैसा भगवान का जीवन हो, वैसा जीवन उपलब्ध हो जाये।

ब्रह्मचर्य यानी ब्रह्मा की चर्या, ब्रह्मा जैसा जीवन। परमात्मा जैसा अनुभव उपलब्ध हो जाये।

वह हो सकता है आनी शक्तियों को समझकर रूपांतरित करने से।

आने वाले दो दिनों में कैसे रूपांतरित किया जा सकता है सेक्स, कैसे रूपांतरित हो जाने के बाद काम, राम के अनुभव में बदल जाता है। वह मैं आपसे बात करूंगा। और तीन दिन तक चाहूंगा कि बहुत गौर से सुन लेंगे। ताकि मेरे संबंध में कोई गलत फहमी पीछे आपके पैदा न हो। और जो भी प्रश्न हो ईमानदारी से और सच्चे, उन्हें लिख कर दे देंगे, ताकि आने वाले पिछले दो दिनों में मैं उनकी आपसे में सीधी बात कर सकूँ। किसी प्रश्न को छिपाने की जरूरत नहीं है। जो जिंदगी में सत्य है, उसे छिपाने का कोई कारण नहीं है। किसी सत्य से मुकरने की जरूरत नहीं है। जो सत्य है, वह सत्य है। चाहे हम आँख बंद करें, चाहे आँख खुली रखें।

और एक बात मैं जानता हूं। धार्मिक आदमी मैं उसका कहता हूं, जो जीवन के सारे सत्यों को सीधा साक्षात्कार करने की हिम्मत रखता है। जो इतने कमजोर, काहिल और नपुसंक है कि जीवन के तथ्यों का सामना भी नहीं कर सकते,उनके धार्मिक होने की कोई उम्मीद नहीं है।

ये आने वाले चार दिनों के लिए निमंत्रण देता हूं। क्योंकि ऐसे विषय पर यह बात है कि शायद ऋषि-मुनियों से आशा नहीं रही है कि ऐसे विषयों पर वे बात करेंगे। शायद आपको सुनने की आदत भी नहीं होगी। शायद आपका मन डरेगा, लेकिन फिर भी मैं चाहूंगा कि, इन पाँच दिनों आप ठीक से सुनने की कोशिश करें। यह हो सकता है कि काम की समझ आप को राम के मंदिर के भीतर प्रवेश दिला दे। आकांक्षा मेरी यही है। परमात्मा करे वह आकांक्षा पूरी हो।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना,उसके लिए अनुगृहित हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

28—सितम्बर—1968,

संभोग से समाधि की ओर—9

Posted on सितम्बर 17, 2010by sw anand prashad

संभोग : समय-शून्यता की झलक—1

संभोग से समाधि कि ओर--ओशो

मेरे प्रिय आत्मन,

एक छोटी से कहानी से मैं अपनी बात शुरू करना चाहूंगा। बहुत वर्ष बीते, बहुत सदिया। किसी देश में एक बड़ा चित्रकार था। वह जब अपनी युवा अवस्था में था, उसने सोचा कि मैं एक ऐसा चित्र बनाऊं जिसमें भगवान का आनंद झलकता हो। मैं एक ऐसे व्यक्ति को खोजूं एक ऐसे मनुष्य को जिसका चित्र जीवन के जो पार है जगत के जो दूर है उसकी खबर लाता हो।

और वह अपने देश के गांव-गांव घूमा, जंगल-जंगल अपने छाना उस आदमी को, जिसकी प्रति छवि वह बना सके। और आखिर एक पहाड़ पर गाय चराने वाले एक चरवाहे को उसने खोज लिया। उसकी आंखों में कोई झलक थी। उसके चेहरे की रूप रेखा में कोई दूर की खबर थी। उसे देखकर ही लगाता था कि मनुष्य के भीतर परमात्मा भी है। उसने उसके चित्र को बनाया। उस चित्र की लाखों प्रतियां गांव-गांव दूर-दूर के देशों में बिकी, लोगों ने उस चित्र को घर में टाँग कर अपने घर को धन्य समझा।
फिर बीस साल बाद वह चित्रकार बूढा हो गया। तब उसे ख्याल आया कि ऐसा चित्र तो मैंने बनाया जिस में परमात्मा की झलक आती थी, जिसकी आंखों में किसी और लोक की झलक मिलती थी। जीवन के अनुभव से उसे पता चला था कि आदमी में भगवान ही अगर अकेला होता तो ठीक का, आदमी में शैतान भी दिखायी पड़ता है उसने सोचा कि मैं एक और चित्र

बनाऊंगा,जिसमें आदमी के भीतर शैतान की छवि होगी। तब मेरे दोनों चित्र पूरे मनुष्य के चित्र बन सकेंगे।

वह चित्र कार फिर गया—जुआ घरों में, शराब खानों में, पागल खानों में, और उसने खोजबीन की उस आदमी की जो आदमी न हो शैतान हो। जिसकी आंखों में न कर की लपटें जलती हो। जिसके चेहरे की आकृति उस सबका स्मरण दिलाती हो। जो अशुभ है, कुरूप है, असुन्दर है। वह पाप की प्रतिमा की खोज में निकला। एक प्रतिमा उसने परमात्मा की बनायी थी। वह एक प्रतिमा पाप की बनाना चाहता है।

और बहुत खोज के बाद एक कारागृह में उसे ऐ कैदी मिल गया। जिसने सात हताएं की थी और जो थोड़े ही दिनों के बाद मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था। फांसी पर लटकाया जाने वाला था। उस आदमी की आंखों में नरक के दर्शन होते थे। घृणा जैसे साक्षात थी। उस आदमी के चेहरे की रूपरेखा ऐसी थी कि वैसा कुरूप मनुष्य खोजना मुश्किल था। उसने उसके चित्र को बनाया। जिस दिन उसका चित्र बनकर पूरा हुआ, वह अपने पहले चित्र को भी लेकर कारागृह में आ गया। दोनों चित्रों को पास-पास रख कर देखने लगा। चित्र कार खुद ही मुग्ध हो गया था। कि कौन सी कलाकृति श्रेष्ठ है। कली की दृष्टि से यह तय करना मुश्किल था।

और तभी उस चित्रकार को पीछे किसी के रोने की आवाज सुनायी पड़ी। तो वह कैदी ज़ंजीरों में बंधा रो रहा था। जिसकी कि उसने तस्वीर बनायी थी। वह चित्रकार हैरान हुआ। उसने कहां मेरे दोस्त तुम क्यों रोते हो। चित्रों को देख कर तुम्हें क्या तकलीफ हुई।

उस आदमी ने कहा, मैंने इतने दिन तक छिपाने की कोशिश की लेकिन आज मैं हार गया। शायद तुम्हें पता नहीं कि पहली तस्वीर भी तुमने मेरी ही बनाई थी। ये दोनों चित्र मेरे ही है। बीस साल पहले पहाड़ पर जो आदमी तुम्हें मिला था वह मैं ही था। और मैं इस लिए रोता हूं,कि मैंने बीस साल में कौन सी यात्रा कर ली—स्वर्ग से नरक की, परमात्मा से पाप की।

पता नहीं यह कहानी कहां तक सच है। सच हो या न हो, लेकिन हर आदमी के जीवन में दो तस्वीरें है। हर आदमी के भीतर शैतान है, और परमात्मा है। और हर आदमी के भीतर नरक की भी संभावना है और स्वर्ग की भी। हर आदमी के भीतर सौंदर्य के फूल भी खिल भी खिल सकते है और कुरूपता के गंदे डबरा भी बन सकते है। प्रत्येक आदमी इन दो यात्राओं के बीच निरंतर डोल रहा है। ये दो छोर है, जिनमे से आदमी किसी को भी छू सकता है। और अधिक लोग नरक के छोर को छू लेते है। और बहुत कम सौभाग्यशाली है, जो अपने भीतर परमात्मा को उभार पाते है।

क्या हम अपने भीतर परमात्मा को उभार पाने में सफल हो सकते है। क्या हम भी वह प्रतिमा बन सकेंगे जहां परमात्मा की झलक मिले?

यह कैसे हो सकता है—इस प्रश्न के साथ ही आज की दूसरी चर्चा मैं शुरू करना चाहता हूं। यह कैसे हो सकता है कि आदमी परमात्मा की प्रतिमा बने? यह कैसे हो सकता है कि आदमी का जीवन एक स्वर्ग बने—एक सुवास, एक सुगंध, एक सौन्दर्य? यह कैसे हो सकता है कि मनुष्य उसे जान ले, जिसकी कोई मृत्यु नहीं है? यह कैसे हो सकता है कि मनुष्य परमात्मा के मुदिर में प्रविष्ट हो जाये?

होता तो उलटा है। बचपन में हम कहीं स्वर्ग में होते है। और बूढे होते-होते नरम तक पहुंच जाते है। होता उल्टा है। होता यह है कि बचपन के बाद जैसे हमारा रोज पतन होता है। बचपन में किसी इनोसेंस, किसी निर्दोष संसार का हम अनुभव करते है। और फिर धीरे-धीरे एक कपट से भर हुआ पाखंड से भरा हुआ मार्ग हम तय करते है। और बूढा होते-होते ने केवल हम शरीर से बूढे हो जोत है, बल्कि हम आत्मा से भी बूढ़े हाँ जाते है। न केवल शरीर दीन-हीन, जीर्ण-जर्जर हो जाता है, बल्कि आत्मा भी प्रतीत, जीर्ण-जर्जर हो जाती है। और इसे ही हम जीवन मान लेते है। और समाप्त हो जाते है।

धर्म इस संबंध में संदेह उठाना चाहता है। धर्म एक बड़ा संदेह है इस संबंध में कि यह आदमी के जीवन की यात्रा गलत है कि स्वर्ग से हम नरक तक पहुंच जाये। होना तो उल्टा चाहिए। जीवन की यात्रा अपलब्धि की यात्रा होनी चाहिए। कि हम दुःख से आनंद तक पहुँचें हम अंधकार से प्रकाश तक पहुंचे हम मृत्यु से अमृत तक पहुंच जायें। प्राणों के प्राण की अभिलाषा और प्यास भी वहीं है। प्राणों मे एक ही आकांक्षा है कि मृत्यु से अमृत तक कैसे पहुँचें। प्राणों में एक ही प्यास है कि हम अंधकार से आलोक को कैसे उपलब्ध हों। प्राणों की एक ही मांग है कि हम असत्य से सत्य तक कैसे जा सकते है।

निश्चित ही सत्य की यात्रा के लिए, निश्चित ही स्वयं के भीतर परमात्मा की खोज के लिए, व्यक्ति को ऊर्जा का एक संग्रह चाहिए। कन्जर्वेशन चाहिए। व्यक्ति को शक्ति का एक संवर्धन चाहिए। उसके भीतर शक्ति इक्कठी हो कि वह शक्ति का एक स्त्रोत बन जाये, तभी व्यक्ति को स्वर्ग तक ले जाया जा सकता है।

स्वर्ग निर्बलों के लिए नहीं है। जीवन के सत्य उनके लिए नहीं है। जो दीन हीन हो गये है। शक्ति को खोकर जो जीवन की सारी शक्ति को खो देते है। और भीतर दुर्बल और दीन हो जाते है। वे यात्रा नहीं कर सकते। उस यात्रा पर चढ़ने के लिए उन पहाड़ों पर चढ़ने के लिए शक्ति चाहिए।

और शक्ति का संवर्धन धर्म का सूत्र है—शक्ति का संवर्धन, कंजरवेशन ऑफ ऐनजी। कैसे शक्ति इकट्ठी हो कि हम शक्ति के उबलते हुए भण्डार हो जायें?

लेकिन हम तो दीन-हीन जन है। सारी शक्ति खोकर हम धीरे-धीरे निर्बल होते चले जाते है। सब खो जाता है भीतर रिक्ति रह जाती है। खाली खालीपन के अतिरिक्तत और कुछ भी नहीं छूटता है।

हम शक्ति को कैसे खो देते है?

मनुष्य का शक्ति को खोने का सबसे बड़ा द्वार सेक्स हे। काम मनुष्य की शक्ति के खोने का सबसे बड़ा द्वार है। जहां से वह शक्ति को खोता है।

और जैसा मैंने कल आपसे कहा, कोई कारण है जिसकी वजह से वह शक्ति को खोता है। शक्ति करे कोई भी खोना नहीं चाहता है। कौन शक्ति को खोना चाहता है। लेकिन कुछ झलक है उपलब्धि की उस झलक के लिए आदमी शक्ति को खोने को राज़ी हो जाता है। काम के क्षणों में कुछ अनुभव है, उस अनुभव के लिए आदमी सब कुछ खोने को तैयार है। अगर वह अनुभव किसी और मार्ग से उपलब्ध हो सके तो मनुष्य सेक्स के माध्यमसे शक्ति को खोन को कभी तैयार नहीं होगा।

क्या और कोई द्वार हे, उस अनुभव को पाने का? क्या और कोई मार्ग है उस अनुभव को उपलब्ध करने का—जहां हम अपने प्राणों की गहरी-से गहराई में उतर सके। जहां हम जीवन की ऊर्जा का ऊंचे से ऊँचा शिखर छू सके। जहां पर हम जीवन की शांति और आनंद की झलक पाते है। क्या कोई और मार्ग है? क्या कोई और मार्ग है अपने भी तीर पहुंचने का। क्या स्वयं की शांति और आनंद के स्त्रोत तक पहुंच जाने की और कोई सीढ़ी है?

अगर वह सीढ़ी हमे दिखाई पड़ जाये तो जीवन में एक क्रांति घटित हो जाती है। आदमी काम के प्रति विमुख और राम के प्रति सम्मुख हो जाता है। एक क्रांति घटित हो जाती है। एक नया द्वार खुल जाता है।

मनुष्य की जाति को अगर हम नया द्वार न दे सकें तो मनुष्य एक रिपिटीटिव सर्किल में, एक पुनरूक्ति वाले चक्कर में घूमता है और नष्ट होता है। लेकिन आज तक सेक्स के संबंध में जो भी धारणाएं रही है, वह मनुष्य को सेक्स के अतिरिक्त नया द्वार खोलने में समर्थ नहीं बना पायी। बल्कि एक उल्टा उपद्रव हुआ। प्रकृति एक ही द्वार देती है। मनुष्य को वह सेक्स का द्वार है। अब तक की शिक्षाओं ने वह बंद भी कर दिया और नया द्वार खोला नहीं। शक्ति भीतर घूमने लगी और चक्कर काटने लगी। और अगर नया द्वार शक्ति के

लिए न मिले तो घूमती हुई शक्ति को विक्षिप्त कर देती है। पागल कर देती है। और विक्षिप्त मनुष्य फिर न केवल उस द्वार से जो सेक्स का सहज द्वार था, निकलने की चेष्टा करता है। वह दीवालों और खिड़कियों को तोड़कर भी उसकी शक्ति बाहर बहने लगती है। वह अप्राकृतिक मार्गों से भी सेक्स की शक्ति बाहर बहने लगती है।

यह दुर्धटना घटी है। यह मनुष्य जाति के बड़े से बड़े दुर्भाग्यों में से एक है। नया द्वार नहीं खोला गया और पुराना द्वार बंद कर दिया गया। इसलिए मैं सेक्स के विरोध में; दुश्मनी के लिए, दमन के लिए अब तक जो भी शिक्षाऐं दी गयी है उन सके स्पष्ट विरोध में खड़ा हूं, उन सारी शिक्षाओं से मनुष्य की सेक्सुअलिटी बढ़ी है। कम नहीं हुई,बल्कि विकृत हुई है। क्या करें लेकिन, कोई और द्वार खोला जा सकता है।

मैंने आपसे कल कहा, संभोग के क्षण की जो प्रतीति हे वह प्रतीति दो बातों की है— टाइमलेसनेस और इगोलेसनेस की। समय शून्य हो जाता है। और अहंकार विलीन हो जाता है। समय शून्य होने से और अहंकार विलीन होने से हमें उसकी एक झलक मिलती है। जो हमारा वास्तविक जीवन है। लेकिन क्षण भर की झलक और हम वापस अपनी जगह खड़े हो जाते है। और एक बड़ी ऊर्जा एक बड़ी वैद्युतिक शक्ति का प्रवाह इसमें हम खो देते है। फिर झलक की याद ,स्मृति मन को पीड़ा देती रहती है। हम वापस उस अनुभव को पाना चाहते है। और वह झलक इतनी छोटी है कि एक क्षण में खो जाती है। ठीक से उसकी स्मृति भी नहीं रह जाती कि क्या थी झलक हमने क्या जाना था। बस एक धुन एक अर्ज एक पागल प्रतीक्षा रह जाती है। फिर उस अनुभव को पाने की। और जीवन भर आदमी इसी चेष्टा में संलग्न रहता है लेकिन उस झलक को एक क्षण से ज्यादा नहीं पाया जा सकता। वहीं झलक ध्यान के माध्यम से भी उपलब्ध होती है।

मनुष्य की चेतना तक पहुंचने के दो मार्ग है—काम और ध्यान सेक्स और मेडिटेशन।

सेक्स प्राकृतिक मार्ग है, जो प्रकृति ने दिया हुआ है। जानवरों को भी दिया हुआ है, पक्षियों को भी दिया हुआ है। पौधों को भी दिया हुआ है। मनुष्यों को भी दिया हुआ है। और जब तक मनुष्य केवल प्रकृति के दिए हुए द्वार का उपयोग करता है, तब तक वह पशुओं से ऊपर नहीं है। नहीं हो सकता। वह सारा द्वार तो पशुओं के लिए भी उपलब्ध है।

मनुष्यता का प्रारम्भ उस दिन से होता है। जिस दिन से मनुष्य सेक्स के अतिरिक्त एक नया द्वार खोलने मे समर्थ हो जाता है। उसके पहले हम मनुष्य नहीं है। नाम मात्र को मनुष्य है। उसके पहले हमारे जीवन का केंद्र पशु कास केंद्र है। प्रकृति का केंद्र है। जब तक हम उसके ऊपर उठ नहीं पाएँ उसे ट्रांसेंड नहीं कर पाएँ, उसका अतिक्रमण नहीं कर पाएँ, तब तक हम पशुओं की भांति ही जीते है।

हमने कपड़े मनुष्य के पहन रखे है। हम भाषा मनुष्यों की बोलते है, हमने सारा रूप मनुष्यों का पैदा कर रखा है; लेकिन भीतर गहने से गहरे मन के तल पर हम पशुओं से ज्यादा नहीं होते। नहीं हो सकते। और इस लिए जरा सा मौका मिलते ही हम पशु की तरह व्यवहार करने लग जाते है।

हिन्दुस्तान पाकिस्तान का बंटवारा हुआ और हमें दिखायी पड़ गया कि आदमी के कपड़ों के भीतर जानवर बैठा हुआ है। हमें दिखायी पड गया कि वे लोग जो कल मसजिदों में प्रार्थना करते थे और मंदिर में गीता पढ़ते थे वे क्या कर रहे है? वे हत्याएँ कर रहे है, वे बलात्कार कर रहे है। वे ही लोग जो मंदिरों और मसजिदों में दिखाई पड़ रहे थे, वे ही लोग बलात्कार करते हुए दिखायी पड़ने लगे। क्या हो गया इनको।

अभी दंगा फसाद हो जाये, अभी यह दंगा हो जाये, और यहीं आदमी को दंगे में मौका मिल जायेगा अपनी आदमियत का छुटटी लेने का। और फौरन वह भीतर छुपा हुआ पशु के वह प्रकट हो जायेगा। वह हमेशा तैयार है, वह प्रतीक्षा कर रहा हे कि मुझे मौका मिल जाये। भीड़ भाड़ में उसे मौका मिल जाता हे, तो वह जल्दी से छोड़ देता है अपना ख्याल। वह जो बाँध-बूंध कर उसने रखा हुआ है अपने को। भीड़ में मौका मिल जाता है। उसे भूल जाने का कि मैं भूल जाउं अपने को।

इसलिए आज तक अकेले आदमियों ने उतने पाप नहीं किये है, जितने भीड़ में आदमियों ने किये हे। अकेला आदमी थोड़ा डरता है। कि कोई देख लेगा। अकेला आदमी थोड़ा सोचता है। कि मैं ये सब क्या कर रहा हूं। अकेले आदमी को अपने कपड़ों की थोड़ी फिक्र होती है। लोग क्या कहेंगे। जानवर हो।

लेकिन जब बड़ी भीड़ होती है तो अकेला आदमी कहता है कि अब कौन देखता है—अब कौन पहचानता है। वह भीड़ के साथ एक हो जाता है। उसकी आइडेन्टिटी मिट जाती है। अब वह फलां नाम का आदमी नहीं है, अब वह भीड़ है। और बड़ी भीड़ जो करती है वह भी करता है। और क्या करता हे? आग लगाता है। बलात्कार करता है। भीड़ मे उसे मौका मिल जाता है। कि वह आपने पशु को वह फिर से छुटटी दे दें। जो उसके भीतर छिपा है।

(क्रमशः अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

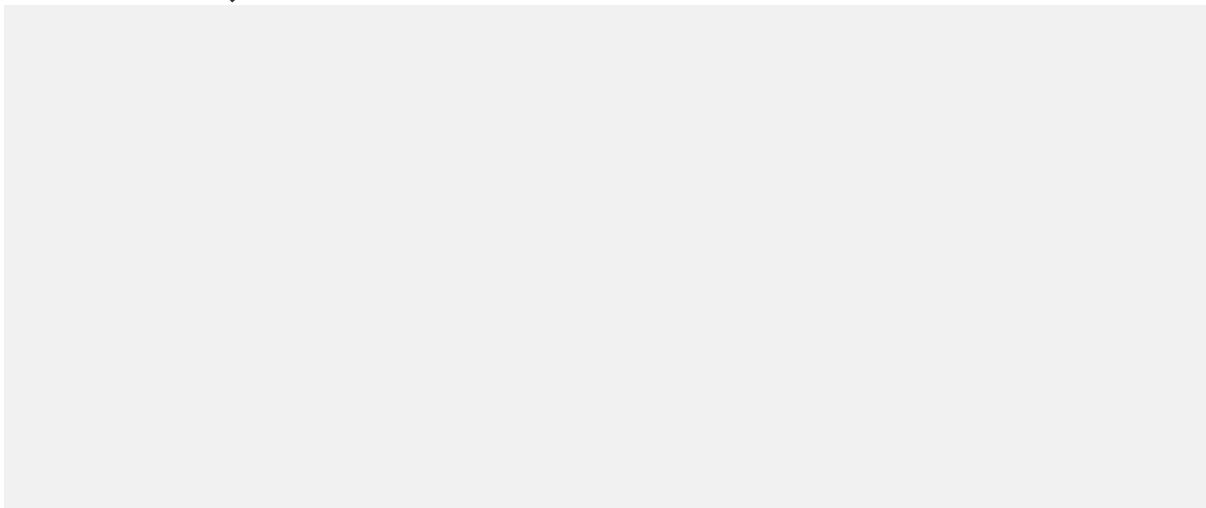
गोवा लिया टैंक, बम्बई,

29—सितम्बर—1968,

संभोग से समाधि की ओर—10

Posted on सितम्बर 18, 2010by sw anand prashad

संभोग : समय-शून्यता की झलक—2



संभोग से समाधि की ओर--ओशो

और इसलिए आदमी दस-पाँच वर्षों में युद्ध की प्रतीक्षा करने लगता है, दंगों की प्रतीक्षा करने लगता है। और हिन्दू-मुसलमान का बहाना मिल जाये तो हिन्दू-मुसलमान सही। अगर हिन्दू-मुसलमान का न मिले तो गुजराती-मराठी भी काम करेगा। अगर गुजराती-मराठी न सही तो हिन्दी बोलने वाला और गेर हिन्दी बोलने वाला भी चलेगा।

कोई भी बहाना चाहिए आदमी को, उसके भीतर के पशु को छुटटी चाहिए। वह घबरा जाता है। पशु भीतर बंद रहते-रहते। वह कहता है, मुझे प्रकट होने दो। और आदमी के भीतर का पशु तब तक नहीं मिटता है, जब तक पशुता का जो सहज मार्ग हे, उसके उपर मनुष्य की चेतना न उठे। पशुता का सहज मार्ग—हमारी उर्जा हमारी शक्ति का एक ही द्वार है बहने का—वह है सेक्स। और वह द्वार बंद कर दें तो कठिनाई खड़ी हो जाती है। उस द्वार को बंद करने के पहले नये ,द्वार का उदघाटन होना जरूरी है—जीवन चेतना नयी दिशा में प्रवाहित हो सके।
लेकिन यह हो सकता है। यह आज तक किया नहीं गया। नहीं किया गया। क्योंकि दमन सरल मालूम पड़ता हे। दबा देना किसी बात को आसान है। बदलना, बदलने कि विधि और साधना की जरूरत है। इसलिए हमने सरल मार्ग का उपयोग किया कि दबा दो अपने भीतर।

लेकिन हम यह भूल गये कि दबाने से कोई चीज नष्ट नहीं होती है, दबाने से और बलशाली हो जाती है। और हम यह भूल गये कि दबाने से हमारा आकर्षण और गहरा होता है। जिसे

हम दबाते है वह हमारी चेतना की और गहरी पर्तों में प्रविष्ट हो जाता है। हम उसे दिन में दबा लेते है, वह सपने में हमारी आंखों में झुलने लगता है। हम उसे रोजमर्रा दबा लेते है वह हमारे भी प्रतीक्षा करता है कि कब मौका मिल जाये,कब मैं फूट पडूं, निकल पडूं। जिसे हम दबाते है उससे हम मुक्त नहीं होते। हम और गहरे अर्थों में, और गहराइयों में, और अचेतन में और अनकांशस तक उसकी जड़ें पहुंच जाती है। और वह हमें जकड़ लेता है।

आदमी सेक्स को दबाने के कारण ही बंध गया और जकड़ गया। और यही वजह है कि पशुओं की तो सेक्स की कोई अवधि होती है। कोई पीरियड होता है। वर्ष में; आदमी की कोई अवधि न रही। कोई पीरियड न रहा। आदमी चौबीस घंटे बाहर महीने सेक्सुअल है। सारे जानवरों में कोई जानवर ऐसा नहीं है। जो बारह महीने, चौबीस घंटे कामुकता से भरा हुआ हो। उसका वक्त है, उसकी ऋतु है; वह आती है और चली जाती है। और फिर उसका स्मरण भी खो देता है।

आदमी को क्या हो गया है? आदमी ने दबाया जिस चीज को वह फैल कर उसके चौबीस घंटे बारह महीने के जीवन पर फैल गई है।

कभी आपने इस पर विचार क्या कि कोई पशु हर स्थिति में हर समय कामुक नहीं होता। लेकिन आदमी हर वक्त हर स्थिति में हर समय कामुक है—जो कामुकता उबल रही है। जैसे कामुकता ही सब कुछ हो। वह कैसे हो गया? यह कैसे हो गया? यह दुर्घटना कैसे संभव हुई है? पृथ्वी पर सिर्फ मनुष्य के साथ हुआ है, और किसी जानवर के साथ नहीं—क्यों?

एक ही कारण है सिर्फ आदमी ने दबाने की कोशिश की है। और जिसे दबाया, वह जहर की तरह सब तरफ फैल गई। और दबाने के लिए हमें क्या करना पड़ा? दबाने के लिए हमें निंदा करनी पड़ी,दबाने के लिए हमें कहना पडा की सेक्स नरक है। हमें कहना पडा जो सेक्स में है वह गर्हित है, निंदित है। हमें ये सारी गालियां खोजनी पड़ी, तभी हम दबाने में सफल हो सके। और हमें ख्याल भी नहीं कि इन निंदा ओर गलियों के कारण हमारा सारा जीवन जहर से भर गया है।

नीत्से ने एक वचन कहा है, जो बहुत अर्थपूर्ण है। उसने कहा है कि धर्मों ने जहर खिलाकर सेक्स को मार डालने की कोशिश की है। सेक्स मरा तो नहीं, सिर्फ जहरीला और निंदित हो गया है। मर भी जाता तो ठीक था। वह मरा नहीं। लेकिन ओर गड़बड़ हो गयी बात। वह जहरीला होकर जिंदा है। यह जो सेक्सुअलिटी है, यह जहरीला सेक्स है।

सेक्स तो पशुओं भी है, काम तो पशुओं में भी है। क्योंकि काम जीवन की ऊर्जा है। लेकिन सेक्सुअलिटी, कामुकता सिर्फ मनुष्य में है। कामुकता पशुओं में नहीं है। पशुओं की आंखों में

देखें, वहां कामुकता दिखाई नहीं पड़ेगी। आदमी की आंखों में झांके, वहां एक कामुकता का रस झलकता हुआ दिखायी पड़ेगा। इसलिए पशु आज भी एक तरह से सुन्दर है। लेकिन दमन करने वाले पागलों की कोई सीमा नहीं है कि वे कहां तक बढ़ जायेंगे।

मैंने कल आपको कहा था कि अगर हमें दुनिया को सेक्स से मुक्त करना है, तो बच्चे और बच्ची यों को एक दूसरे के निकट लाना होगा। इसके पहले कि उनमें सेक्स जागे। चौदह साल के पहले वे एक दूसरे के शरीर से इतने स्पष्ट रूप से परिचित हो लें कि वह आकांशा विलीन हो जाये।

लेकिन अमरीका में अभी-अभी एक नया आंदोलन चला है। और वह नया आंदोलन वहां के बहुत धार्मिक लोग चला रहे है। शायद आपको पता हो। वह नया आंदोलन बड़ा अद्‌भत है। वह आंदोलन यह है कि सड़कों पर गाय, भेस, घोड़े, कुत्ते, बिल्ली को बिना कपड़ों के न निकाला जाये। उनको भी कपड़े पहने चाहिए। क्योंकि नंगे पशुओं को देख कर बच्चें बिगड़ सकते है। यह बड़े मजे कि बात है। नंगे पशुओं को देख कर बच्चें बिगड़ सकते है। अमरीका के कुछ नीति शास्त्री इसके बाबत आंदोलन और संगठन ओर संस्थाएं बना रहे है। आदमी को बचाने की इतनी कोशिश चल रही है। और कोशिश बचाने की जो करने वाले लोग है, वे ही आदमी को नष्ट कर रहे है।

लेकिन वह जो भयभीत लोग है, वे जो डरे हुए लोग है। वे भय और डर के कारण सब कुछ कर रहे है आज तक। और उनके सब करने से आदमी रोज नीचे उतरता जा रहा है। जरूरत तो यह है कि आदमी भी कसी दिन इतना सरल हो कि नग्न खड़ा हो सके—निर्दोष और आनंद से भरा हुआ।

जरूरत तो यह है कि—जैसे महावीर जैसा व्यक्ति नग्न खड़ा हो गया। लोग कहते है कि उन्होंने कपड़े छोड़े कपड़ों का त्याग किया। मैं कहता हूं, न कपड़े छोड़े न कपड़ों का त्याग किया। चित इतना निर्दोष हो गया होगा। इतना इनोसेंस, जैसे एक छोटे बच्चे का, तो वे नग्न खड़े हो गये होंगे। क्योंकि ढांकने को जब कुछ भी नहीं रह जाता तो आदमी नग्न हो सकता है।

जब तक ढाँकने को कुछ है हमारे भीतर,तब तक आदमी आपने को छिपायेंगा। जब ढांकने को कुछ भी नहीं है, तो नग्न हो सकता है।

चाहिए तो एक ऐसी पृथ्वी कि आदमी भी इतना सरल होगा कि नग्न होने में भी उसे कोई पश्चाताप कोई पीड़ा न होगी। नग्न होने में उसे कोई अपराध न होगा। आज तो हम कपड़े

पहन कार भी अपराधी मालूम होते है। हम कपड़े पहनकर भी नंगे है। और ऐसे लोग भी रहे है। जो नग्न होकर भी नग्न नहीं थे।

नंगापन मन की एक वृति है।

सरलता, निर्दोष चित—फिर नग्नता भी सार्थक हो जाती है। अर्थ पूर्ण हो जाती है। वह भी एक सौंदर्य ले लेती है।

लेकिन अब तक आदमी को जहर पिलाया गया है। और जहर का परिणाम यह हुआ है कि हमारा सारा जीवन एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक विषाक्त हो गया है।

स्त्रीयों को हम कहते है, पति को परमात्मा समझना। और उन स्त्रियों को बचपन से सिखाया गया है कि सेक्स पाप है। वे कल विवाहित होंगी। वे उस पति को कैसे परमात्मा मान सकेंगी, जो उन्हें सेक्स में और नरक में ले जा रहा है। एक तरफ हम सिखाते है पति परमात्मा है और पत्नी का अनुभव कहता है कि यह पहला पापी है जो मुझे नरक में घसीट रहा है।

एक बहिन ने मुझे आकर कहा, पिछली मीटिंग में जब मैं बोला, भारतीय विद्या भवन में तो एक बहन मेरे पास उसी दिन आयी और उसने कहा कि मैं......मैं बहुत गुस्से में हूं? मैं बहुत क्रोध में हूं। सेक्स तो बड़ी घृणित चीज है। सेक्स तो पाप है। और आपने सेक्स की इतनी बातें क्यों कि। मैं तो घृणा करती हूं सेक्स से।

अब यह पत्नी है इसका पति है, इसके बच्चें है। बच्चियां है। और यह पत्नी सेक्स से घृणा करती है। यह पति को कैसे प्रेम कर सकेगी। जो इसे सेक्स में लिए जा रहा है। यह उन बच्चों को कैसे प्रेम कर सकेगी। जो सेक्स से पैदा हुए है। इसका प्रेम जहरीला हो गया है। इसके प्रेम में जहर छिपा है। पति और उसके बीच एक बुनियादी दीवाल खड़ी हो गई है। बच्चों और इसके बीच एक बुनियादी दिवाल खड़ी हो गई है क्योंकि वे सेक्स से पैदा हुए हे। ये बच्चें पाप से आये है। क्योंकि यह सेक्स की दीवाल और सेक्स की कंडेमनेशन की वृति बीच में खड़ी है। यह पति और मेरे बीच पाप का संबंध है, और जिनके साथ पाप को संबंध हो, उसके प्रति मैत्रीपूर्ण कैसे हो सकते है? पाप के प्रति हम मैत्री पूर्ण हो सकते है।

सारी दुनियां का गृहस्थ जीवन नष्ट किया है, सेक्स को गाली देने वाले,निंदा करने वाले लोगों ने। और वे इसे नष्ट करके जो दुष् परिणाम लाये है वह यह नहीं है कि सेक्स से लोग मुक्त हो गये है। जो पति अपनी पत्नी और अपने बीच एक दीवाल पाता है। पाप की, वह पत्नी से कभी भी तृप्ति अनुभव नहीं कर पाता। तो आसपास की स्त्रियों को खोजता है, वेश्याओं को

खोजता है। अगर पत्नी से उसे तृप्ति मिल गयी होती तो शायद इस जगत की सारी स्त्रीयां उसके लिए मां और बहन हो जातीं। लेकिन पत्नी से भी तृप्ति न मिलने के कारण सारी स्त्रीयां उसे पोटेंशियलिटी औरतों की तरह पोटेंशियल पत्निओं की तरह मालूम पड़ती है। जिनको पत्नी में बदला जा सकता है।

यह स्वाभाविक है यह होने वाला था। यह होने वाला था, क्योंकि जहां तृप्ति मिल सकती थी। वहां जहर है। वहां पाप है। और तृप्ति नहीं मिलती। और चह चारों तरफ भटकता है और खोजता है। और क्या-क्या ईजादें करता है खोजकर आदमी। अगर इन सारी ईजादों को हम सोचने बैठे तो घबरा जायेंगे कि आदमी ने क्या-क्या ईजादें की है। लेकिन एक बुनियादी बात पर खयाल नहीं किया कि वह जो प्रेम का कुआं था, वह जो काम का कुआं का, वह जहरीला हो गया है।

और जब पत्नी और पति के बीच जहर का भाव हो, घबराहट का भाव हो, पाप का भाव हो तो फिर यह पाप की भावना रूपांतरण नहीं करने देगी। अन्यथा मेरी समझ यह है कि एक पति और पत्नी अगर एक दूसरे के प्रति समझ पूर्वक प्रेम से भरे हुए आनंद से भरे हुए और सेक्स के प्रति बिना निंदा के सेक्स को समझने की चेष्टा करेंगे तो आज नहीं कल, उनके बीच का संबंध रूपांतरित हो जाने वाला है। यह हो सकता है कि कल वहीं पत्नी मां जैसी दिखाई पड़ने लगे।

गांधी जी 1930 के करीब श्री लंका गये थे। उनके साथ कस्तूरबा साथ थी। संयोजकों ने समझा कि शायद गांधी की मां साथ आयी हुई है। क्योंकि गाँधीजी कस्तूरबा को खुद भी बा ही कहते थे। लोगों ने समझा शायद उनकी मां होगी। संयोजकों ने परिचय देते हुए कहा कि गांधी जी आये है और बड़ सौभाग्य की बात है कि उनकी मां भी साथ आयी हुई है। वह उनके बगल में बैठी है। गांधी जी के सैक्रेटरी तो घबरा गये कि यह तो भूल हमारी है, हमें बताना था कि साथ में कौन है। लेकिन अब तो बड़ी देर हो चुकी थी। गांधी तो मंच पर जाकर बैठ भी गये थे और बोलना शुरू कर दिया था। सैक्रेटरी घबराये हुए है कि गांधी पीछे क्या कहेंगे। उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी कि गांधी नाराज नहीं होंगे, क्योंकि ऐसे पुरूष बहुत कम है, जो पत्नी को मां बनाने में समर्थ हो जाते है।

लेकिन गांधी जी ने कहां, की सौभाग्य की बात है, जिन मित्र ने मेरा परिचय दिया है। उन्होंने भूल से एक सच्ची बात कह दी। कस्तूरबा कुछ वर्षों से मेरी मां हो गयी है। कभी वह मेरी पत्नी थी। लेकिन अब वह मेरी मां है।

इस बात की संभावना है कि अगर पत्नी और पति काम को, संभोग को समझने की चेष्टा करे तो एक दूसरे के मित्र बन सकते है और दूसरे के काम के रूपांतरण में सहयोगी और साथी हो सकते है।

और जिस दिन पति और पत्नी अपने आपस के संभोग के संबंध को रूपांतरित करने में सफल हो जाते है उस दिन उनके जीवन में पहली दफा एक दूसरे के प्रति अनुग्रह और ग्रेटीट्यूड का भाव पैदा होता हे, उसके पहले नहीं। उसके पहले वे एक दूसरे के प्रति क्रोध से भरे रहते है, उसके पहले वे एक दूसरे के बुनियादी शत्रु बने रहते है। उसके पहले उनके बीच एक संघर्ष हे, मैत्री नहीं।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)
ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—3

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

29—सितम्बर—1968,

संभोग से समाधि की ओर—11

Posted on सितम्बर 19, 2010by sw anand prashad

संभोग : समय-शून्यता की झलक—3

संभोग से समाधि की ओर--ओशो

मैत्री उस दिन शुरू होती है। जिस दिन वे एक दूसरे के साथी बनते है और उनके काम की ऊर्जा को रूपांतरण करने में माध्यम बन जाते है। उस दिन एक अनुग्रह एक ग्रेटीट्यूड, एक कृतज्ञता का भाव ज्ञापन होता है। उस दिन पुरूष आदर से भरता है। स्त्री के प्रति क्योंकि स्त्री ने उसे काम-वासना से मुक्त होने में सहयोग पहुंचायी है। उस दीन स्त्री अनुगृहित होती है पुरूष के प्रति कि उसने उसे साथ दिया और वासना से मुक्ति दिलवायी। उस दिन वे सच्ची मैत्री में बँधते है, जो काम की नहीं प्रेम की मैत्री है। उस दिन उनका जीवन ठीक उस दिशा में जाता है, जहां पत्नी के लिए पति परमात्मा हो जाता है। और पति के लिए पत्नी परमात्मा हो जाती है।
लेकिन वह कुआं तो विषाक्त कर दिया है, इसी लिए मैंने कल कहा कि मुझसे बड़ा शत्रु सेक्स का खोजना कठिन हे। लेकिन मेरी शत्रुता का यह मतलब नहीं है कि मैं सेक्स को गाली दूँ और निंदा करूं। मेरी शत्रुता का मतलब यह है कि मैं सेक्स को रूपांतरित करने के संबंध में दिशा-सूचन करूं। मैं आपको कहूं कि वह कैसे रूपांतरित हो सकता है। मैं कोयले का दुश्मन हूं,क्योंकि मैं कोयले को हीरा बनाना चाहता हूं। मैं सेक्स को रूपांतरित करना चाहता हूं। वह कैसे रूपांतरित होगा, उसकी क्या विधि होगी?

मैंने आपसे कहा, एक द्वार खोलना जरूरी है—नया द्वार। बच्चे जैसे ही पैदा होते है, वैसे ही उनके जीवन में सेक्स का आगमन नही हो जाता। अभी देर है। अभी शरीर शक्ति इकट्ठी कर रहा है। अभी शरीर के अणु मजबूत होंगे। अभी उस दिन की प्रतीक्षा है। जब शरीर पूरी तरह से तैयार हो जायेगा। ऊर्जा इकट्ठी होगी द्वार जो बंद रहा है। 14 वर्षो तक वह खुल जायेगा उर्जा के धक्के से, और सेक्स की दुनिया शुरू हो जायेगी। एक बार द्वार खुल जाने के बाद नया द्वार खोलना मुश्किल हो जायेगा। क्योंकि समस्त उर्जा का नियम यही है। समस्त शक्ति का वह एक दफा अपना मार्ग खोज ले बहने के लिए तो वह उसी मार्ग से बहना पसन्द करती है।

गंगा बह रही है सागर की ओर, उसने एक बार रास्ता खोज लिया। अब वह उसी रास्ते से बही चली जाती है। बही चली जाती है। रोज-रोज नया पानी आता है। उसी रास्ते से बहता हुआ चला जाता है। गंगा रोज नया रास्ता नहीं खोजती है।

जीवन की ऊर्जा भी एक रास्ता खोज लेती है। अब वह उसी रास्ते से बही चली जाती है। अगर जीवन को कामुकता से मुक्त करना हे, तो सेक्स का रास्ता खुलने से पहले नया रास्ता, ध्यान का रास्ता तोड़ देना जरूरी है। एक-एक बच्चे को ध्यान की अनिवार्य शिक्षा और दीक्षा मिलनी चाहिए।

पर हम उसे सेक्स के विरोध की दीक्षा देते है, जो कि अत्यंत मूर्खतापूर्ण है। सेक्स के विरोध की दीक्षा नहीं देनी है। शिक्षा देनी है ध्यान की, पाजीटिव कि वह ध्यान के लिए कैसे उपलब्ध

हो। और बच्चे ध्यान को जल्दी उपलब्ध हो सकते है। क्योंकि अभी उनकी ऊर्जा का कोई भी द्वार खुला नहीं है। अभी द्वार बंद है, अभी ऊर्जा संरक्षित है, अभी कहीं भी नये द्वार पर धक्के दिये जो सकते है, और नया द्वार खोला जो सकता है। फिर ये ही बूढ़े, हो जायेंगे और इन्हें ध्यान में पहुंचना, अत्यंत कठिन हो जायेगा।

ऐसे ही, जैसे एक नया पौधा पैदा होता है, उसकी शाखाएं कहीं भी झुक जाती है। कहीं भी झुकायी जा सकती है। फिर वही बूढ़ा वृक्ष हो जाता है। फिर हम उसकी शाखाओं को झुकाने की कोशिश करते है, तो फिर शाखाएं टूट जाती है, झुकती नहीं।

बूढ़े लोग ध्यान की चेष्टा करते है दुनिया में, जो बिलकुल ही गलत है। ध्यान की सारी चेष्टा बच्चों पर की जानी चाहिए। लेकिन मरने के करीब पहुंच कर आदमी ध्यान में उत्सुक होता है। वह पूछता है ध्यान क्या, योग क्या,हम कैसे शांत हो जायें। जब जीवन की सारी ऊर्जा खो गयी, जब जीवन के सब रास्ते सख्त और मजबूत हो गये। जब झुकना और बदलना मुश्किल हो गया, तब वह पूछता है कि अब मैं कैसे बदल जाऊँ। एक पैर आदमी कब्र में डाल लेता है, और दूसरा पैर बहार रख कर पूछता है। ध्यान का कोई रास्ता है?

अजीब सी बात है। बिलकुल पागलपन की बात है। यह पृथ्वी कभी भी शांत और ध्यानस्थ नहीं हो सकती। जब तक ध्यान का संबंध पहले दिन के पैदा हुए बच्चे से हम न जोड़ेंगे अंतिम दिन के वृद्ध से नहीं जोड़ा जा सकता। व्यर्थ ही हमें बहुत श्रम उठाना पड़ता है बाद के दिनों में शांत होने के लिए, जो कि पहले एकदम हो सकता था।

छोटे बच्चे को ध्यान की दीक्षा काम के रूपांतरण का पहला चरण है—शांत होने की दीक्षा, निर्विचार होने की दीक्षा मौन होने की दीक्षा।

बच्चे ऐसे भी मौन है, बच्चे ऐसे ही शांत है, अगर उन्हें थोड़ी सी दिशा दी जाये और उन्हें मौन और शांत होने के लिए घड़ी भर की भी शिक्षा दी जाये तो जब वे 14 वर्ष के होने के करीब आयेंगे। जब काम जगेगा, जब तक उनका एक द्वार खुल चुका होगा। शक्ति इकट्ठी होगी और जो द्वार से बहनी शुरू हो जायेगी। वह अनुभव उनकी ऊर्जा को गलत मार्गों से रोकेगा और ठीक मार्गों पर ले आयेगा।

लेकिन हम छोटे-छोटे बच्चों को ध्यान तो नहीं सिखाते, काम का विरोध सिखाते है। पाप है गंदगी है। कुरूपता है, बुराई है, नरक है—यह सब हम बता रहे है। और इस सबके बताने से कुछ भी फर्क नहीं पड़ता—कुछ भी फर्क नहीं पड़ता। बल्कि हमारे बताने से वे और भी आकर्षित होते है और तलाश करते है कि क्या है यह गंदगी, क्या है नरक, जिसके लिए बड़े इतने भयभीत और बेचैन होते है।

और फिर थोड़े ही दिनों में उन्हें यह भी पता चल जाता है कि बड़े जिस बात से हमें रोकने की कोशिश कर रहे है। खुद दिन रात उसी में लीन रहते है। और जिस दिन उन्हें यह पता चल जाता है, मां बाप के प्रति सारी श्रद्धा समाप्त हो जाती है।

मां-बाप के प्रति श्रद्धा समाप्त करने में शिक्षा का हाथ नहीं है। मां-बाप के प्रति श्रद्धा समाप्त करने में मां बाप का अपना हाथ है।

आप जिन बातों के लिए बच्चों को गंदा कहते है। बच्चे बहुत जल्दी पता लगा लेते है कि उन सारी गंदगियों में आप भली भांति लवलीन हे। आपकी दिन की जिंदगी दूसरी और रात की दूसरी। आप कहते है कुछ और करते है कुछ।

छोटे बच्चे बहुत एक्यूट आब्जर्वर होते है। वे बहुत गौर से निरीक्षण करते रहते है। कि क्या हो रहा है। घर में वे देखते है कि मां जिस बात को गंदा कहती है, बाप जिस बात को गंदा कहता है। वही गंदी बात दिन रात घर में चल रही है। इसकी उन्हें बहुत जल्दी बोध हो जाता है। उनकी सारी श्रद्धा का भाव विलीन हो जाता है। कि धोखेबाज है ये मां-बाप। पाखंडी है। हिपोक्रेट है। ये बातें कुछ और कहते है, करते कुछ और है।

और जिन बच्चों का मां-बाप पर से विश्र्वास उठ गया। वे बच्चे परमात्मा पर कभी विश्वास नहीं कर सकेंगे। इसको याद रखना। क्योंकि बच्चों के लिए परमात्मा का पहला दर्शन मां-बाप में होता है। अगर वहीं खंडित हो गया तो। ये बच्चे भविष्य में नास्तिक हो जाने वाले है। बच्चों को पहले परमात्मा की प्रतीति अपने मां-बाप की पवित्रता से होती है। पहली दफा बच्चे मां-बाप को ही जानते है। निकटतम और उनसे ही उन्हें पहली दफा श्रद्धा और रिवरेंस का भाव पैदा होता है। अगर वही खंडित हो गया तो इन बच्चों को मरते दम तक वापस परमात्मा के रास्ते पर लाना मुश्किल हो जायेगा। क्योंकि पहला परमात्मा ही धोखा दे गया। जो मां थी, जो बाप था, वहीं धोखे बाज सिद्ध हुआ।

आज सारी दुनिया में जो लड़के यह कह रहे है कि कोई परमात्मा नहीं है, कोई आत्मा नहीं है। कोई मोक्ष नहीं है। धर्म सब बकवास है। उसका कारण यह नहीं है कि लड़कों ने पता लगा लिया है कि आत्मा नहीं है। परमात्मा नहीं है। उसका कारण यह है कि लड़कों ने मां-बाप का पता लगा लिया है। कि वे धोखेबाज है। और यह सार धोखा सेक्स के आस पास केंद्रित है। और यह सारा धोखा केंद्र पर खड़ा है।

बच्चों को यह सिखाने की जरूरत नहीं है कि सेक्स पाप है, बल्कि ईमानदारी से यह सिखाने की जरूरत है कि सेक्स जिंदगी का एक हिस्सा है और तुम सेक्स से ही पैदा हुए हो, और वह हमारी जिंदगी में है, ताकि बच्चे सरलता से मां बाप को समझ सकें और जब जीवन को वह

जानेंगे तो आदर से भर सकें कि मां-बाप सच्चे और ईमानदार है। उनको जीवन में आस्तिक बनाने में इससे बड़ा संबल और कुछ भी नहीं है। वे अपने मां बाप को सच्चे और ईमानदार अनुभव कर सकते है।

लेकिन आज सब बच्चे जानते है कि मां-बाप बेईमान और धोखेबाज हे। यह बच्चे और मां बाप के बीच एक कलह का एक कारण बनता है। सेक्स का दमन पति ओर पत्नी को तोड़ दिया है। मां-बाप और बच्चों को तोड़ दिया है।

नहीं, सेक्स का विरोध नहीं, निंदा नहीं, बल्कि सेक्स की शिक्षा दी जानी चाहिए।

जैसे ही बच्चे पूछने को तैयार हो जायें, जो भी जरूरी मालूम पड़े,जो उनकी समझ के योग्य मालूम पड़े, वह सब उन्हें बता दिया जाना चाहिए। ताकि वे सेक्स के संबंध में अति उत्सुक न हों। ताकि उनका आकर्षण न पैदा हो, ताकि वे दीवाने होकर गलत रास्तों से जानकारी पाने की कोशिश न करें।

आज बच्चे सब जानकारी पा लेते है, यहाँ-वहां से। गलत मार्गो से, गलत लोगों से उन्हें जानकारी मिलती है। जो जीवन भर उन्हें पीड़ा देती है। और मां-बाप और उनके बीच एक मौन की दीवार होती है—जैसे मां-बाप को कुछ भी पता नहीं और बच्चों को भी पता नहीं है। उन्हें सेक्स की सम्यक शिक्षा मिलनी चाहिए—राइट एजुकेशन।

और दूसरी बात, उन्हें ध्यान की दीक्षा मिलनी चाहिए। कैसे मौन हों, कैसे शांत हों, कैसे निर्विचार हों। और बच्चे तत्क्षण निर्विचार हो सकते है। मौन हो सकते है। शांत हो सकते है। चौबीस घंटे में एक घंटा अगर बच्चों को घर में मौन में ले जाने की व्यवस्था हो। निश्चित ही वह मौन में तभी जा सकेंगे,जब आप भी उनके साथ मौन बैठ सकें। हर घर में एक घंटा मौन का अनिवार्य होना चाहिए। एक दिन खाना न मिले घर में तो चल सकता है। लेकिन एक घंटा मौन के बिना घर नहीं चलना चाहिए।

वह घर झूठा हे। उस घर को परिवार कहना गलत है, जिस परिवार में एक घंटे के मौन की दीक्षा नहीं है। वह एक घंटे का मौन चौदह वर्षों में उस दरवाजे को तोड़ देगा। रोज धक्के मारेगा। उस दरवाजे को तोड़ देगा। जिसका नाम ध्यान है। जिस ध्यान से मनुष्य को समय हीन, टाइमलेसनेस इगोलेसनेस, अहंकार-शुन्य का अनुभव होता है। जहां से आत्मा की झलक मिलती है। वह झलक सेक्स के अनुभव के पहले मिल जानी जरूरी है। अगर वह झलक मिल जाए तो सेक्स के प्रति अतिशय दौड़ समाप्त हो जायेगी। उर्जा इस नये मार्ग से बहने लगेगी। यह मैं पहला चरण कहता हूं।

ब्रह्मचर्य की साधना में, सेक्स के ऊपर उठने की साधना में सेक्स की उर्जा के ट्रांसफॉर्मेशन के लिए पहला चरण है ध्यान और दूसरा चरण है प्रेम।

बच्चों को बचपन से ही प्रेम की दीक्षा दि जानी चाहिए।

हम अब तक यही सोचते है कि प्रेम की शिक्षा मनुष्य को सेक्स में ले जायेगी। यह बात अत्यंत भ्रांत हे। सेक्स की शिक्षा तो मनुष्य को प्रेम में ले जा सकती है। लेकिन प्रेम की शिक्षा कभी किसी मनुष्य को सेक्स में नहीं ले जाती। बल्कि सच्चाई बिलकुल उल्टी है।

जो लोग जितने कम प्रेम से भरे होते है, उतने ही ज्यादा कामुक होते है।

जिसके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतनी ही ज्यादा धृणा होगी।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतना ही विद्वेष होगा।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतनी ही ईर्ष्या होगी।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतनी ही प्रतिस्पर्धा होगी।

जिनके जीवन में जितना कम प्रेम है, उनके जीवन में उतनी ही दुःख और चिंता होगी।

दुःख, चिंता, ईर्ष्या, घृणा, द्वेष इन सबसे जो आदमी जितना ज्यादा घिरा है, उसकी शक्तियां सारी की सारी भीतर इकट्ठा हो जाती है। उनके निकास का कोई मार्ग नहीं रह जाता है। उनके निकास का एक ही मार्ग रह जाता है—वह सेक्स हे।

प्रेम शक्तियों का निकास बनता है। प्रेम बहाव है। क्रिएशन—सृजनात्मक है प्रेम। इसीलिए वह बहता है और एक तृप्ति लाता है। वह तृप्ति सेक्स की तृप्ति से बहुत ज्यादा कीमती और गहरी है। जिसे वह तृप्ति मिल गयी, वह फिर कंकड़-पत्थर नहीं बीनता। जिसे हीरे जवाहरात मिलने शुरू हो जाते है।

लेकिन घृणा से भरे आदमी को वह तृप्ति कभी नहीं मिलती। घृणा में वह तोड़ देता है चीजों को। लेकिन तोड़ने से कभी किसी आदमी को कोई तृप्ति नहीं मिलती। तृप्ति मिलती है निर्माण करने से।

द्वेष से भरा आदमी संघर्ष करता है। लेकिन संघर्ष से कोई तृप्ति नहीं मिलती तृप्ति मिलती है, दान से , देने से। छीन लेने से नहीं। संघर्ष करने वाला छीन लेता है। छीनने से वह तृप्ति कभी नहीं मिलती जो किसी को देने से और दान से उपलब्ध होती है।

महत्व कांक्षी आदमी एक पद से दूसरे पद की यात्रा करता रहता है। लेकिन कभी भी शांत नहीं हो पाता। शांत वे होते है जो पदों की यात्रा नहीं करते,बल्कि प्रेम की यात्रा करते है। जो प्रेम के एक तीर्थ से दूसरे तीर्थ की यात्रा करते है।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)
ओशो

संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—3

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

29—सितम्बर—1968,

संभोग से समाधि की ओर—12

Posted on सितम्बर 20, 2010by sw anand prashad

संभोग से समाधि की ओर--ओशो

संभोग: समय शून्यता की झलक—4

जितना आदमी प्रेम पूर्ण होता है। उतनी तृप्ति, एक कंटेंटमेंट, एक गहरा संतोष, एक गहरा आनंद का भाव, एक उपलब्धि का भाव, उसके प्राणों के रग-रग में बहने लगाता है। उसके सारे शरीर से एक रस झलकने लगता है। जो तृप्ति का रस है, वैसा तृप्त आदमी सेक्स की दिशाओं में नहीं जाता। जाने के लिए रोकने के लिए चेष्टा नहीं करनी पड़ती। वह जाता ही नहीं,क्योंकि वह तृप्ति, जो क्षण भर को सेक्स से मिलती थी, प्रेम से यह तृप्ति चौबीस घंटे को मिल जाती है।

तो दूसरी दिशा है, कि व्यक्तित्व का अधिकतम विकास प्रेम के मार्गों पर होना चाहिए। हम प्रेम करें, हम प्रेम दें, हम प्रेम में जियें।
और जरूरी नहीं है कि हम प्रेम मनुष्य को ही देंगे, तभी प्रेम की दीक्षा होगी। प्रेम की दीक्षा तो पूरे व्यक्तित्व के प्रेमपूर्ण होने की दीक्षा है। वह तो 'टू बी लिविंग' होने की दीक्षा है।

एक पत्थर को भी हम उठाये तो हम ऐसे उठा सकते है। जैसे मित्र को उठा रहे है। और एक आदमी का हाथ भी हम पकड सकते है, जैसे शत्रु का पकड़े हुए है। एक आदमी वस्तुओं के साथ भी प्रेमपूर्ण व्यवहार कर सकता है। एक आदमी आदमियों के साथ भी ऐसा व्यवहार करता है, जैसा वस्तुओं के साथ भी नहीं करना चाहिए। घृणा से भरा हुआ आदमी वस्तुएं समझता है मनुष्य को। प्रेम से भरा हुआ आदमी वस्तुओं को भी व्यक्तित्व देता है।

एक फकीर से मिलने एक जर्मन यात्री गया हुआ था। उस फकीर से जाकर नमस्कार किया। उसने दरवाजे पर जोर से जूते खोल दिये, जूतों को पटका, धक्का दिया जोर से दरवाजे को।

क्रोध में आदमी जूते भी खोलता है तो ऐसे जैसे जूते दुश्मन हो। दरवाजे भी खोलता है तो ऐसे दरवाजे से कोई झगड़ा हो।

दरवाजे को धक्का देकर वह भीतर गया। उस फकीर से जाकर नमस्कार किया। उस फकीर ने कहा: नहीं, अभी मैं नमस्कार का उत्तर न दे सकूंगा। पहले तुम दरवाजे से और जूतों से क्षमा मांग कर आओ।

उस आदमी ने कहा, आप पागल हो गये है? दरवाज़ों और जूतों से क्षमा। क्या उनका भी कोई व्यक्तित्व है?

उस फकीर ने कहा, तुमने क्रोध करते समय कभी भी न सोचा कि उनका कोई व्यक्तित्व है। तुमने जूते ऐसे पटके जैसे उनमें जाने हो, जैसे उनका कोई कसूर हो। तुमने दरवाजा ऐसे

खोला जैसे तुम दुश्मन हो। नहीं, जब तुमने क्रोध करते वक्त उनका व्यक्तित्व मान लिया,तो पहले जाओ, क्षमा मांग कर आ जाओ, तब मैं तुमसे आगे बात करूंगा। अन्यथा मैं बात करने को नहीं हूं।

अब वह आदमी दूर जर्मनी से उस फकीर को मिलने गया था। इतनी सी बात पर मुलाकात न हो सकेगी। मजबूरी थी। उसे जाकर दरवाजे पर हाथ जोड़कर क्षमा मांगनी पड़ी कि मित्र क्षमा कर दो। जूतों को कहना पड़ा, माफ करिए,भूल हो गई, हमने जो आपको इस भांति गुस्से में खोला।

उस जर्मन यात्री ने लिखा है कि लेकिन जब मैं क्षमा मांग रहा था तो पहले तो मुझे हंसी आयी कि मैं क्या पागलपन कर रहा हूं। लेकिन जब मैं क्षमा मांग चुका तो मैं हैरान हुआ। मुझे एक इतनी शांति मालूम हुई, जिसकी मुझे कल्पना तक नहीं थी। कि दरवाजे और जूतों से क्षमा मांग कर शांति मिल सकती है।

मैं जाकर उस फकीर के पास बैठ गया, वह हंसने लगा। उसने कहां, अब ठीक है, अब कुछ बात हो सकती है। तुमने थोड़ा प्रेम जाहिर किया। अब तुम संबंधित हो सकते हो, समझ भी सकते हो। क्योंकि अब तुम प्रफुल्लित हो, अब तुम आनंद से भर गये हो।

सवाल मनुष्यों के साथ ही प्रेम पूर्णा होने का नहीं, यह सवाल नहीं है कि मां को प्रेम दो? ये गलत बात है। जब कोई मां अपने बच्चे को कहती है कि मैं तेरी मां हूं इसलिए प्रेम कर। तब वह गलत शिक्षा दे रही है। क्योंकि जिस प्रेम में इसलिए लगा हुआ है। देय फोर वह प्रेम झूठा है। जो कहता है, इसलिए प्रेम करो कि मैं बाप हूं,वह गलत शिक्षा दे रहा है। वह कारण बता रहा है प्रेम का।

प्रेम अकारण होता है, प्रेम कारण सहित नहीं होता है।

मां कहती है, मैं तेरी मां हूं,मैंने तुझे इतने दिन पाला-पोसा,बड़ा किया, इसलिए प्रेम कर। वह वजह बता रही है, प्रेम खत्म हो गया। अगर वह प्रेम भी होगा तो बच्चा झूठा प्रेम दिखाने की कोशिश करेगा। क्योंकि यह मां है। इसलिए प्रेम दिखाना पड़ रहा है।

नहीं प्रेम की शिक्षा का मतलब है: प्रेम का कारण नहीं; प्रेमपूर्ण होने की सुविधा और व्यवस्था कि बच्चा प्रेमपूर्ण हो सके।

जो मां कहती है कि मुझसे प्रेम कर, क्योंकि मैं मां हूं, वह प्रेम नहीं सिखा रही। उसे यह कहना चाहिए कि यह तेरा व्यक्तित्व,यह तेरे भविष्य, यह तेरे आनंद की बात है, कि जो भी

तेरे मार्ग पर पड़ जाये, तू उससे प्रेमपूर्ण हो—पत्थर पड़ जाए। फूल पड़ जाये, आदमी पड़ जाये, जानवर पड़ जाये, तू प्रेम देना। मां को प्रेम देने का नहीं, तेरे प्रेमपूर्ण होने का है। क्योंकि तेरा भविष्य इस पर निर्भर करेगा। कि तू कितना प्रेमपूर्ण है। तेरा व्यक्तित्व कितना प्रेम से भरा हुआ है। उतना तेरे जीवन में आनंद की संभावना बढ़ेगी।

प्रेम पूर्ण होने की शिक्षा चाहिए मनुष्य को, तो वह कामुकता से मुक्त हो सकता है।

लेकिन हम तो प्रेम की कोई शिक्षा नहीं देते। हम तो प्रेम का कोई भाव पैदा होने नहीं देते। हम तो प्रेम के नाम पर जो भी बात करते है वह झूठे ही सिखाते है उनको।

क्या आपको पता है कि एक आदमी एक के प्रति प्रेमपूर्ण है और दूसरे के प्रति घृणा पूर्ण हो सकता है? यह असंभव है।

प्रेमपूर्ण आदमी प्रेमपूर्ण होता है। आदमी से कोई संबंध नहीं है उस बात का। अकेले में बैठता है तो भी प्रेमपूर्ण होता है। कोई नहीं होता तो भी प्रेमपूर्ण होता है। प्रेमपूर्ण होना उसके स्वभाव की बात है। वह आपसे संबंधित होने का सवाल नहीं है।

क्रोधी आदमी अकेले में भी क्रोधपूर्ण होता है। घृणा से भरा आदमी घृणा से भरा हुआ होता है। वह अकेले भी बैठा है तो आप उसको देख कर कह सकते है कि यह आदमी क्रोधी है, हालांकि वह किसी पर क्रोध नहीं कर रहा है। लेकिन उसका सारा व्यक्तित्व क्रोधी है।

प्रेम पूर्ण आदमी अगर अकेले में बैठा है, तो आप कहेंगे यह आदमी कितने प्रेम से भरा हुआ बैठा है।

फूल एकांत में खिलते है जंगल के तो वहां भी सुगंध बिखेरते रहते है। चाहे कोई सूंघने वाला हो या न हो। रास्तें से कोई निकले या न निकले। फूल सुगंधित होता रहता है। फूल का सुगंधित होना स्वभाव है। इस भूल में आप मत पड़ना कि आपके लिए सुगंधित हो रहा है।

प्रेमपूर्ण होना व्यक्तित्व बनाना चाहिए। वह हमार व्यक्तित्व हो, इससे कोई संबंध नहीं कि वह किसके प्रति।

लेकिन जितने प्रेम करने वाले लोग है, वे सोचते है कि मेरे प्रति प्रेमपूर्ण हो जाये। और किसी के प्रति नहीं। और उनको पता नहीं है कि जो सबके प्रति प्रेम पूर्ण नहीं है वह किसी के प्रति भी प्रेम पूर्ण नहीं हो सकता।

पत्नी कहती है पति से, मुझे प्रेम करना बस, फिर आ गया स्टाप। फिर इधर-उधर कहीं देखना मत, फिर और कहीं तुम्हारे प्रेम की जरा सी धारा न बहे, बस प्रेम यानी इस तरफ। और उस पत्नी को पता नहीं है कि प्रेम झूठा है, वह अपने हाथ से किये ले रही है, जो पति प्रेमपूर्ण नहीं है हर स्थिति में, हरेक के प्रति,वह पत्नी के प्रति भी प्रेम पूर्ण नहीं हो सकता।

प्रेम पूर्ण चौबीस घंटे के जीवन का स्वभाव है। वह ऐसी कोई नहीं कि हम किसी के प्रति प्रेमपूर्ण हो जायें और किसी के प्रति प्रेमहीन हो जायें। लेकिन आज तक मनुष्य इसको समझने में समर्थ नहीं हो सका है।

बाप कहता है कि मेरे प्रति प्रेम पूर्ण, लेकिन घर में जा चपरासी है उसके प्रति....वह तो नौकर है। लेकिन उसे पता है कि जो बेटा एक बूढ़े नौकर के प्रति प्रेमपूर्ण नहीं हो पाया है....वह बूढ़ा नौकर भी किसी का बाप है।

लेकिन उसे पता नहीं कि जो बेटा एक बूढे नौकर के प्रति प्रेमपूर्ण नहीं हो सका वह आज नहीं कल, जब उसका बाप भी बूढ़ा हो जायेगा। उसके प्रति भी प्रेम पूर्ण नहीं रह पायेगा। तब वह बाप पछतायेंगा। कि मेरा लड़का मेरे प्रति प्रेमपूर्ण नहीं है। लेकिन इस बाप को पता ही नहीं कि लड़का प्रेमपूर्ण हो सकता था। उसके प्रति भी, अगर जो भी आसपास थे, सबके प्रति प्रेमपूर्ण होने की शिक्षा दी गयी होती। तो वह उसके प्रति भी प्रेमपूर्ण होता।

प्रेम स्वभाव की बात है। संबंध की बात नहीं है।

प्रेम रिलेशनशिप नहीं है। प्रेम है ''स्टेट ऑफ माइंड'' मनुष्य के व्यक्तित्व का भीतरी अंग है।

तो हमें प्रेम पूर्ण होने की दूसरी दीक्षा दी जानी चाहिए—एक-एक चीज के प्रति। अगर बच्चा एक किताब को भी गलत ढंग से रखे तो गलती बात है, उसे उसी क्षण टोकना चाहिए कि ये तुम्हारे व्यक्तित्व के प्रति शोभा दायक नहीं है। कि तुम इस भांति किताब को रखो। कोई देखेगा,कोई सुनेगा, कोई पायेगा कि तुम किताब के साथ दुर्व्यवहार किये हो? तुम कुत्ते के साथ गलत ढंग से पेश आये हो यह तुम्हारे व्यक्तित्व की गलती है।

एक फकीर के बाबत मुझे ख्याल आता है। एक छोटा सा फकीर का झोंपड़ा था। रात थी, जोर से वर्षा होती थी। रात के बारह बजे होंगे। फकीर और उसकी पत्नी दोनों सोते थे। किसी आदमी ने दरवाजे पर दस्तक दी। छोटा सा झोंपड़ा कोई शायद शरण चाहता था। उसकी पत्नी से उसने कहा कि द्वार खोल दें, कोई द्वार पर खड़ा है, कोई यात्री कोई अपरिचित मित्र।

सुनते है उसकी बात, उसने कहां, कोई अपरिचित मित्र, हमारे तो परिचित है, वह भी मित्र नहीं है। उसने कहां की कोई अपरिचित मित्र,प्रेम का भाव है।

कोई अपरिचित मित्र द्वार पर खड़ा है, द्वार खोल उसकी पत्नी ने कहां,लेकिन जगह तो बिलकुल नहीं है। हम दो के लायक ही मुश्किल से है। कोई तीसरा आदमी भीतर आयेगा तो हम क्या करेंगे।

उस फकीर ने कहा,पागल यह किसी अमीर का महल नहीं है,जो छोटा पड़ जाये। यह गरीब को झोंपड़ा है। अमीर का महल छोटा पड़ जाता है। हमेशा एक मेहमान आ जाये तो महल छोटा पड़ जाता है। यह गरीब की झोपड़ी है।

उसकी पत्नी ने कहां—इसमे झोपड़ी....अमीर और गरीब का क्या सवाल है? जगह छोटी है।

उस फकीर ने कहा कि जहां दिल में जगह बड़ी हो वहां, झोपड़ी महल की तरह मालूम हो जाती है। और जहां दिल में छोटी जगह हो, वहां झोंपड़ा तो क्या महल भी छोटा और झोंपड़ा हो जाता है। द्वार खोल दो, द्वार पर खड़े हुए आदमी को वापस कैसे लौटाया जा सकता है? अभी हम दोनों लेटे थे, अब तीन लेट नहीं सकेंगे,तीन बैठेंगे। बैठने के लिए काफी जगह है।

मजबूरी थी, पत्नी को दरवाजा खोल देना पडा। एक मित्र आ गया, पानी से भीगा हुआ। उसके कपड़े बदले और वे तीनों बैठ कर गपशप करने लग गये। दरवाजा फिर बंद कर दिया।

फिर किन्हीं दो आदमियों ने दस्तक दी। अब उस मित्र ने उस फकीर को कहा, वह दरवाजे के पास था, कि दरवाजा खोल दो। मालूम होता है कि कोई आया है। उसी आदमी ने कहा, कैसे खोल दूँ दरवाजा, जगह कहां हे यहां।

वह आदमी अभी दो घड़ी पहले आया था खुद और भूल गया वह बात की जिस प्रेम ने मुझे जगह दी थी। वह मुझे जगह नहीं दी थी, प्रेम था उसके भीतर इस लिए जगह दी थी। अब कोई दूसरा आ गया जगह बनानी पड़ेगी।

लेकिन उस आदमी ने कहा,नहीं दरवाजा खोलने की जरूरत नहीं; मुश्किल से हम तीन बैठे हे।

वह फकीर हंसने लगा। उसने कहां, बड़े पागल हो। मैंने तुम्हारे लिए जगह नहीं की थी। प्रेम था, इसलिए जगह की थी। प्रेम अब भी है, वह तुम पर चुक नहीं गया और समाप्त नहीं हो गया। दरवाजा खोलों, अभी हम दूर-दूर बैठे है। फिर हम पास-पास बैठ जायेंगे। पास-पास बैठने के लिए काफी जगह है। और रात ठंडी है, पास-पास बैठने में आनंद ही और होगा।

दरवाजा खोलना पडा। दो आदमी भीतर आ गये। फिर वह पास-पास बैठकर गपशप करने लगे। और थोड़ी देर बीती है और रात आगे बढ़ गयी है और वर्षा हो रही है ओर एक गधे ने आकर सर लगाया दरवाजे से। पानी में भीग गया था। वह रात शरण चाहता था।

उस फकीर ने कहा कि मित्रों, वे दो मित्र दरवाजे पर बैठे हुए थे जो पीछे आये थे; दरवाजा खोल दो, कोई अपरिचित मित्र फिर आ गया।

उन लोगों ने कहा, वह मित्र वगैरह नहीं है, वह गधा है। इसके लिए द्वार खोलने की जरूरत नहीं है।

उस फकीर ने कहा कि तुम्हें शायद पता नहीं, अमीर के द्वार पर आदमी के साथ भी गधे जैसा व्यवहार किया जाता है। यह गरीब की झोपड़ी है, हम गधे के साथ भी आदमी जैसा व्यवहार करेने की आदत भर हो गई है। दरवाजा खोल दो।

पर वे दोनों कहने लगे, जगह।

उस फकीर ने कहा, जगह बहुत है; अभी हम बैठे है, अब खड़े हो जायेंगे। खड़े होने के लिए काफी जगह है। और फिर तुम घबडाओं मत, अगर जरूरत पड़ेगी तो मैं हमेशा बहार होने के लिए तैयार हूं। प्रेम इतना कर सकता है।

एक लिविंग एटीट्यूड, एक प्रेमपूर्ण ह्रदय बनाने की जरूरत है। जब प्रेम पूर्ण ह्रदय बनता है। तो व्यक्तित्व में एक तृप्ति का भाव एक रसपूर्ण तृप्ति.....।

क्या आपको कभी ख्याल है कि जब भी आप किसी के प्रति जरा-से प्रेमपूर्ण हुए, पीछे एक तृप्ति की लहर छूट गयी है। क्या आपको कभी भी खयाल है कि जीवन में तृप्ति के क्षण वही रहे है। जो बेशर्त प्रेम के क्षण रहे होंगे। जब कोई शर्त न रही होगी प्रेम की। और जब आपने रास्ते चलते एक अजनबी आदमी को देखकर मुस्कुरा दिया होगा—उसके पीछे छूट गयी तृप्ति का कोई अनुभव है? उसके पीछे साथ आ गया एक शांति का भाव। एक प्राणों में एक आनंद की लहर का कोई पता है। जब राह चलते किसी आदमी को उठा लिया हो, किसी गिरते को संभाल लिया हो, किसी बीमार को एक फूल दे दिया हो। इसलिए नहीं कि वह आपकी मां है, इसलिए नहीं की वह आपका पिता है। नहीं वह आपका कोई नहीं है। लेकिन एक फूल किसी बीमार को दे देना आनंद पूर्ण है।

व्यक्तित्व में प्रेम की संभावना बढ़ती जानी चाहिए। वह इतनी बढ़ जानी चाहिए—पौधों के प्रति, पक्षियों के प्रति पशुओं के प्रति, आदमी के प्रति, अपरिचित के प्रति, अंजान लोगों के प्रति, विदेशियों के प्रति, जो बहुत दूर है उसके प्रति, प्रेम हमारा बढ़त चला जाए।

जितना प्रेम हमारा बढ़ता है, उतनी ही सेक्स की जीवन में संभावना कम होती चली जाती है।

प्रेम और ध्यान दोनों मिलकर उस दरवाजे को खोल देते है, जो दरवाजा परमात्मा की और जाता है।

प्रेम+ध्यान=परमात्मा। प्रेम और ध्यान का जोड़ हो जाये और परमात्मा उपलब्ध हो जाता है।

और उस उपलब्धि से जीवन में ब्रह्मचर्य फलित होता है। फिर सारी उर्जा एक नये ही मार्ग पर ऊपर चढ़ने लगती है। फिर बह-बह कर निकल जाती है। फिर जीवन से बाहर निकल-निकल कर व्यर्थ नहीं हो जाती। फिर जीवन के भीतरी मार्गों पर गति करने लगती है। उसका एक ऊर्ध्वगमन, एक ऊपर की तरफ की यात्रा शुरू होती है।

अभी हमारी यात्रा नीचे की तरफ है। सेक्स ऊर्जा का अधोगमन है, नीचे की तरफ बह जाना है। ब्रह्मचर्य ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन है, उपर की तरफ उठ जाना है।

प्रेम और ध्यान ब्रह्मचर्य के सूत्र है।

तीसरी बात कल आपसे करने को हूं कि ब्रह्मचर्य अपलब्ध होगा तो क्या फल होगा? क्या होगी उपलब्धि,क्या मिल जायेगा?

ये दो बातें मैंने आज आपसे कहीं—प्रेम और ध्यान। मैंने यह कहा है कि छोटे बच्चों से इनकी शिक्षा शुरू हो जानी चाहिए। इससे आप यह मत सोच लेना कि अब तो हम बच्चे नहीं रहे। इसलिए करने को कुछ बाकी नहीं बचा। यह आप मत सोच कर चले जाना। अन्यथा मेरी मेहनत फिजूल हो जायेगी। आप किसी भी उम्र के हो, यह काम शुरू किया जा सकता है। यह काम कभी भी शुरू किया जा सकता है। हालांकि जितनी उम्र बढ़ती चली जाती है, उतनी मुश्किल होती चली जाती है। बच्चों के साथ हो सके सौभाग्य, लेकिन कभी भी हो सके सौभाग्य। इतनी देर कभी नहीं हुई है कि हम कुछ भी न कर सकें। हम आज शुरू कर सकते है।

और जो लोग सीखने के लिए तैयार है, वे बूढ़े भी बच्चों जैसे ही होते है। वे बुढ़ापे में भी शुरू कर सकते है। अगर उनकी सीखने की क्षमता है,अगर लर्निंग का एटीट्यूड है, अगर वे इस

ज्ञान से नहीं भर गये है कि हमने सब जान लिया और सब पा लिया है। तो वे सिख सकते है। और वे छोटे बच्चों की भांति नई यात्रा शुरू कर सकते है।

बुद्ध के पास एक भिक्षु कुछ वर्षों से दीक्षित था। एक दिन बुद्ध ने उससे पूछा: ''भिक्षु तुम्हारी उम्र क्या है।'' उस भिक्षु ने कहा, भंते, मेरी उम्र पाँच वर्ष की होगी। बुद्ध कहने लगे,पाँच वर्ष, तुम तो कोई सत्तर वर्ष के मालूम होते हो। झूठ बोलते हो भिक्षु।

तो उस भिक्षु ने कहा, लेकिन पाँच वर्ष पहले ही मेरी जीवन में ध्यान की किरण फूटी। पाँच वर्ष पहले ही मेरे जीवन में प्रेम की वर्षा हुई। उसके पहले मैं जीता था, वह सपने में जीने जैसा था। नींद में जीने जैसा था। उसकी गिनती में अब जीवन में नहीं करता। सोना भी कोई जीना होता है। उसे कैसे करू?

जिंदगी तो इधर पाँच वर्ष से ही शुरू हुई है। यहीं पाँच वर्ष में अपनी आयु के मानता हूं।

बुद्ध ने अपने भिक्षुओं से कहां, भिक्षुओं इस बात को खयाल में रख लेना। अपनी उम्र आज से तुम भी इस तरह जोड़ना। यही उम्र को नापने का ढंग है।

अगर प्रेम और ध्यान का जन्म नहीं हुआ है तो उम्र फिजूल चली गयी। अभी आपकी ठीक जन्म भी नहीं हुआ। और कभी भी उतनी देर नहीं हुई है, जब कि हम प्रयास करें, श्रम करें और हम अपने नये जन्म को उपल्बध न हो जाये।

इसलिए मेरी बात से यह नतीजा मत निकाल लेना आप कि आप तो अब बचपन के पार हो चुके, इसलिए यह बात आने वाले बच्चों के लिए है। कोई आदमी किसी भी क्षण इतनी दूर नहीं निकल गया है कि वापस नहीं लौट सके। कोई आदमी कितने ही गलत रास्तों पर चला हो, ऐसी जगह नहीं पहुंच गया है कि ठीक रास्ता उसे दिखाई न पड़ सके। कोई आदमी कितने ही हजारों वर्षों से अंधकार में रह रहा हो, इसका मतलब यह नहीं है कि वह दिया जलायेगा तो अंधकार कहेगा कि मैं हजार वर्ष पुराना हूं। इसलिए नहीं टूटता। दिया जलाने से एक दिन का अंधकार भी टूटता है। और हजार वर्ष का अंधकार भी टूटता है। दिया जलाने की चेष्टा बचपन में आसान हो सकती है, बाद में थोड़ी मुश्किल हो जाती है। मात्र यही भेद है।

लेकिन कठिनाई का अर्थ असंभावना नहीं है। कठिनाई का अर्थ है, थोड़ा ज्यादा श्रम। कठिनाई का अर्थ है, थोड़ी और मेहनत, और संकल्प। कठिनाई का अर्थ है: थोड़ा ज्यादा—ज्यादा लगन पूर्वक। ज्यादा सातत्य से तोड़ना पड़ेगा। व्यक्तित्व की जो बंधी धाराएं है। उनको और नये मार्ग खोलने पड़ेंगे।

लेकिन जब नये मार्ग की जरा सी भी किरण फूटनी शुरू होती है तो सारा श्रम ऐसा लगता है कि हमने कुछ भी नहीं किया है। और बहुत कुछ पा लिया है। जब एक किरण भी आती है उस आनंद की, उस सत्य की उस प्रकाश की तो लगता है। कि हमने तो बिना कुछ किये पा लिया है; क्योंकि हमने जो किया था, उसका तो कोई भी मूल्य नहीं था। जो हाथ में आ गया ळ वह तो अमूल्य है। वह तो अमूल्य है। इसलिए यह भाव मन में आप न लेंगे। ऐसी मेरी प्रार्थना है।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना; उसके लिए बहुत-बहुत अनुगृहित हूं और अंत में सबके भी तर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)
ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—3

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

29—सितम्बर—1968,

संभोग से समाधि की और—13

Posted on अक्टूबर 27, 2010by sw anand prashad

समाधि : अहं शून्यता, समय-शून्यता के अनुभव

मेरे प्रिया आत्मन,
एक छोटा सा गांव था, उस गांव के स्कूल में शिक्षक राम की कथा पढ़ाता था। करीब-करीब सारे बच्चे सोये हुए थे।

राम की कथा सुनते-सुनते बच्चे सो जाये, ये आश्चर्य नहीं। क्योंकि राम की कथा सुनते समय बूढ़े भी सोते है। इतनी बार सुनी जा चुकी है जो बात उसे जाग कर सुनने का कोई अर्थ भी नहीं रह जाता।

बच्चे सोये थे और शिक्षक भी पढ़ा रहा था। लेकिन कोई भी उसे देखता तो कह सकता था कि वह भी सोया हुआ पढ़ाता है। उसे राम की कथा कंठस्थ थी। किताब सामने खुली थी। लेकिन किताब पढ़ने की उसे जरूरत न थी। उसे सब याद था। यह यंत्र की भांति कहे जाता था। शायद ही उसे पता हो कि वह क्या कह रहा है।

तोतों को पता नहीं होता है कि वे क्या कह रहे है। जिन्होंने शब्दों को कंठस्थ कि लिया है, उन्हें भी पता नहीं होता की वे क्या कह रहे है।
और तभी अचानक एक सनसनी दौड़ गयी कक्षा में। अचानक ही स्कूल का निरीक्षक आ गया था। वह कमरे के भीतर गया। बच्चे सजग होकर बैठ गये। शिक्षक भी सजग होकर पढ़ाने लगा। उसे निरीक्षक ने कहां कि मैं कुछ पूछना चाहूंगा। और चूंकि राम की कथा पढ़ाई जाती है। इसलिए राम से संबंधित ही कोई प्रश्न पूछा। उसने बच्चों से एक सीधी सी बात पूछी। उसने पूछा कि 'शिव का धनुष किसने तोड़ा था?' उसने सोचा कि बच्चों को तोड़-फोड़ की बात बहुत याद रह जाती है। उन्हें जरूर याद होगा कि किसने शिव का धनुष तोड़ा।

लेकिन इसके पहले कि कोई बोले, एक बच्चे ने हाथ हिलाया और खड़े होकर कहा, क्षमा करिये। मुझे पता नहीं कि किसने तोड़ा था। एक बात निश्चित है कि मैं 15 दिन से छुट्टी पर था। मैंने नहीं तोड़ा है। और इसके पहले कि मेरे पर इलजाम लग जाये, में पहले ही साफ कर देना चाहता हूं। कि धनुष का मुझे कुछ पता नहीं है। क्योंकि जब भी स्कूल की कोई भी चीज टूटती है तो सबसे पहले मेरे उपर दोषारोपण आता है। इसलिए मैं निवेदन किये देता हूं।

निरीक्षक तो हैरान रह गया। उसने सोचा भी नहीं था कि कोई यह उत्तर देगा।

उसने शिक्षक की तरफ देखा। शिक्षक अपना बेंत निकाल रहा था और उसने कहा, जरूर इसी बदमाश ने तोड़ा होगा। इसकी हमेशा की आदत है। और अगर तूने नहीं तोड़ा था तो तूने खड़े होकर क्यों कहा कि मैंने नहीं तोड़ा है?

और उसने इंस्पेक्टर से कहा कि इसकी बातों में मत आयें, यह लड़का शरारती है। और स्कूल में सौ चीजें टूटे तो 99 यहीं तोड़ता है।

तब तो वह निरीक्षक और भी हैरान हो गया। फिर उसने कुछ भी वहां कहना उचित नहीं समझा। वह सीधा प्रधान अध्यापक के पास गया। जाकर उसने कहां कि ये-ये घटना घटी है।

राम की कथा पढ़ाई जाती थी जिस कक्षा में, उसमें मैंने पूछा कि शिव का धनुष किसने तोड़ा है। तो एक बच्चे ने कहां कि मैंने नहीं तोड़ा है। मैं 15 दिन से छुट्टी पर था। यहां तक भी गनीमत थी। लेकिन शिक्षक ने यह कहा कि जरूर इसी ने तोड़ा होगा। जब भी कोई चीज टूटती है तो यह जिम्मेदार होता है। इसके संबंध में क्या किया जाये?

उस प्रधान अध्यापक ने कहा कि इस संबंध में एक ही बात की जा सकती है कि अब बात को आगे न बढ़ाया जाये, क्योंकि लड़कों से कुछ भी कहना खतरा मोल लेना है। किसी क्षण भी हड़ताल हो सकती है। अनशन हो सकता है। अब जिसने भी तोड़ा होगा। आप कृपा करें और बात बंद करें। कोई दो महीने से शांति चल रही है स्कूल में, उसको भंग करने की कोशिश मत करें। न मालूम कितना फर्नीचर तोड़ डाला है लड़कों ने। हम चुपचाप देखते रहते है। स्कूल की दीवालें टूट रही है, हम चुपचाप देखते रहते है। क्योंकि कुछ भी बोलना खतरनाक है। हड़ताल हो सकती है। अनशन हो सकता है। इसलिए चुपचाप देखने के सिवाय कोई मार्ग नहीं है।

वह इंस्पेक्टर तो अवाक। वह तो आंखे फाड़े रह गया। अब कुछ कहने का उपाय न था वह वहां से सीधा स्कूल की जो शिक्षा समिति थी उसके अध्यक्ष के पास गया। और उसने जाकर कहा कि यह हालत है स्कूल की। राम की कथा पढ़ाई जाती है। वहां बच्चा कहता है कि मैंने शिव का धनुष नहीं तोड़ा, शिक्षक कहता है कि इसी ने तोड़ा होगा, प्रधान अध्यापक कहता है कि जिसने भी तोड़ा हो बात को रफा-दफा कर दें। शांत कर दें। इसे आगे बढ़ाना ठीक नहीं, हड़ताल हो सकती है। आप क्या कहते है?

उस अध्यक्ष ने कहा, ठीक ही कहता है प्रधान अध्यापक। किसी ने भी तोड़ा हो हम ठीक करवा देंगे समिति की तरफ से। आप फर्नीचर वाले के यहां भिजवा दें और ठीक करवा लें। इसकी चिंता करने की जरूरत नहीं कि किसने तोड़ा। सुधरवाने का उपाय होगा। आपको सुधरवाने की जरूरत है और क्या करना है?

वह स्कूल का इंस्पेक्टर मुझसे ये सारी बातें कहता था। वह मुझसे पूछने लगा कि क्या स्थिति है यह? मैंने उससे कहा कि इसमे कुछ बड़ी स्थिति नहीं है। मनुष्य की एक सामान्य कमजोरी है, वही इस कहानी में प्रकट होती है। और वह कमजोरी क्या है?

वह कमजोरी यह है कि जिस संबंध में हम कुछ भी नहीं जानते है, उस संबंध में भी हम ऐसी घोषणा करना चाहते है कि हम जानते है। वह कोई भी कुछ नहीं जानते थे कि शिव का धनुष क्या है? क्या उचित न होता कि वह कह देते कि हमें पता नहीं है कि शिव का धनुष क्या है। लेकिन अपना अज्ञान कोई भी स्वीकार नहीं करना चाहता है।

मनुष्य जाति के इतिहास में इससे बड़ी कोई दुर्घटना नहीं घटी है कि हम अपना अज्ञान स्वीकार करने को राज़ी नहीं होते। जीवन के किसी भी प्रश्न के संबंध में कोई भी आदमी इतनी हिम्मत और साहस नहीं दिख पाता है। कि मुझे नहीं पता है। यह कमजोरी बहुत घातक सिद्ध होती है। सारा जीवन व्यर्थ हो जाता है।

और चूंकि हम यह मानकर बैठ जाते है कि हम जानते है, इसलिए जो उत्तर हम देते है वह इतने ही मूर्खतापूर्ण होते है, जितने उस स्कूल में दिये गये थे—बच्चों से लेकिर अध्यक्ष तक। जिसका हमें पता नहीं हे उसका उत्तर देने की कोशिश सिवाय मूढ़ता के और कहीं भी नहीं ले जायेगी। फिर यह तो हो भी सकता है शिव का धनुष किसने तोड़ा या न तोड़ा1 इससे जीवन को कोई गहरा संबंध नहीं है लेकिन जिन प्रश्नों के जीवन से बहुत गहरे संबंध है जिनके आधार पर सारा जीवन सुन्दर बनेगा या कुरूप हो जायेगा। स्वस्थ बनेगा या विक्षिप्त हो जायेगा; जिनके आधार पर जीवन की सारी गति और दिशा निर्भर है, उन प्रश्नों के संबंध में भी हम यह भाव दिखलाने की कोशिश करते है कि हम जानते है। और फिर जो हम जीवन में उत्तर देते है वह बता देते है कि हम कितना जानते है।

एक-एक आदमी की जिन्दगी बता रही है कि हम जिंदगी के संबंध में कुछ भी नहीं जानते है—अन्यथा इतनी असफलता, इतनी निराश, इतनी दुख,इतनी चिन्ता।

यही बात मैं सेक्स के संबंध में आपसे कहना चाहता हूं कि हम कुछ भी नहीं जानते है।

आप बहुत हैरान होंगे। आप कहेंगे कि हम यह मान सकते है कि ईश्वर के संबंध में कुछ नहीं जानते,आत्मा के संबंध में कुछ नहीं जानते; लेकिन हम यह कैसे मान सकते है कि हम काम के यौन के और सैक्स के संबंध में कुछ नहीं जानते? सबूत है—हमारे बच्चे पैदा हुए है, पत्नी है। हम सेक्स के संबंध मे नहीं जानते है?

लेकिन मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं कि यह बहुत कठिन पड़ेगा, लेकिन इसे समझ लेना जरूरी है। आप सेक्स के अनुभव से गूज़रें होंगे। लेकिन सेक्स के संबंध में आप इतना ही जानते है कि जितना छोटा सा बच्चा जानता है। उससे ज्यादा कुछ भी नहीं जानते है। अनुभव से गुजर जाना जान लेने के लिए पर्याप्त नहीं है।

एक आदमी कार चलाता है वह कार चलाना जानता है और हो सकता है हजारों मील कार चलाकर वह आ गया हो; लेकिन उससे यह कोई मतलब नहीं होता है कि वह कार के भीतर के यंत्र और मशीन और उसकी व्यवस्था, उसके काम करने के ढंग के संबंध में कुछ भी जानता हो। वह कहा सकता है कि मैं हजार मील चल कर आया हूं कार से। मैं नहीं जानता

हूं कार के संबंध में? लेकिन कार चलाना एक ऊपरी बात है और कार की पूरी आंतरिक व्यवस्था को जानना बिलकुल दूसरी बात है।

एक आदमी बटन दबाता है और बिजली चल जाती है। वह आदमी यह कह सकता है कि मैं बिजली के संबंध में सब जानता हूं। क्योंकि में बटन दबाता हूं और बिजली जल जाती है। बटन दबाता हूं बिजली बुझ जाती है। मैंने हजार दफा बिजली जलायी इसलिए मैं बिजली के सबंध में सब जानता हूं हम कहेंगे कि वह पागल है बटन दबाना और बिजली जला लेना और बुझा लेना बच्चें भी कर सकते है। इसके लिए बिजली के ज्ञान की कोई जरूरत नहीं है।

बच्चे कोई भी पैदा सकता है। सेक्स को जानने से इसका कोई संबंध नहीं है। शादी कोई भी कर सकता है। पशु भी बच्चे पैदा कर रहे है, लेकिन वे सेक्स संबंध कुछ जानते है। इस भ्रम में पड़ने का कोई कारण नहीं। सच तो यह है कि सेक्स को कोई विज्ञान ही विकसित नहीं हो सका। सेक्स का कोई शास्त्र ठीक से विकसित नहीं हो सका। क्योंकि हर आदमी यह मानता है कि हम जानते है। शास्त्र की जरूरत क्या है। विज्ञान की जरूरत क्या है।

और मैं आपसे कहता हूं कि इससे बड़े दुर्भाग्य की और कोई बात नहीं है क्योंकि जिस दिन सेक्स का पूरा शास्त्र और पूरा विचार और पूरा विज्ञान विकसित होगा उस दिन हम बिलकुल नये तरह के आदमी को पैदा करने में समर्थ हो सकते है। फिर यह कुरूप और अपंग मनुष्य पैदा करने की जरूरत नहीं है। यह रूग्ण और रोते हुए और उदास आदमी पैदा करने की कोई जरूरत नहीं है। यह पाप और अपराध से भरी हुई संतति को जन्म देने की जरूरत नहीं है।

लेकिन हमें कुछ भी पता नहीं है। हम सिर्फ बटन दबाना और बुझाना जानते है और उसी से हमने समझ लिया है कह हम बिजली के जानकार हो गये है। सेक्स के संबंध में पूरी जिंदगी बीत जाने के बाद भी आदमी इतना ही जानता है के बटन दबाना और बुझाना इससे ज्यादा कुछ भी नहीं। लेकिन चूंकि यह भ्रम है कि हम सब जानते है; इसलिए इस संबंध में कोई शोध कोई खोज कोई विचार कोई चिंतन को कोई उपाय नहीं है। और इसी भ्रम के कारण कि हम सब जानते है। हम किसी से न कोई बात करते है न विचार करते है, न सोचते है। क्योंकि जब सभी को सब पता है तो जरूरत क्या है?

और मैं आप से कहना चाहता हूं कि जीवन में और जगत में सेक्स के अणु को भी पूरी तरह जान सकेंगे, उस दिन मनुष्य जाति ज्ञान के एक बिलकुल नये जगत में प्रविष्टि हो जायेगी। अभी हमने पदार्थ की थोड़ी बहुत खोजबीन की है और दुनिया कहां से कहां पहुंच गई। जिस दिन हम चेतना के जन्म की प्रक्रिया और कीमिया को समझ लेंगे, उस दिन हम मनुष्य को कहां से कहां पहुंचा देंगे। इसको आज कहना कठिन है। लेकिन एक बात निश्चित कहीं जा सकती है कि काम की शक्ति और काम की प्रक्रिया जीवन और जगत में सर्वाधिक रहस्यपूर्ण

सर्वाधिक गहरी सबसे मूल्यवान बात है। और उसके संबंध में हम बिलकुल चुप है। जो सर्वाधिक मूल्यवान है, उसके संबंध में कोई बात भी नहीं की जाती। आदमी जीवन भी संभोग से गुजरता है और अंत तक भी नहीं जान पाता है कि क्या था संभोग।

और जब मैंने पहले दिन आपसे कहा कि शून्य का—अहंकार शून्यता का, विचारशून्यता का अनुभव होगा। तो अनेक मित्रों को यह बात अनहोनी,आश्चर्यजनक लगी है। एक मित्र ने लौटते ही मुझे कहा यह तो मेरे ख्याल में भी न था। लेकिन ऐसा हुआ है। एक बहन ने आज मुझे आकर कहा, लेकिन मुझे तो इसका कोई अनुभव नहीं है आप कहते है कि इतनी मुझे ख्याल आता है कि मन थोड़ा शांत और मौन होता है। लेकिन मुझे अहंकार शून्यता का यह किसी और गहरे अनुभव का कोई भी पता नहीं।

हो सकता है अनेकों को इस संबंध में विचार मन में उठा हो। उस संबंध में थोड़ी सी बातें ओर गहराई से स्पष्ट कर लेना जरूरी है।

पहली बात मनुष्य जन्म के साथ ही संभाग के पूरे विज्ञान को जानता हुआ पैदा नहीं होता है। शायद पृथ्वी पर बहुत थोड़े से लोग अनेक जीवन के अनुभव के बाद संभोग की पूरी की पूरी कला और पूरी की पूरी विधि और पूरा शास्त्र जानने में समर्थ हो पाते है। और ये ही वे लोग है। जो ब्रहमचर्य को उपलब्ध हो जाते है। क्योंकि जो व्यक्ति संभोग को पूरी तरह से जानने में समर्थ हो जाता है, उस के लिए संभोग व्यर्थ हो जाता है। वह उस के पास निकल जाता है। वह उस का अतिक्रमण कर जाता है। लेकिन इस संबंध में कुछ बहुत स्पष्ट बातें नहीं कही गई है।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—4

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

1 अक्टूबर—1968,

संभोग से समाधि की और-14

Posted on अक्टूबर 28, 2010 by sw anand prashad

समाधि : अहं शून्यता, समय-शून्यता के अनुभव

एक बात, पहली बात स्पष्ट कर लेनी जरूरी है वह हय कि यह भ्रम छोड़ देना चाहिए कि हम पैदा हो गये है, इसलिए हमें पता है—क्या है काम, क्या है संभोग। नहीं पता नहीं है। और नहीं पता होने के कारण जीवन पूरे समय काम और सेक्स में उलझा रहता है और व्यतीत होता है।

मैंने आपसे कहा, पशुओं का बंधा हुआ समय है। उनकी ऋतु है। उनके मौसम है। आदमी का कोई बंधा हुआ समय नहीं है। क्यों? पशु शायद मनुष्य से ज्यादा संभोग की गहराई में उतरने में समर्थ है और मनुष्य उतना भी समर्थ नहीं रह गया है।
जिन लोगों ने जीवन के इन तलों पर बहुत खोज की है और गहराइयों में गये है और जिन लोगों ने जीवन के बहुत से अनुभव संग्रहीत किये है। उनको यह जानना, यह सुत्र उपलब्ध हुआ है कि अगर संभोग एक मिनट तक रुकेगा तो आदमी दूसरे दिन फिर संभोग के लिए लालायित हो जायेगा। अगर तीन मिनट तक रूक सके तो यह सप्ताह तक उसे सेक्स की वह याद भी नहीं आयेगी। और अगर साम मिनट तक रूक सके तो तीन महीने के लिए सेक्स से इस तरह मुक्त हो जायेगा कि उसकी कल्पना में भी विचार प्रविष्ट नहीं होगा। और अगर तीन घंटे तक रूक सके तो जीवन भर के लिए मुक्त हो जायेगा। जीवन में उसको कल्पना भी नहीं उठेगी।

लेकिन सामान्यत: क्षण भर का अनुभव है मनुष्य का। तीन घंटे की कल्पना करनी भी मुश्किल है। लेकिन मैं आपसे कहता हूं के तीन घंटे अगर संभोग की स्थिति में, उस समाधि की दशा में व्यक्ति रूक जाये तो एक संभोग पूरे जीवन के लिए सेक्स से मुक्त करने के लिए पर्याप्त है। इतनी तृप्ति पीछे छोड़ जाता है—इतनी अनुभव,इतनी बोध छोड़ जाता है कि

जीवन भर के लिए पर्याप्त हो जाता है। एक संभोग के बाद व्यक्ति ब्रह्मचर्य को अपलब्ध हो सकता है।

लेकिन हम तो जीवन भी संभोग के बाद भी उपलब्ध नहीं होते। क्या है? बूढ़ा हो जाता है आदमी मरने के करीब पहुंच जाता है और संभोग की कामना से मुक्त नहीं होता। संभोग की कला और संभोग के शास्त्र को उसने समझा नहीं है। और न कभी किसी ने समझाया है, न विचार किया है। न सोचा है, न बात की है। कोई संवाद भी नहीं हुआ जीवन में—कि अनुभवी लोग उस पर संवाद करते और विचार करते हम बिलकुल पशुओं से भी बदतर हालत पर है। उस स्थिति में है। आप कहेंगे कि एक क्षण से तीन घंटे तक संभोग की दशा ठहर सकती है, लेकिन कैसे?

कुछ थोड़े से सूत्र आपको कहता हूं। उन्हें थोड़ा ख्याल में रखेंगे तो ब्रह्मचर्य की तरफ जाने में बड़ी यात्रा सरल हो जायेगी। संभोग करते क्षणों में क्षणों श्वास जितनी तेज होगी। संभोग का काल उतना ही छोटा होगा। श्वास जितनी शांत और शिथिल होगी। संभोग का काल उतना ही लंबा हो जायेगा। अगर श्वास को बिलकुल शिथिल करने का थोड़ा अभ्यास किया जाये, तो संभोग के क्षणों को कितना ही लंबा किया जा सकता है। और संभोग के क्षण जितने लंबे होंगे, उतने ही संभोग के भीतर से समाधि का जो सूत्र मैंने आपसे कहा है—निरहंकार भाव, इगोलेसनेस और टाइमलेसनेस का अनुभव शुरू हो जायेगा। श्वास अत्यंत शिथिल होनी चाहिए। श्वास के शिथिल होते ही संभोग की गहराई अर्थ और उदघाटन शुरू हो जायेंगे।

और दुसरी बात, संभोग के क्षण में ध्यान दोनों आंखों के बीच, जहां योग आज्ञा चक्र को बताता है। वहां अगर ध्यान हो तो संभोग की सीमा और समय तीन घंटे तक बढ़ाया जा सकता है। और एक संभोग व्यक्ति को सदा के लिए ब्रह्मचर्य में प्रतिष्ठित कर देगा—न केवल एक जन्म के लिए, बल्कि अगले जन्म के लिए भी।

किन्हीं एक बहन ने पत्र लिखा है और मुझे पूछा है कि विनोबा तो बाल ब्रह्मचारी है, क्या उन्हें समाधि का अनुभव नहीं हुआ होगा। मेरे बाबत पूछा है कि मैंने तो विवाह नहीं किया, मैं तो बाल ब्रह्मचारी हूं मुझे समाधि का अनुभव नहीं हुआ होगा।

उस बहन को अगर वह यहां मौजूद हों तो मैं कहना चाहता हूं। विनोबा को या मुझे या किसी को भी बिना अनुभव के ब्रह्मचर्य उपलब्ध नहीं होता। वह अनुभव चाहे इस जन्म का हो, चाहे पिछले जन्म का हो—जो इस जन्म में ब्रह्मचर्य को उपलब्ध होता है, वह पिछले जन्मों के गहरे संभोग के अनुभव के आधार पर और किसी आधार पर नहीं। कोई और रास्ता नहीं है।

लेकिन अगर पिछले जन्म में किसी को गहरे संभोग की अनुभूति हुई हो ता इस जन्म के साथ ही वह सेक्स से मुक्त पैदा होगा। उसकी कल्पना के मार्ग पर सेक्स कभी भी खड़ा नहीं होगा और उसे हैरानी दूसरे लोगों को देखकर कि यह क्या बात है। लोग क्यों पागल हैं, क्यों दीवाने है? उसे कठिनाई होगी यह जांच करने में कि कौन स्त्री है, कौन पुरूष है? इसका भी हिसाब रखने में और फासला रखने में कठिनाई होगी।

लेकिन कोई अगर सोचता हो कि बिना गहरे अनुभव के कोई बाल ब्रह्मचारी हो सकता है। तो बाल ब्रह्मचारी नहीं होगा, सिर्फ पागल हो जायेगा। जो लोग जबरदस्ती ब्रह्मचर्य थोपने की कोशिश करते है, वह विक्षिप्त होते है और कहीं भी नहीं पहुंचते।

ब्रह्मचर्य थोपा नहीं जाता। वह अनुभव की निष्पति है। वह किसी गहरे अनुभव का फल है। और वह अनुभव संभोग का ही अनुभव है। अगर वह अनुभव एक बार भी हो जाए तो अनंत जीवन की यात्रा के लिए सेक्स से मुक्ति हो जाती है।

तो दो बातें मैंने कहीं, उस गहराई के लिए—श्वास शिथिल हो इतनी शिथिल हो कि जैसे चलती ही नहीं और ध्यान, सारी अटैंशन आज्ञा चक्र के पास हो। दोनों आंखों के बीच के बिन्दु पर हो। जितना ध्यान मस्तिष्क के पास होगा, उतनी ही संभोग की गहराई अपने आप बढ़ जायेगी। और जितनी श्राव शिथिल होगी, उतनी लम्बाई बढ़ जायेगी। और आपको पहली दफा अनुभव होगा कि संभोग का आकर्षण नहीं है मनुष्य के मन में। मनुष्य के मन में समाधि का आकर्षण है। और एक बार उसकी झलक मिल जाए, एक बार बिजली चमक जाये और हमें दिखाई पड़ जाये अंधेरे में कि रास्ता क्या है फिर हम रास्ते पर आगे निकल सकते है।

एक आदमी एक गंदे घर में बैठा है। दीवालें अंधेरी है ओर धुएँ से पूती हुई है। घर बदबू से भरा हुआ है। लेकिन खिड़की खोल सकता है। उस गंदे घर की खिड़की में खड़े होकर वह देख सकता है दूर आकाश को तारों को सूरज को, उड़ते हुए पक्षियों को। और तब उसे उस घर के बहार निकलने में कठिनाई नहीं रह जायेगी।

जिस दिन आदमी को संभोग के भीतर समाधि का पहली थोड़ी सह भी अनुभूति होती है उसी दिन सेक्स का गंदा मकान सेक्स की दीवालें अंधेरे से भरी हुई व्यर्थ हो जाती है आदमी बाहर निकल जाता है।

लेकिन यह जानना जरूरी है कि साधारणतया हम उस मकान के भीतर पैदा होते है। जिसकी दीवालें बंद है। जो अंधेरे से पूती है। जहां बदबू है जहां दुर्गंध है और इस मकान के भीतर ही पहली दफ़ा मकान के बाहर का अनुभव करना जरूरी है, तभी हम बहार जा सकते है। और इस मकान को छोड़ सकते है। जिस आदमी ने खिड़की नहीं खोली उस मकान की और उसी

मकान के कोने में आँख बंद करके बैठ गया है कि मैं इस गंदे मकान को नहीं देखूँगा, वह चाहे देखे और चाहे न देखे। वह गंदे मकान के भीतर ही है और भीतर ही रहेगा।

जिसको हम ब्रह्मचारी कहते है। तथाकथित जबर दस्ती थोपे हुए ब्रह्मचारी, वे सेक्स के मकान के भीतर उतने ही है जितना की कोई भी साधारण आदमी है। आँख बंद किये बैठे है, आप आँख खोले हुए बैठे है, इतना ही फर्क है। जो आप आँख खोलकर कर रहे है, वह आँख बंद कर के भीतर कर रहे है। जो आप शरीर से कर रहे है। वे मन से कर रहे है। और कोई फर्क नहीं है।

इसलिए मैं कहता हूं कि संभोग के प्रति दुर्भाव छोड़ दे। समझने की चेष्टा,प्रयोग करने की चेष्टा करें और संभोग को एक पवित्रता की स्थिति दे।

मैंने दो सूत्र कहे। तीसरी एक भाव दशा चाहिए संभोग के पास जाते समय। वैसा भाव-दशा जैसे कोई मंदिर के पास जा रहा है। क्योंकि संभोग के क्षण में हम परमात्मा के निकटतम होते है। इसीलिए तो संभोग में परमात्मा सृजन का काम करता है। और नये जीवन को जन्म देता है। हम क्रिएटर के निकटतम होते है।

संभोग की अनुभूति में हम सृष्टा के निकटतम होते है।

इसीलिए तो हम मार्ग बन जाते है। और एक नया जीवन हमसे उतरता है। और गतिमान हो जाता है। हम जन्मदाता बन जाते है।

क्यों?

सृष्टा के निकटतम है वह स्थिति। अगर हम पवित्रता से प्रार्थना से सेक्स के पास जायें तो हम परमात्मा की झलक को अनुभव कर सकते है। लेकिन हम तो सेक्स के पास घृणा एक दुर्भाव एक कंडेमनेशन के साथ जाते है। इसलिए दीवाल खड़ी हो जाती है। और परमात्मा का यहां कोई अनुभव नहीं हो पाता है।

सेक्स के पास ऐसे जाएं, जैसे की मंदिर के पास जा रहे है। पत्नी को ऐसा समझें, जैसे की वह प्रभु है। पति को ऐसा समझें कि जैसे कि वह परमात्मा है। और गंदगी में क्रोध में कठोरता में द्वेष में, ईर्ष्या में, जलन में चिन्ता के क्षणों में कभी भी सेक्स के पास न जायें। होता उलटा है। जितना आदमी चिन्तित होता है। जितना परेशान होता है। जितना क्रोध से भरा होता है। जितना घबराया होता है, जितना एंग्विश में होता है। उतना ही ज्यादा वह सेक्स के पास जाता है।

आनंदित आदमी सेक्स के पास नहीं जाता। देखी आदमी सेक्स की तरफ जाता है। क्योंकि दुख को भुलाने के लिए इसको एक मौका दिखाई पड़ता है।

लेकिन स्मरण रखें कि जब आप दुःख में जायेंगे, चिंता में जायेंगे, उदास हारे हुए जायेगे, क्रोध में लड़े हुए जायेंगे। तब आप कभी भी सेक्स की उस गहरी अनुभूति को उपलब्ध नहीं कर पायेंगे। जिसका की प्राणों में प्यास है। वह समाधि की झलक वहां नहीं मिलेगी। लेकिन यहां उलटा होता है।

मेरी प्रार्थना है जब आनंद में हों, जब प्रेम में हों, जब प्रफुल्लित हों और जब प्राण 'प्रेयर फुल' हों। जब ऐसा मालुम पड़े कि आज ह्रदय शांति से और आनंद से कृतज्ञता से भरा हुआ है, तभी क्षण है—तभी क्षण है संभोग के निकट जाने का। और वैसा व्यक्ति संभोग से समाधि को उपलब्ध होता है। और एक बार भी समाधि की एक किरण मिल जाये। तो संभोग से सदा के लिए मुक्त हो जाता है। और समाधि में गतिमान हो जाता है।

स्त्री और पुरूष का मिलन एक बहुत गहरा अर्थ रखता है। स्त्री और पुरूष के मिलन में पहली बार अहंकार टूटता है और हम किसी से मिलते है।

मां के पेट से बच्चा निकलता है और दिन रात उसके प्राणों में एक ही बात लगी रहती है जैसे की हमने किसी वृक्ष को उखाड़ लिया जमीन से। उस पूरे वृक्ष के प्राण तड़पते है कि जमीन से कैसे जुड़ जाये। क्योंकि जमीन से जुड़ा हुआ होकर ही उसे प्राण मिलता था। रस मिलता था जीवन मिलता था। व्हाइटालिटी मिलती थी। जमीन से उखड गया तो उसकी सारी जड़ें चिल्लाये गी कि मुझे जमीन में वापस भेज दो। उसका सारा प्राण चिल्लाये गा कि मुझे जमीन में वापस भेज दो। वह उखड गया टूट गया। अपरूटेड हो गया।

आदमी जैसे ही मां के पेट से बाहर निकलता है, अपरूटेड हो जाता है। वह सारे जीवन और जगत से एक अर्थ में टूट गया। अलग हो गया। अब उसकी सारी पुकार और सारे प्राण की आकांशा जगत और जीवन और अस्तित्व से, एग्ज़िसटैंस से वापस जुड़ जाने की है। उसी पुकार का नाम प्रेम और प्यास है।

प्रेम का और अर्थ क्या है? हर आदमी चाह रहा है कि मैं प्रेम पाऊँ और प्रेम करूं। प्रेम का मतलब क्या है?

प्रेम का मतलब है कि मैं टुट गया हूं, आइसोलेट हो गया हूं। अलग हो गया हूं। मैं वापस जुड़ जाऊँ जीवन से। लेकिन इस जुड़ने का गहरे से गहरा अनुभव मनुष्य को सेक्स के अनुभव में होता है। स्त्री और पुरूष को होता है। वह पहला अनुभव है जुड़ जाने का। और जो व्यक्ति

इस जुड़ जाने के अनुभव को—प्रेम की प्यास, जुड़ने की आकांशा के अर्थ में समझेगा,वह आदमी एक दूसरे अनुभव को भी शीध्र उपलब्ध हो सकता है।

योगी जुड़ता है, साधु भी जुड़ता है। संत भी जुड़ता है, समाधिस्थ व्यक्ति भी जुड़ता है। संभोगी भी जुड़ता है।

संभोग करने में दो व्यक्ति जुड़ते है। एक व्यक्ति दूसरे से जुड़ता है और एक हो जाता है।

समाधि में एक व्यक्ति समष्टि से जुड़ता है और एक हो जाता है।

संभोग दो व्यक्तियों के बीच मिलन है।

समाधि एक व्यक्ति और अनंत के बीच मिलन है।

स्वभावत: दो व्यक्ति का मिलन क्षण भर को हो सकता है। एक व्यक्ति और अनंत का मिलन अनंत के लिए हो सकता है। दोनों व्यक्ति सीमित है। उनका मिलन असीम नहीं हो सकता। यही पीड़ा है, यहीं कष्ट है, सारे दांपत्य का, सारे प्रेम का कि जिससे हम जुड़ना चाहते है। उससे भी सदा के लिए नहीं जुड़ पाते। क्षण भर को जुड़ते है और फिर फासले हो जात है। फासले पीड़ा देते है। फासले कष्ट देते है। और निरंतर दो प्रेमी इसी पीड़ा में परेशान रहते है। कि फासला क्यों है। और हर चीज फिर धीरे-धीरे ऐसी मालूम पड़ने लगती है कि दूसरा फासला बना रहा है। इसीलिए दूसरे पर क्रोध पैदा होना शुरू हो जाता है।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—4

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

1 अक्टूबर—1968,

Posted on अक्टूबर 30, 2010by sw anand prashad

समाधि : अहं-शून्यता समय शून्यता का अनुभव—4

संभोग से समाधि की ओर--ओशो

और अब तो हम उस जगह पहुंच गये है कि शायद और पतन की गुंजाइश नहीं है। करीब-करीब सारी दुनिया एक मेड हाऊस एक पागलखाना हो गयी है।

अमरीका के मनोवैज्ञानिकों ने हिसाब लगया है न्यूयार्क जैसे नगर में केवल 18 प्रतिशत लोग मानसिक रूप से स्वस्थ कहे जा सकते है। 18 प्रतिशत, 18 प्रतिशत लोग मानसिक रूप से स्वास्थ है। तो 82 प्रतिशत लोग करीब-करीब विक्षिप्त होने की हालत में है।

आप कभी अपने संबंध में कोने में बैठकर विचार करना, तो आपको पता चलेगा कि पागलपन कितना है भीतर। किसी तरह दबाये है पागलपन को, किसी तरह संभलकर चले जा रहे है। वह बात दूसरी है। जरा सा कोई धक्का दे-दे और कोई भी आदमी पागल हो सकता है। यह संभावना है कि सौ वर्ष के भीतर सारी मनुष्यता एक पागलखाना बन जाये। सारे लोग करीब-करीब पागल हो जाये। फिर हमें एक फायदा होगा कि पागलों के इलाज की कोई जरूरत नहीं रहेगी। एक फायदा ओर होगा कि पागलों के चिकित्सक नहीं होंगे। एक फायदा होगा कि कोई अनुभव नहीं करेगा कि कोई पागल है। क्योंकि पागल का पहला लक्षण यह है कि वह कभी नहीं मानता कि मैं पागल हूं। इतना ही फायदा होगा।

लेकिन यह रूग्णता बढ़ती चली जाती है। यह रोग, यह अस्वस्थता, यह मानसिक चिंता और मानसिक अंधकार बढ़ता चला जाता है। क्या मैं आपसे कहूं कि सेक्स को 'स्प्रीच्युअलाइज' किये बिना, संभोग को आध्यात्मिक बनाये बिना कोई नयी मनुष्यता पैदा नहीं हो सकती है?

इन तीन दिनों में थोड़ी सी बातें आपसे कहीं। निश्चित ही एक नये मनुष्य को जन्म देना है। मनुष्य के प्राण आतुर है उंचाईयों को छूने के लिए, आकाश में उठ जाने के लिए, चाँद तारों जैसे रोशन होने के लिए, फूलों जैसे खिल जाने के लिए, नृत्य के लिए, संगीत के लिए, आदमी की आत्मा रोती है। और प्यासी है। और आदमी कोल्हू के बैल की तरह चक्कर में घूमता है और उसी में समाप्त हो जाता है। चक्कर के बहार नहीं उठ पाता है। क्या कारण है?

कारण एक ही है, मनुष्य के जन्म की प्रक्रिया बेहूदी है, एब्सर्ड है। मनुष्य के पैदा होने की विधि पागलपन से भरी हुई है। मनुष्य के संभोग को हम द्वार नहीं बना सके समाधि का इसीलिए। मनुष्य का संभोग समाधि का द्वार बन सकता है।

इन तीन दिनों में इसी छोटे से मंत्र पर मैने सारी बातें कहीं और अंत में एक बात दोहरा दूँ और आज की चर्चा में पूरी करूं।

मैं यह कह देना चाहता हूं, कि जीवन के सत्यों से आंखें चुराने वाले लोग मनुष्य के शत्रु है। जो आपसे कहें कि संभोग और सेक्स की बात का विचार भी नहीं करना चाहिए। वह आदमी मनुष्य का दुश्मन हे, क्योंकि ऐसे ही दुश्मनों ने हमें सोचने नहीं दिया। अन्यथा यह कैसे संभव था कि हम आज तक वैज्ञानिक दृष्टि ने खोज लेते और जीवन को नया करने का प्रयोग न खोज लेत।

जो आपसे कहे कि सेक्स का धर्म से कोई संबंध नहीं है। वह आदमी सौ प्रतिशत गलत है। क्योंकि सेक्स की ऊर्जा ही परिवर्तित और रूपांतरित होकर धर्म के जगत में प्रवेश पाती है। वीर्य की शक्ति ही उर्ध्वस्वी होकर मनुष्य को उन लोको में ले जाती है, जिनका हमें कोई पता नहीं है। जहां कोई मृत्यु नहीं है, जहां कोई दुःख नहीं जहां आनंद के अतिरिक्त और कोई अस्तित्व नहीं है।

उस सत चित आनंद में ले जाने वाली शक्ति और ऊर्जा किसके पास है और कहां है?

हम उसे व्यय कर रहे है। हम उन पात्रों की तरह है, जिनमें छेद है, जिन्हें हम कुओं में डालते हैं खींचने के लिए। ऊपर तक पात्र तो आ जाता है, शेर गुल भी बीच में बहुत होता है और पानी गिरता है और लगता है कि पानी आता होगा। लेकिन पानी सब बीच में गिर जाता है। खाली पात्र हाथ में वापस आ जाता है।

हम उन नाव की तरह है, जिनके छेद है। हम नावों को खेते है—सिर्फ डूबने के लिए; नावें किसी किनारे पर नहीं पहुंच पाती है। सिर्फ मंझधार में डूबा देती है। और नष्ट हो जाती है।

और ये सारे छिद्र मनुष्य की सेक्स ऊर्जा के गलत मार्गों से प्रवाहित और बह जाने के कारण है। और उन गलत मार्गों पर बहाने वाले लोग वह नहीं है, जिन्होंने नंगी तस्वीरें लटकायी है; वे नहीं है जिन्होंने नंगे उपन्यास लिखे है; वह नहीं है, जो नंगी फिल्में बना रहे है।

मनुष्य की ऊर्जा को विकृत करनेवाले वे लोग हैं, जिन्होंने मनुष्य को सेक्स के सत्य से परिचित होने में बाधा दी है। और उन्हीं लोगों के कारण ये नंगी तस्वीरें बिक रही है। नंगी फिल्में बिक रही है। लोग नए क्लबों को ईजाद कर रहे है। और गंदगी के नये-नये और बेहूदगी के नये-नये रास्ते निकाल रहे है।

किनके कारण? ये उनके कारण जिनको हम साधु और संन्यासी कहते है। उन्होंने इनके बाजार का रास्ता तैयार किया है। अगर गौर से हम देखें तो वे इनके विज्ञापनदाता है, वे इनके एजेन्ट है।

एक छोटी सी कहानी, मैं अपनी बात पूरी कर दूँगा।

एक पुरोहित जा रहा था। अपने चर्च की तरफ। दूर था गांव, भागा हुआ चला जा रहा था। तभी उसे पास की खाई में जंगल में एक आदमी पडा हुआ दिखायी पडा घावों से भरा हुआ। खून बह रहा था। छुरी उसकी छाती में चुभी है।

पुरोहित को ख्याल आया कि चलू में इसे उठा लूं, लेकिन उसने देखा कि चर्च पहुंचने में देर हो जायेगी। और वहां उसे व्याख्यान देना है। और लोगों को समझाना है। आज वह प्रेम के संबंध में ही समझाने जाता है। आज उसके विषय चुना था, ''लव इज़ गॉड'' क्राइस्ट के वचन को चुना था कि ईश्वर परमात्मा प्रेम है। वह यही समझाने जा रहा था। लेकिन उस आदमी ने आंखे खोली और वह चिल्लाया, पुरोहित मुझे पता है कि तू प्रेम पर बोलने जा रहा है। मैं भी आज सुनने आने वाला था। लेकिन दुष्टों ने मुझे छुरी मारकर यहां पटक दिया है। लेकिन याद रख अगर में जिन्दा रह गया तो गांव भर में खबर कर दूँगा कि आदमी मर रहा था। और यह आदमी प्रेम पर व्याख्यान देने चला गया था। देख आगे मत बढ़।

इससे पुरोहित को थोड़ा डर लगा। क्योंकि अगर वह आदमी जिंदा रह गया तो गांव में खबर कर दे तो लोग कहेंगे कि प्रेम का व्याख्यान बड़ा झूठा है। आपने इस आदमी की फिक्र न की, जो मरता था। तो मजबूरी में उसे नीचे उतर कर उसके पास जाना पडा। वहां जाकर उसका चेहरा देखा तो बहुत घबराया। चेहरा तो पहचाना हुआ सा मालूम पड़ता है। उसने कहा, ऐसा मालूम होता है मैंने तुम्हें कहीं देखा है? और उस मरणासन्न आदमी ने कहां,जरूर देखा होगा। मैं शैतान हूं और पादरियों से अपना पुराना नाता है। तुमने नहीं देखा होगा तो किसने मुझे देखा होगा।

तब उसे ख्याल आया कि वह तो शैतान है, चर्च में उसकी तस्वीर लटकी हे। उसने अपने हाथ अलग कर लिये और कहा कि मर जा। शैतान को तो हम चाहते है कि वह मर ही जाये। अच्छा हुआ कि तू मर जा, मैं तुझे बचाने का क्यों उपाय करूं। मैंने तेरा खून भी छू लिया, यह भी पाप हुआ। मैं जाता हूं।

वह शैतान जोर से हंसा, उसने कहा याद रखना जिस दिन में मर जाऊँगा,उस दिन तुम्हारा धंधा भी मर जायेगा। मेरे बिना तुम जिंदा भी नहीं रह सकते हो। मैं हूं, इसलिए तुम जिंदा हो। मैं तुम्हारे धंधे का आधार हूं। मुझे बचाने की कोशिश करों, नहीं तो जिस दिन शैतान मर जायगा, उसी दिन पुरोहित पंड़े, पुजारी सब मर जायेगे; क्योंकि दुनिया अच्छी हो जायेगी। पंडे, पुजारी, पुरोहित,की कोई जरूरत नही रह जायेगी।

पुरोहित ने सोचा और घबरा गया। बात तो एक दम सही है। बात तो बहुत बुनियादी कह रहा है। ये बात मेरी समझ में क्यों नहीं आई। उसने उसे तत्काल कंधे पर उठाया, और कहां प्यारे शैतान तुम घबराओ मत, मैं तुम्हें अस्पताल में ले चलता हूं वहां तुम्हारी इलाज कराऊंगा। तुम देखना जरूर ठीक हो जाओगे। लेकिन देखो मर मत जाना। तुम बिलकुल ठीक कहते हो। तुम मर गये तो हम बिलकुल ही बेकार हो जायेगे।

हमें ख्याल भी नहीं आ सकता हे कि पुरोहित के धंधे के पीछे शैतान है। हमें यह भी ख्याल नहीं आ सकता कि शैतान के धंधे के पीछे पुरोहित हे। कि जो शैतान का धंधा चल रहा है.....सेक्स का शोषण चल रहा है। सारी दुनिया में....हर चीज के पीछे सेक्स का शोषण चल रहा है। हमें ख्याल भी नहीं आ सकता की इसके पीछे पुरोहित का हाथ हो सकता है। पुरोहित ने जितनी निंदा की है। सेक्स उतना आकर्षक हो गया है। फिर उसने जितने दमन के लिए कहां है, आदमी उतना भोग में गिर गया है। पुरोहित ने जितना इंकार किया हे कि सेक्स के संबंध में सोचना ही मत, सेक्स उतनी ही अंजान पहेली हो गयी है। और हम उसके संबंध में कुछ भी करने मे असमर्थ है।

नहीं। ज्ञान चाहिए। ज्ञान शक्ति है। और सेक्स का ज्ञान बड़ी शक्ति बन सकता है। अज्ञान में जीना हितकर नहीं है। और सेक्स के अज्ञान में जीना तो बिलकुल हितकर नहीं है।

यह भी हो सकता है, कि हम न जायें चाँद पर। कोई जरूरत नहीं है चाँद पर जान पर की। चाँद को जान लेने से कोई मनुष्य जाति का बहुत हित नहीं हो सकता। यह भी जरूरी नहीं है कि हम पैसिफिक महासागर की गहराइयों में उतरें पाँच मील, जहां की सूरज की रोशनी नहीं पहुँचती। उसको जान लेने से भी मनुष्य जाति का कोई बहुत परम मंगल हो जाने वाला नहीं है। यह भी जरूरी नहीं है कि हम एटम को तोड़े ओर पहचाने।

लेकिन एक बात बिलकुल जरूरी हे, सबसे जरूरी है, अल्टीमेट कन्सर्न की है। और वह यह है कि मनुष्य के सेक्स को ठीक से जान लें और समझ लें। ताकि नये मनुष्य को जन्म देने में सफल हो सकें।

ये थोड़ी से बातें तीन दिन में मैंने आपसे कहीं। कल आपके प्रश्न के उत्तर दूँगा। और चूंकि कल का दिन खाली छूट गया। कुछ मित्र आये और देखकर लौट गये तो मेरे ऊपर उनका ऋण हो गया है तो मैं कल दो घंटे उत्तर दे दूँगा, ताकि आपको कोई अड़चन और तकलीफ न हो। अपने प्रश्न आप लिखकर दे देंगे ईमानदारी से क्योंकि यह मामला ऐसा नहीं है कि आप परमात्मा, आत्मा के संबंध में जिस तरह की बातें पूछते है, वह यहां पूछे। यह मामला जिन्दगी का है और सीधे और सच्चे अगर आपके प्रश्न पूछे तो हम इन विषयों की और गहराई में भी उतरने में समर्थ हो सकते है।

मेरी बातों को इतने प्रेम से सुना, उसके लिए अनुगृहित हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—4

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

1 अक्टूबर—1968,

संभोग से समाधि की और—17

Posted on अक्टूबर 31, 2010by sw anand prashad

समाधि : संभोग-उर्जा का अध्यात्मिक नियोजन—5

संभोग से समाधि की ओर--ओशो

मेरे प्रिय आत्मजन,

मित्रों ने बहुत से प्रश्न पूछे है। सबसे पहले एक मित्र ने पूछा है कि मैंने बोलने के लिए सेक्स या काम का विषय क्यों चूना?

इसकी थोड़ी सी कहानी है। एक बड़ा बाजार है। उस बड़े बाजार को कुछ लोग बंबई कहते है। उस बड़े बाजार में एक सभा थी और उस सभा में एक पंडितजी कबीर क्या कहते है, इस संबंध में बोलते थे। उन्होंने कबीर की एक पंक्ति कहीं और उसका अर्थ समझाया। उन्होंने कहा, ''कबिरा खड़ा बजार में लिए लुकाठी हाथ, जो घर बारे अपना चले हमारे साथ।'' उन्होंने यह कहा कि कबीर बाजार में खड़ा था और चिल्लाकर लोगों से कहने लगा कि लकड़ी उठाकर बुलाता हूं उन्हें जो अपने घर को जलाने की हिम्मत रखते हों वे हमारे साथ आ जायें।

उस सभा में मैंने देखा कि लोग यह बात सुनकर बहुत खुश हुए। मुझे बड़ी हैरानी हुई—मुझे हैरानी यह हुई कि वह जो लोग खुश हो रहे थे। उनमें से कोई भी आपने घर को जलाने को कभी तैयार नहीं था। लेकिन उन्हें प्रसन्न देखकर मैंने समझा कि बेचारा कबीर आज होता तो कितना खुश न होता। जब तीन सौ साल पहले वह था और किसी बाजार में उसने चिल्लाकर कहा होगा तो एक भी आदमी खुश नहीं हुआ होगा।
आदमी की जात बड़ी अद्‌भुत है। जो मर जाते है उनकी बातें सुनकर लोग खुश होते है जो जिंदा होते है, उन्हें मार डालने की धमकी देते है।

मैंने सोचा कि आज कबीर होते, इस बंबई के बड़े बाजार में तो कितने खुश होते कि लोग कितने प्रसन्न हो रहे है। कबीर जी क्या कहते है, इसको सुनकर लोग प्रसन्न हो रहे हे।

कबीर जी को सुनकर वे कभी भी प्रसन्न नहीं हुए थे। लेकिन लोगों को प्रसन्न देखकर ऐसा लगा कि जो लोग अपने घर को जलाने के लिए भी हिम्मत रखते है और खुश होते है, उनसे कुछ दिल की बातें आज कही जायें। तो मैं भी उसी धोखे में आ गया। जिसमें कबीर और क्राइस्ट और सारे लोग हमेशा आत रहे है।

मैंने लोगों से सत्य की कुछ बात कहनी चाही। और सत्य के संबंध में कोई बात कहनी हो तो उन असत्यों को सबसे पहले तोड़ देना जरूरी है, जो आदमी ने सत्य समझ रखे है। जिन्हें हम सत्य समझते है और जो सत्य नहीं है। जब तक उन्हें न तोड़ दिया जाए, तब तक सत्य क्या है उसे जानने की तरफ कोई कदम नहीं उठाया जा सकता।

मुझे कहा गया था उस सभा में कि मैं प्रेम के संबंध में कुछ कहूं और मुझे लगा कि प्रेम के संबंध में तब तक बात समझ में नहीं आ सकती, जब तक कि हम काम और सेक्स के संबंध में कुछ गलत धारणाएं लिए हुए बैठे है। अगर गलत धारणाएं है सेक्स के संबंध में तो प्रेम के संबंध में हम जो भी बातचीत करेंगे वह अधूरी होगी। वह झूठी होगी। वह सत्य नहीं हो सकती।

इसलिए उस सभा में मैंने काम और सेक्स के संबंध में कुछ कहा। और यह कहा कि काम की उर्जा ही रूपांतरित होकर प्रेम की अभिव्यक्ति बनती है। एक आदमी खाद खरीद लाता है, गंदी और बदबू से भरी हुई और अगर अपने घर के पास ढेर लगा ले तो सड़क पर से निकलना मुश्किल हो जायेगा। इतनी दुर्गंध वहां फैलेगी। लेकिन एक दूसरा आदमी उसी खाद को बग़ीचे में डालता है और फूलों के बीज डालता है। फिर वे बीज बड़े होते है पौधे बनते है। और उनमें फूल निकलते है। फूलों की सुगंध पास-पड़ोस के घरों मे निमंत्रण बनकर पहुंच जाती है। रहा से निकलते लोगों को भी वह सुगंध छूती है। वह पौधों को लहराता हुआ संगीत अनुभव होता है। लेकिन शायद ही कभी आपने सोचा हो कि फूलों से जो सुगंध बनकर प्रकट हो रहा रही है। वह वही दुर्गंध है जो खाद से प्रकट होती थी। खाद की दुर्गंध बीजों से गुजर कर फूलों की सुगंध कर जाती है।

दुर्गंध सुगंध बन सकती है। काम प्रेम बन सकता है।

लेकिन जो काम के विरोध में हो जायेगा। वह उसे प्रेम कैसे बनायेगे। जो काम का शत्रु हो जायगा, वह उसे कैसे रूपांतरित करेगा? इसलिए काम को सेक्स को, समझना जरूरी है। यह वहां कहां और उसे रूपांतरित करना जरूरी है।

मैंने सोचा था, जो लोग सिर हिलाते थे घर जल जाने पर, वे लोग मेरी बातें सुनकर बड़े खुश होंगे। लेकिन मुझसे गलती हो गयी। जब मैं मंच से उतरा तो उस मंच पर जितने नेता थे,

जितने संयोजक थे, वे सब भाग चुके थे। वे मुझे उतरते वक्त मंच पर कोई नहीं मिले। वे शायद अपने घर चले गये होंगे कि कहीं घर में आग न लग जाये। उसे बुझाने का इंतजाम करने भोग गये थे। मुझे धन्यवाद देने को भी संयोजक वहां नहीं थे। जितनी भी सफेद टोपियों थी। जितने भी खादी वाले लोग थे। वे मंच पर कोई भी नहीं थे। वे जा चुके थे। नेता बड़ा कमजोर होता है। वह अनुयायियों के पहले भाग जाता है।

लेकिन कुछ हिम्मत वर लोग जरूर आये। कुछ बच्चे आये, कुछ बच्चियां आयी, कुछ बूढ़े, कुछ जवान। और उन्होंने मुझसे कहा कि आपने वह बात हमें कहीं है, जो हमें किसी ने कभी नहीं कही। और हमारी आंखें खोल दी है। हमें बहुत ही प्रकाश अनुभव हुआ है। तो फिर मैंने सोचा कि उचित होगा कि इस बात को और ठीक से पूरी तरह कहां जाये। इसलिए यह विषय मैंने आज यहां चुना। इस चार दिनों में यक कहानी जो वहां अधूरी रह गयी थी। उसे पूरा करने का एक कारण यह था कि लोगों ने मुझे कहा। और वह उन लोगों ने कहा, जिनको जीवन को समझने की हार्दिक चेष्टा है। और उन्होंने चाहा कि मैं पूरी बात कहूं। एक तो कारण यह था।

और दूसरा कारण यह था कि वे जो भाग गये थे मंच से, उन्होंने जगह-जगह जाकर कहना शुरू कर दिया कि मैंने तो ऐसी बातें कही है कि धर्म का विनाश ही हो जायेगा। मैंने तो ऐसी कहीं है, जिनसे कि लोग अधार्मिक हो जायेंगे।

तो मुझे लगा कि उनका भी कहना पूरा स्पष्ट हो सके, उनको भी पता चल सके कि लोग सेक्स के संबंध में समझकर अधार्मिक होने वाले नहीं है। नहीं समझा है उन्होंने आज तक इसलिए अधार्मिक हो गये है।

अज्ञान अधार्मिक बनाता हो। ज्ञान कभी भी अधार्मिक नहीं बना सकता है।

और अगर ज्ञान अधार्मिक बनाता हो तो मैं कहता हूं कि ऐसा ज्ञान उचित है। जो अधार्मिक बना दे, उस अज्ञान की बजाय जो कि धार्मिक बनाता हो। धर्म तो वही सत्य है जो ज्ञान के आधार पर खड़ा होता है।

और मुझे नहीं दिखायी पड़ता की ज्ञान मनुष्य को कहीं भी कोई हानि पहुंचा सकता है। हानि हमेशा अंधकार से पहुंचती है और अज्ञान से।

इसलिए अगर मनुष्य जाति भ्रष्ट हो गयी; यौन के संबंध में विकृत और विक्षिप्त हो गयी। सेक्स के संबंध में पागल हो गयी तो उसका जिम्मा उन लोगो पर नहीं है, जिन्होंने सेक्स के संबंध में ज्ञान की खोज की है। उसका जिम्मा उन नैतिक धार्मिक और थोथे साधु-संतों पर है, जिन्होंने मनुष्य को हजारों वर्षो से अज्ञान में रखने की चेष्टा की है। यह मनुष्य जाति

कभी की सेक्स से मुक्त हो गयी होती। लेकिन नहीं यह हो सका। नहीं हो सका उनकी वजह से जो अंधकार कायम रखने की चेष्टा कर रहे है।

तो मैंने समझा की अगर थोड़ी सह किरण से इतनी बेचैनी हुई तो फिर पूरे प्रकाश की चर्चा कर लेनी उचित है। ताकि साफ हो सके कि ज्ञान मनुष्य को धार्मिक बनाता है या अधार्मिक बनाता है। यह कारण था इसलिए यह विषय चुना। और अगर यह कारण न होता तो शायद मुझे अचानक खयाल न आता इसे चुनने का। शायद इस पर मैं कोई बात नहीं करता। इस लिहाज से वे लोग धन्यवाद के पात्र है, जिन्होंने अवसर पैदा किया यह विषय चुनने का। और अगर आपको धन्यवाद देना हो तो मुझे मत देना। वह भारतीय विद्या भवन ने जिन्होंने सभा आयोजित की थी, उनको धन्यवाद देना। उन्होंने ही यह विषय चुनाव दिया। मेरा इसमें कोई हाथ नहीं है।

एक मित्र ने पूछा है, कि मैंने कहा कि काम का रूपांतरण ही प्रेम बनता है। तो उन्होंने पूछा है कि मां का बेटे के लिए प्रेम—क्या वह भी काम है। वह भी सेक्स है। और भी कुछ लोगों ने इसी तरह के प्रश्न पूछे है।

इसे थोड़ा समझ लेना उपयोगी होगा।

एक तल तो शरीर का तल है—बिलकुल फिजियोलॉजलीकल। एक आदमी वेश्या के पास जाता है। उसे जो सेक्स का अनुभव होता है। वह शरीर का गहरा नहीं हो सकता। वेश्या शरीर बेच सकती है। मन नहीं बेच सकती। और आत्मा को बेचने का तो कोई उपाय ही नहीं है। शरीर—शरीर से मिल सकता है।

एक आदमी बलात्कार करता है। तो बलात्कार में किसी का मन भी नहीं मिल सकता ओर किसी की आत्मा भी नहीं मिल सकती। शरीर पर बलात्कार किया जा सकता है। आत्मा पर बलात्कार करने का कोई उपाय नहीं है। ने खोजा जा सका हे। न खोजा जा सकता है। तो बलात्कार में जो भी अनुभव होगा वह शरीर का होगा। सेक्स का प्राथमिक अनुभव शरीर से ज्यादा गहरा नहीं होता। लेकिन शरीर के अनुभव पर ही जो रूक जाते है। वे सेक्स के पूरे अनुभव को उपलब्ध नहीं होते। उन्हें मैंने जो गहराइयों की बातें कहीं है। उसका कोई पता नहीं चल सकता। और अधिक लोग शरीर के तल पर ही रूक जाते है।

इस संबंध में यह भी जान लेना जरूरी है कि जिन देशों में भी प्रेम के बिना विवाह होता है। उस देश में सेक्स शरीर के तल पर रूक जाता है। और उससे गहरे नहीं जा सकता।

विवाह दो शरीरों का हो सकता है, विवाह दो आत्माओं का नहीं। दो आत्माओं का प्रेम हो सकता है।

वह अगर प्रेम से विवाह निकलता हो, तब तो विवाह एक गहरा अर्थ ले लेता है। और अगर विवाह दो पंडितों के और दो ज्योतिषियों के हिसाब किताब से निकलता हो, और जाति के विचार से निकलता हो और धन के विचार से निकलता हो तो वैसा विवाह कभी भी शरीर से ज्यादा गहरा नहीं जा सकता।

लेकिन ऐसे विवाह का एक फायदा है। शरीर मन के बजाय ज्यादा स्थिर चीज है। इसलिए शरीर जिन समाजों में विवाह का आधार है, उन समाजों में विवाह सुस्थिर होगा। जीवन भर चल जाएगा।

शरीर अस्थिर चीज नहीं है। शरीर बहुत स्थिर चीज है। उसमें परिवर्तन बहुत धीरे-धीरे आता है। और पता भी नहीं चलता। शरीर जड़ता का तल है। इसलिए जिन समाजों ने यह समझा कि विवाह को स्थिर बनाना जरूरी है—एक ही विवाह पर्याप्त हो, बदलाहट की जरूरत न पड़े; उनको प्रेम अलग कर देना पडा। क्योंकि प्रेम होता है मन से और मन चंचल है।

जो समाज प्रेम के आधार पर विवाह को निर्मित करेंगे, उन समाजों में तलाक अनिवार्य होगा। उन समाजों में विवाह परिवर्तित होगा। विवाह स्थायी व्यवस्था नहीं हो सकती है। क्योंकि प्रेम तरल है।

मन चंचल है, और शरीर स्थिर और जड़ है।

आपके घर में एक पत्थर पडा हुआ है। सुबह पत्थर पड़ा था। सांझ भी पत्थर वहीं पडा रहेगा। सुबह एक फूल खिला था। शाम तक मुरझा जाएगा। फूल जिंदा है। जन्मे गा, मरेगा। पत्थर मुर्दा है। वैसे का वैसा सुबह था। वैसा ही श्याम पडा रहेगा। पत्थर बहुत स्थिर है।

विवाह पत्थर पडा हुआ है। शरीर के तल पर जो विवाह है, वह स्थिरता लाता है। समाज के हित में है। लेकिन एक-एक व्यक्ति के अहित में है। क्योंकि वह स्थिरता शरीर के तल पर लायी गई है ओर प्रेम से बचा गया है।

इसलिए शरीर के तल से ज्यादा पति और पत्नी का संभोग और सेक्स नहीं पहुंच पात है। एक यांत्रिक , एक मेकैनिकल रूटीन हो जाती है। एक यंत्र की भांति जीवन हो जाता है। सेक्स का। उस अनुभव को रिपिट करते रहते हे। और जड़ होते चले जाते है। लेकिन उससे ज्यादा गहराई कभी भी नहीं मिलती।

जहां प्रेम के बिना विवाह होता है। उस विवाह में और वेश्या के पास जाने में बुनियादी भेद नहीं, थोड़ा सा भेद है। बुनियादी नहीं है वह। वेश्या को आप एक दिन के लिए खरीदते है और पत्नी को आप पूरे जीवन के लिए खरीदते है। इससे ज्यादा फर्क नहीं पड़ता। जहां प्रेम नहीं है, वहां खरीदना ही है। चाहे एक दिन के लिए खरीदो चाहे पूरी जिंदगी के लिए खरीदो। हालांकि साथ रहने से रोज-रोज एक तरह का संबंध पैदा हो जाता है एसोसिएशन से। लोग उसी को प्रेम समझ लेते है। वह प्रेम नहीं है। वह प्रेम और ही बात है। शरीर के तल पर विवाह है इसलिए शरीर के तल से गहरा संबंध कभी भी नहीं उत्पन्न हो पाता है। यह एक तल है।

दूसरा तल है सेक्स का—मन का तल, साइकोलॉजीकल वात्यायन से लेकर पंडित कोक तक जिन लोगों ने भी इस तरह के शास्त्र लिखे हे सेक्स के बाबत वे शरीर के तल से गहरे नही जाते। दूसरा तल है मानसिक। जो लोग प्रेम करते है और फिर विवाह में बँधते है। उनका प्रेम शरीर के तल से थोड़ा गहरा जाता है। वह मन तक जाता है। उसकी गहराई साइकोलॉजीकल है। लेकिन वह भी रोज-रोज पुनरूक्ति होने से थोड़े दिनों में शरीर के तल पर आ जाता है। और यांत्रिक हो जाता है।

जो व्यवस्था विकसित की है दो सौ वर्षों में प्रेम विवाह की, वह मानसिक तल तक सेक्स को ले जाता है, ,और आज पश्चिम में आज समाज अस्त-व्यस्त हो गया है। क्योंकि मन का कोई भरोसा नहीं है, वह आज कहता है कुछ, कल कुछ और कहने लग जाता है। सुबह कुछ कहने लगता है, श्याम कुछ कहने लगता है। घड़ी भर पहले कुछ कहता है। घड़ी भर बाद कुछ कहने लगता है।

शायद आपने सुना होगा कि बायरन ने जब शादी की तो कहते है कि तब वह कोई साठ-सत्तर स्त्रियों से संबंधित रह चुका था। एक स्त्री ने उसे मजबूर की कर दिया विवाह के लिए। जो उसने विवाह किया और जब वह चर्च से उतर रहा था विवाह करके अपनी पत्नी का हाथ-हाथ में लेकर। घंटिया बज रही है चर्च की। मोमबत्तियाँ अभी जो जलाई गई थी। जल रही है। अभी जो मित्र स्वागत करने आये थे। वे विदा हो रहे है। और वह अपनी पत्नी को हाथ पकड़कर सामने खड़ी घोड़ा-गाड़ी में बैठने के लिए चर्च की सीढ़ियाँ उतर रहा है। तभी उसे चर्च केसामने ही एक और स्त्री जाती हुई दिखाई देती है। एक क्षण को वह भूल जाता है अपनी पत्नी को। उसके हाथ को, अपने विवाह को। सारा प्राण उस स्त्री के पीछा करने लगा। जाकर वह गाड़ी में बैठा। बहुत ईमानदार आदमी रहा होगा। उसने अपनी पत्नी से कहां, तूने कुछ ध्यान दिया। एक अजीव घटना घट गई। कल तक तुझसे मेरा विवाह नहीं हुआ था, तो मैं विचार करता था कि तू मुझे मिल पायेगी या नहीं। तेरे सिवाय मुझे कोई भी दिखाई नहीं पड़ता था और आज जबकि विवाह हो गया है, मैं तेरा हाथ पकड़कर नीचे उत्तर रहा हूं। मुझे

एक स्त्री दिखाई पड़ी गाड़ी के उस तरफ जाती हुई और तू मुझे भल गयी। और मेरा मन उस स्त्री का पीछा करने लगा। और एक क्षण को मुझे लगा कि काश यह स्त्री मुझे मिल जाये।

मन इतना चंचल है। तो जिन लोगों को समाज को व्यवस्थित रखना था। उन्होंने मन के तल पर सेक्स को नहीं जाने दिया। उन्होंने शरीर के तल पर रोक लिया। विवाह करो,प्रेम नहीं। फिर विवाह से प्रेम आता हो तो आये। न आता हो न आये। शरीर के तल पर स्थिरता हो सकती है। मन के तल पर स्थिरता बहुत मुशिकल है। लेकिन मन के तल पर सेक्स का अनुभव शरीर से ज्यादा गहरा होता है।

पूरब की बजाय पश्चिम का सेक्स का अनुभव ज्यादा गहरा है।

पश्चिम के जो मनोवैज्ञानिक हैं फ्रायड से जुंग तक, उन सारे लोगों ने जो लिखा है वह सेक्स की दूसरी गहराई है, वह मन की गहराई है।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—4

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

2 अक्टूबर—1968,

संभोग से समाधि की और—18

Posted on नवम्बर 6, 2010by sw anand prashad

समाधि : संभोग-उर्जा का अध्यात्मिक नियोजन—5

संभोग से समाधि कीओर--ओशो

लेकिन मैं जिस सेक्स की बात कर रहा हूं, वह तीसरा तल है। वह न आज तक पूरब में पैदा हुआ है, न पश्चिम में। वह तीसरा तल है स्प्रिचुअल, वह तीसरा तल है, अध्यात्मिक। शरीर के तल पर भी एक स्थिरता है। क्योंकि शरीर जड़ है। और आत्मा के तल पर भी स्थिरता है, क्योंकि आत्मा के तल पर कोई परिवर्तन कभी होता ही नहीं। वहां सब शांत है, वहां सब सनातन है। बीच में एक तल है मन का जहां पारे की तरह तरल है मन। जरा में बदल जाता है।

पश्चिम मन के साथ प्रयोग कर रहा है इसलिए विवाह टूट रहा है। परिवार नष्ट हो रहा है। मन के साथ विवाह और परिवार खड़े नहीं रह सकते। अभी दो वर्ष में तलाक है, कल दो घंटे में तलाक हो सकता है। मन तो घंटे भर में बदल जाता है। तो पश्चिम का सारा समाज अस्त-व्यस्त हो गया है। पूरब का समाज व्यवस्थित था। लेकिन सेक्स की जो गहरी अनुभूति थी, वह पूरब को अपलब्ध नहीं हो सकी।
एक और स्थिरता है, एक और घड़ी है अध्यात्म की। उस तल पर जो पति-पत्नी एक बार मिल जाते है या दो व्यक्ति एक बार मिल जाते है। उन्हें तो ऐसा लगता है कि वे अनंत जन्मों के लिए एक हो गये। वहां फिर कोई परिवर्तन नहीं है। उस तल पर चाहिए स्थिरता। उस तल पर चाहिए अनुभव।

तो मैं जिस अनुभव की बात कर रहा हूं,जिस सेक्स की बात कहर रहा हूं। वह स्प्रिचुअल सेक्स हे। अध्यात्मिक अर्थ नियोजन करना चाहता हूं काम की वासना में। और अगर मेरी यह बात समझेंगे तो आपको पता चल जायेगा। कि मां का बेटे के प्रति जो प्रेम है, वह

आध्यात्मिक काम है। वह स्प्रिचुअल सेक्स का हिस्सा है। आप कहेंगे यह तो बहुत उलटी बात है...मां को बेटे के प्रति काम का क्या संबंध?

लेकिन जैसा मैंने कहा कि पुरूष और स्त्री पति और पत्नी एक क्षण के लिए मिलते है, एक क्षण के लिए दोनों की आत्माएं एक हो जाती है। और उस घड़ी में जो उन्हें आनंद का अनुभव होता है। वही उनको बांधने वाला हो जाता है।

कभी आपने सोचा कि मां के पेट में बेटा नौ महीने तक रहता है। और मां के आस्तित्व से मिला रहता है। पति एक क्षण को मिलता है। बेटा नौ महीने के लिए होता है इक्ट्ठा होता है। इसीलिए मां का बेटे से जो गहरा संबंध है, वह पति से भी कभी नहीं होता। हो भी नहीं सकता। पति एक क्षण के लिए मिलता है आस्तित्व के तल पर, जहां एग्ज़िसटैंस है, जहां बीइंग है, वहां एक क्षण को मिलता है, फिर बिछुड़ जाता है। एक क्षण को करीब आते है ओर फिर कोसों का फासला शुरू हो जाता है।

लेकिन बेटा नौ महीने तक मां की सांस से सांस लेता है। मां के ह्रदय से धड़कता है। मां के खून, मां के प्राण से प्राण, उसका अपना कोई आस्तित्व नहीं होता है। वह मां का एक हिस्सा होता है। इसीलिए स्त्री मां बने बिना कभी भी पूरी तरह तृप्त नहीं हो पाती। कोई पति स्त्री को कभी तृप्त नहीं कर सकता। जो उसका बेटा उसे कर देता है। कोई पति कभी उतना गहरा कन्टेंटमेंट उसे नहीं दे पाता जितना उसका बेटा उसे दे पाता है।

स्त्री मां बने बिना पूरी नहीं हो पाती। उसके व्यक्तित्व का पूरा निखार और पूरा सौंदर्य उसके मां बनने पर प्रकट होता है। उससे उसके बेटे के आत्मिक संबंध बहुत गहरे होते है।

और इसीलिए आप यह भी समझ लें कि जैसे ही स्त्री मां बन जाती है। उसकी सेक्स में रूचि कम हो जाती है। यह कभी आपने ख्याल किया है। जैसे ही स्त्री मां बन जाती है, सेक्स के प्रति रूचि कम हो जाती है। फिर सेक्स में उसे उतना रस नहीं मालूम पड़ता। उसने एक और गहरा रस ले लिया है। मातृत्व का। वह एक प्राण के साथ और नौ महीने तक इकट्ठी जी ली है। अब उसे सेक्स में रस नहीं रह जाता है।

अकसर पति हैरान होते है। पिता बनने से पति में कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन मां बनने से स्त्री में बुनियादी फर्क पड़ जाता है। पिता बनने से पति में कोई फर्क नहीं पड़ता। क्योंकि पिता कोई बहुत गहरा संबंध नहीं है। जो नया व्यक्ति पैदा होता है उससे पिता का कोई गहरा संबंध नहीं है।

पिता बिलकुल सामाजिक व्यवस्था है, सोशल इंस्टीटयूशन है।

पिता के बिना भी दुनिया चल सकती है, इसीलिए पिता को कोई गहरा संबंध नहीं है बेटे का।

मां से उसके गहरे संबंध है, और मां तृप्त हो जाती है उसके बाद। और उसमें एक और ही तरह की आध्यात्मिक गरिमा प्रकट होती है। जो मां नहीं बनी है स्त्री उसको देखे और जो मां बन गई है उसे देखें। उन दोनों की चमक और उर्जा और उनकी व्यक्तित्व अलग मालूम होगा। मां की दीप्ति दिखाई पड़ेगी—शांत, जैसे नदी जब मैदान में आ जाती है, तब शांत हो जाती है। जो अभी मां नहीं बनी है, उस स्त्री में एक दौड़ दिखेगी, जैसे पहाड़ पर नदी दौड़ती है। झरने की तरह टूटती है, चिल्लाती है; गड़गड़ाहट करती है; आवाज है; दौड़ है; मां बन कर वह एक दम से शांत हो जाती है।

इसीलिए मैं आपसे इस संदर्भ में यह भी कहना चाहता हूं कि जिन स्त्रियों को सेक्स का पागलपन सवार हो गया है, जैसे पश्चिम में—वे इसीलिए मां नहीं बनना चाहती। क्योंकि मां बनने के बाद सेक्स का रस कम हो जाता है। पश्चिम की स्त्री मां बनने से इंकार करती है। क्योंकि मां बनी कि सेक्स का रस कम हुआ। सेक्स का रस तभी तक रह सकता है जब वह मां नहीं बन जाती। पर विकृति एक अपवाद नहीं है।

तो पश्चिम की अनेक हुकूमतें घबरा गयी है इस बात से कि वह रो अगर बढ़ता चला गया तो उनकी संख्या का क्या होगा। हम यहां घबरा रहे कि हमारी संख्या न बढ़ जाए। पश्चिम के मुल्क घबरा रहे है कि उनकी संख्या कहीं कम न हो जाये। क्योंकि स्त्रियों को अगर इतने तीव्र रूप से यह भाव पैदा हो जाये कि मां बनने से सेक्स का रस कम हो जाता है और वह मां न बनना चाहे तो क्या किया जा सकता है। कोई कानूनी जबर्दस्ती की जा सकती है।

किसी को संतति नियमन के लिए तो कानूनी जबर्दस्ती भी की जा सकती है। कि हम जबर्दस्ती बच्चे नहीं होने देंगे। लेकिन किसी स्त्री को मजबूर नहीं किया जा सकता कि बच्चे पैदा करने की पड़ेंगे।

पश्चिम के सामने हमसे बड़ा सवाल है। हमारा सवाल उतना बड़ा नहीं है, हम संख्या को रोक सकते है। जबर्दस्ती कानूनन,लेकिन संख्या को कानूनन बढ़ाने को कोई रास्ता नहीं है। किसी व्यक्ति को जबर्दस्ती नहीं की जात सकती की तुम बच्चे पैदा करों।

और आज से दो सौ साल के भीतर पश्चिम के सामने यक प्रश्न बहुत भारी हो जायेगा, क्योंकि पूरब की संख्या बढती चली जायेगी, वह सारी दुनिया पर छा सकती है। और पश्चिम की संख्या क्षीण होती जा सकती है। स्त्री को मां बनने के लिए उन्हें फिर से राज़ी करना पड़ेगा।

और उनके कुछ मनोवैज्ञानिकों ने यह सलाह देनी शुरू कर दी है, कि बाल विवाह शुरू कर दें, अन्यथा खतरा है। क्योंकि स्त्री होश में आ जाती है तो वह मां नहीं बनना चाहती। उसे सेक्स का रस लेने में ज्यादा ठीक मालूम होता है। इसलिए बचपन में शादी कर दो उसे पता ही न चले कि वह कब मां बन गई।

पूरब में जो बाल-विवाह चलता था, उसके एक कारणों में यह भी था। स्त्री जितनी युवा हो जायेगी और जितनी समझदार हो जायेगी। और सेक्स का जैसे रस लेने लगेगी,वैसे वह मां नहीं बनना चाहेंगी। हालांकि उसे कुछ पता नहीं कि मां बनने से क्या मिलेगा। वह तो मां बनने से ही पता चल सकता है। उससे पहले कोई उपाय नहीं है।

स्त्री तृप्त होने लगती है मां बनकर—क्यों? उसने एक आध्यात्मिक तल पर सेक्स का अनुभव कर लिया बच्चे के साथ। और इसीलिए मां और बेटे के पास एक आत्मीयता है। मां अपने प्राण दे सकती है बेटे के लिए, मां बेटे के प्राण लेने की कल्पना नहीं कर सकती।

पत्नी पति के प्राण ले सकती है। लिए है अनेक बार। और अगर नहीं भी लेगी तो पूरी जिंदगी में प्राण लेने की हालत पैदा कर देगी। लेकिन बेटे के लिए कल्पना भी नहीं कर सकती। वह संबंध बहुत गहरा है।

और मैं आपसे यह भी कहूं कि उससे अपने पति को संबंध भी इतना हो जाता है—तो पति उसे बेटे की तरह दिखाई देता है। पति की तरह नहीं। यहां इतनी स्त्रीयां बैठी है और इतने पुरूष बैठे है। मैं उनसे ये पूछता हूं कि जब उन्होंने अपनी पत्नी को बहुत प्रेम किया है तो क्या उन्होंने इस तरह का व्यवहार नहीं किया। जैसे छोटा बच्चा अपनी मां के साथ करता है। क्या आपको इस बात का ख्याल है कि पुरूष के हाथ स्त्री के स्तन की तरफ क्यों पहुंच जाते है?

वह छोटे बच्चे के हाथ है, जो अपनी मां के स्तन की तरफ जा रहे है।

जैसे ही पुरूष स्त्री के प्रति गहरे प्रेम से भरता है, उसके हाथ उसके स्तन की तरफ बढते है—क्यों, स्तन से क्या संबंध है सेक्स का।

स्तन से कोई संबंध नहीं है। स्तन से मां और बेटे का संबंध है। बचपन से वह जानता रहा है। बेटे का संबंध स्तन से है। और जैसे ही पुरूष गहरे प्रेम से भरता है वह बेटा हो जाता है।

और स्त्री का हाथ कहां पहुंच जाता है?

वह पुरूष के सिर पर पहुंच जाता है। उसके बालों में अगुलियां चली जाती है। वह पुराने बेटे की याद है। वह पुराने बेटे का सर है, जिसे उसने सहलाया है।

इसलिए अगर ठीक से प्रेम आध्यात्मिक तल तक विकसित हो जाये तो पति आखिर में बेटा हो जाता है। और बेटा हो जाना चाहिए। तो आप समझिए कि हमने तीसरे तल पर सेक्स का अनुभव किया। अध्यात्म के तल पर स्प्रिचुअल के तल पर। इस तल पर एक संबंध है, जिसका हमें कोई पता नहीं है। पति पत्नी का संबंध उसकी तैयारी है। उसका अंत नहीं है। वह यात्रा की शुरूआत है। पहुंचा नहीं है।

इसलिए पति पत्नी के बीच एक इनर कानफ्लिक्ट्स चौबीस घंटे चलती रहती है। चौबीस घंटे एक कलह चलती है। जिसे हम प्रेम करते है, उसी के साथ चौबीस घंटे कलह चलती है। लेकिन न पति समझता है, न पत्नी समझती है। कि कलह का क्या करण है। पति सोचता है कि शायद दूसरी स्त्री होती तो ठीक हो जाता। पत्नी सोचती है कि शायद दूसरा पुरूष होता तो ठीक हो जाता। यह जोड़ा गलत हो गया है।

लेकिन मैं आपसे कहता हूं कि दुनिया भर के जोड़ों का यही अनुभव है। और आपको अगर बदलने का मौका दे दिया जाये तो इतना ही फर्क पड़ेगा कि जैसे कुछ लोग अर्थी को लेकर मरघट जाते है। कंधे पर रखकर अर्थी को। एक कंधा दुःख ने लगता है तो उठाकर दूसरे कंधे पर अर्थी रख लेते है। थोड़ी देर राहत मिलती है। कंधा बदल गया। थोड़ी देर बाद पता चलता है कि बोझ उतना का उतना ही फिर शुरू हो गया है।

पश्चिम में इतने तलाक होते है। उनका अनुभव यह है कि दूसरी स्त्री दस पाँच दिन के बाद फिर पहली स्त्री साबित होती है। दूसरा पुरूष 15 दिन के बाद फिर पहला पुरूष साबित हो जाता है। इसके कारण गहरे है। इसके कारण इसी स्त्री और इसी पुरूष के संबंधित नहीं है। इसके कारण इस बात से संबंधित है कि जो स्त्री और पुरूष का पति और पत्नी का संबंध बीच की यात्रा का संबंध है। वह मुकाम नहीं है, वह अंत नहीं है। अंत तो वही होगा, जहां स्त्री मां बन जायेगी। और पुरूष फिर बेटा हो जायेगा।

तो मैं आपसे कह रहा हूं कि मां और बेटे का संबंध आध्यात्मिक काम का संबंध है और जिस दिन स्त्री और पुरूष में, पति-पत्नी में भी अध्यात्मिक काम का संबंध उत्पन्न होगा,उस दिन फिर मां-बेटे का संबंध स्थापित हो जायेगा। और वह स्थापित हो जाये तो एक तृप्ति है। जिसको मैंने कहा, कन्टेंटमेंट, अनुभव होगा और उस अनुभव से ब्रह्मचर्य फलित होता है। तो यह मत सोचें कि मां और बेटे के संबंध में कोई काम नहीं है। आध्यात्मिक काम है। अगर हम ठीक से कहें तो आध्यात्मिक काम को ही प्रेम कह सकते है। वह प्रेम...स्प्रीच्युअलाइज जैसे ही सेक्स हो जाता है। वह प्रेम हो जाता है।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—4

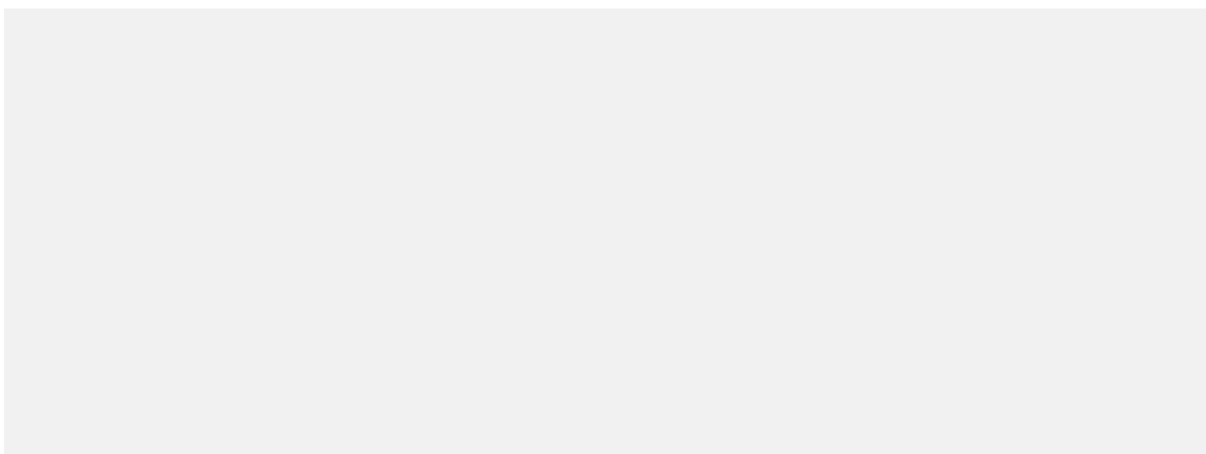
गोवा लिया टैंक, बम्बई,

2 अक्टूबर—1968,

संभोग से समाधि की और—19

Posted on नवम्बर 7, 2010by sw anand prashad

समाधि : संभोग-उर्जा का अध्यात्मिक नियोजन—5



संभोग से समाधि की ओर--ओशो

एक मित्र ने इस संबंध में और एक बात पूछी है। उन्होंने पूछा है कि आपको हम सेक्स पर कोई आथोरिटी कोई प्रामाणिक व्यक्ति नहीं मान सकते है। हम तो आपसे ईश्वर के संबंध में पूछने आये थे। और आप सेक्स के संबंध में बताने लगे। हम तो सुनने आये थे ईश्वर के संबंध में तो आप हमें ईश्वर के संबंध में बताइए।

उन्हें शायद पता नहीं कि जिस व्यक्ति को हम सेक्स के संबंध में भी आथोरिटी नहीं मान सकते। उससे ईश्वर के संबंध में पूछना फिज़ूल है। क्योंकि जो पहली सीढ़ी के संबंध में भी कुछ नहीं जानता। उससे आप अंतिम सीढ़ी के संबंध में पूछना चाहते हो? अगर सेक्स के संबंध में जो मैंने कहा वह स्वीकार्य नहीं है। तो फिर तो भूलकर ईश्वर के संबंध में मुझसे

पूछने कभी मत आना, क्योंकि वह बात ही खत्म हो गयी पहल कक्षा के योग्य भी मैं सिद्ध नहीं हुआ। तो अंतिम कक्षा के योग्य कैसे सिद्ध हो सकता हूं। लेकिन उनके पूछने का कारण है।
अब तक काम और राम को दुश्मन की तरह देखा गया है। अब तक ऐसा समझा जाता रहा है कि जो राम की खोज करते है, उनको काम से कोई संबंध नहीं है। और जो लोग काम की यात्रा करते है। उनको अध्यात्म से कोई संबंध नहीं है। ये दोनों बातें बेवकूफी की है।

आदमी काम की यात्रा भी राम की खोज के लिए ही करता है। वह काम का इतना तीव्र आकर्षण, राम की ही खोज है और इसीलिए काम में कभी तृप्ति नहीं मिलती। कभी ऐसा नहीं लगता कि सब पूरा हो गया है। वह जब तक राम न मिल जाये। तब तक लग भी नहीं सकता।

और जो लोग काम के शत्रु होकर राम को खोजते है, राम की खोज नहीं है वह। वह सिर्फ राम के नाम में काम से एस्केप है, पलायन है। काम से बचना है। इधर प्राण घबराते है, डर लगता है तो राम चदरिया ओढ़ कर उसमें छिप जाते है। और राम-राम-राम जपते मिले तो जरा देखना वह कहीं काम की याद से तो नहीं बच रहे।

जब भी कोई आदमी राम-राम-राम जपते मिले तो जरा गौर करना। उसके भीतर राम-राम के जप के पीछे काम का जप चल रहा होगा। सेक्स का जप चल रहा होगा। स्त्री को देखेगा और माला फेरने लगेगा। कहेगा, राम-राम। वह स्त्री दिखी कि वह ज्यादा जोर से माला फेरता है। ज्यादा जोर से राम-राम कहता है।

क्यों?

वह भीतर जो काम बैठा है, वह धक्के मार रहा है। राम का नाम ले-लेकर उसे भुलाने की कोशिश करता है। लेकिन इतनी आसान तरकीबों से जीवन बदलते होते तो दुनिया कभी की बदल गयी होती। उतना आसान रास्ता नहीं हे।

तो मैं आपसे कहना चाहता हूं। कि काम को समझना जरूरी है अगर आप अपने राम की और परमात्मा की खोज को भी समझना चाहते है। क्यों? यह इसीलिए मैं कहता हूं कि एक आदमी बंबई से कलकत्ता की यात्रा करना चाहे; वह कलकत्ता के संबंध में पता लगाये कि कलकत्ता कहां है किस दिशा में है? लेकिन उसे यही पता न हो कि बंबई कहां है और किस दिशा में है और कलकत्ता की वह यात्रा करना चाहे, तो क्या वह कभी सफल हो सकेगा। कलकत्ता जाने के लिए सबसे पहले यह पता लगाना जरूरी है कि बंबई कहां हे। जहां मैं हूं, वह किस दिशा में है? फिर कलकत्ता की तरफ दिशा विचार की जा सकती हे। लेकिन मुझे

यही पता नहीं कि बंबई कहां है, तो कलकत्ता के बाबत की सारी जानकारी फिजूल है....क्योंकि यात्रा मुझे बंबई से शुरू करना पड़ेगी। यात्रा का प्रारंभ बंबई से करना है। और प्रारंभ पहले है, अंत बाद में।

आप कहां खड़े है?

राम की यात्रा करना चाहते है, वह ठीक। भगवान तक पहुंचना चाहते है वह ठीक। लेकिन खड़े कहां है। खड़े तो काम में है, खड़े तो वासना में है, खड़े तो सेक्स में है। वह आपका निवास गृह है जहां से आपको कदम उठाने है। और यात्रा करनी है। तो पहले तो उस जगह को समझ लेना जरूरी है, जहां हम है, जो है उसे, जो एक्जुअलटि, पहले जो वास्तविक है उसे पहले समझ लेना जरूरी है। तब हम उसे भी समझ सकते है जो संभावना है। जो पासिबिलटि है जो हम हो सकते है, उसे जानने के लिए,जो हम है उसे पहले जान लेना जरूरी है। अंतिम कदम को समझने के पहले पहला कदम समझ लेना जरूरी है। क्योंकि पहला कदम ही अंतिम कदम तक पहुंचाने का रास्ता बनेगा। और अगर पहला कदम ही गलत होगा तो अंतिम कदम कभी भी सही नहीं होने वाला है।

राम से भी ज्यादा महत्वपूर्ण काम को समझना है, परमात्मा से भी ज्यादा महत्वपूर्ण सेक्स को समझना है, क्यों इतना महत्वपूर्ण है?

इसी लिए महत्वपूर्ण है कि अगर परमात्मा तक पहुंचना है तो सेक्स को बिना समझे आन नहीं पहुंच सकते। इसलिए यह मत पूछे।

रह गयी अथरीटी की बात कि मैं आथोरिटी हूं या नहीं—यह कैसे निर्णय होगा। अगर मैं ही इस संबंध में कुछ कहूंगा तो वह निर्णायक नहीं रहेगा, क्योंकि मेरे संबंध में ही निर्णय होना है। अगर मैं ही कहूं मैं अथरीटी हूं तो उसका कोई मतलब नहीं। अगर मैं कहूं कि मैं अथरीटी नहीं हूं। तो उसका भी कोई मतलब नहीं है। क्योंकि मेरे दोनों वक्तव्य के संबंध में विचारणीय है कि अथारिटेटिव आदमी कह रहा है। गैर-अथारिटेटिव। मैं जो भी कहूंगा इस संबंध में वह फिजूल है। मैं अथरीटी हूं या नहीं यह तो आप थोड़े सेक्स की दुनिया में प्रयोग करके देखना। जब अनुभव आयेगा तो पता चलेगा। कि जो मैंने कहा था वह अथरीटी थी या नहीं, उसके बिना कोई रास्ता नहीं है।

मैं आपसे कहता हूं कि तैरने का यह रास्ता है, आप कहें कि , लेकिन हम कैसे मानें कि आप तैरने के संबंध में प्रामाणिक बात कर रहे है। तो मैं कहता हूं कि चलिए, आपको साथ लेकर नदी में उतरा जा सकता है। आपको नदी में उतारे देता हूं। मैने जो कहा है आपको, अगर वह

कारगर हो जाये पार होने में हाथ पैर चलाने में और तैरने में तो आप समझना कि जो मैंने कहा है, वह कुछ जानकर कहा है।

उन्होने यह भी कहा है कि फ्रायड अथरीटी हो सकते है। लेकिन मैं आपसे कहता हूं कि जो मैं कह रह हूं, उसपर शायद फ्रायड दो कौड़ी भी नहीं जानते। फ्रायड मानसिक तल से कभी उपर उठे ही नहीं। उनको कल्पना भी नहीं है। आध्यात्मिक सेक्स की। फ्रायड की सारी जानकारी रूग्ण सेक्स की है—हिस्टेरिक, होमोसेक्सुअलिटी, मास्टरबेशन—इस सबकी खोजबीन है। रूग्ण सेक्स, विकृत सेक्स के बाबत खोजबीन है, पैथोलाजिकल, है। बीमार की चिकित्सा की वह खोज है। फ्रायड एक डाक्टर है फिर पश्चिम में जिन लोगों को उसने अध्यान किया, वे मन के तल के सेक्स के लोग है। उसके पास एक भी अध्यात्मिक नहीं है। एक भी केस हिस्ट्री नहीं जिसको स्प्रिचुअल सेक्स कहा जा सके।

तो अगर खोज करनी है कि जो मैं कह रहा हूं, वह कहां तक सच है, तो सिर्फ एक दिशा में खोज हो सकती है, वह दिशा है तंत्र। और तंत्र के बाबत हमने हजारों साल से सोचना बंद कर दिया है। तंत्र ने सेक्स को स्प्रिचुअल बनाने का दुनिया में सबसे पहला प्रयास किया था। खजुराहो में खड़े मंदिर, पुरी और कोनार्क में मंदिर सबूत है। कभी आप खजुराहो गये है? कभी आपने जाकर खजुराहो की मूर्तियां देखी?

तो आपको दो बातें अद्‌भुत अनुभव होगी। पहली तो बात यह है कि नग्न मैथुन की प्रतिमाओं को देखकर भी आपको ऐसा नहीं लगेगा कि उनमें जरा भी कुछ गंदा है। जरा भी कुछ अगली है। नग्न मैथुन की प्रतिमाओं को देखकर कहीं भी ऐसा नहीं लगेगा कि कुछ कुरूप है, कुछ बुरा है। बल्कि मैथुन की प्रतिमाओं को देखकर एक शांति एक पवित्रता का अनुभव होगा जो बड़ी हैरानी की बात है। वे प्रतिमाएं आध्यात्मिक सेक्स काक जिन लोगों ने अनुभव किया था। उन शिल्पियों से निर्मित करवायी गई थी।

उन प्रतिमाओं के चेहरों पर.....आप एक सेक्स से भरे हुए आदमी को देखें उसकी आंखे देखें उसका चेहरा देखें, वह घिनौना, घबरानें वाला, कुरूप प्रतीत होगा। उसकी आंखों से एक झलक मिलती हुई मालूम होगी, जो घबरानें वाली और डराने वाली होगी। प्यारे से प्यारे आदमी को, अपने निकटतम प्यारे से प्यारे व्यक्ति को भी स्त्री जब सेक्स से भरा हुआ पास आता हुई देखती है तो उसे दुश्मन दिखायी पड़ता है, मित्र नहीं दिखाई पड़ता। प्यारी से प्यारी स्त्री को अगर कोई पुरूष अपने निकट सेक्स से भरा हुआ आता हुआ दिखायी देगा तो उसे उसके भीतर नरक दिखायी देगा। स्वर्ग नहीं दिखायी पड़ेगा।

लेकिन खजुराहो की प्रतिमाओं को देखें तो उनके चेहरे को देख कर ऐसा लगता है। जैसे बुद्‌ध का चेहरा हो, महावीर का चेहरा हो, मैथुन की प्रतिमाओं और मैथुन रत जोड़े के चेहरे पर जो

भाव है, वे समाधि के है, और सारी प्रतिमाओं को देख लें और पीछे एक हल्की सी शांति की झलक छूट जायेगी। और कुछ भी नहीं। और एक आश्चर्य आपको अनुभव होगा।

आप सोचते होंगे कि नंगी तस्वीरे और मूर्तियां देखकर आपको भीतर कामुकता पैदा होगी। तो मैं आपसे कहता हूं फिर आप देर न करें और सीधे खजुराहो चल जायें। खजुराहो पृथ्वी इस समय अनूठी चीज है।

लेकिन हमारे कई नीति शास्त्री पुरूषोतम दास टंडन और उनके कुछ साथी इस सुझाव के थे कि खजुराहो के मंदिर पर मिट्टी छाप कर दीवालें बंद कर देनी चाहिए, क्योंकि देखने से वासना पैदा हो सकती है। मैं हैरान हो गया।

खजुराहो के मंदिर जिन्होंने बनाये थे, उनका ख्याल यह था कि इन प्रतिमाओं को अगर कोई बैठकर घंटे भर देखे तो वासना से शून्य हो जायेगा। वे प्रतिमाएं आब्जेक्ट्स फार मेडिटेशन रहीं हजारों वर्ष तक। वे प्रतिमाएं ध्यान के लिए ऑब्जेक्स का काम करती है। जो लोग अति कामुक थे। उन्हें खजुराहो के मंदिर के पास भेज कर उन पर ध्यान करवाने के लिए कहा जाता था। कि तुम ध्यान करो—इन प्रतिमाओं को देखो और इनमें लीन हो जाओ।

और यह आश्चर्य कि बात है, हालांकि हमारे अनुभव में है, लेकिन हमें ख्याल नहीं। आपको पता है रास्ते पर दो आदमी लड़ रहे हों और आप रास्ते से चले जा रहे हों, तो आपका मन होता है कि खड़े होकर उनकी लड़ाई देखे। लेकिन क्यों? आपने कभी ख्याल किया लड़ाई देखने से आपको क्या फायदा है? हजार जरूरी काम छोड़कर आप आधे घंटे ते दो आदमियों की मुक्केबाजी देख सकते है, उससे क्या फायदा है?

शायद आपको पता नहीं फायदा एक है। दो आदमियों को लड़ते देखकर आपके भीतर भी जो लड़ने की प्रवृति है, वह विसर्जित होती है। जिसका निकास हो जाता है। वह इवोपरेट हो जाती है।

अगर मैथुन की प्रतिमा को कोई घंटे भर तक शांत बैठकर ध्यान मग्न होकर देखे तो उसके भीतर जो मैथुन करने का पागल भाव है, वह विलीन हो जाता है।

एक मनोवैज्ञानिक के पास एक आदमी को लाया गया था। वह एक दफ्तर में काम करता है। और अपने मालिक से अपने बॉस से बहुत रूष्ट है। मालिक उससे कुछ भी कहता है तो उसे बहुत अपमान मालूम होता है। और उसके मन में होता है कि निकालू जूता और मार दूँ।

लेकिन मालिक को जूता कैसे मारा जो सकता है। हालांकि ऐसे नौकर कम ही होंगे। जिनके मन में ये ख्याल नहीं आता होगा। कि निकालू जूता और मार दूँ। ऐसा नौकर खोजना मुश्किल है। अगर आप मालिक है तो भी आपको पता होगा और अगर आप नौकर है तो भी आपको पता होगा।

नौकर के मन में नौकर होने की भारी पीडा है। और मन होता है कि इसका बदला ले लूं। लेकिन नौकर अगर बदला ले सकता तो नौकर होता क्यों? तो बह बेचारा मजबूर है और दबाये चला जाता है। दबाये चला जाता है।

फिर तो हालत उसकी ऐसी रूग्ण हो गयी कि उसे डर पैदा हो गया कि किसी दिन आवेश में मैं जूता मार ही न दूँ। वह जूता घर ही छोड़ जाता है। लेकिन दफ्तर में उसे जूते की दिन भर याद आती है। और जब मालिक दिखायी देता है वह पैर टटोलता है। कि जूता कहां है—लेकिन जूता तो वह घर छोड़ आया है। और खुश होता है कि अच्छा हुआ। मैं छोड़ आया। किसी दिन आवेश में क्षण में निकल आये जूता तो मुश्किल होगी।

लेकिन घर जूता छोड़ आने से जूते से मुक्ति नहीं होती। जूता उसका पीछा करने लगा। वह कागज पर कुछ भी बनाता है तो जूता बन जाता है। वह रजिस्टर पर कुछ ऐसों ही लिख रहा है कि पाता है जूते ने आकार ले लेना शुरू कर दिया। उसके प्राणों में जूता घिरनें लगा। यह बहुत घबरा गया है उसे ऐसा डर लगने लगा है धीरे-धीरे कि मैं किसी भी दिन हमला कर सकता हूं। तो उसने अपने घर आकर कहा कि अब मुझे नौकरी पर जाना ठीक नहीं, मैं छूटी लेना चाहता हूं; क्योंकि अब हालत भी ऐसी हो गयी कि मैं दूसरे का जूता निकालकर भी मार सकता हूं। और अपने जूते की जरूरत नहीं रह गयी। मेरे हाथ दूसरे लोगों के पैरों की तरफ भी बढ़ने की कोशिश करते है।

तो घर के लोगों ने समझा कि वह पागल हो गया है। उसे एक मनोवैज्ञानिक के पास ले गये। उस मनोवैज्ञानिक ने कहा, इसकी बीमारी बड़ी छोटी सी है। इसके मालिक की एक तस्वीर घर में लगा लो और उससे कहो, रोज सुबह पाँच जूता धार्मिक भाव से मारा करे। पाँच जूता मारे तब दफ्तर जाये—बिल्कुल रिलीजसली। ऐसा नहीं की किसी दिन चुक जाये। जैसे लोग ध्यान, जप करते है—बिलकुल वक्त पर पाँच जूता मारे। दफ्तर से लौटकर पाँच जूता मारे। वह आदमी पहले तो बोला, यह क्या पागलपन की बातें है। लेकिन भीतर से उसे खुशी मालूम हो रही थी। वह हैरान हुआ उसने कहा, लेकिन मुझे भीतर खुशी मालूम हो रही है।

तस्वीर टांग ली गयी। और वह रोज पाँच जूते मारकर दफ्तर गया। पहले दिन ही जब वह पाँच जूते मारकर दफ्तर गया तो उसे एक बड़ा अनुभव हुआ। मालिक के प्रति उसने दफ्तर में उतना क्रोध अनुभव नहीं किया। और 15 दिन के भीतर तो वह मालिक के प्रति अत्यंत

विनयशील हो गया। मालिक को भी हैरानी हुई। उसे तो कुछ पता नहीं कि भी क्या चल रहा है। उसने उसको पूछा कि तुम आजकल बहुत आज्ञाकारी, बहुत विनम्र, बहुत शांत दिल हो गये हो। बात क्या है? उसने कहा कि मत पूछिए, नहीं तो सब गूडगोबर हो जायेगा।

क्या हुआ—तस्वीर को जूते मारने से कुछ हो सकता है। लेकिन तस्वीर को जूते मारने से वह जो जूते मारने का भाव है, वह तिरोहित हुआ, वह इवोपरेट हुआ, वह वाष्पीभूत हुआ।

खजुराहो के मंदिर या कोणार्क और पुरी के मंदिर जैसे मंदिर सारे देश के गांव-गांव में होने चाहिए।

बाकी मंदिरों की कोई जरूरत नहीं है। वे बेवकूफी के सबूत है। उनमें कुछ नहीं है। उनमें न कोई वैज्ञानिकता है न कोई अर्थ है। न कोई प्रयोजन है। वे निपट गँवारी के सबूत है। लेकिन खजुराहो के मंदिर जरूरी अर्थपूर्ण है।

जिस आदमी का मन सेक्स से बहुत भरा हो, वह जाकर इन मंदिरों कि मूर्तियों पर ध्यान करे। वह हलका होकर लौटेगा। शांत होकर लौटेगा। तंत्रों ने जरूर सेक्स को आध्यात्मिक बनाने की कोशिश की थी। लेकिन इस मुल्क के नीति शास्त्री अरे मॉरल प्रीचर्स है, उन दुष्टों ने उनकी बात काक समाज तक नहीं पहुंचने दिया। वह मेरी बात भी नहीं पहुंचने देना चाहते।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—4

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

2 अक्टूबर—1968,

संभोग से समाधि की और—20

Posted on नवम्बर 8, 2010by sw anand prashad

समाधि : संभोग-उर्जा का अध्यात्मिक नियोजन—5

यहां से मैं भारतीय विद्या भवन से बोल कर जबलपुर वापस लौटा और तीसरे दिन मुझे एक पत्र मिला कि अगर आप इस तरह की बातें कहना बंद नहीं कर देते है तो आपको गोली क्यों ने मार दि जाये? मैंने उत्तर देना चाहा था, लेकिन वह गोली मारने वाले सज्जन बहुत कायर मालूम पड़े। न उन्होंने नाम लिखा था, न पता लिखा था। शायद वे डरे होंगे कि मैं पुलिस को न दे दूं। लेकिन अगर वह यहां कहीं हों—अगर होंगे तो जरूर किसी झाड़ के पीछे या किसी दीवाल के पीछे छिप कर सून रहे होंगे। अगर वह यहां कहीं हों तो मैं उनको कहना चाहता हूं। कि पुलिस को देने की कोई भी जरूरत नहीं है। वह अपना नाम और पता मुझे भेज दें। ताकि में उनको उत्तर दें सकूँ। लेकिन अगर उनकी हिम्मत न हो तो मैं उत्तर यहीं दिये देता हूं। ताकि वह सुन ले।

पहली तो बात यह है कि इतनी जल्दी गोली मारने की मत करना, क्योंकि गोली मारते ही जो बात मैं कह रहा हूं। वह परम सत्य हो जायेगी। इसका उनको पता होना चाहिए। जीसस क्राइस्ट को दुनिया कभी की भूल गयी होती। अगर उसको सूली न मिली होती। सूली देने वाले ने बड़ी कृपा की।
और मैंने तो यहां तक सूना है जो इनर सर्किलस में जो जीवन की गहराईयों की खोज करते है। उनसे मुझे यह भी ज्ञात हुआ है की जीसस ने खुद अपनी सूली लगवाने की योजना और षड़यंत्र किया था। जीसस ने चाहा था कि मुझे सूली लगा दी जाये। क्योंकि सूली लगते ही जो जीसस ने कहा है वह करोड़ों-करोड़ों वर्ष के लिए अमर हो जायेगा। और हजारों लोगों के, लाखों लोगो के काम आ सकेगा।

इस बात की बहुत संभावना है, क्योंकि जूदास। जिसने ईसा को तीस रूपये में बेचा था। वह ईसा के प्यारे से प्यारे शिष्यों में से एक था। और यह संभव नहीं है कि जो वर्षों से ईसा के पास रहा हो, वह सिर्फ तीस रूपये में ईसा को बेच दे। सिवाय इसके कि ईसा ने उसको कहा

हो कि तू कोशिश कर, दुश्मन से मिल जा और किसी तरह मुझे उलझादे और सूली लगवा दे, ताकि मैं जो कह रहा हूं, वह अमृत का स्थान ले-ले और करोड़ों लोगों का उद्धार बन जाये।

महावीर को अगर सूली लगी होती तो दुनिया में केवल तीस लाख जैन नहीं होते। तीस करोड़ हो सकते थे। लेकिन महावीर शांति से मर गये, सूली का उन्हें पता नहीं था। न किसी ने लगायी, न उन्होंने लगवाने की व्यवस्था ही की। आज आधी दुनियां ईसाई है। उसका इसके सिवाय कोई कारण नहीं कि ईसा अकेला सूली पर लटका हुआ है—न बुद्ध, न मुहम्मद, न महावीर, न कृष्ण, न राम। सारी दुनिया भी ईसाई हो सकती है। यह सूली पर लटकने से यह फायदा हो गया। तो मैं उनसे कहता हूं कि जल्दी मत करना। नहीं तो नुकसान में पड़ जाओगे।

दूसरी बात यह कहना चाहता हूं। कि घबराये न वे। मेरे इरादे खाट पर मरने के है भी नहीं है। मैं पूरी कोशिश करूंगा कि कोई न कोई गोली मार ही दे। तो मैं खूद ही कोशिश करूंगा, जल्दी उनको करने की आवश्यकता नहीं है। समय आने पर मैं चाहूंगा कि कोई गोली मार ही दे। जिंदगी भी काम आती है और गोली लग जाये तो मौत भी काम आती है। और जिंदगी से ज्यादा काम आ जाती है। जिंदगी जो नहीं दे पाती है, वह गोली लगी हुई मौत दे जाती है। अब तक हमेशा यह भूल की है दुश्मनों ने। नासमझी की है। सुकरात को जिन्होंने सूली पर लटका दिया, जिन्होंने जहर पिला दिया; मंसूर को जिन्होंने सूली पर लटका दिया। और अभी गँडासे ने गांधी को गोली मार दी है। गँडासे को पता नहीं कि गांधी के भक्त और गांधी के अनुयायी गांधी को इतने दूर तक स्मरण कराने में कभी सफल नहीं हो सकते थे। जितना अकेले गँडासे ने कर दिया है।

और अगर गांधी ने मरते वक्त। जब उन्हें गोली लगी और हाथ जोड़कर गँडासे को नमस्कार किया होगा तो बड़ा अर्थपूर्ण था वह नमस्कार। वह अर्थपूर्ण था कि मेरा अंतिम शिष्य सामने आ गया। अब ये मुझे आखिर और हमेशा के लिए अमर कर दिये दे रहा है। भगवान ने आदमी भेज दिया, जिसकी जरूरत थी।

जिंदगी का ड्रामा, वह जो जिंदगी की कहानी है, वह बहुत उलझी हुई है। वह इतनी आसान नहीं है। खाट पर मरने वाले हमेशा के लिए मर जाते है। गोली मरने वालों का मरना बहुत मुश्किल हो जाता है।

सुकरात से किसी ने पूछा उसके मित्रों ने कि अब तुम्हें जहर दे दिया जायेगा। अब तुम मर जाओगे तो हम तुम्हारे गाड़ने की कैसी व्यवस्था करेंगे? जलाये, कब्र बनाये, क्या करें? सुकरात ने कहा पागलों तुम्हें नहीं पता कि तुम मुझे नहीं गाड़ सकोगे। तुम जब सब मिट जाओगे, तब भी मैं जिंदा रहूंगा। मैंने मरने की तरकीब जो चुनी है, वह हमेशा जिंदा रहने वाली है।

तो वह मित्र अगर कहीं हों तो उनको पता होना चाहिए, जल्दी न करें। जल्दी में नुकसान हो जायेगा। उनका। मेरा कुछ होने वाला नहीं है। क्योंकि जिसको गोली लग सकती है वह मैं नहीं हूं। और जो गोली लगने के बाद भी पीछे बच जाता है वहीं हूं। तो वह जल्दी न करें। और दूसरी बात यह कि वह घबराये भी न। मैं हर तरह की कोशिश करूंगा कि खाट पर न मर सकूँ। वह मरना बड़ा गड़बड़ है। वह बेकार ही मर जाना है। वह निरर्थक मर जाना है। मर जाने की भी सार्थकता चाहिए।

और तीसरी बात कि वह दस्तखत करने से न घबराये, न पता लिखने से घबराये। क्योंकि अगर मुझे लगे कि कोई आदमी मारने को तैयार हो गया है तो वह जहां मुझे बूलायेगा, मैं चुपचाप बिना किसी को खबर किये, वहां आने को हमेशा तैयार हूं। ताकि उसके पीछे कोई मुसीबत न आये।

लेकिन ये पागलपन सूझते है। इस तरह के धार्मिक.....ओर जिस बेचारे ने लिखा है , उसने यही सोच कर लिखा है कि वह धर्म की रक्षा कर रहा है। उसने यही सोचकर लिखा है कि मैं धर्म को मिटाने की कोशिश कर रहा हूं। वह धर्म की रक्षा कर रहा है। उसकी नीयत में कहीं खराबी नहीं है। उसके भाव बड़े अच्छे है। लेकिन बुद्धि मूढ़ता की है।

तो हजारों साल से तथाकथित नैतिक लोगों ने जीवन के सत्यों को पूरा-पूरा प्रकट होने में बाधा डाली है, उसे प्रकट नहीं होने दिया गया है। नहीं प्रकट होने के कारण एक अज्ञात व्यापक हो गया और उसे अज्ञात—अंधेरी रात में हम टटोल रहे है। भटक रहे है, गिर रहे है। और वे मॉरल टीचर्स वे नीतिशास्त्र के उपदेशक,हमारे इस अंधकार के बीच में मंच बनाकर उपदेश देने का काम करते रहते है।

यह भी सच है कि जिस दिन हम अच्छे लोग हो जायेंगे, जिस दिन हमारे जीवन में सत्य की किरण आयेगी समाधि की कोई झलक आयेगी। जिस दिन हमारा सामान्य जीवन भी परमात्मा-जीवन में रूपांतरित होने लगेगा। उस दिन उपदेशक व्यर्थ हो जायेगे। उसकी कोई जरूरत नहीं रह जायेगी। उपदेशक तभी तक सार्थक है, जब तक लोग अंधेरे में भटकते है।

गांव में चिकित्सक की तभी तक जरूरत है। जब तक लोग बीमार पड़ते है। जिस दिन आदमी बीमार पड़ना बंद कर देगा। उस दिन चिकित्सक को विदा कर देना पड़ेगा। तो हालांकि चिकित्सक ऊपर से बीमार का इलाज करता हुआ मालूम पड़ता है। लेकिन भी तर से उसके प्राणों को आकांक्षा यही होती है। कि लोग बीमार पड़ते रहें। यह बड़ी उलटी बात है। क्योंकि चिकित्सक जीता है लोगों के बीमार पड़ने पर। उसका प्रोफेशन बड़ा कंट्राडिक्री है। उसका धंधा बड़ा विरोधी है। कोशिश तो उसकी यह है कि लोग बीमार पड़त रहे। और जब

मलेरिया फैलता है और फ्लू की हवाएँ आती है। तो वह भगवान को एकांत में धन्यवाद देता है। क्योंकि यह धंधे को वक्त आया सीजन है।

मैंने सुना है, एक रात एक मधुशाला में बड़ी देर तक कुछ मित्र आकर खाना-पीना करते रहे, शराब पीते रहे। उन्होंने खूब मौज की और जब वे चलने लगे आधी रात को तो शराब खाने के मालिक ने अपनी पत्नी को कहा कि भगवान को धन्यवाद बड़े लोग आये। ऐसे लोग रोज आते रहें तो कुछ ही दिनों में हम मालामाल हो जायें।

विदा होते मेहमानों को सुनायी पड़ गया और जिसने पैसे चुकाये थे उसने कहा, दोस्त भगवान से प्रार्थना करो कि हमारा भी धंधा रोज चलता रहे तो हम रोज आयें।

चलते-चलते उसे शराबघर के मालिक ने पूछा भाई तुम्हारा धंधा क्या है?

उसने कहां, मेरा धंधा पूछते हो, मैं मरघट पर लकडियां बेचता हूं, मुद्रों के लिए। जब आदमी ज्यादा मरते है, तब मेरा धंधा अच्छा चलता है। तब हम थोड़ा खुश हो जाते है। हमारा भी धंधा अच्छा चलता रहे तो हम तो रोज यहां आये।

चिकित्सक का धंधा है कि लोगों को ठीक करें। लेकिन फायदा, लाभ और शोषण इसमें है कि लोग बीमार पड़ते रहें। तो एक हाथ से चिकित्सक ठीक करता है और उसके प्राणों की प्रार्थना होती है कि मरीज जल्दी ठीक न हो जाये।

इसीलिए पैसे वाले मरीज होने में बड़ी देर लगती है। गरीब मरीज जल्दी ठीक हो जाया है; क्योंकि गरीब मरीज को ज्यादा देर बीमार रहने से कोई फायदा नहीं है। चिकित्सक को कोई फायदा नहीं है। चिकित्सक को फायदा है अमीर मरीज है, तो अमीर मरीज लम्बा बीमार रहता है। सच तो यह है कि अमीर अक्सर ही बीमार रहते है। यह चिकित्सक की प्रार्थनाएं काम कर रही है। उसकी आंतरिक इच्छा भी उसके हाथ को रोकती है कि मरीज एकदम ठीक ही न हो जाये।

उपदेशक की स्थिति भी ऐसी ही है। समाज जितना नीतिभ्रष्ट फैल जितना अनाचार फैले उतना ही उपदेशक का मंच ऊपर उठने लगता है। क्योंकि जरूरत आ जाती है, कि वह लोगों को कहं; अहिंसा का पालन करो, सत्य का पालन करो, ईमानदारी स्वीकार करो; यह व्रत पालन करो, वह व्रत पालन करो। अगर लोग व्रती हों, अगर लोग संयमी हों, अगर लोग शांत हों, ईमानदार हों तो उपदेशक मर गया। उसकी कोई जगह न रही।

और हिंदुस्तान में सारी दुनिया से ज्यादा उपदेशक क्यों है? ये गांव-गांव गुरु और घर-घर स्वामी और संन्यासी क्यों है? यह महात्माओं की इतनी भीड़ और यह कतार क्यों है?

यह इसलिए नहीं है कि आप बड़े धार्मिक देश में रहते है, जहां कि संत-महात्मा पैदा होते है। यह इसीलिए है कि आप इस समय पृथ्वी पर सबसे ज्यादा अधार्मिक और अनैतिक देश है। इसीलिए इतने उपदेशकों को पालने का ठेका और धंधा मिल गया है। हमारा तो जातीय रोग हो गया है।

मैंने सुना हे कि अमरीका में किसी ने एक लेख लिखा हुआ था। किसी मित्र ने वह लेख मेरे पास भेज दिया। उसमें एक कमी थी, उन्होंने मेरी सलाह चाही। किसी ने लेख लिखा था वहां—मजाक का कोई लेख था, उसमें लिखा था कि हर आदमी और हर जाती का लक्षण शराब पिलाकर पता लगाया जा सकता है। कि बेसिक कैरेक्टर क्या है?

उसने लिखा था कि अगर डच आदमी को शराब पिला दी जाये तो वह एकदम से खाने पर टूट पड़ता है, फिर वह किचन के बाहर ही नहीं निकलता। फिर वह एकदम खाने की मेज से उठता ही नहीं। बस शराब पी कि वह दो-दो, तीन-तीन घंटे तक खाना खाता रहता है। अगर फ्रैंच को शराब पिला दी जायें तो शराब पीने के बाद वह एकदम नाच-गाने के लिए तत्पर हो जाता है। और अंग्रेज को शराब पिला दि जाये तो वह एक दम चुप हो कर एक कोने में बैठ जाता है। वह वैसे ही चुप बैठा रहता है, और शराब पी ली तो उसका कैरेक्टर है, वह और चुप हो जाता है। ऐसे दुनिया के सारे लोगों के लक्षण थे। लेकिन भूल से यह अज्ञान के वश भारत के बाबत कुछ भी नहीं लिखा था, तो किसी मित्र ने मुझे लेख भेजा और कहा कि आप भारत के कैरेक्टर की बाबत क्या कहते है। अगर भारतीय को शराब पिलायी जायें तो वह क्या करेगा।

तो मैंने कहा कि वह तो जग जाहिर बात है। भारतीय शराब पियेगा। और तत्काल उपदेश देना शुरू कर देगा। यह उसका कैरेक्टरस्टिक है, वह उसका जातीय गुण है।

यह जो—यह जो उपदेशकों का समाज और साधु, संतों और महात्माओं की लंबी कतार है, ये रोग के लक्षण है, ये अनीति के लक्षण है। और मजा यह है कि इनमें से कोई भी भीतर ह्रदय से कभी नहीं चाहता कि अनीति मिट जाये, रोग मिट जाये; क्योंकि उनके मिटने के साथ वह भी मिट जाते है,प्राणों की पुकार तो यही कहती है कि रोग बना रहे और बढ़ता रहे।

और उस रोग को बढ़ाने के लिए जो सबसे सुगम उपाय है वह यह है, कि जीवन के संबंध में सर्वांगीण ज्ञान उत्पन्न न हो सके। और जीवन के जो सबसे ज्यादा गहरे केंद्र है, जिनके अज्ञान के कारण अनीति और व्यभिचार और भ्रष्टाचार फैलता है, उन केंद्रों को आदमी कभी

भी न जान सकें क्योंकि उन केंद्रों को जान लेने के बाद मनुष्य के जीवन से अनीति तत्काल विदा हो सकती है।

और मैं आपसे कहना चाहता हूं कि सेक्स मनुष्य की अनीति का सवार्धिक केंद्र है। मनुष्य के व्यभिचार का, मनुष्य की विकृति का सबसे मौलिक, सबसे आधारभूत केंद्र और इसलिए धर्मगुरू उसकी बिलकुल बात नहीं करना चाहते है।

एक मित्र ने मुझे खबर भिजवायी है कि कोई संत-महात्मा सेक्स की बात नहीं करता। और आपने सेक्स की बात की तो हमारे मन में आपका आदर बहुत कम हो गया है।

मैंने उनसे कहा,उसमें कुछ गलती नहीं हुई। पहले आदर था, उसमें गलती थी। इसमें क्या गलती हुई? मेरे प्रति आदर होने की जरूरत क्या है? मुझे आदर देने का प्रयोजन क्या है? मैंने कब मांगा है कि मुझे आदर दें? देते थे तो आपकी गलती थी। नहीं देते तो आपकी कृपा, मैं महात्मा नहीं रहा। मैंने कभी चाहा होता कि मैं महात्मा होऊं तो मुझे बड़ी पीड़ा होती। मैं कहता, क्षमा करना भूल से ये बातें मैंने कह दीं।

मैं महात्मा था नहीं, मैं महात्मा हूं नहीं, मैं महात्मा होना चाहता नहीं।

जहां इतनी बड़े जगत में इतने दीन-हीन लोग है, वहां एक आदमी महात्मा होना चाहे, उससे ज्यादा निम्न प्रवृति और स्वार्थ से भरा हुआ आदमी नहीं है। जहां इतने दीन-हीन आत्माओं का विस्तार है, वहां महात्मा होने की कल्पना और विचार ही पाप है।

महान मनुष्यता में चाहता हूं। महान मनुष्य में चाहता हूं।

महात्मा होने की मेरे मन में कोई और आकांक्षा नहीं है। महात्माओं के दिन विदा हो जाने चाहिए। महात्माओं की कोई जरूरत नहीं है। महान मनुष्य की जरूरत है। महान मनुष्यता की जरूरत है। ग्रेट मैन नही, ग्रेट हुमिनिटी। बड़े आदमी बहुत हो चुके। उनसे क्या फायदा हुआ। अब बड़े आदमियों की जरूरत नहीं, बड़ी आदमियत की जरूरत है।

तो मुझे.....मुझे अच्छा लगा कम से कम एक आदमीका इल्युजन तो टूटा। एक आदमी तो डिसइल्यूज़ंड हुआ। एक आदमी को तो यह पता चल गया कि यह आदमी महात्मा नहीं है। एक आदमी का भ्रम टूट गया,यह भी बड़ी बात है। वह शायद सोचे होंगे कि इस भांति कहकर वह शायद मुझे प्रलोभन दे रहे है कि मुझे महात्मा और महर्षि बनाया जा सकता है। अगर मैं इस तरह की बातें न करूं।

आज तक महार्षियों और महात्माओं को इसी तरह बनाया गया है। इसीलिए उन कमजोर लोगों ने इस तरह की बातें नहीं की, जिनसे महात्मापन छिन सकता था। अपना महात्मापन बचा रखने के लिए—उस प्रलोभन में जीवन का कितना अहित हो सकता है इसका उन्होंने कोई भी ख्याल नहीं किया।

मुझे चिंता नहीं है, मुझे विचार भी नहीं है, मुझे ख्याल भी नहीं है। मुझे घबराहट ही होती है, जब कोई मुझे महात्मा मानना चाहेगा।

और आज की दुनिया में महात्मा में महात्मा बन जाता और महर्षि बन जाना, इतना आसान है। जिसका कोई हिसाब नहीं। हमेशा आसान रहा है। हमेशा आसान रहेगा। वह सवाल नहीं है। सवाल यह है कि महान मनुष्य कैसे पैदा हो? उसके लिए हम क्या कर सकते है, क्या सोच सकते है। क्या खोज सकते है। और मुझे लगता है कि मैंने बुनियादी सवाल पर जो बातें आपसे कहीं है। वह आपके जीवन में एक दिशा तोड़ने में सहयोगी हो सकती है। उनसे एक मार्ग प्रकट हो सकता है। और क्रमश: आपकी वासना का रूपांतरण आत्मा की दिशा में हो सकता है। अभी हम वासना है, आत्मा नहीं। कल हम आत्मा भी हो सकते है। लेकिन वह होंगे कैसे? इसी वासना के सर्वांग रूपांतरण से इसी शक्ति को निरंतर ऊपर ले जाने से।

जैसा मैंने कल आपको कहा, उस संबंध में भी बहुत से प्रश्न हे। उसके संबंध में एक बात कहूंगा।

मैंने आपको कहा कि संभोग में समाधि की झलक का स्मरण रखें, रिमेम्बरिंग रखें और उस बिंदु को पकड़ने की कोशिश करें। उस बिंदु को जो विद्युत की तरह संभोग के बीच में चमकती है समाधि का। एक क्षण को जो चमक आती है, और विदा हो जाती है। उस बिंदु को पकड़ने की कोशिश करें कि वह क्या है। उसे जानने की कोशिश करें। उसको पकड़ लें पूरी तरह से कि वह क्या है। और एक दफा उसे आपने पकड़ लिया तो उस पकड़ में आपको दिखायी पड़ेगा कि उस क्षण में आप शरीर नहीं रह जाते है—बॉडीलेसनेस। उस क्षण में आप शरीर नहीं है। उस क्षण में एक झलक की तरह आप कुछ और हो गये है। आप आत्मा हो गये है।

और वह झलक आपको दिखायी पड़ जाये तो फिर उस झलक के लिए ध्यान के मार्ग से श्रम किया जा सकता है। उस झलक को फिर ध्यान की तरह से पकड़ा जा सकता है। और अगर वह ज्ञान हमारे जानने ओर जीवन का हिस्सा बन जाय तो आपके जीवन में सेक्स की कोई जगह नहीं रह जायेगी।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—4

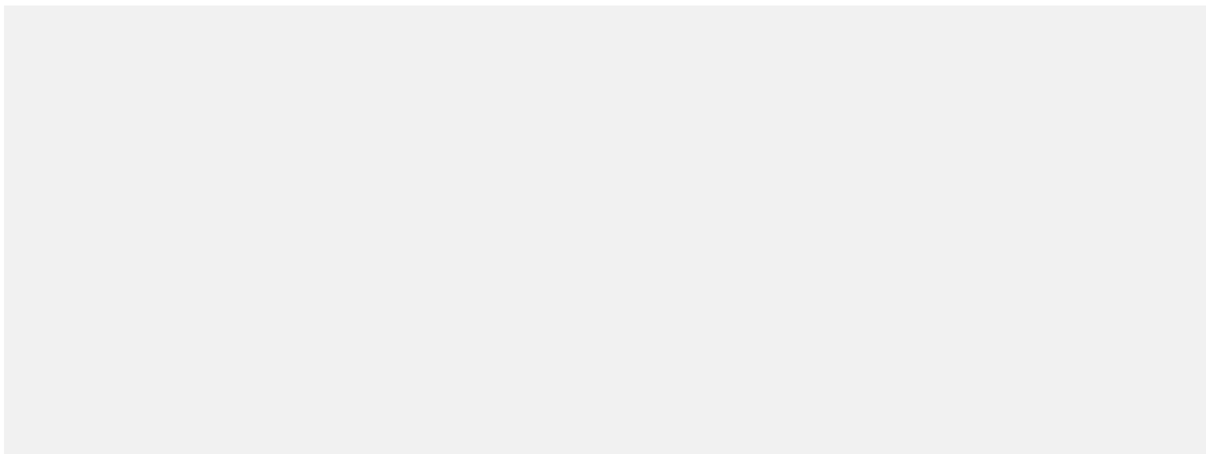
गोवा लिया टैंक, बम्बई,

2 अक्टूबर—1968,

संभोग से समाधि की ओर—21

Posted on नवम्बर 9, 2010by sw anand prashad

समाधि : संभोग-उर्जा का अध्यात्मिक नियोजन—5



संभोग से समाधि की ओर--ओशो

एक मित्र ने पूछा है कि अगर इस भांति सेक्स विदा हो जायगा तो दुनिया में संतति का क्या होगा? अगर इस भांति सारे लोग समाधि का अनुभव करके ब्रह्मचर्य को उपलब्ध हो जायेंगे तो बच्चों का क्या होगा।

जरूर इस भांति के बच्चे पैदा नहीं होंगे। जिस भांति आज पैदा होते है। वह ढंग कुत्ते,बिल्लियों और इल्लियों का तो ठीक है, आदमियों का ठीक नहीं हे। यह कोई ढंग है? यह कोई बच्चों की कतार लगाये चले जाना—निरर्थक, अर्थहीन, बिना जाने बुझे—यह भीड़ पैदा किये जाना। यह कितनी हो गयी? यह भीड़ इतनी हो गयी है कि वैज्ञानिक कहते है कि अगर सौ बरस तक इसी भांति बच्चे पैदा होते रहें और कोई रूकावट नहीं लगाई गई, तो जमीन पर टहनी हिलाने के लिए भी जगह नहीं बचेगी। हमेशा आप सभा में ही खड़े हुए मालूम होंगे।

जहां जायेंगे वहीं, सभा मालूम होंगी। सभी करना बहुत मुश्किल हो जायेगा। टहनी हिलाने की जगह नहीं रह जाने वाली है सौ साल के भीतर, अगर यही स्थिति रही।
वह मित्र ठीक पूछते है कि अगर इतनी ब्रह्मचर्य अपलब्ध होगा तो बच्चे कैसे पैदा होंगे? उनसे भी मैं एक और बात कहना चाहता हूं, वह भी अर्थ की है और आपके ख्याल में आ जाना चाहिए, ब्रह्मचर्य से भी बच्चे पैदा हो सकते है। लेकिन ब्रह्मचर्य से बच्चों के पैदा करने का सारा प्रयोजन और अर्थ बदल जायेगा। काम से बच्चें पैदा होते है। सेक्स से बच्चे पैदा होते है—बच्चे पैदा करने के लिए कोई सेक्स में नहीं जाता है।

बच्चे पैदा होना आकस्मित है, एक्सीडेंट है।

सेक्स में आप जाते है किसी और कारण से बीच में आ जाते है, बच्चों के लिए आप कभी सेक्स में नहीं जाते। बिना बुलाये मेहमान है बच्चे और इसीलिए बच्चों के प्रति आपके मन में वह प्रेम नहीं हो सकता। जो बिना बुलाये मेहमानों के प्रति होता है। घर में कोई आ जाये अतिथि बिना बुलाये तो जो हालत घर में हो जाती है—बिस्तर भी लगाते है उसको सुलाने के लिए, खाना भी खिलाते है, आवभगत भी करते है, हाथ भी जोड़ते है, लेकिन पता होगा आपको कि बिना बुलाये मेहमान के साथ क्या घर की हालत हो जाती है। वह सब ऊपर-ऊपर होता है। भीतर कुछ भी नहीं होता। भी कुछ भी नहीं। और पूरे वक्त यही इच्छा होती है कि कब आप बिदा हों, कब आप जायें।

बिना बुलाये बच्चों के साथ भी दुर्व्यवहार होगा। सद्व्यवहार हो ही नही सकता। क्योंकि उन्हें हमने कभी चाहा न था, कभी हमारे प्राणों की बह आकांक्षा नहीं थी। हम तो किसी और ही तरफ गये थे। वह बाईप्रॉडक्ट हैं, प्रोडेक्ट नहीं। आज के बच्चे प्रॉडक्ट नहीं है। बाईप्रॉडक्ट है। वे उत्पती नहीं है। वह उत्पती के साथ, जैसे गेहूँ के साथ भूसा पैदा हो जाता है। वैसी हालत है। आपका विचार आपकी कामना दूसरी थी, बच्चे बिलकुल आकस्मिक है।

और इसीलिए सारी दुनिया में हमेशा से यह कोशिश चली है वात्स्यायन से लेकिर आज तक यह कोशिश चली है कि सेक्स को बच्चों से किसी तरह मुक्त कर लिया जाये। उसी से बर्थ कंट्रोल विकासित हुआ। संतति नियमन विकसित हुआ, कृत्रिम साधन विकसित हुए कि हम बच्चों से भी बच जायें और सेक्स को भी भोग लें। बच्चों से बचने की चेष्टा हजारों साल से चल रही है। आयुर्वेद के तीर-चार-पाँच हजार साल पुराने ग्रंथ इसका विचार करते है और अभी आज का आधुनिकतम स्वास्थ्य का मिनिस्टर भी इसी की बात करता है। क्यों? आदमी ने ये ईजाद करने की चेष्टा क्यों की?

बच्चे बड़े उपद्रव का कारण हो गये है। वे बीच में आते हैं, जिम्मेदारी ले आते है। और भी एक खतरा—बच्चों के आते से स्त्री परिवर्तित हो जाती है।

पुरूष भी बच्चो नहीं चाहता है। नहीं होते है तो चाहता है इस कारण नहीं की बच्चों के प्रेम है, बल्कि अपनी संपति से प्रेम है। कल मालिक कौन होगा। बच्चों से प्रेम नहीं है। बाप जब चाहता है कि बच्चा हो जाये एक घर में, लड़का नहीं है, तो आप यह मत सोचना कि लड़के के लिए बड़े उसके प्राण आतुर हो रहे है। नहीं, आतुरता यह हो रही है कि मैं रूपये कमा-कमा कर मरा जा रहा हूं, न मालूम कौन कब्जा कर लेगा। एक हकदार मेरे खून का उसको बचाने के लिए होना चाहिए।

बच्चों के लिए...कोई कभी नहीं चाहता कि बच्चे आ जायें। बच्चों से हम बचने की कोशिश करते रहे है। लेकिन बच्चे पैदा होते चले गये। हमने संभोग किया और बच्चे बीच में आ गये। वह उसके साथ जुड़ा हुआ संबंध था। यह काम जन्य संतति है। यह बाई प्रॉडक्ट है सेक्सुअलिटी कीओर इसीलिए मनुष्य इतना रूग्ण इतना,दीन-हीन इतना उदास इतना चिंतित हो गया है।

ब्रह्मचर्य से भी बच्चे आयेंगे,लेकिन वे बच्चे सेक्स की बाईप्रॉडक्ट नहीं होगें। उन बच्चों के लिए सेक्स एक वैहिकल होगा। उन बच्चों को लाने के लिए सेक्स एक माध्यम होगा। सेक्स से कोई संबंध नहीं होगा।

जैसे एक आदमी बैलगाड़ी में बैठकर कहीं गया। उसे बैलगाड़ी से कोई मतलब है? वह हवाई जहाज में भी बैठकर जा सकता था। आप यहां से बैठकर दिल्ली गये हवाई जहाज में। हवाई जहाज से आपको कोई मतलब है। कोई भी संबंध है। कोई भी नाता है? कोई नाता नहीं है, नाता केवल दिल्ली जाने से है। हवाई जहाज सिर्फ वैहिकल है, सिर्फ माध्यम है।

ब्रह्मचर्य को जब लोग उपलब्ध हों और संभोग की यात्रा समाधि तक हो जाये, तब भी वे बच्चे चाह सकते है। लेकिन उन बच्चों का जन्म, उत्पत्ति होगी। वह प्रॉडक्ट होंगे। वह सृजन होंगे। सेक्स सिर्फ माध्यम होगा।

और जिस भांति अब तक यह कोशिश की गयी है—इसे बहुत गौर से सुन लेना—जिस भांति अब तक यह कोशिश की गयी है। कि बच्चों से बचकर सेक्स को भोगा जा सके। वह नयी मनुष्यता यह कोशिश कर सकती है कि सेक्स से बचकर बच्चे पैदा किये जा सके। मेरी आप बात समझे?

ब्रह्मचर्य अगर जगत में व्यापक हो जाये तो हम एक नयी खोज करेंगे। जैसी पुरानी खोज की है कि बच्चों से बचा जा सके और सेक्स का अनुभव पूरा हो जाये। इससे उल्टा प्रयोग आने वाले जगत में हो सकता हे। जब ब्रह्मचर्य व्यापक होगा। सेक्स से बचा जा सके और बच्चे हो जाये।

और यह हो सकता है, इसमें कोई भी कठिनाई नहीं है। इसमें जरा भी कठिनाई नहीं है। यह हो सकता है। ब्रह्मचर्य से जगत का अंत होने कोई संबंध नहीं है।

जगत का अंत होने का संबंध सेक्सुअलिटी से पैदा हो गया है। तुम करते जाओ बच्चे पैदा और जगत का अंत हो जायेगा। न एटम बम की जरूरत है, न हाइड्रोजन बम की जरूरत है। यह बच्चों की इतनी बड़ी तादाद, यह कतार यह काम; यह काम से उत्पन्न हुए कीड़ों-मकोड़ों जैसी मनुष्यता यह अपने आप नष्ट हो जायेगी।

ब्रह्मचर्य से तो एक और ही तरह का आदमी पैदा होगा। उसकी उम्र बहुत लंबी हो सकती है। उसकी उम्र इतनी लंबी हो सकती है। जिसकी हम कोई कल्पना भी नहीं कर सकते। उसका स्वास्थ्य अद्भुत हो सकता है उसमें बीमारी पैदा न हो। उसका मस्तिष्क वैसा होगा। जैसा कभी-कभी कोई प्रतिभा दिखायी पड़ती है। उसके व्यक्ति में सुगंध ही और होगी। बल ही और होगा, सत्य ही और होगा। धर्म ही और होगा। धर्म ही और होगा, धर्म ही और होगा। वह धर्म को साथ लेकर पैदा होगा।

हम अधर्म को साथ लेकर पैदा होते है और अधर्म में जीते है और अधर्म में ही मर जाते है। इसलिए दिन-रात जिंदगी भर धर्म की चर्चा करते रहते है। शायद उस मनुष्य में धर्म की कोई चर्चा नहीं होगी, क्योंकि धर्म लोगों का जीवन होगा। हम चर्चा उसी की करते है जो हमारा जीवन नहीं होता। जो जीवन होता है उसकी हम चर्चा नहीं करते है। हम सेक्स की चर्चा नहीं करते क्योंकि हम जिंदगी में उपलब्ध नहीं कर पाते। बातचीत करके उसको पूरा कर लेते है।

आपने ख्याल किया होगा, स्त्रीयां पुरूषों से ज्यादा लड़ती है। स्त्रीयां लड़ती ही रहती है, कुछ न कुछ खटपट पास पड़ोस....सब तरफ चलती रहती है। कहते है कि दो स्त्रीयां साथ-साथ बहुत देर तक शांति से बैठी रहें, यह बहुत कठिन हे।

मैंने तो सुना है कि चीन में एक बार बड़ी प्रतियोगिता हुई और उस प्रतियोगिता में चीन के सबसे बड़े झूठ बोलने वाले लोग इकट्ठे हुए। झूठ बोलने की प्रतियोगिता थी कि कौन सबसे झूठ बोलता है उसको पहला पुरस्कार मिल जाए।

एक आदमी को पहला पुरस्कार मिला। और उसने यह बात बोली थी सिर्फ कि मैं एक बग़ीचे में गया। दो औरतें एक ही बेंच पर पाँच मिनट से चुपचाप बैठी थी।

और लोगों ने कहा कि इससे बड़ा झूठ कुछ भी नहीं हो सकता हे। यह तो अल्टीमेट अनट्रुथ हो गया। और भी बड़ी-बड़ी झूठ लोगों ने बोली थी। उन्होंने कहा, यह सब बेकार है, पुरस्कार इसको दे दो। वह आदमी बाजी मार ले गया।

लेकिन कभी आपने सोचा कि स्त्रीयां इतनी बातें क्यों करती है? पुरूष काम करते है, स्त्रियों के हाथ में कोई काम नहीं है। और काम नहीं होता है तो बात होती है।

भारत इतनी बातचीत क्यों करता है? वही स्त्रियों वाला दुगुर्ण है। काम कुछ भी नहीं है—बातचीत-बातचीत।

ब्रह्मचर्य से एक नये मनुष्य का जन्म होगा। जो बातचीत करने वाला नहीं जीने वाला होगा। वह धर्म की बात नहीं करेगा। धर्म को जीयेगा। लोग भूल ही जायेंगे कि धर्म कुछ है, वह इतना स्वभाविक हो सकता है। उस मनुष्य के बाबत विचार भी अद्भुत है। वैसे कुछ मनुष्य पैदा होते है। आकस्मिक था उनका पैदा होना।

कभी एक महावीर पैदा हो जाता है। ऐसा सुंदर आदमी पैदा हो जाता है। कि वह वस्त्र पहले तो उतना सुंदर न मालूम पड़े। नग्न खड़ा हो जाता है। उसके सौंदर्य की सुगंध फैल जाती है। सब तरफ। लोग महावीर को देखने चले आते है। वह ऐसा मालूम होता है, जैसे कोई संगमरमर की प्रतिमा हो। उसमें इतना वीर्य प्रकट होता है कि—उसका नाम तो वर्धमान था—लोग उसको महावीर कहने लगते है। उसके ब्रह्मचर्य का तेल इतना प्रकट होता है कि लोग अभिभूत हो जाते है। कि वह आदमी ही और है।

कभी एक बुद्ध पैदा होता है, कभी एक क्राइस्ट पैदा होता है, कभी एक कंफ्यूशियस पैदा होता है। पूरी मनुष्य जाति के इतिहास में दस-पच्चीस नाम हम गिन सकते है, जो पैदा हुए है।

जिस दिन दुनिया में ब्रह्मचर्य से बच्चे आयेंगे। और यह शब्द भी सुनना,आपको लगेगा कि ब्रह्मचर्य से बच्चे। मैं एक नये ही कंसेप्ट की बात कर रहा हूं। ब्रह्मचर्य से जिस दिन बच्चे आयेंगे, उस दिन सारे जगत के लोग ऐसे होंगे। ऐसे सुंदर, ऐसे शक्तिशाली,ऐसे मेधावी, ऐसे विचार शील—फिर कितनी देर होगी उन लोगों को कि वे परमात्मा को न जानें। वे परमात्मा को इसी भांति जानेंगे, जैसे हम रात को सोते है।

लेकिन जिस आदमी को नींद नहीं आती, उससे अगर कोई कहं कि मैं सिर्फ तकिये पर सर रखता हूं और सौ जाता हूं, तो वह आदमी कहेगा। कि यह बिलकुल झूठ है, ऐसा हो नहीं सकता मैं तो सारी रात करवटें ही बदलता रहता हूं, उठता हूं, बैठता हूं,माला फेरता हूं, गाय-भैंस गिनता हूं, लेकिन कुछ नहीं—नींद आती ही नहीं। आप झूठ कहते है। ऐसे कैसे हो सकता है।

कि तकिये पर सर रखा है और नींद आ जाये। आप सरासर झूठ बोलते हो। क्योंकि मैंने तो बहुत प्रयोग करके देख लिया; नींद तो कभी नहीं आती, रात-रात गुजर जाती है।

अमरीका में न्यूयार्क जैसे नगरों में तीस से लेकर चालीस प्रतिशत लोग नींद की दवायें लेकर सो रहे है। और अमरीकी वैज्ञानिक कहते है कि सौ वर्ष के भीतर न्यूयार्क जैसे नगर में एक भी आदमी सहज रूप से सौ नहीं सकता,उसे दवा लेनी ही पड़ेगी। तो यह हो सकता है कि न्यूयार्क में सौ साल बाद होगा,दो सौ साल बाद हिंदुस्तान में होगा; क्योंकि हिंदुस्तान के नेता इस बात के पीछे पड़े है कि हम उनका मुकाबला करके रहेंगे। हम उनसे पीछे नहीं रह सकते है। वे कहते है, हम उनसे पीछे नहीं रह सकते उन की सब बिमारियों को हम आत्म सात कर ही चैन लेंगे।

तो यह हो सकता है कि पाँच सौ साल बाद दुनिया के लोग नींद की दवा लेकर ही सोये। और बच्चा जब पहली दफा पैदा हो मां के पेट से तो वह दूध न मांगे, वह कहं ट्रेन्कोलाइजर, नहीं मैं सो नहीं पाया तुम्हारे पेट में, ट्रेन्कोलाइजर कहां है। तो पाँच सौ साल बाद उन लोगों को यह विश्वास दिलाना कठिन होगा कि आज से पाँच सौ साल पहले सारी मनुष्यता आँख बंद करते ही सो जाती थी। वे कहेंगे इंपासिबल,यह असंभव है, यह बात हो नहीं सकती। ये बात कैसे हो सकती है।

मैं आपसे कहता हूं उस ब्रह्मचर्य से जो जीवन उपजेगा, उसको यह विश्वास करना कठिन हो जायेगा कि लोग चोर थे, लोग बेईमान थे, लोग हत्यारे थे। लोग आत्म-हत्याएँ कर लेते थे। लोग जहर खाते थे। लोग शराब पीते थे। लोग छुरे भोंकते थे, युद्ध करते थे। उनको विश्वास करना मुश्किल हो जायेगा। काम से अब तक उत्पती हुई है। और वह भी उस काम से जो फिजियोलॉजिकल से ज्यादा नहीं है।

एक अध्यात्मिक काम का जन्म हो सकता है। और एक नये जीवन का प्रारंभ हो सकता हे। उस नये जीवन के प्रारंभ के लिए ये थोड़ी सी बातें, इस चार दिनों में मैंने आपसे कहीं है। मेरी बातों को इतने प्रेम और इतनी शांति से—और ऐसी बातों को, जिन्हें प्रेम और शांति से सुनना बहुत मुश्किल हो गया है। बड़ी कठिनाई मालूम पड़ी होगी।

एक मित्र तो मेरे पास आये और कहने लगे कि मैं डर रहा था कि कहीं दस बीस आदमी खड़े होकर यह न कहने लगें कि बंद करिये। ये बातें नहीं होनी चाहिए। मैंने कहा, इतने हिम्मत वर आदमी भी होते तो भी ठीक था। इतने हिम्मत वर आदमी भी कहां है कि किसी को कह दें कि बंद करिये यह बात। इतने ही हिम्मत वर आदमी इस मुल्क में होते तो बेवक़ूफ़ों की कतार जो कुछ भी कह रही है मुल्क में, वह कभी की बंद हो गयी होती। लेकिन वह बंद नहीं हो पा रही है।

मैंने कहा कि मैं प्रतीक्षा करता हूं कि कभी कोई बहादूर आदमी खड़े होकर कहेगा कि बंद करे ये बात। उससे कुछ बात करने का मजा होगा। तो ऐसी बातों को, जिनसे कि मित्र डरे हुए थे कि कहीं कोई खड़े होकर न कह दे, आप इतने प्रेम से सुनते रहे, आप बड़े भले आदमी हे। और जितना आपका रिण मानूं उतना कम है।

अंत में यही कामना करता हूं परमात्मा से कि प्रत्येक व्यक्ति के भीतर जो काम है, वह राम के मंदिर तक पहुंचने की सीढ़ी बन सके। बहुत-बहुत धन्यवाद। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

(क्रमश: अगले अंक में ....देखें)

ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—4

गोवा लिया टैंक, बम्बई,

2 अक्टूबर—1968,

संभोग से समाधि की और—22

Posted on नवम्बर 11, 2010by sw anand prashad

यौन : जीवन का ऊर्जा-आयाम–6

संभोग से समाधि की ओर--ओशो

धर्म के दो रूप है। जैसा सभी चीजों के होत है। एक स्वस्थ और एक अस्वस्थ।

स्वस्थ धर्म जो जीवन को स्वीकार करता है। अस्वस्थ धर्म जीवन को अस्वीकार करता है।

जहां भी अस्वीकार है, वहां अस्वास्थ्य है जितना गहरा अस्वीकार होगा, उतना ही व्यक्ति आत्मघाती है। जितना गहरा स्वीकार होगा, उतना ही व्यक्ति जीवनोन्मुक्त होगा।

ऐसे धर्म शस्त्र भी है, जो स्त्री पुरूष के बीच किसी तरह की कलह, द्वंद्व और संघर्ष नहीं करते। उन्हीं तरह के धर्म-शास्त्रों का नाम तंत्र है। और मेरी मान्यता यह है कि जितना गहरी तंत्र की पहुंच है जीवन में, उतनी क्षुद्र शास्त्रों की नहीं है। जहां निषेध किया गया है। मैं तो समर्थन में नहीं हूं। क्योंकि मेरी मान्यता ऐसी है कि जीवन और परमात्मा दो नहीं है। परमात्मा जीवन की गहनत्म अनुभूति है। और मोक्ष कोई संसार के विपरीत नहीं है। बल्कि संसार के अनुभव में ही जाग जाने का नाम है।

मैं पूरे जीवन को स्वीकार करता हूं—उसके समस्त रूपों में।

स्त्री-पुरूष इस जीवन के दो अनिवार्य अंग है। और एक अर्थ में पुरूष भी अधूरा है, और एक अर्थ में स्त्री भी अधूरी है। उनकी निकटता जितनी गहन। हो सके उतना ही एक का अनुभव शुरू होता है। तो मेरी दृष्टि में स्त्री-पुरूष के प्रेम में परमात्मा की पहली झलक उपलब्ध होती है। और जिस व्यक्ति को स्त्री-पुरूष के प्रेम में परमात्मा की पहली झलक उपलब्ध नहीं होती, उसे कोई भी झलक उपलब्ध होनी मुश्किल हे।

स्त्री पुरूष के बीच जो आकर्षण है, वह अगर हम ठीक से समझें तो जीवन का ही आकर्षण है, और गहरे समझें तो स्त्री-पुरूष के बीच जो आकर्षण है वह परमात्मा की ही लीला का हिस्सा है। उसका ही आकर्षण है। तो मेरी दृष्टि में उसके बीच को आकर्षण में कोई भी पाप नहीं है।

लेकिन क्या कारण है, स्त्री–पुरूष को कुछ धर्मों ने, कुछ धर्म शस्त्रों ने कुछ धर्म गुरूओं ने एक शत्रुता का भाव पैदा कर दिया है। गहरे में एक ही कारण है। मनुष्य के अहंकार पर सबसे बड़ी चोट प्रेम में पड़ती है। जब एक पुरूष एक स्त्री के प्रेम में पड़ जाता है। या स्त्री एक पुरूष के प्रेम में पड़ती है। तो उन्हें अपना अहंकार तो छोड़ना ही पड़ता है। प्रेम की पहली चोट अहंकार पर होती है। तो जो अति अहंकारी हैं, वे प्रेम से बचेंगे। बहुत अहंकारी व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता, क्योंकि वह दांव पर लगाना पड़ेगा प्रेम।

प्रेम का मतलब ही यह है कि मैं अपने से ज्यादा मूल्यवान किसी दूसरे को मान रहा हूं, उसका मतलब ही यह है कि मेरा सुख गौन है, अब किसी दूसरे का सुख ज्यादा महत्वपूर्ण है और जरूरत पड़े तो मैं अपने पूरा मिटा सकता हूं। ताकि दूसरा बच सके। और फिर प्रेम की जो प्रक्रिया है, उसका मतलब ही है कि एक दूसरे में लीन हो जाना।

शरीर के तल पर यौन भी इसी लीनता का उपाय है—शरीर के तल पर। प्रेम और गहरे तल पर इसी लीनता का उपाय है। लेकिन दोनों लीनताएं—एक दूसरे में डूब जाना है, और एक हो जाना; एक फ्यूजन, फासला मिट जाये और कहीं मेरा ''मैं'' खो जाये; अस्तित्व रह जाय, ''मैं'' का कोई भाव न रहो।

तो प्रेम से सबसे ज्यादा पीड़ा उनको होती है। जिनको अहंकार की कठिनाई है। तो अहंकारी व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता है। अहंकारी व्यक्ति प्रेम के ही विरोध में हो जायेगा, और अहंकारी व्यक्ति काम के भी विरोध में हो जायेगा। ऐसे अहंकारी व्यक्ति अगर धार्मिक हो जायें तो उनसे भी धर्म का जन्म होता है। वह रूग्ण धर्म है। और ऐसे अहंकारी व्यक्ति अक्सर धार्मिक हो जाते है। क्योंकि उन्हें जीवन में अब कहीं जाने का उपाय नहीं रह जाता।

जिसका प्रेम का द्वार बंद है, उसके जीवन का भी द्वार बन्द हो गया। और जिसे प्रेम का अनुभव नहीं हो रहा है; उसके जीवन में दुःख ही दुःख रह गया। अब इस दुःख से ऊब रहे है। इसलिए ऊबरने का कोई रास्ता खोज रहे है। वह प्रेम में खो नहीं सकता तो अब वह कहीं और खोने का रास्ता खोज रहा है। तो वह परमात्मा की कल्पना करेगा, मोक्ष की कल्पना करेगा। लेकिन उसका परमात्मा और मोक्ष अनिवार्य रूप से संसार के विरोध में होगा। क्योंकि वह संसार के विरोध में है। संसार का मतलब है: प्रेम के विरोध में है, शरीर के विरोध में है।

तो उसका जो परमात्मा है उसकी कल्पना का वह विपरीत हो गया संसार के। एक अर्थ में संसार का दुश्मन हो गया।

ऐसा जो आदमी धार्मिक हो जाये तो रूग्ण धर्म पैदा होगा। और ऐसे लोग अक्सर धार्मिक हो जाते है। ऐसे लोग शास्त्र भी लिखते है, ऐसे लोग अपने विचार का प्रचार भी करते है, और दुनिया में बहुत दुःखी लोग है। वे इस आशा में कि इस तरह के विचारों से आनन्द मिलेगा, वे भी इस तरफ झुकते है। और दुनिया में सभी के पास थोड़ा बहुत अहंकार हे। तो जिनके भी अहंकार को थोड़ा बढ़ावा पाने की इच्छा हो, वे इस और झुक जाते है।

अहंकारी आदमी हमेशा आक्रामक होता है। तो वह अपने धर्म को लेकर भी आक्रमण करता है। दूसरों पर। उनको कनवर्ट करता, उनको समझाता-बुझाता, बदलता है। और चूंकि वह काम जीवन के सामान्य संबंधों से अपने को दूर रखता है। स्वभावत: ऐसा लगता है कि वह बड़ा त्याग कर रहा है। और जिन चीजों से हमें सुख मिल रहा है, उन सबको छोड़ रहा है। इसलिए हमारे मन में भी आदर पैदा होता है।

आदर तभी पैदा होता है, जब हमसे विपरीत कोई कुछ कर रहा है। जो हम न कर पा रहे हों। वह कोई कर रहा हो तो आदर पैदा होता है। और वह आक्रामक है, अहंकारी है। वह सब भांति अपने विचार को हमारे ऊपर थोपने की कोशिश करता है। तो प्रेम जो वह, पाप हो जाता है। प्रेम भी करते है और भीतर कहीं गहरे में यह भी लगता रहता है। कि कुछ गलत कर रहे है। तो प्रेम जो है, कुछ पाप कर रहा है। इसका परिणाम यह होता है कि प्रेम से जो भी सुख मिलता था, वह मिलना बंद हो जाता है। प्रेम जारी रहता है और सुख इस अपराध भाव के कारण मिलना बंद कहो जाता है।

जिस चीज में भी अपराध भाव पैदा हो जाय, उसमे सुख नहीं मिल सकता।

सुख के लिए पहली बात जरूरी है कि मन में अहो भाव हो, अपराध भाव न हो।

तो पुरूष का मन है कि स्त्री को प्रेम करे, स्त्री का मन है कि पुरूष को प्रेम करे। यह स्वभाविक है। नैसर्गिक, कुछ इसमें बुरा नहीं है। लेकिन अब वह जो अपराध पैदा कर देंगे त्यागी वह जहर बन जायेगा। तो स्त्री-पुरूष एक दूसरे के प्रति आकर्षित भी होंगे और साथ ही विकर्षित भी होंगे। एक दोहरी धारा, द्वंद्व और विपरीत स्थिति बन जायेगी,एक भीतर कन्ट्राडिक्शन खड़ा हो जायेगा। यह सारी मनुष्य जाति में उन्होंने पैदा कर दी। इसके उनको फायदे है। क्योंकि जब आपको प्रेम से कोई सुख नहीं मिलता तो उनकी बात बिलकुल ठीक लगने लगती है। कि न तो इसमें कोई सूख....और सुख नहीं मिलता। इसलिए नहीं कि प्रेम में सुख नहीं है; सुख नहीं मिलता इसलिए कि उन्होंने पाप का भाव पैदा कर दिया। अगर

कोई बच्चे को समझा दे कि स्वास लेने में पाप हो तो स्वास लेने में दुःख मिलने लगेगा। हम जो भी समझा दें, उसमें दुःख मिलने लगेगा।

दुःख जो है, वह कोई भी गलत काम हम कर रहे है, उससे मिलने लगेगा। वह काम है या नहीं, यह सवाल नहीं है। जैसे जैन घर का बच्चा रात को खाना खाये तो लगता है पाप हो गया।

जब मैंने पहली दफा रात में खाना खाया तो मुझे वॉमिट हो गई। एकदम उल्टी हो गई। क्योंकि चौदह साल तक मैंने कभी रात में खाना खाया ही नहीं था। घर पर कभी खाता नहीं था। और रात में खाना पाप था। सब हिन्दू थे। उनको दिन में कोई फ्रिक न थी। कि भोजन या खाने की। और मेरे अकेले के लिए मुझे अच्छा भी नहीं लगा कि कुछ खाए। दिन भर की थकान, पहाड़ी पर चढ़ना, दिन भर की भूख और फिर रात उनका खाना बनाना मेरे साथ। तो भूख भी उनके खाने की गंध भी, जो मैं राज़ी हो गया। तो मैंने सोचा कि ये लोग इतने दिन से खाते है, अभी तक नर्क नहीं गये। एक दो दिन खा लेने से नर्क नहीं चला जाऊँगा। नर्क तो नहीं गया। लेकिन रात में तकलीफ में पड़ गया। मैं नर्क में ही रहा। क्योंकि मुझे उल्टी हो गई खाने के बाद चौदह साल तक जिस बात को पाप समझता हो उसको एकदम से भीतर ले जाना बहुत मुश्किल है। उस दिन जब मुझे उल्टी हो गई तो मैंने यह सोचा कि बात पाप की है, नहीं तो उल्टी कैसे हो जाती।

तो विश्यिस सर्किल हे, विचार के भी दुष्ट चक्र है। जिस चीज को हम पाप मान लेते है उसमें सुख नहीं मिलता, दुःख मिलने लगता है। और जब दुःख मिलने लगता है तो उसे और भी पाप मान लेने का गहरा भाव हो जाता है। जितना गहरा पाप मानते है, उतना ज्यादा दुःख मिलते लगता है।

इस भांति पाँच हजार साल से त्याग वादी आदमी की गर्दन पकड़े हुए है। और वे बीमार लोग है, रूग्ण है। जीवन को जो भोग नहीं सकते क्योंकि जीवन को भोगने के लिए जो अनिवार्य शर्त है, उसको वह पूरी नहीं कर सकते। उनका अहंकार बाधा बनता है। तब फिर वे कहने शुरू कर देते है कि सब अंगूर खट्टे है। और यह इतना प्रचार किया हुआ है अंगूर खट्टे होने का। कि अंगूर खट्टे हो ही जाते है। जब आप उनको मुंह में डालते है तो दाँत कहते है कि खट्टे है।

इन सारे लोगों ने स्त्री पुरूष के बीच बहुत तरह की बाधाएं खड़ी की है। और चूंकि इनमें अधिक लोग पुरूष थे। इसलिए स्वभावत: स्त्री को उन्होंने बुरी तरह निंदित किया है। ये सब शास्त्र रचने वाले चूंकि अधिकतर पुरूष थे, इसलिए स्त्री को उन्होंने नर्क का द्वार बना दिया। तो नर्क के द्वार को छूने में खतरा तो है ही, फिर नर्क के द्वार के पास आने में भी खतरा

हे। और जितना इन लोगों नह यह भाव पैदा किया कि स्त्री नर्क का द्वार है, स्त्री पुरूष के संबंध पाप है, अपराध है—ये भी सामान्य मनुष्य थे, इनके भीतर भी स्त्री के प्रति वही आकर्षण था, जो किसी और के मन में है। और जब इन्होंने इतना विरोध किया तो वह आकर्षण और बढ़ गया। निषेध से आकर्षण बढ़ता है।

जिस चीज का इंकार किया जाए,उसमे एक तरह का रस पैदाहोना शुरू हो जाता है।

तो ये दिन रात इंकार करते रहे तो इनका रस भी बढ़ गया। और जब इनका रस बढ़ गया—तो अगर इस तरह के लोग ध्यान करने बैठे, प्रार्थना करने बैठे—तो स्त्री ही उनको दिखाई पड़ने वाली है। वे भगवान को देखना चाहते है, लेकिन दिखाई स्त्री पड़ती है। तब स्वभावत: उनको ओर भी पक्का होता चला गया कि स्त्री ही नर्क का द्वार है। हम भगवान को जल्दी पाना जानना चाहते है। तभी स्त्री बीच में आ जाती है।

सारे ऋषि मुनियों को स्त्रीयां सताती है। इसमें स्त्रियों को कोई कसूर नहीं है। इसमें ऋषि मुनियों के मन की भाव-दशा है। ये ऋषि मुनि स्त्री के खिलाफ लड़ रहे है। कोई उपर इंद्र बैठा हुआ नहीं है। जो अप्सराएं भेजता है। मगर इन सबको अप्सराएं भेज दी थी। नग्न और सुन्दर स्त्रियां—ये इनके मन के रूप है, जो इन्होंने दबाया है। और जिसको निषेध किया है, वह इतना प्रगाढ़ हो गया है। वह इतना प्रगाढ़ हो गया है। वह अब उनको बिल्कुल वास्तविक मालूम पड़ता है।

तो इनके कहने में भी गलती नहीं है कि उन्होंने जो अप्सराएं देखीं, बिलकुल वास्तविक है। यह अत्यंत रूग्ण व्यक्ति की दिशा है। विक्षिप्त चित की दशा है। जब कोई वासना इतनी प्रगाढ़ हो जाती है कि उस वासना से जो स्वप्न खड़ा होता है वह वास्तविक मालूम होता है। यह पागल मन की हालत है। और सबको स्त्रियां ही सताती है। क्योंकि इनके पूरे जीवन का सार संघर्ष ही है। जिससे संघर्ष है, वह सताएगा।

जिस दिन आपने उपवास किया है, उस दिन भोजन के स्वप्न ही आयेंगे। और अगर दो चार महीने आपको लंबा उपवास करना पड़े तो आप इल्यूजन की हालत में हो जायेंगे—मस्तिष्क से जो भी देखेगा। भोजन ही दिखाई पड़ेगा। कुछ भी सुनेगा। भोजन ही सुनाई पड़ेगा। कोई भी गंध आयेगी, वह भोजन की ही गंध होगी। इससे कोई संबंध बहार का नहीं है। इसके भीतर जो अभाव पैदा हो गया है। वह प्रक्षेपण कर रहा है।

तो जब इन ऋषि मुनियों को ऐसा लगा कि स्त्री सब तरह से डिगाती है और उनके ध्यान की अवस्था में आ जाती है। और वे बड़ी ऊँचाई पर चढ़ रहे थे। और नीचे गिर जाते है। कोई गिरा नहीं रहा, न कहीं चढ़ रहा है। सब उनके मन का खेल है। तो जिससे लड़ रहे थे जिससे

भाग रहे थे। उसी से खींचकर नीचे गिर जाते है। तो फिर स्वभाविक है उन्होंने कहां कि स्त्री को देखना भी नहीं, छूना भी नहीं, स्त्री बैठी हो किसी जगह भी तो एक दम बैठ मत जाना। कुछ काल व्यतीत हो जाने देना,ताकि उस स्त्री की ध्वनि-तरंगें उस स्थान से अलग हो जाएं। अब यह बिलकुल रूग्ण चित लोगों की दशा है। इतने भयभीत लोग। और जो स्त्री से इतने भयभीत हो वे कुछ और पा सकेंगे। इसकी संभावना नहीं है।

इस तरह के लोगों ने जो बातें लिखी है, मैं मानता हूं कि आज नहीं कल हम उनको विक्षिप्त, मनोविकार ग्रस्त शास्त्रों में गिनंगे। मेरा कोई समर्थन इनको नहीं है।

मेरा तो मानना है। कि जीवन में मुक्ति का एक ही उपाय है कि जीवन का जितना गहन अनुभव हो सके और जिस चीज के हम जितने गहन अनुभव में उतर जाते है। उतना ही उससे हमारा छुटकारा हो जाता है।

अगर निषध से रस पैदा होता है। तो अनुभव से वैराग्य पैदा होता है।

मेरी यह दृष्टि है कि जिस चीज को हम जान लेते है। जानते ही उससे जो विक्षिप्त आकर्षण था वह शांत होने लगता है।

और स्वभावत: काम का आकर्षण है—होगा। क्योंकि हम उत्पन्न काम से होते है। और हमारे शरीर का एक-एक कण जीवाणु का कण हे। माता-पिता के जिस कामाणु से निर्मित होता है। फिर उसी का विस्तार हमारा पूरा शरीर है। तो हमारा तो हमारा रोआं-रोआं काम से निर्मित हे। पूरी सृष्टि—काम सृष्टि है। इसमे होने का मतलब ही है, काम वासना के भीतर होना।

जैसे हम स्वास ले रहे है हवा में उससे भी गहरा हमारा आस्तित्व कामवासना में है। क्योंकि स्वास लेना तो बहुत बाद में शुरू होता है। बच्चा जब मां के पेट से पैदा होगा और जब रौएगा। तब पहली स्वास लेगा। इसके पहले भी नौ महीने वह जिंदा रह चुका हे। और वह नौ महीने जो जिंदा रह चुका है, वह तो उसकी काम उर्जा का ही फैलाव हे। तो वह जो काम उर्जा से हमारा सारा शरीर निर्मित है, स्वास से भी गहरा हमारा उसमे अस्तित्व छिपा हुआ है, उससे भागकर कोई भी बच सकता है। क्योंकि भागकर कोई बच नहीं सकता, क्योंकि भागोगे कहां। वह तुम्हारे भीतर है, तुम ही हो। मैं तो कहता हूं उससे भागने की कोई जरूरत नहीं हे। और भाग कर उपद्रव में पड़ जाता है। तो जीवन में जो है उसका सहज अनुभव उसका स्वीकार।

और जितना गहरा अनुभव होता है, उतना हम जाग सकते है।

ओशो

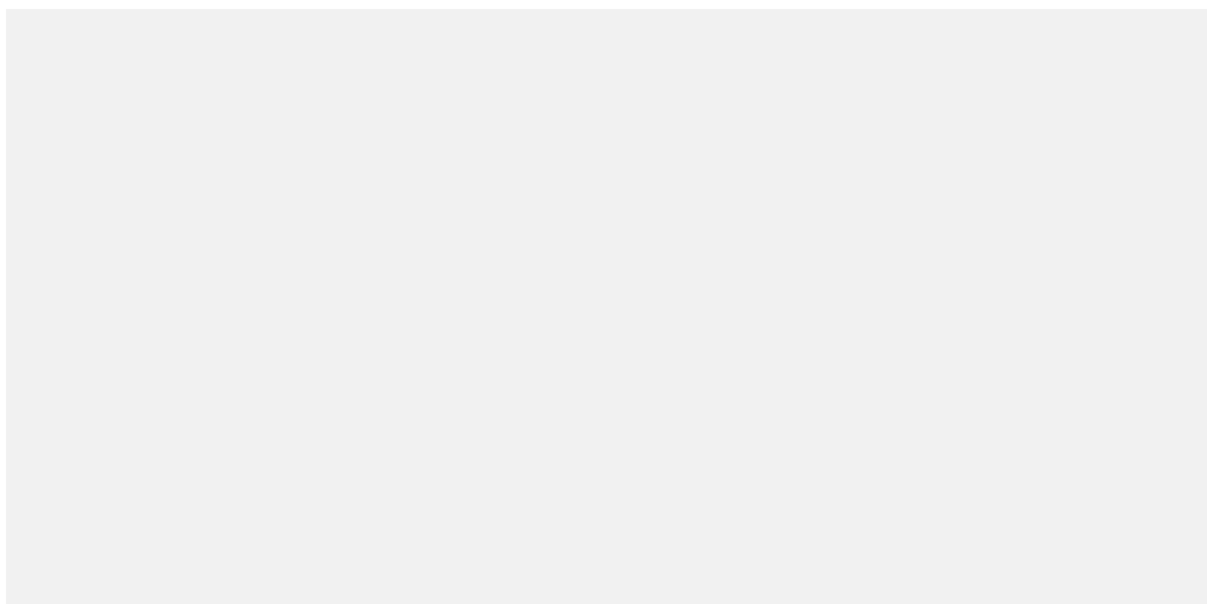
संभोग से समाधि की और

प्रवचन—6

संभोग से समाधि की और—23

Posted on नवम्बर 13, 2010by sw anand prashad

यौन : जीवन का ऊर्जा-आयाम–6



संभोग से समाधि कीओर--ओशो

इस लिए मैं तंत्र के पक्ष में हूं, त्याग के पक्ष में नहीं हूं। और मेरा मानना है जब तक धर्म दुनिया से समाप्त नहीं होते, तब तक दुनिया सुखी नहीं हो सकती। शांत नहीं हो सकती। सारे रोग की जड़ इनमें छिपी है।

तंत्र की दृष्टि बिलकुल उल्टी है। तंत्र कहता है कि अगर स्त्री पुरूष के बीच आकर्षण है तो इस आकर्षण को दिव्य बनाओ। इससे भागों मत, इसको पवित्र करो। अगर काम-वासना इतनी गहरी है तो उससे तुम भाग सकोगे भी नहीं। इस गहरी काम वासना को ही क्यों ने परमात्मा से जुड़ने का मार्ग बनाओ। और अगर सृष्टि काम से हो रही है तो परमात्मा को हम काम वासना से मुक्त नहीं कर सकते। नहीं तो कुछ तो कुछ होने का उपाय नहीं है।
अगर कहीं भी कोई शक्ति है इस जगत में तो उसका हमें किसी ने किसी रूप में काम वासना से संबंध जोड़ना ही पड़ेगा। नहीं तो इस सृष्टि के होने का कहीं कोई आधार नहीं रह जाता। इस सृष्टि में जो कुछ हो रहा है, वह किसी ने किसी रूप में परमात्मा से जुड़ा है। और हम आंखें खोलकर चारों तरफ देखें तो सारा काम को फैलाव है। आदमी है तो हम बेचैन हो

जाते है—वे ऋषि मुनि भी। आदमी बेचैन हो जाता है, लेकिन उस तरफ उनको ख्याल में नहीं आता।

सुबह जब पक्षी गीत गा रहे है तो उनको लगता है कि बड़ी दिव्य बात हो रही है। लेकिन वह पक्षी जो पुकार लगा रहा है। वह सब काम-वासना है। और जब फूल खिलते है तो ऋषि की वाटिका में तो वह सोचता है बड़ी अदभुत बात है। और फूलों को जाकर भगवान को चढ़ा रहा है। लेकिन सब फूल काम वासना के रूप है। वे वीर्याणु है। उनमें....उनमें छिपा बीज है जन्म का। और फूलों पर तितलियां घूम कर उनके वीर्याणु को लेकिन दूसरे फूलों से जाकर मिला रही है। तो फूल देखकर तो ऋषि खुश होता है। यह उसके ख्याल में नहीं आ रह कि फूल जो है, वह काम वासना के रूप है। पक्षी का गीत सुनकर खुश होता है। मोर नाचता है तो खुश होता है। आदमी से क्या परेशानी है।

वह काम,लेकिन आदमी के काम से वह परिचित है वह उसकी खुद की पीड़ा है। बाकी पूरी प्रकृति काम का फैलाव है। यहां जो भी दिखाई पड़ रहा है। वह सबके भीतर काम छिपा हुआ है। सारा फैलाव सारा खेल उसका तो जो काम इतने गहरे में है। वह परमात्मा से जुड़ा होगा।

तंत्र कहता है: सबसे ज्यादा गहरी चीज काम वासना है, क्योंकि उससे ही जन्म होता है। उससे ही जीवन फैलता है। यहां जो भी दिखाई पड़ रहा है। वह सबके भीतर काम छिपा हुआ है। सारा फैलाव सारा खेल उसका, तो इस गहरे तंतु का हम उपयोग कर लें। इस तंतु से लड़े न, बल्कि इस तंतु को धारा बना लें, जिसमें हम बह जाएं।

और काम वासना को अगर कोई धारा बना ले, ध्यान बना ले, समाधि बना ले। तो दोहरे परिणाम होत है। वह जो ऋषि निरन्तर चाहता है—त्याग वादी—का छुटकारा हो जाय, वि भी हो जाता है। और दूसरा परिणाम यह होता है कि यह व्यक्ति काम—वासना से भी छूट जाता है। और काम वासना के कारण अहंकार से भी छूट जाता है।

तंत्र की साधना ही स्वस्थ साधना है।

तो मैं तो विरोध में नहीं हूं। न तो मैं विरोध में हूं कि इस पर्त से बचो। न बच सकते है। ऐसा ऊपर से बचेंगे तो भीतर अप्सराएं सताएगी। उससे इस पृथ्वी की स्त्रियों में कुछ ज्यादा उपद्रव नहीं। बचने की बात ही मैं मानता हूं, गलत।

भागना क्यों, डरना क्यों जीवन जैसा है, उसके तथ्यों में जागरूक होना। और जब मेरे मन में किसी चीज क प्रति आकर्षण है तो इस आकर्षण को समझने की कोशिश करूं। क्या है यह आकर्षण। क्यों है यह आकर्षण? और इस आकर्षण को मैं कैसे सृजनात्मक करूं कि इससे

मेरा जीवन खिले और विकसित हो। यह मेरा विध्वंस न बन जाए। और इस आकर्षण को मैं उपयोग कैसे करूं। यह सवाल है।

तो इस आकर्षण का गहरा उपयोग ध्यान के लिए हो सकता है। और स्त्री–पुरूषों की सन्निधि बड़ी मुक्त दायी हो सकती है। मगर कभी ऐसा हुआ तो मनुष्य ओर ज्यादा समझदार और ज्यादा विचारपूर्ण हुआ। तब हम स्त्री पुरूष के बीच की सारी बाधाएं तोड़ देंगे। स्त्री पुरूष के बीच की बाधाएं तोड़ते ही हमारे नब्बे परसैंट बीमारियां विलीन हो जाएं। क्योंकि उन बाधाओं के कारण सारे रोग खड़े हो रहे है। हमको दिखाई नहीं पड़ता। और चक्र ऐसा है कि जब रोग खड़े होते है तो हम सोचते है और बाधाएं खड़ी करो। ताकि रोग खड़े न हो।

मैं एक गांव में था। और कुछ बड़े विचारक और संत साधु मिलकर अश्लील पोस्टर विरोधी एक सम्मेलन कर रहे थे। तो उनका ख्याल है कि अश्लील पोस्टर लगता है दीवालों पर, इसलिए लोग काम-वासना से परेशान रहते है। जबकि हालत दूसरी है लोग काम वासना से परेशान है। इसलिए पोस्टर में मजा है। यह पोस्टर कौन देखेगा? पोस्टर को देखने कौन जा रहा है।

पोस्टर को देखने वही जा रहा है, जो स्त्री पुरूष के शरीर को देख ही नहीं सका। जो शरीर के सौन्दर्य को नहीं देख सका। जो शरीर की सहजता को अनुभव नहीं कर सका। वह पोस्टर देख रहा है।

पोस्टर को देखने वही जा रहा है। जो स्त्री पुरूष के शरीर को देख ही नहीं सका। जो शरीर के सौन्दर्य को नहीं देख सका। जो शरीर की सहजता को अनुभव नहीं कर सका वह पोस्टर देख रहा है।

पोस्टर इन्हीं गुरूओं की कृपा से लग रहे है। क्योंकि ये इधर स्त्री पुरूष को मिलने झुलने नहीं देते, पास नहीं होने देते तो इसका परवर्टेड, विकृत रूप है कि काई गंदी किताब पढ़ रहा है। कोई गंदी तस्वीर देख रहा है। कोई फिल्म बना रहा है। क्योंकि आखिर यह फिल्म कोई आसमान से नहीं टपकती, लोगों की जरूरत है।

इसलिए सवाल यह नहीं है कि गंदी फिल्म कोई क्यों बना रहा है? लोगों की जरूरत क्या है? यह तस्वीर जो पोस्टर लगती है। कोई ऐसे ही मुफ्त पैसा खराब करके नहीं लगता। इसका कोई उपयोग है। इसे कहीं कोई देखने को तैयार है, मांग है इसकी वह मांग कैसे पैदा हुई? वह मांग हमने पैदा की है। स्त्री पुरूष को दूर करके। वह मांग पैदा कर दी। अब वह मांग को पूरा करने जब कोई जाता है तो हमको लगता है कि बड़ी गड़बड़ हो गई। तो उसको और

बाधाएं डालों। उसको जितनी वह बाधाएं डालेगा,वह नए रास्ते खोजेगा मांग के। क्योंकि मांग तो अपनी पूर्ति माँगती है।

तो मैंने उनको कहा कि अगर सच में ही चाहते हो कि पोस्टर विलीन हो जाये, तो स्त्री पुरूषों के बीच की बाधा कम करो। क्योंकि मैं नहीं देखता—आदिवासी समाज है जहां, स्त्री पुरूष सहज है, करीब-करीब नग्न—वहां कोई पोस्टर लगा है? या कोई पोस्टर में रस ले रहा है?

जब पहली दफे ईसाई मिशनरी ऐसे कबीलों में पहुँचे, जहां नग्न लोग थे। तो उनको ये भरोसा ही नहीं आया कि कोई नग्न स्त्री में भी रस ले सकता है। क्योंकि रस लेने का कोई कारण नहीं है। जब तक हम वस्त्रों में ढांके है और दीवालें ओर बाधाएं खड़ी किए है। तब तक रस पैदा होगा। रस पैदा होगा तो हम सोचते है कि—और डर पैदा हो रहा है—तो इसको रोको।

मनुष्य की अधिक उलझनें इसी भांति की है। कि जो सोचता है कि सीढ़ियां है सुलझाव की, वहीं उपद्रव है, वही बाधाएं है।

तो मैं मानता हूं कि बच्चे बड़े हों, साथ बड़े हों; लड़के और लड़कियों के बीच कोई फासला न हो; साथ देखें दौड़ें बड़े हों, साथ स्नान करें, तैरें। ताकि स्त्री पुरूष के शरीर की नैसर्गिक प्रतीति हो। और वह प्रतीति कभी भी रूग्ण न बन जाए। और उसके लिए कोई बीमार रास्ते न खोजने पड़े।

और यह बिलकुल उचित ही है। कि पुरूषों की शरीर में उत्सुकता हो। स्त्री की पुरूषों के शरीर में उत्सुकता हो। यह बिलकुल स्वाभाविक है। और इसमे कुछ भी कुरूप नहीं है और कुछ भी अशोभन नहीं है। अशोभन तो तब है जो हमने किया है। उससे अशोभन हो गई बात।

अब जिस स्त्री से मेरा प्रेम हो, उसके शरीर में मेरा रस होना स्वाभाविक है। नहीं तो प्रेम तो प्रेम भी नहीं होगा। लेकिन एक अंजान स्त्री को रास्ते में धक्का मार दूँ भीड़ में यह अशोभन है। लेकिन इसके पीछे ऋषि मुनियों का हाथ है। जिस स्त्री से मेरा प्रेम है। उसे मैं अपने करीब निकट ले लूं,उसका आलिंगन करूं, यह समझ में आने वाली बात है। इसमें कुछ बुरा नहीं है। लेकिन जिस स्त्री को मैं जानता ही नहीं, जिससे मेरा कोई लेना देना ही नहीं है। रास्ते पर मौका भीड़ में मिल जाये। और में उसको धक्का मारू। उस धक्के में जरूर कोई बीमार बात है। वह धक्का क्यों पैदा हो रहा है? वह धक्का किसी जरूरत का रूग्ण रूप है। जिससे प्रेम हो सकता है। उसको मैं कभी पास नहीं ले पाता। वह रूग्ण हो गई वृति, अब धक्का मारने में भी रस ले रहा हूं। तो भीड़ में एक धक्का ही मार कर चला गया तो भी समझो कि कुछ सुख पाया। और सुख इसमें मिल नहीं सकता; ग्लानि मिलेगी मन को, निन्दा मिलेगी अपराध का भाव पैदा होगा मन में। मैं समझूंगा कि मैं पाप कर रहा हूं। और जितना

मैं समझूंगा कि मैं पाप कर रहा हूं,उतना स्त्री ओ मेरे बीच का फासला बढ़ता जाएगा। और जितना फासला बढ़ेगा, इसको मिटाने की बेहूदी कोशिशें करूंगा और यह चलता रहेगा।

स्त्री-पुरूष को निकट लाना चाहता हूं, इतने निकट कि उनको यह प्रतीति नहीं रह जानी चाहिए कि कौन स्त्री है और कौन पुरूष।

स्त्री-पुरूष होना, चौबीस घंटे का बोध नहीं होना चाहिए। वह बीमारी है, अगर इतना बोध बना रहता है तो स्त्री पुरूष दोनों को चौबीस घंटे बोध नहीं होना चाहिए। वह मिटेगा तभी जब हम बीच में फासले मिटाएंगे।

और इतने गहरे परिणाम होंगे—कि समाज की अश्लीलता, गंदा साहित्य, गंदी फिल्में बेहूदी वृतियां, वे अपने आप गिर जाएं। और एक ज्यादा स्वस्थ मनुष्य का जन्म हो। और यह जो स्वस्थ मनुष्य है इसकी मैं आशा कर सकता हूं कि यह धार्मिक हो सके। क्योंकि जो स्वस्थ ही नहीं हो पाया अभी उसके धार्मिक होने की कोई आशा मैं नहीं मानता।

तो एक तो धर्म है, जो अधर्म से भी बूरा है, अस्वस्थ धर्म। उससे तो अधर्म ठीक है। और एक धर्म है जो अधर्म से श्रेष्ठ है, और उसे मैं कहता हूं स्वस्थ धर्म। जीवन की समझ, प्रतीति, अनुभव, होश—इससे पैदा हुआ धर्म।

स्त्री-पुरूष जितने निकट होंगे, उतना ही यह उपद्रव कम होगा, शांत होगा। और अगर यह उपद्रव शांत हो जाये तो असली खोज शुरू हो सकती है। क्योंकि आदमी बिना आकर्षण के नहीं जी सकता। और अगर स्त्री पुरूष का आकर्षण शांत हो जाता है तो वे और गहरे आकर्षण की खोज में लग जाते है। बिना आकर्षण के जीना मुश्किल है। वही प्रयोजन है। और जो स्त्री-पुरूष में ही लड़ता रहा है—उसका आकर्षण तो कायम रहता है, दूसरा आकर्षण का कोई उपाय नहीं है।

परमात्मा मेरे लिए प्रकृति में ही गहरे अनुभव का नाम है।

और जिस दिन वह अनुभव होने लगता है। उसी दिन ये सारे,जिनसे हम बचना चाहते थे, इनसे हम बच जाते है। पर बिना कोई चेष्टा किए। एक तो कच्चा फल है, जिसको कोई झटका देकर तोड़ ले। और एक पका हुआ फल है जो वृक्ष से गिर जाता है। न वह वृक्ष को खबर होती है कि वह कब गिर गया। न फल को खबर होती है। कब गिर गया। न फल को लगता है कि कोई बड़ा भारी प्रयासकरना पडा। न कहीं होता है। न कहीं कुछ होता है। यह सब चुपचाप हो जाता है।

तो जीवन के अनुभव से एक वैराग्य का जन्म होता है। जिसको मैं पका हुआ फल कहता हूं। और जीवन से लड़ने से एक वैराग्य का जन्म होता है। जिसको मैं कच्चा फल कहता हूं। सब तरफ घाव छूट जाते है, और उन घावों का भरना मुश्किल है। तो मैं तो कसी ऐसे शास्त्रों के पक्ष में नहीं हूं।

मेरा तो मानना यह है कि जो भी प्रकृति से उपलब्ध है समग्र सर्वांगीण स्वीकार।

और उसी स्वीकार से रूपांतरण है। और यही रूपांतरण गहरा हो सकता है। संघर्ष में मेरा भरोसा नहीं है। और इसी बात को में आस्तित्व कहता हूं। सब त्यागियों को मैं नास्तिक कहता हूं। क्योंकि परमात्मा की सृष्टि उन्हें स्वीकार नहीं। और जिनको परमात्मा की सृष्टि स्वीकार नहीं, वे परमात्मा भी उन्हें मिल जाएगा तो स्वीकार करेंगे। मैं नहीं मानता। अस्वीकृति की उनकी आदत इतनी गहरी है कि जब वे परमात्मा को भी देखेंगे तो हजार भूले निकाल लेंगे कि इसमे यह पाप है।

शोपहार ने कहीं कहा है कि हे परमात्मा, तू तो मुझे स्वीकार है, तेरी सृष्टि स्वीकार नहीं है। लेकिन इनको परमात्मा स्वीकार है तो उसकी सृष्टि अनिवार्य रूपेण स्वीकृति हो जाय। और अगर उसकी सृष्टि स्वीकार नहीं है, तो बहुत गहरे में हम उसे भी स्वीकार नहीं कर सकते। कैसे स्वीकार करेंगे। फिर या तो हम परमात्मा से ज्यादा समझदार हो गए है। उससे ऊपर अपने को रख लिया कि हम उसमें भी चुनाव करते है।

मेरा कोई चुनाव नहीं, मैं तो मानता हूं जो प्रकट है, वह अप्रकट का ही हिस्सा है। जो दिखाई पड़ रहा है। उसके पीछे ही अद्दश्य छिपा हुआ हे। थोड़ी पर्त भीतर प्रवेश करने की जरूरत है। और प्रेम जितना गहरा जाता है। इस जगत में कोई और चीज इतनी गहरी नहीं जाती। मैं छुरा मार सकता हूं। आपकी छाती में,वह इतना गहरा जाएगा जितना मेरी प्रेम आपके भीतर गहरा जाएगा। प्रेम से गहरा तो कुछ भी नहीं जाता इसको भी जो छोड़ देता है वह उथला सतह पर रह जाता है। तो मेरे मन में तो ऐसे शास्त्र अनिष्ट है। और जितने शीध्र उनसे छुटकारा हो, उतना ही अच्छा है। और ऐसे ऋषि मुनियों की चिकित्सा......मानसिक रोग है इन्हें।

ओशो
संभोग से समाधि की और

प्रवचन—6

संभोग से समाधि की ओर—24

Posted on नवम्बर 21, 2010by sw anand prashad

युवक और यौन—

संभोग से समाधि कीओर-ओशो

एक कहानी से मैं अपनी बात शुरू करना चाहूंगा।

एक बहुत अद्भुत व्यक्ति हुआ है। उस व्यक्ति का नाम था नसीरुद्दीन एक दिन सांझ वह अपने घर से बाहर निकलता था मित्रों से मिलने के लिए। तभी द्वार पर एक बचपन का बिछुड़ा मित्र घोड़े से उतरा। बीस बरस बाद वह मित्र उससे मिलने आया था। लेकिन नसीरुद्दीन ने कहा कि तुम ठहरो घड़ी भर मैंने किसी को बचन दिया है। उनसे मिलकर अभी लौटकर आता हूं। दुर्भाग्य कि वर्षो बाद तुम आये हो और मुझे घर से अभी जाना पड़ रहा है।, लेकिन मैं जल्दी ही लौट आऊँगा।

उस मित्र ने कहां, तुम्हें छोड़ने का मेरा मन नहीं है, वर्षो बाद हम मिले है। उचित होगा कि मैं भी तुम्हारे साथ चलू। रास्ते में तुम्हें देखूँगा भी, तुमसे बात भी कर लुंगा। लेकिन मेरे सब कपड़े धूल में हो गये है। अच्छा होगा, यदि तुम्हारे पास दूसरे कपड़े हों तो मुझे दे दो।

वह फकीर कपड़े की एक जोड़ी जिसे बादशाह ने उसे भेट की थी—सुंदर कोट था, पगड़ी थी, जूते थे। वह अपने मित्र के लिए निकाल लाया। उसने उसे कभी पहना नहीं था। सोचा था; कभी जरूरत पड़ेगी तो पहनूंगा। फिर वह फकीर था। वे कपड़े बादशाही थे। हिम्मत भी उसकी पहनने की नहीं पड़ी थी।
मित्र ने जल्दी से वे कपड़े पहन लिए। जब मित्र कपड़े पहन रहा था, तभी नसीरुद्दीन को लगा कि यह तो भूल हो गयी। इतने सुंदर कपड़े पहनकर वह मित्र तो एक सम्राट मालूम पड़ने लगा। और नसरूदीन उसके सामने एक फकीर, एक भिखारी मालूम पड़ने लगा। सोचा रास्ते पर लोग मित्र की तरफ ही देखेंगे,जिसके कपड़े अच्छे है। लोग तो सिर्फ कपड़ों की

तरफ देखते है और तो कुछ दिखायी नहीं पड़ता है। जिनके घर ले जाऊँगा वह भी मित्र को ही देखेंगे, क्योंकि हमारी आंखे इतनी अंधी है। कि सिवाय कपड़ों के और कुछ भी नहीं देखती। उसके मन में बहुत पीड़ा होने लगी। कि यह कपड़े पहनाकर मैंने एक भूल कर ली। लेकिन फिर उसे ख्याल आया कि मेरा प्यारा मित्र है, वर्षों बाद मिला है। क्या अपने कपड़े भी मैं उसको नहीं दे सकता। इतनी नीच इतनी क्षुद्र मेरी वृति है। क्या रखा है कपड़ों में। यही सब अपने को समझाता हुआ वह चला, रास्ते पर नजरें उसके मित्र के कपड़ों पर अटकी रही। जिसने भी देखा, वहीं गोर से देखने लगा। वह मित्र बड़ा सुंदर मालूम पड़ रहा था। जब भी कोई उसके मित्र को देखता, नसरूदीन के मन में चोट लगती कि कपड़े मेरे है और देखा मित्र जा रहा है। फिर अपने को समझाता कि कपड़े क्या किसी के होते है, में तो शरीर तक को अपना नहीं मानता तो कपड़े को अपना क्या मानना है, इसमें क्या हर्ज हो गया है।

समझाता-बुझाता अपने मित्र के घर पहुंचा। भीतर जाकर जैसे ही अन्दर गया, परिवार के लोगों की नजरें उसके मित्र के कपड़ों पर अटक गई। फिर उसे चोट लगी, ईर्ष्या मालूम हुई कि मेरे ही कपड़े और मैं ही उसके सामने दीन हीन लग रहा हूं। बड़ी भूल हो गई। फिर अपने को समझाया फिर अपने मन को दबाया।

घर के लोगों ने पूछा की ये कौन है, नसरूदीन ने परिचय दिया। कहा, मेरे मित्र है बचपन के बहुत अद्‌भुत व्यक्ति है। जमाल इनका नाम है। रह गये कपड़े, सो मेरे है।

घर के लोग बहुत हैरान हुए। मित्र भी हैरान हुआ। नसरूदीन भी कहकर हैरान हुआ। सोचा भी नहीं था कि ये शब्द मुहँ से निकल जायेंगे।

लेकिन जो दबाया जाता है, वह निकल जाता है। जो दबाओ, वह निकलता है; जो सप्रेम करो, वह प्रकट होगा। इसलिए भूल कर भी गलत चीज न दबाना। अन्यथा सारा जीवन गलत चीज की अभिव्यक्ति बन जाता है।

वह बहुत घबरा गया। सोचा भी नहीं था कि ऐसा मुंह से निकल जाएगा। मित्र भी बहुत हतप्रभ रह गया। घर के लोग भी सोचने लगे। यह क्या बात कही। बाहर निकल कर मित्र ने कहा, अब मैं तुम्हारे साथ दूसरे घर न जाऊँगा। यह तुमने क्या बात कहीं।

नसरूदीन की आंखों में आंसू आ गये। क्षमा मांगने लगा। कहने लगा भूल हो गई। जबान पलट गई। लेकिन जबान कभी नहीं पलटती है।

ध्यान रखना, जो भी तर दबा हो वह कभी भी जबान से निकल जाता है। जबान पलटती कभी नहीं।

तो वह कहने लगा क्षमा कर दो, अब ऐसी भूल न होगी। कपड़े में क्या रखा है। लेकिन कैसे निकल गई ये बात,मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि कपड़े किसके है।

लेकिन आदमी वहीं नहीं कहता, जो सोचता है, कहता कुछ और है सोचता कुछ और है।

कहता था मैंने तो कुछ सोचा भी नहीं, कपड़े का तो मुझ ख्याल भी नहीं आया। यह बात कैसे निकल गई। जब कि घर से चलने में और घर तक आने में सिवाय कपड़े के उसको कुछ भी ख्याल नहीं आया था।

आदमी बहुत बेईमान हे। जो उसके भीतर ख्याल आता है। कभी कहता भी नहीं। और जो बहार बताता है, वह भीतर बिलकुल नहीं होता है। आदमी सरासर झूठ है।

मित्र ने कहां—मैं चलता हूं तुम्हारे साथ लेकिन अब कपड़े की बात न उठाना। नसरूदीन ने कहा, कपड़े तुम्हारे ही हो गये। अब मैं वापस पहनूंगा भी नहीं। कपड़े में क्या रखा है।

कह तो वह रहा था कि कपड़े में क्या रखा है, लेकिन दिखाई पड़ रहा था कि कपड़े में ही सब कुछ रखा है। वे कपड़े बहुत सुंदर थे। वे मित्र बहुत अद्भुत मालूम पड़ रहा था। फिर चले रास्ते पर। और नसरूदीन फिर अपने को समझाने लगा की कपड़े दे ही दूँगा मित्र को। लेकिन जितना समझता था, उतना ही मन कहता था कि एक बार भी तो पहने नहीं। दूसरे घर तक पहुंचे,संभलकर संयम से।

संयमी आदमी हमेशा खतरनाक होता हे। क्योंकि संयमी का मतलब होता है कि उसने कुछ भीतर दबा रखा है। सच्चा आदमी सिर्फ सच्चा आदमी होता है। उसके भीतर कुछ भी दबा नहीं रहता है। संयमी आदमी के भीतर हमेशा कुछ दबा होता है। जो ऊपर से दिखाई देता है। ठीक उलटा उसके भीतर दिखाई दबा होता है। उसी को दबाने की कोशिश में वह संयमी हो जाता है। संयमी के भीतर हमेशा बारूद है, जिसमें कभी भी आग लग जाये तो बहुत खतरनाक है। और चौबीस घंटे दबाना पड़ता है उसे, जो दबाया गया है। उसे एक क्षण को भी फुरसत दी, छुट्टी की वह बहार आ जायेगा। इस लिए संयमी आदमी को अवकाश कभी नहीं होता। चौबीस घंटे जब तक जागता है। नींद में बहुत गड़बड़ हो जाती हे। सपने में सब बदल जाता है। और जिसको दबाया है वह नींद में प्रकट होने लगता है। क्योंकि नींद में संयम नहीं चलता। इसीलिए संयमी आदमी नींद में डरता है। आपको पता है, संयमी आदमी कहता है क्या सोना। इसके अलावा उसका कोई कारण नहीं है। नींद तो परमात्मा का अद्भुत आशीर्वाद है। लेकिन संयमी आदमी नींद से डरता है। क्योंकि जो दबाया है, वह नींद में धक्के मारता है। सपने बनकर आता है।

किसी तरह संयम साधना करके, बेचारा नसरूदीन उसी दूसरे मित्र के घर में घूसा। दबाये हुए मन को। सोच रहा है कि कपड़े मेरे नहीं है। मित्र के ही है। लेकिन जितना वह कह रहा है कि मेरे नहीं है, मित्र के ही है। उतने ही कपड़े उसे अपने मालुम पड़ रहे है।

इनकार बुलावा है। मन में भीतर 'ना' का मतलब है, 'हां' होता है। जिस बात को तुमने कहा 'नहीं' मन कहेगा हां यही।

मन कहने लगा कौन कहता है, कौन कहता है कि कपड़े मेरे नहीं है? और नसरूदीन की ऊपर की बुद्धि समझाने लगी कि नहीं, कपड़े तो मैंने दे दिये मित्र को। जब वे भीतर घर में गये, तब नसरूदीन को देखकर कोई समझ भी नहीं सकता था। वह भीतर कपड़े से लड़ रहा है। घर में मित्र मौजूद था, उसकी सुंदर पत्नी मिली। उसकी आंखें एक दम अटक गई मित्र के उपर। नसरूदीन को फिर धक्का लगा। उस सुंदर स्त्री ने उसे भी कभी इतने प्यार से नहीं देखा था। पूछने लगी ये कौन है, कभी देखा नहीं इन्हें। नसरूदीन ने सोचा, इस दुष्ट को कहां से साथ ले आया। जो देखो इसको देखता है। और पुरूषों के देखने तक तो गनीमत थी। लेकिन सुंदर स्त्रियां भी उसी को देख रही है। फिर तो और भी अधिक मुसीबत हो गई नसरूदीन के मन में। प्रकट में कहा, मेरे मित्र है, बचपन के साथी है। बहुत अच्छे आदमी है। रह गये कपड़े सो उन्हीं के है, मेरे नहीं है।

लेकिन कपड़े उन्हीं के थे तो कहने की जरूरत क्या थी। कह गया तब पता चला कि भूल हो गई।

भूल का नियम है कि वह हमेशा अतियों पर होती है। एक्सट्रीम से बचो तो दूसरे एक्सट्रीम पर हो जाती है। भूल घड़ी के पैंडुलम की तरह चलती है। एक कोने से दूसरे कोने पर जाती है। बीच में नहीं रुकती। भोग से जायेगी तो एकदम त्याग पर चली जायेगी। एक बेवकूफी से छूटी दूसरी बेवकूफी पर पहुंच जायेगी। जो ज्यादा भोजन से बचेगा, वह उपवास करेगा। और उपवास ज्यादा भोजन से भी बदतर हे। क्योंकि ज्यादा भोजन भी आदमी दो एक बार कर सकता है। लेकिन उपवास करने वाला आदमी दिन भर मन ही मन भोजन करता है। वह चौबीस घंटे भोजन करता रहता है।

एक भूल से आदमी का मन बचता है तो दूसरी भूल पर चला जाता है। अतियों पर वह डोलता है। एक भूल की थी कि कपड़े मेरे है। अब दूसरी भूल हो गई कि कपड़े उसी के है, तो साफ हो जाता है कि कपड़े उसके बिलकुल नहीं है।

और बड़े मजे की बात है कि जोर से हमें वही बात कहनी पड़ती है, जो सच्ची नहीं होती है। अगर तुम कहो कि मैं बहुत बहादुर आदमी हूं तो समझ लेना कि तुम पक्के नंबर के कायर हो।

अभी हिंदुस्तान पर चीन का हमला हुआ। सारे देश में कवि हो गये, जैसे बरसात में मेंढक पैदा हो जाते है। 'हम सोये हुए शेर है, हमें मत छेड़ों।' कभी सोये हुए शेर ने कविता की है कि हमको मत छेड़ों, कभी सोये हुऐ शेर को छेड़ कर देखो तो पता चल जाएगा। कि छेड़ने का क्या मतलब होता है। लेकिन हमारा पूरा मुल्क कहने ला कि हम सोये हुऐ शेर है। हम ऐसा कर देंगे,वैसा कर देंगे। चीन लाखों मील दबा कर बैठ गया है और हमारे सोये शेर फिर से सो गये है। कविता बंद हो गई है। यह शेर होने का ख्याल शेरों को पैदा नहीं होता। वह कायरों को पैदा होता है। शेर-शेर होता है। चिल्ला चिल्लाकर कहने की उसे जरूरत नहीं होती।

कह तो दिया नसरूदीन ने कि कपड़े—कपड़े इन्हीं के है। लेकिन सुन कर वह स्त्री तो हैरान हुई। मित्र भी हैरान हुआ कि फिर वही बात।

बाहर निकल कर उसे मित्र ने कहा कि क्षमा करो, अब मैं लौट जाता हूं। गलती हो गई है कि तुम्हारे साथ आया। क्या तुम्हें कपड़े ही दिखाई पड़ रहे है।

नसरूदीन ने कहा, मैं खुद भी नहीं समझ पाता। आज तक जिंदगी में कपड़े मुझे दिखाई नहीं पड़े। यह पहला ही मौका है। क्या हो गया मुझे। मेरे दिमाग में क्या गड़बड़ हो गई। पहले एक भूल हो गई थी। अब उससे उलटी भूल हो गई। अब मैं कपड़ों की बात ही नहीं करूंगा। बस एक मित्र के घर और मिलना है फिर घर चल कर आराम से बैठे गे। और एक मौका मुझे दे दो। नहीं तो जिंदगी भी लिए अपराध मन में रहेगा कि मैंने मित्र के साथ कैसा दुर्व्यवहार किया।

मित्र साथ जाने को राज़ी हो गया। सोचा था अब और क्या करेगा भूल। बात तो खत्म हो ही गई हे। दो ही बातें हो सकती थी। और दोनों बातें हो गई है। लेकिन उसे पता न था भूल करने वाले बड़े इनवैटिव होते है। नयी भूल ईजाद कर लेते है। शायद आपको भी पता न हो।

वे तीसरे मित्र के घर गये। अब की बार तो नसरूदीन अपनी छाती को दबाये बैठा है कि कुछ भी हो जाये, लेकिन कपड़ों की बात न निकालूंगा।

जितने जोर से किसी चीज को दबाओ, उतने जोर से वह पैदा होनी शुरू होती है। किसी चीज को दबाना उसे शक्ति देने का दूसरा नाम है। दबाओ तो और शक्ति मिलती है उसे। जितने

जोर से आप दबाते है उस जोर में जो ताकत आपकी लगती है वह उसी में चली जाती है। जिस को आप दबाते हो। ताकत मिल गई उसे।

अब वह दबा रहा है और पूरे वक्त पा रहा है कि मैं कमजोर पड़ता जा रहा हूं। कपड़े मजबूत होते जा रहे है। कपड़े जैसी फिजूल चीज भी इतनी मजबूत हो सकती है। कि नसरूदीन जैसा ताकतवर आदमी हारे जा रहा है उसके सामने। जो किसी चीज से न हारा था, आज उसे साधारण से कपड़े हराये डालते है। वह अपनी पूरी ताकत लगा रहा है। लेकिन उसे पता नहीं है कि पूरी ताकत हम उसके खिलाफ लगाते है, जिससे हम भयभीत हो जाते है। जिससे हार जाते है, उससे हम कभी नहीं जीत सकते।

ताकत से नहीं जीतना है, अभय से जीतना है, 'फियरालेसनेस' से जीतना है। बड़े से बड़ा ताकतवर हार जायेगा। अगर भीतर भय हो तो। ध्यान रहे हम दूसरे से कभी नहीं हारते, अपने ही भय से हारते है। कम से कम मानसिक जगत में तो यह पक्का है कि दूसरा हमें कभी नहीं हरा सकता,हम हमारा भय ही हराता है।

नसरूदीन जितना भयभीत हो रहा है, उतनी ही ताकत लगा रहा है। और वह जितनी ताकत लगा रहा है, उतना भयभीत हुआ जा रहा है। क्योंकि कपड़े छूटते ही नहीं। वे मन में बहुत चक्कर काट रहे है। तीसरे मकान के भीतर घुसा है। लगता है वह होश में नहीं है। बेहोश है। उसे न दीवालें दिख रही है, न घर के लोग दिखायी पड़ रहे हे। उसे केवल वहीं कोट पगड़ी दिखाई पड़ रही है। मित्र भी खो गया है। बस कपड़े है और वह हे। हालांकि ऊपर से किसी को पता नहीं चलता है। जिस घर में गया, फिर आँख टिक गयीं उसके मित्र के कपड़ों पर। पूछा गया ये कौन है? लेकिन नसरूदीन जैसे बुखार में है। वह होश में नहीं है।

दमन करने वाले लोग हमेशा बुखार में जीते है। कभी स्वस्थ नहीं होते। सप्रेशन जो है, वह मेंटल फिवर है। दमन जो है। वह मानसिक बुखार है।

दबा लिया है और बुखार पकड़ा हुआ है। हाथ पैर कांप रहे है उसके। वह अपने हाथ पैर रोकने की बेकार कोशिश कर रहा है। जितना रोकता है वह उतने कांपते जा रहे है। कौन है यह?....यह तो अब उसे खुद भी याद नहीं आ रहा है। कौन है यह, शायद कपड़े है, सिर्फ कपड़े। साफ मालूम पड़ रहा है। कि कपड़े है लेकिन यह कहना नहीं है। लगा जैसे बहुत मुश्किल में पड़ गया है। उसे याद नहीं आ रहा कि क्या कहना है। फिर बहुत मुश्किल से कहां मेरे बचपन का मित्र है, नाम है फला। और रह गये कपड़े, सो कपड़े की तो बात ही नहीं करना है। वे किसी के भी हो, उनकी बात नहीं उठानी है।

लेकिन बात उठ गई, जिसकी बात न उठानी हो उसी की बात ज्यादा उठती है।

ये छोटी सी कहानी क्यों कहीं मैंने? सेक्स की बात नहीं उठानी है और उसकी ही बात चौबीस घंटे उठती है। नहीं किसी से बात करना है जो फिर अपने से ही बात चलती है। न करें दूसरे से तो खुद ही करनी पड़ेगी बात अपने आप से। और दूसरे से बात करने में राहत भी मिल सकती है। खुद से बात करने में कोई राहत भी नहीं है। कोल्हू के बैल की तरह अपने भीतर ही घूमते रहो। सेक्स की बात नहीं करना है, उसकी बात ही नहीं उठानी है। मां अपनी बेटी के सामने नहीं उठाती। बेटा आपने बाप के सामने नहीं उठाता। मित्र-मित्र के सामने नहीं उठाते। क्योंकि उठानी ही नहीं है बात। जो उठाते है वे अशिष्ट है। जबकि चौबीस घंटे सबके मन में ही बात चलती है।

सेक्स उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि बात न उठाने से महत्वपूर्ण हो गया है। सेक्स उतना महत्वपूर्ण बिल्कुल नहीं है जितना कि हम समझ रहे है उसे।

लेकिन किसी भी व्यर्थ की बात को उठाना बंद कर दो उसे तो वह बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है। इस दरवाजे पर एक तख्ती लगा दें कि यहां झांकना मना है। और यहां झांकना बड़ा महत्वपूर्ण हो जायेगा। फिर चाहे आपको यूनिवर्सिटी में कुछ भी हो रहा हो, भले ही आइंस्टीन गणित पर भाषण दे रहा हो। बह सब बेकार है, यह तख्ती महत्वपूर्ण हो जायेगी। यहीं झांकने को बार-बार मन करेगा। हर विद्यार्थी यहीं चक्कर लगाने लगेगा। लड़के जरा जोर से लगायेंगे, लड़कियां जरा धीरे से।

कोई बुनियादी फर्क नहीं है आदमी-आदमी में।

मन में भी होगा कि क्या है इस तख्ती के भीतर,यह तख्ती एकदम अर्थ ले लगी। हां कुछ जो अच्छे लड़के-लड़कियां नहीं है, वे आकर सीधा झांकने लगेंगे। वही बदनामी उठायेगे कि ये अच्छे लोग नहीं है। तख्ती जहां लगी थी कि नहीं झांकना है वहीं झांक रहे हे। जो भद्र जन है, सज्जन है, अच्छे घर के या इस तरह के वहम जिनके दिमाग में है, वह उधर से तिरछी आंखें किए हुए निकल जायेगे, और तिरछी आंखें से देखते ही रहेगें तख्ती को। और तिरछी आँख से जो चीज दिखाई पड़ती है, वह खतरनाक हो जाती है।

फिर पीडित जन जो वहां से तिरछी आंखें किए हुए निकल जायेंगे वह इसके बदला लेंगे। किससे, जो झांक रहे थे उनसे। गालियां देंगे उनको कि बुरे लोग है। अशिष्ट है, सज्जन नहीं है, साधु नहीं है। और इस तरह मन में सांत्वना कंसोलेशन जुटायेंगे कि हम अच्छे आदमी है, इसलिए हमने झाँकर नहीं देखा। लेकिन झाँकर देखना तो जरूर था, यह मन कहे चला जायेगा। फिर सांझ होते-होते अँधेरा घिरते-घिरते वे आयेंगे। क्लास में बैठकर पढ़ेंगे,तब भी तख्ती दिखाई पड़ेगी, किताब नहीं। लेबोरेटरी में ऐक्सपैरिमैंट करते होंगे और तख्ती बीच-बीच में आ जायेगी। सांझ तक वह आ जायेगी देखना। आना ही पड़ेगा

–ओशो

संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन—6

युवक और यौन,

बड़ौदा,विश्वविद्यालय, बड़ौदा।

संभोग से समाधि की और—25

Posted on मार्च 11, 2011by sw anand prashad

संभोग से समाधि की ओर--ओशो

युवक और यौन—

आदमी के मन का नियम उलटा है। इस नियमों का उलटा नहीं हो सकता है। हां कुछ जो बहुत ही कमजोर होंगे, वह शायद नहीं आ पायेंगे तो रात सपने में उनको भी वहां आना पड़ेगा। मन में उपवाद नहीं मानते है। जगत के किसी नियम में कोई अपवाद नहीं होता। जगत के नियम अत्यंत वैज्ञानिक है। मन के नियम भी उतने ही वैज्ञानिक हे।

यह जो सेक्स इतना महत्वपूर्ण हो गया है वर्जना के कारण। वर्जना की तख्ती लगी है। उस वर्जना के कारण यह इतना महत्वपूर्ण हो गया है। इसने सारे मन को घेर लिया है। सारा मन सेक्स के इर्द-गिर्द घूमने लगाता है।

फ्रायड ठीक कहता है कि मनुष्य का मन सेक्स के आस पास ही घूमता है। लेकिन वह यह गलत कहता है कि सेक्स महत्वपूर्ण है, इसलिए घूमता है।
नहीं, घूमने का कारण है, वर्जना इनकार, विरोध, निषेध। घूमने का कारण है हजारों साल की परम्परा। सेक्स को वर्जिन, गर्हित,निंदित सिद्ध करने वाली परम्परा इसके लिए जिम्मेदार है।

सेक्स को इतना महत्वपूर्ण बनाने वालों में साधु, महात्माओं का हाथ है। जिन्होंने तख्ती लटकाई है वर्जना की।

यह बड़ा उलटा मालूम पड़ेगा। लेकिन यह सत्य है। और कहना जरूरी हे कि मनुष्यजाति को सेक्सुअलिटी की, कामुकता की तरफ ले जाने का काम महात्माओं ने ही किया है। जितने जोर से वर्जना लगाई है उन्होंने, आदमी उतने जोर से आतुर होकर भागने लगा है। इधर वर्जना लगा दी। उधर उसका परिणाम यह हुआ कि सेक्स आदमी की रग-रग से फूट कर निकल पड़ा है। थोड़ी खोजबीन करो, उपर की राख हटाओं, भीतर सेक्स मिलेगा। उपन्यास, कहानी, महान से महान साहित्यकार की जरा राख झाड़ों। भीतर सेक्स मिलेगा। चित्र देखो मूर्ति देखो सिनेमा देखो, सब वही।

और साधु संत इस वक्त सिनेमा के बहुत खिलाफ है। शायद उन्हें पता नहीं कि सिनेमा नहीं था तो भी आदमी यही सब करता था। कालिदास के ग्रंथ पढ़ो,कोई फिल्म इतनी अश्लील नहीं बन सकती। जितने कालिदास के वचन है। उठाकर देखें पुराने साहित्य को, पुरानी मूर्तियों को, पुराने मंदिरों को। जो फिल्म में है। वह पत्थरों में खुदा मिलेगा। लेकिन उनसे आंखे नहीं खुलती हमारी। हम अंधे की तरह पीछे चले जाते है। उन्हीं लकीरों पर।

सेक्स जब तक दमन किया जायेगा और जब तक स्वस्थ खुले आकाश में उसकी बात न होगी और जबतक एक-एक बच्चे के मन में वर्जना की तख्ती नही हटेगी। तब तक दुनिया सेक्स के औब्सैशन से मुक्त नहीं हो सकती। तब तक सेक्स एक रोग की तरह आदमी को पकड़े रहेगा। वह कपड़े पहनेगा तो नजर सेक्स पर होगी। खाना खायेगा तो नजर सेक्स पर होगी। किताब पढ़ेगा तो नजर सेक्स पर होगी। गीत गायेगा तो नजर सेक्स पर होगी। संगीत सुनेगा तो नजर सेक्स पर होगी। नाच देखेगा तो नजर सेक्स पर होगी। सारी जिंदगी उसकी सेक्स के आसपास घूमेगा।

अनातोली फ्रांस मर रहा था। मरते वक्त एक मित्र उसके पास गया और अनातोली जैसे अदभुत साहित्यकार से उसने पूछा कि मरते वक्त तुमसे पूछता हूं, अनातोली जिंदगी में सबसे महत्वपूर्ण क्या है? अनातोली ने कहा, जरा पास आ जाओ, कान में ही बता सकता हूं। आस पास और भी लोग बैठे थे। मित्र पास आ गया। वह हैरान हुआ कि अनातोली जैसा आदमी, जो मकानों की चोटियों पर चढ़कर चिल्लाने का आदमी है। जो उसे ठीक लगा हमेशा कहता रहा। वह आज भी मरते वक्त इतना कमजोर हो गया है कि जीवन की सबसे महत्वपूर्ण बात बताने को कहता है कि पास आ जाओ। कान में कहूंगा। सुनो धीरे से कान में, मित्र पास सरक आया। अनातोली कान के पास होंठ ले गया। लेकिन कुछ बोला नहीं। मित्र ने कहा, बोलते क्यों नहीं? अनातोली कहां तुम समझ गये। अब बोलने की कोई जरूरत नहीं है।

ऐसा मजा है। और मित्र समझ गये और तुम भी समझ गये होगें। लेकिन हंसने की बात नहीं है। क्या ये पागल पन है? ये कैसे मनुष्य को पागलपन की और ले जा रहा है। दुनियां को पागलखाना बनाने की कोशिश की जा रही है।

इसका बुनियादी कारण यह है कि सेक्स को आज तक स्वीकार नहीं किया गया है। जिससे जीवन का जन्म होता है, जिससे जीवन के बीज फूटते है। जिससे जीवन में फूल आते है। जिससे जीवन की सारी सुगंध है, सारा रंग है। जिससे जीवन का सारा नृत्य है, जिसके आधार पर जीवन का पहिया घूमता है। उसको स्वीकार नहीं किया गया। जीवन के मौलिक आधार को अस्वीकार किया गया है। जीवन में जो केंद्रीय है परमात्मा जिसको सृष्टि का आधार बनाये हुए है—चाहे फूल हो, चाहे पक्षी हो, चाहे बीज हो, चाहे पौधे हो, चाहे मनुष्य हो—सेक्स जो कि जीवन के जीवन के जन्म का मार्ग है, उसको ही अस्वीकार कर दिया गया है।

उस अस्वीकृति को दो परिणाम हुए। अस्वीकार करते ही वह सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया। अस्वीकार करते ही वह सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो गया और मनुष्य के चित को उसने सब तरफ से पकड़ लिया है। अस्वीकार करते ही उसे सीधा जानने का कोई उपाय नहीं रहा। इसलिए तिरछे जानने के उपाय खोजने पड़े, जिनसे मनुष्य का चित विकृत और बीमार हो गया है। जिस चीज को सीधा जानने के उपाय न रह जायें और मन जानना चाहता हो,तो वह फिर गलत उपाय खोजने लग जाता है।

मनुष्य को अनैतिक बनाने में तथा कथित नैतिक लोगों का हाथ है। जिन लोगों ने आदमी को नैतिक बनाने की चेष्टा की है, दमन के द्वारा,वर्जना के द्वारा, उन लोगों ने सारी मनुष्य जाति को अनैतिक बना दिया है।

और जितना आदमी अनैतिक होता जा रहा है। उतनी ही वर्जना सख्त होती चली जाती है। वे कहते है। कि फिल्मों में नंगी तस्वीरें नहीं होनी चाहिए। वे कहते है, पोस्टरों पर नंगी तस्वीरे नहीं होनी चाहिए। वे कहते है किताब ऐसी होनी चाहिए। वे कहते है फिल्म में चुंबन लेते वक्त कितने इंच का फासला होना चाहिए। यह भी गवर्नमेंट तय करें। वे यह सब कहते है। बड़े अच्छे लोग हैं वे, इसलिए वे कहते है कि आदमी अनैतिक न हो जाये।

और उनकी ये सब चेष्टायें फिल्मों को और गंदा करती चली जाती है। पोस्टर और अश्लील होते चले जाते है। किताबें और गंदी होती चली जा रही है। हां, एक फर्क पड़ता है। किताब के भीतर कुछ रहता है, उपर कवर पर कुछ और रहता है। और अगर ऐसा नहीं रहता तो लड़का गीता खोल लेता है और गीता के अंदर दूसरी किताब रख लेता है। उसको पढ़ता है। बाइबिल पढ़ता है, अगर बाइबिल पढ़ता हो तो समझना भीतर कोई दूसरी किताब है। यह सब धोखा यह डिसेप्शन पैदा होता है वर्जना से।

विनोबा कहते है, तुलसी कहते है, अश्लील पोस्टर नहीं चाहिए। पुरूषोतम दास टंडन तो यहां तक कहते थे कि खजुराहो और कोणार्क के मंदिरों पर मिट्टी पोतकर उनकी प्रतिमाओं को ढंक देना चाहिए। कहीं आदमी इनको देखकर गंदा न हो जाये। और बड़े मजे की बात यह है कि तुम ढँकते चले जाओ इनको,हजार साल से ढाँक ही रहे हो। लेकिन इनसे आदमी गंदगी से मुक्त नहीं होता। गंदगी रोज-रोज बढ़ती चली जाती है।

मैं यह पूछना चाहता हूं, कि अश्लील किताब, अश्लील सिनेमा के कारण आदमी कामुक होता है या कि आदमी कामुक है, इसलिए अश्लील तस्वीर और पोस्टर चिपकाये जा रहा है। कौन है बुनियादी?

बुनियाद में आदमी की मांग है, अश्लील पोस्टर के लिए, इसलिए अश्लील पोस्टर लगता है और देखा जाता है। साधु संन्यासी भी देखते है। लेकिन देखने में एक फर्क रहता है। आप उसको देखते है और अगर आप पकड़ लिए जायेंगे देखते हुए तो समझा जायेगा कि यह आदमी गंदा है। और अगर कोई साधु संन्यासी मिल जाये, और आप उससे कहें कह आप क्यों देख रहे है। तो वह कहेगा कि हम तो निरीक्षण कर रहे है, स्टडी कर रहे है, कि किस तरह लोगों को अनैतिकता से बचाया जाये। इसलिए अध्यन कर रहे है। इतना फर्क पड़ेगा। बाकी कोई फर्क नहीं पड़ेगा। बल्कि आप बिना देखे निकल भी जायें। साधु संन्यासी बिना देखे कभी नहीं निकल सकते थे। क्योंकि उनकी वर्जना और भी ज्यादा है, उनका चित और भी वर्जित है।

एक संन्यासी मेरे पास आये। वे नौ वर्ष के थे, तब दुष्टों ने उनको दीक्षा दे दी। नौ वर्ष के बच्चे को दीक्षा देना कोई भले आदमी का काम हो सकता है। नौ वर्ष का बच्चा, बाप मर गया है उसका। संन्यासी को मौका मिल गया। उन्होंने उसको दीक्षा दे दी। अनाथ बच्चे के साथ कोई भी दुर्व्यवहार किया जा सकता था। उनको दीक्षा दे दी गई। वह आदमी नौ वर्ष की उम्र से बेचारा संन्यासी है। अब उनकी उम्र कोई पचास साल है। वह मेरे पास रुके थे। मेरी बात सुन कर उनकी हिम्मत जगी कि मुझे सच्ची बात कही जा सकती है। इस मुल्क में सच्ची बातें किसी से भी नहीं कहीं जा सकती है। सच्ची बातें कहना मत, नहीं तो फंस जाओगे। उन्होंने एक रात मुझसे कहा कि मैं बहुत परेशान हूं,सिनेमा के पास से निकलता हूं तो मुझे लगता है, अंदर पता नहीं क्या होता होगा? इतने लोग तो अंदर जाते है। इतनी क्यू लगाये खड़े रहते है। जरूर कुछ न कुछ बात तो होगी ही। हालांकि मंदिर में जब मैं बोलता हूं तो मैं कहता हूं कि सिनेमा जाने वाले नर्क में जायेंगे। लेकिन जिनको मैं कहता हूं नर्क जाओगे,वे नर्क की धमकी से भी नहीं डरते। और सिनेमा जाते है। मुझे लगता है जरूर कुछ बात होगी।

नौ साल का बच्चा था, तब साधु हो गया। नौ साल के बाद ही उनकी बुद्धि अटकी रह गयी। उसके आगे विकसित नहीं हुई। क्योंकि जीवन के अनुभव से उन्हें तोड़ दिया गया था। नौ

साल के बच्चे के भीतर जैसे भाव उठे कि सिनेमा के भीतर क्या हो रहा है। ऐसा उनके मन में उठता है लेकिन किससे कहें? मुझसे कहा, तो मैंने उनसे कहा कि सिनेमा दिखला दूँ आपको? वे बोले कि अगर दिखला दें तो बड़ी कृपा होगी। झंझट छूट जाये,यह प्रश्न मिट जाये। कि क्या होता है? एक मित्र को मैंने बुलवाया कि इनको ले जाओ। वह मित्र बोले कि मैं झंझट में नहीं पड़ता। कोई देख ले कि साधु को लाया हूं तो मैं झंझट में पड़ जाऊँगा। अंग्रेजी फिल्म दिखाने जरूर ले जा सकता हूं इनको। क्योंकि वह मिलिट्री एरिया में है। और उधर साधुओं को मानने वाले भक्त भी न होंगे। वहां मैं इनको ले जा सकता हूं। पर वे साधु अंग्रेजी नहीं जानते थे। फिर भी कहने लगे, कि कोई हर्ज नहीं कम से कम देख तो लेंगे कि क्या मामला है।

यह चित है और यहीं चित वहां गाली देगा। मंदिर में बैठकर कि नर्क जाओगे। अगर अश्लील पोस्टर देखोगें। यह बदला ले रहा है। वह तिरछा देखकर निकल गया आदमी बदला ले रहा है। जिसने सीधा देखा उनसे बदला ले रहा है। लेकिन सीधा देखने वाले मुक्त भी हो सकते है। तिरछा देखने वाले मुक्त कभी नहीं होते। अश्लील पोस्टर इस लिए लग रहे है। अश्लील किताबें इसलिए छप रही है। लड़के-बूढे-नौजवान अशलील गालियां बक रहे है। अशलील कपड़े इसलिए पहने जा रहे है। क्योंकि तुमने जो मौलिक था और स्वाभाविक था उसे अस्वीकार कर दिया है। उसकी अस्वीकृति के परिणाम में यह सब गलत रास्ते खोज जा रहे है।

क्रमश: अगले लेख में...........

–ओशो
संभोग से समाधि की ओर,

प्रवचन–6

युवक और यौन,

बड़ौदा,विश्वविद्यालय, बड़ौदा।

संभोग से समाधि की और—26

Posted on मार्च 13, 2011by sw anand prashad

युवक और यौन—

जिस दिन दुनिया में सेक्स स्वीकृत होगा, जैसा कि भोजन, स्नान स्वीकृत है। उस दिन दुनिया में अश्लील पोस्टर नहीं लगेंगे। अश्लील किताबें नहीं छपेगी। अश्लील मंदिर नहीं बनेंगे। क्योंकि जैसे-जैसे वह स्वीकृति होता जाएगा। अश्लील पोस्टरों को बनाने की कोई जरूरत नहीं रहेगी।

अगर किसी समाज में भोजन वर्जित कर दिया जाये, की भोजन छिपकर खाना। कोई देख न ले। अगर किसी समाज में यह हो कि भोजन करना पाप है, तो भोजन के पोस्टर सड़कों पर लगने लगेंगे फौरन। क्योंकि आदमी तब पोस्टरों से भी तृप्ति पाने की कोशिश करेगा। पोस्टर से तृप्ति तभी पायी जाती है। जब जिंदगी तृप्ति देना बंद कर देती है। और जिंदगी में तृप्ति पाने का द्वार बंद हो जाता है।

वह जो इतनी अश्लीलता और कामुकता और सेक्सुअलिटी है, वह सारी की सारी वर्जना का अंतिम परिणाम है।
मैं युवकों से कहना चाहूंगा कि तुम जिस दुनिया को बनाने में संलग्न हो, उसमें सेक्स को वर्जित मत करना। अन्यथा आदमी और भी कामुक से कामुक होता चला जाएगा। मेरी यह बात देखने में बड़ी उलटी लगेगी। अख़बार वाले और नेतागण चिल्ला-चिल्ला कर घोषणा करते है कि मैं लोगों में काम का प्रचार कर रहा हूं। सच्चाई उलटी है के मैं लोगों को काम से मुक्त करना चाहता हूं। और प्रचार वे कर रहे है। लेकिन उनका प्रचार दिखाई नहीं पड़ता। क्योंकि हजारों साल की परंपरा से उनकी बातें सुन-सुन कर हम अंधे और बहरे हो गये है। हमें ख्याल ही रहा कि वे क्या कह रहे है। मन के सूत्रों का, मन के विज्ञान का कोई बोध ही नहीं रहा। कि वे क्या कर रहे है। वे क्या करवा रहे है। इसलिए आज जितना कामुक आदमी भारत में है। उतना कामुक आदमी पृथ्वी के किसी कोने में नहीं है।

मेरे एक डाक्टर मित्र इंग्लैण्ड के एक मेडिकल कांफ्रेंस में भाग लेने गये थे। व्हाइट पार्क में उनकी सभा होती थी। कोई पाँच सौ डाक्टर इकट्ठे थे। बातचीत चलती थी। खाना पीना चलता था। लेकिन पास की बेंच पर एक युवक और युवती गले में हाथ डाले अत्यंत प्रेम में लीन आंखे बंद किये बैठे थे। उन मित्र के प्राणों में बेचैनी होने लगी। भारतीय प्राण में चारों

तरफ झांकने का मन होता है। अब खाने में उनका मन न रहा। अब चर्चा में उनका रस न रहा। वे बार-बार लौटकर उस बेंच कीओर देखने लगे। पुलिस क्या कर रही है। वह बंद क्यों नहीं करती ये सब। ये कैसा अश्लील देश है। यह लड़के और लड़की आँख बंद किये हुए चुपचाप पाँच सौ लोगों की भीड़ के पास ही बेंच पर बैठे हुए प्रेम प्रकट कर रहे है। कैसे लोग है यह क्या हो रहा है। यह बर्दाश्त के बाहर है। पुलिस क्या कर रही है। बार-बार वहां देखते।

पड़ोस के एक आस्ट्रेलियन डाक्टर ने उनको हाथ के इशारा किया ओर कहा, बार-बार मत देखिए, नहीं तो पुलिसवाला आपको यहां से उठा कर ले जायेगा। वह अनैतिकता का सबूत है। यह दो व्यक्तियों की निजी जिंदगी की बात है। और वे दोनों व्यक्ति इसलिए पाँच सौ लोगों की भीड़ के पास भी शांति से बैठे है, क्योंकि वे जानते है कि यहां सज्जन लोग इकट्ठे है, कोई देखेगा नहीं। किसी को प्रयोजन भी क्या है। आपका यह देखना बहुत गर्हित है, बहुत अशोभन है, बहुत अशिष्ट है। यह अच्छे आदमी का सबूत नहीं है। आप पाँच सौ लोगों को देख रहे है कोई भी फिक्र नहीं कर रहा। क्या प्रयोजन है किसी से। यह उनकी अपनी बात है। और दो व्यक्ति इस उम्र में प्रेम करें तो पाप क्या है? और प्रेम में वह आँख बंद करके पास-पास बैठे हों तो हर्ज क्या है? आप परेशान हो रहे है। न तो कोई आपके गले में हाथ डाले हुए है, न कोई आपसे प्रेम कर रहा है।

वह मित्र मुझसे लौटकर कहने लगे कि मैं इतना घबरा गया किये कैसे लोग है। लेकिन धीरे-धीरे उनकी समझ में यह बात पड़ी की गलत वे ही थे।

हमारा पूरा मुल्क ही एक दूसरे घर में दरवाजे के होल बना कर झाँकता रहता है। कहां क्या हो रहा है। कौन क्या कर रहा है? कौन जा रहा है? कौन किसके साथ है? कौन किसके गले में हाथ डाले है? कौन किसका हाथ-हाथ में लिए है? क्या बदतमीजी है, कैसी संस्कारहीनता है। यह सब क्या है? यह क्यों हो रहा है? यह हो रह है इसलिए कि भीतर वह जिसको दबाता है, वह सब तरफ से दिखाई पड़ रहा है। वही दिखाई पड़ रहा है।

युवकों से मैं कहना चाहता हूं कि तुम्हारे मां बाप, तुम्हारे पुरखे,तुम्हारी हजारों साल की पीढ़ियाँ सेक्स से भयभीत रही है। तुम भयभीत मत रहना। तुम समझने की कोशिश करना उसे। तुम पहचानने की कोशिश करना। तुम बात करना। तुम सेक्स के संबंध में आधुनिक जो नई खोज हुई है उनको पढ़ना, चर्चा करना और समझने की कोशिश करना कि सेक्स क्या है। क्या है सेक्स का मैकेनिज्म? उसका यंत्र क्या है? उसका यंत्र क्या है? क्या है उसकी आकांक्षा? क्या है उसकी प्यास? क्या है प्राणों के भीतर छिपा हुआ राज? इसको समझना। इसकी सारी की सारी वैज्ञानिकता को पहचाना। उससे भागना, 'एस्केप' मत करना। आँख बंद मत करना। और तुम हैरान हो जाओगे कि तुम जितना समझोगे, उतने ही मुक्त हो जाओगे।

तुम जितना समझोगे, उतने ही स्वस्थ हो जाओगे। तुम जितना सेक्स के फैक्ट को समझ लोगे, उतना ही सेक्स के 'फिक्शन' से तुम्हारा छुटकारा हो जायेगा।

तथ्य को समझते ही आदमी कहानियों से मुक्त हो जाता है। और जो तथ्य से बचता है, वह कहानियों में भटक जाता है।

कितनी सेक्स की कहानियां चलती हे। और कोई मजाक ही नहीं है हमारे पास, बस एक ही मजाक है कि सेक्स की तरफ इशारा करें और हंसे। हद हो गई। तो जो आदमी सेक्स की तरफ इशारा करके हंसता है, वह आदमी बहुत ही क्षुद्र है। सेक्स की तरफ इशारा करके हंसने का क्या मतलब है? उसका एक ही मतलब है कि आप समझते ही नहीं।

बच्चे तो बहुत तकलीफ में है कि उन्हें कौन समझायें,किससे वे बातें करें कौन सारे तथ्यों को सामने रखे। उनके प्राणों में जिज्ञासा है, खोज है, लेकिन उसको दबाये चले जाते हे। रोके चले जाते है। उसके दुष्परिणाम होते है। जितना रोकते है, उतना मन वहां दौड़ने लगता है और उस रोकने और दौड़ने में सारी शक्ति और ऊर्जा नष्ट हो जाती है।

यह मैं आपसे कहना चाहता हूं कि जिस देश में भी सेक्स की स्वस्थ रूपा से स्वीकृति नहीं होती, उस देश की प्रतिभा का जन्म नहीं होता।

पश्चिम में तीन वर्षो में जो जीनियस पैदा हुआ है, जो प्रतिभा पैदा हुई है। वह सेक्स के तथ्य की स्वीकृति से पैदा हुई है।

जैसे ही सेक्स स्वीकृत हो जाता है। वैसे ही जो शक्ति हमारी लड़ने में नष्ट होती है, वह शक्ति मुक्त हो जाती है। वह रिलीज हो जाती है। और उस दिन शक्ति को फिर हम रूपांतरित करते है—पढ़ने में खोज में, आविष्कार में, कला में, संगीत में,साहित्य में।

और अगर वह शक्ति सेक्स में ही उलझी रह जाये जैसा कि सोच लें कि वह आदमी जो कपड़े में उलझ गया है—नसरूदीन, वह कोई विज्ञान के प्रयोग कर सकता था बेचारा। कि वह कोई सत्य का सृजन कर सकता था? कि वह कोई मूर्ति का निर्माण कर सकता था। वह कुछ भी कर सकता था। वह कपड़े ही उसके चारों और घूमते रहते है ओर वह कुछ भी नहीं कर

पाता है।

भारत के युवक के चारों तरफ सेक्स घूमता रहता है पूरे वक्त। और इस घूमने के कारण उसकी सारी शक्ति इसी में लीन और नष्ट हो जाती है। जब तक भारत के युवक की सेक्स

के इस रोग से मुक्ति नहीं होती, तब तक भारत के युवक की प्रतिभा का जन्म नहीं हो सकता। प्रतिभा का जन्म तो उसी दिन होगा, जिस दिन इस देश में सेक्स की सहज स्वीकृति हो जायेगी। हम उसे जीवन के एक तथ्य की तरह अंगीकार कर लेंगे—प्रेम से, आनंद से—निंदा से नहीं। और निंदा और घृणा का कोई कारण भी नहीं है।

सेक्स जीवन का अद्‌भुत रहस्य है। वह जीवन की अद्‌भुत मिस्ट्रि हे। उससे कोई घबरानें की,भागने की जरूरत नहीं है। जिस दिन हम इसे स्वीकार कर लेंगे, उस दिन इतनी बड़ी उर्जा मुक्त होगी भारत में कि हम न्यूटन पैदा कर सकेंगे,हम आइंस्टीन पैदा कर सकेंगे। उस दिन हम चाँद-तारों की यात्रा करेंगे। लेकिन अभी नहीं। अभी तो हमारे लड़कों को लड़कियों के स्कर्ट के आस पास परिभ्रमण करने से ही फुरसत नहीं है। चाँद तारों का परिभ्रमण कौन करेगा। लड़कियां चौबीस घंटे अपने कपड़ों को चुस्त करने की कोशिश करें या कि चाँद तारों का विचार करें। यह नहीं हो सकता। यह सब सेक्सुअलिटी का रूप है।

हम शरीर को नंगा देखना और दिखाना चाहते है। इसलिए कपड़े चुस्त होते चले जाते है।

सौंदर्य की बात नहीं है यह, क्योंकि कई बार चुस्त कपड़े शरीर को बहुत बेहूदा और भोंडा बना देते है। हां किसी शरीर पर चुस्त कपड़े सुंदर भी हो सकते है। किसी शरीर पर ढीले कपड़े सुंदर हो सकते है। और ढीले कपड़े की शान ही और है। ढीले कपड़ों की गरिमा और है। ढीले कपड़ों की पवित्रता और है।

लेकिन वह हमारे ख्याल में नहीं आयेगा। हम समझेंगे यह फैशन है, यह कला है, अभिरूचि है, टेस्ट है। नहीं "टेस्ट" नहीं है। अभी रूचि नहीं है। वह जो जिसको हम छिपा रहे है भीतर दूसरे रास्तों से प्रकट होने की कोशिश कर रहा है। लड़के लड़कियों का चक्कर काट रहे है। लड़कियां लड़कों के चक्र काट रही है। तो चाँद तारों का चक्कर कौन काटेगा। कौन जायेगा वहां? और प्रोफेसर? वे बेचारे तो बीच में पहरेदार बने हुए खड़े है। ताकि लड़के लड़कियां एक दूसरे के चक्कर न काट सकें। कुछ और उनके पास काम है भी नहीं। जीवन के और सत्य की खोज में उन्हें इन बच्चों को नहीं लगाना है। बस, ये सेक्स से बचे जायें,इतना ही काम कर दें तो उन्हें लगता है कि उनका काम पूरा हो गया।

यह सब कैसा रोग है, यह कैसा डिसीज्ड माइंड, विकृत दिमाग है हमारा। हम सेक्स के तथ्यों की सीधी स्वीकृति के बिना इस रोग से मुक्त नहीं हो सकते। यह महान रोग है।

इस पूरी चर्चा में मैंने यह कहने की कोशिश की है कि मनुष्य को क्षुद्रता से उपर उठना है। जीवन के सारे साधारण तथ्यों से जीवन के बहुत ऊंचे तथ्यों की खोज करनी है। सेक्स सब कुछ नहीं है। परमात्मा भी है दुनिया में। लेकिन उसकी खोज कौन करेगा। सेक्स सब कुछ

नहीं है इस दुनिया में सत्य भी है। उसकी खोज कौन करेगा। यहीं जमीन से अटके अगर हम रह जायेंगे तो आकाश की खोज कौन करेगा। पृथ्वी के कंकड़ पत्थरों को हम खोजते रहेंगे तो चाँद तारों की तरफ आंखे उठायेगा कौन?

पता भी नहीं होगा उनको जिन्होंने पृथ्वी की ही तरफ आँख लगाकर जिंदगी गुजार दी। उन्हें पता नहीं चलेगा कि आकाश में तारे भी हैं, आकाश गंगा भी है। रात्रि के सन्नाटे में मौन सन्नाटा भी है आकाश का। बेचारे कंकड़ पत्थर बीनने वाले लोग, उन्हें पात भी कैसे चलेगा कि और आकाश भी है। और अगर कभी कोई कहेगा कि आकाश भी है, चमकते हुए तारे भी है। तो वे कहेंगे सब झूठी बातचीत है, कोरी कल्पना है। सच में तो केवल पत्थर ही पत्थर है। हां कहीं रंगीन पत्थर भी होते है। बस इतनी ही जिंदगी है।

नहीं, मैं कहता हूं इस पृथ्वी से मुक्त होना है,ताकि आकाश दिखाई पड़ सके। शरीर से मुक्त होना है। ताकि आत्मा दिखाई पड़ सके। और सेक्स से मुक्त होना है, ताकि समाधि तक मनुष्य पहुंच सके। लेकिन उस तक हम नहीं पहुंच सकेंगे। अगर हम सेक्स से बंधे रह जाते है तो। और सेक्स से हम बंध गये है। क्योंकि हम सेक्स से लड़ रहे है।

लड़ाई बाँध देती है। समझ मुक्त कर देती है। अंडरस्टैंडिंग चाहिए समझ चाहिए।

सेक्स के पूरे रहस्य को समझो बात करो विचार करो। मुल्क में हवा पैदा करो कि हम इसे छिपायेंगा नहीं। समझेंगे। अपने पिता से बात करो,अपनी मां से बात करो। वैसे वे बहुत घबराये गे। अपने प्रोफेसर से बात करो। अपने कुलपति को पकड़ो और कहो कि हमें समझाओ। जिंदगी के सवाल है ये। वे भागेगे। वे डरे हुए लोग है। डरी हुई पीढ़ी से आयें है। उनको पता भी नहीं है। जिंदगी बदल गयी है। अब डर से काम नहीं चलेगा। जिंदगी का एन काउंटर चाहिए मुकाबला चाहिए। जिंदगी से लड़ने और समझने की तैयारी करो। मित्रों का सहयोग लो, शिक्षकों का सहयोग लो, मां-बाप का सहयोग लो।

वह मां गलत है, जो अपनी बेटी को और अपने बेटे को वे सारे राज नहीं बात जाती,जो उसने जाने। क्योंकि उसके बताने से बेटा और उसकी बेटी भूलों से बच सकती है। उसके न बताने उनसे भी उन्हीं भूलों को दोहराने की संभावना है। जो उसने खुद की होगी। बाप गलत है, जो अपने बेटे को अपनी प्रेम की और अपनी सेक्स की जिंदगी की सारी बातें नहीं बता देता। क्योंकि बता देने से बेटा उन भूलों से बच जायेगा। शायद बैटा ज्यादा स्वस्थ हो सकेगा। लेकिन वही बात इस तरह जीयेगा कि बेटे को पता चले कि उसने प्रेम ही नहीं किया। वह इस तरह खड़ा रहेगा। आंखे पत्थर की बनाकर कि उसकी जिंदगी में कभी कोई औरत इसे अच्छी लगी ही नहीं थी।

यह सब झूठ है। यह सरासर झूठ है। तुम्हारे बाप न भी प्रेम किया है। उनके बाप ने भी प्रेम किया है। सब बाप प्रेम करते रहे है। लेकिन सब बाप धोखा देते रहे है। तुम भी प्रेम करोगे। और बाप बनकर धोखा दोगे। यह धोखे की दुनिया अच्छी नहीं है। दुनिया साफ सीधी होनी चाहिए। जो बाप ने अनुभव किया है वह बेटे को दे जाये। जो मां ने अनुभव किया, वह बेटी को दे जाये। जो ईष्र्या उसने अनुभव कि है। जो प्रेम के अनुभव किये है। जो गलतियां उसने की है। जिन गलत रास्तों पर वह भटकी है और भ्रमि है। उस सबकी कथा को अपनी बेटी को दे जाये। जो नहीं दे जाते है, वे बच्चे का हित नहीं करते है। अगर हम ऐसा कर सके तो दुनिया ज्यादा साफ होगी।

हम दूसरी चीजों के संबंध में साफ हो गये है। शायद केमेस्ट्री के संबंध में कोई बात जाननी हो तो सब साफ है। फ़िज़िक्स के संबंध में कोई बात जाननी है तो सब साफ है। भूगोल के बाबत जाननी हो तो सब साफ है। नक्शे बने हुए है। लेकिन आदमी के बाबत साफ नहीं है। कहीं कोई नक्शा नहीं है। आदमी के बाबत सब झूठ है। दुनिया सब तरफ से विकसित हो रही है। सिर्फ आदमी विकसित नहीं हो रहा। आदमी के संबंध में भी जिस दिन चीजें साफ-साफ देखने की हिम्मत हम जुटा लेंगे। उस दिन आदमी का विकास निश्चित है।

यह थोड़ी बातें मैंने कहीं। मेरी बातों को सोचना। मान लेने की कोई जरूरत नहीं क्योंकि हो सकता है कि जो मैं कहूं बिलकुल गलत हो। सोचना, समझना, कोशिश करना। हो सकता है कोई सत्य तुम्हें दिखाई पड़े। जो सत्य तुम्हें दिखाई पड़ जायेंगा। वही तुम्हारे जीवन में प्रकार का दिया बन जायेगा।

ओशो
युवक और यौन,

बड़ौदा,विश्वविद्यालय, बड़ौदा

संभोग से समाधि की और—27

Posted on मार्च 15, 2011by sw anand prashad

प्रेम ओर विवाह--ओशो

प्रेम ओर विवाह–

मनुष्य की आत्मा, मनुष्य के प्राण निरंतर ही परमात्मा को पाने के लिए आतुर है। लेकिन किस मनुष्य को? कैसे परमात्मा को? उसका कोई अनुभव, उसका कोई आकार, उसकी कोई दिशा मनुष्य को ज्ञात नहीं है। सिर्फ एक छोटा सा अनुभव है, जो मनुष्य को ज्ञात है। और जो परमात्मा की झलक दे सकता है। वह अनुभव प्रेम का अनुभव है।

जिसके जीवन में प्रेम की कोई झलक नहीं है। उसके जीवन में परमात्मा के आने की कोई संभावना नहीं है।

न तो प्रार्थनाएं परमात्मा तक पहुंचा सकती है। न धर्म शास्त्र पहुंचा सकते है। न मंदिर मस्जिद पहुंचा सकते है। न कोई हिंदू और न मुसलमानों के, ईसाइयों के, पारसियों के संगठन पहुंचा सकते है।
मंदिर और मस्जिद तो प्रेम की ज्योति को बुझाने का काम करते है। जिन्हें हम धर्मगुरू कहते है। वे मनुष्य को मनुष्य से तोड़ने के लिए जहर फैलाते है। जिन्हें हम धर्मशास्त्र कहते है, वे घृणा और हिंसा के आधार और माध्यम बन गये है।

जो प्रेम परमात्मा तक पहुंचा सकता था, वह अत्यंत उपेक्षित होकर जीवन के रास्ते के किनारे अंधेरे में कहीं पडा रह गया। इसलिए पाँच हजार वर्षों से आदमी प्रार्थनाएं कर रहा है। भजन पूजन कर रहा है। मसजिदों और मंदिरों की मूर्तियों के सामने सिर टेक रहा है। लेकिन परमात्मा की कोई झलक मनुष्यता को उपलब्ध नहीं हो सकी। परमात्मा की कोई किरण मनुष्य के भीतर अवतरित नहीं हो सकी। कोरी प्रार्थनाएं हाथ में रह गयी है और आदमी रोज नीचे गिरता गया है। और रोज-रोज अंधेरे में भटकता गया है। आनंद के केवल सपने हाथ में रह गये है। सच्चाइयाँ अत्यंत दुःख पूर्ण होती चली गयी है। आज तो आदमी करीब-करीब ऐसी जगह खड़ा हो गया है, जहां उसे ख्याल भी लाना असंभव होता जा रहा है कि परमात्मा भी हो सकता है।

क्या आपने कभी सोचा है कि यह घटना कैसे घट गयी है? क्या नास्तिक इसके लिए जिम्मेदार है? या कि लोगों की आकांक्षाओं और अभीप्साएं परमात्मा की दिशा की तरफ जाना बंद हो गयी है। क्या वैज्ञानिक ओर भौतिकवादी लोगो ने परमात्मा के द्वार बंद कर दिये है?

नहीं परमात्मा के द्वार इसलिए बंद हो गये है कि परमात्मा का ही द्वार था–प्रेम और उस प्रेम की तरफ हमारा कोई ध्यान ही नहीं गया है। और भी अजीब और कठिन और आश्चर्य की बात यह हो गयी है कि तथाकथित धार्मिक लोगों ने मिल-जुलकर प्रेम की हत्या कर दी

और मनुष्य को जीवन में इस भांति सुव्यवस्थित करने की कोशिश की गयी है कि उसमें प्रेम की किरण की संभावना ही न रह जाये।

प्रेम के अतिरिक्त मुझे कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता है। जो प्रभु तक पहुंच सकता है। और इतने लोग जो वंचित हो गये है, प्रभु तक पहुंचने से वह इसीलिए कि वे प्रेम तक पहुंचने से ही वंचित रह रहे है।

समाज की पूरी व्यवस्था अप्रेम की व्यवस्था है। परिवार का पूरा का पूरा केंद्र.....अप्रेम केंद्र है। बच्चे के गर्भाधान, कंसेप्शन से लेकर उसकी मृत्यु तक सारी यात्रा अप्रेम की यात्रा है। और हम इसी समाज को इसी परिवार को इसी गृहस्थी को सम्मान दिये जाते है। अदब दिये जाते है। शोरगुल मचाये चले जाते है कि बड़ा पवित्र परिवार है, बड़ा पवित्र समाज है। बड़ा पवित्र जीवन है। यही परिवार और यही समाज और यही सभ्यता जिसके गुणगान करते हम थकते नहीं है। मनुष्य को प्रेम से रोकने का कारण बन रहा है।

इस बात को थोड़ा समझ लेना जरूरी होगा। मनुष्यता के विकास में कहीं कोई बुनियादी भूल हो गयी है। यह सवाल नहीं है कि एकाध आदमी ईश्वर को पा ले। कोई कृष्ण,कोई राम, कोई बुद्ध,कोई क्राइस्ट ईश्वर को उपलब्ध हो जाये। यह कोई सवाल नही है। अरबों-खरबों लोगों में अगर एक आदमी में ज्योति उतर भी आती हो तो यह कोई विचार करने की बात नहीं है। इसमें तो कोई हिसाब रखने की जरूरत भी नहीं है।

एक माली एक बग़ीचा लगाता है। उसने दस करोड़ पौधे उस बग़ीचे में लगाये है। और एक पौधे में एक अच्छा सा फूल आ जाये। तो माली की प्रशंसा करने कौन जायेगा। कौन कहेगा कि माली तू बहुत कुशल है। तूने जो बग़ीचा लगाया है। वह बहुत अद्भुत हे। देख दस करोड़ वृक्षों में एक फूल खिल गया है। हम कहेंगे यह माली की कुशलता का सबूत है। एक फूल खिल जाना।

माली की भूल चूक से खिल गया होगा। क्योंकि बाकी सारे पेड़ खबर दे रहे है कि माली में कितना कौशल है। यह फूल माली के बावज़ूद खिल गया होगा। माली ने कोशिश की होगी कि न खिल पाये; क्योंकि बाकी सारे पौधे तो खबर दे रहे हे कि माली के फूल कैसे खिले है।

खरबों लोगों के बीच कोई एकाध आदमी के जीवन में ज्योति जल जाती है। और हम उसी को शोरगुल मचाते रहते है हजारों सालों ते पूजा करते रहते है उसी के मंदिर बनाते रहते है। उसी का गुण गान करते रहते है। अब तक हम रामलीला कर रहे है। अब तक हम बुद्ध की जयंती मना रहे है। अब तक महावीर की पूजा कर रहे है। अब तक क्राइस्ट के सामने घुटने टेक रहे है। यह किस बात का सबूत है?

यह इस बात का सबूत है कि पाँच हजार साल में पाँच छह आदमियों के अतिरिक्त आदमियत के जीवन में परमात्मा का कोई संपर्क नहीं हो सकता है। नहीं तो कभी के हम भूल गये होते राम को कभी के भूल गये होत बुद्ध को, कभी के भूल गये होते महावीर को।

महावीर को हुए ढ़ाई हजार साल हो गये है। ढ़ाई हजार साल में कोई आदमी नहीं हुआ कि महावीर को हम भूल सकते। महावीर को याद रखना पडा। वह एक फूल खिला था, जिसे अब तक हमें याद रखना पड़ता है। यह कोई गौरव की बात नहीं है। कि हमें अब तक स्मृति है बुद्ध की, महावीर की, क्राइस्ट की, मुहम्मद की, या जरथुत्स की। यह इस बात का सबूत है कि और आदमी होते ही नहीं कि उनको हम भूल सकें। बस दो चार इने-गिने नाम अटके रह गये है मनुष्य जाति की स्मृति में।

और इन नामों के साथ हमने क्या किया। सिवाय उपद्रव के, हिंसा के। और उनकी पूजा करने वाले लोगों ने क्या किया है सिवाय आदमी के जीवन को नर्क बनाने के। मंदिरों और मसजिदों के पुजारी यों और पूजकों ने जमीन पर जितनी हत्याएँ की है। और जितना खून बहाया है। और जीवन का जीतना अहित किया है। उतना किसी ने कभी नहीं किया है। जरूर कहीं कोई बुनियादी भूल हो गयी है। नहीं तो इतने पौधे लगें और फूल न आयें। यह बड़े आश्चर्य की बात है। कहीं भूल जरूर हो गयी है।

मेरी दृष्टि में प्रेम अब तक मनुष्य के जीवन का केंद्र नहीं बनाया जा सका है। इसीलिए भूल हो गयी है। और प्रेम केंद्र बनेगा। भी नहीं। क्योंकि जिन चीजों के कारण प्रेम जीवन का केंद्र बन रहा है, हम उन्हीं चीजों का शोरगुल मचा रहे है। आदर कर रहे है। सम्मान कर रहे है, उन्हीं चीजों को बढ़ावा दे रहे है।

मनुष्य की जन्म से लेकिर मृत्यु तक की यात्रा की गलत हो गयी है। इसी पर पुनर्विचार करना चाहिए। अन्यथा सिर्फ हम कामनाए कर सकते है और कुछ भी उपलब्ध नहीं हो सकता है। क्या आपको कभी ये बात ख्याल में आयी है कि आपका परिवार प्रेम का शत्रु है? क्या कभी आपको यह बात ख्याल में आई है। कि आपका समाज प्रेम का शत्रु है। क्या कभी आपको यह बात ख्याल में आई है कि मनु से लेकर आज तक के सभी नीति कार प्रेम के विरोधी है।

जीवन का केंद्र है—परिवार। और परिवार विवाह पर खड़ा है। जबकि परिवार प्रेम पर खड़ा होना चाहिए था। भूल हो गयी है। आदमी के सारे पारिवारिक विकास की भूल हो गयी हे। परिवार निर्मित होना चाहिए प्रेम के केंद्र पर, किंतु परिवार निर्मित किया जाता है विवाह के केंद्र पर। इससे ज्यादा झूठी और मिथ्या बात नहीं हो सकती है।

प्रेम और विवाह का क्या संबंध है?

प्रेम से तो विवाह निकल सकता है, लेकिन विवाह से प्रेम नहीं निकलता और न ही निकल सकता है। इस बात को थोड़ा समझ लें तो हम आगे बढ़ सकें।

प्रेम परमात्मा की व्यवस्था है, और विवाह आदमी की व्यवस्था है।

विवाह सामाजिक संस्था है, प्रेम प्रकृति का दान है।

प्रेम तो प्राणों के किसी कोने में अनजाने पैदा होता है।

लेकिन विवाह? समाज, कानून नियमित करता है, स्थिर करता है, बनाता है।

विवाह आदमी की ईजाद है।

और प्रेम? प्रेम परमात्मा का दान है।

हमने सारे परिवार को विवाह का केंद्र पर खड़ा कर दिया है। प्रेम के केंद्र पर नहीं। हमने यह मान रखा है कि विवाह कर देने से दो व्यक्ति प्रेम की दुनिया में उतर जायेंगे। अद्‌भुत झूठी बात है, और पाँच हजार वर्षों में भी हमको इसका ख्याल नहीं आ सका हे। हम अद्‌भुत अंधे है। दो आदमियों के हाथ बाँध देने से प्रेम के पैदा हो जाने की कोई जरूरत नहीं है। कोई अनिवार्यता नहीं है। बल्कि सच्चाई यह है कि जो लोग बंधा हुआ अनुभव करते है, वे आपस में प्रेम कभी नहीं कर सकते।

प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता में। प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता की भूमि में—जहां कोई बंधन नहीं, कोई मजबूरी नहीं है।

किंतु हम अविवाहित स्त्री या पुरूष के मन में युवक ओर युवती के मन में उस प्रेम की पहली किरण का गला घोंटकर हत्या कर देते है। फिर हम कहते है कि विवाह से प्रेम पैदा होना चाहिए। वह बिलकुल पैदा किया, कलटिवेटेड होता है। कोशिश से लाया गया होता है। वह प्रेम वास्तविक नहीं होता, वह प्रेम सहज-स्फूर्त, स्पांटेनिअस, नहीं होता है। वह प्रेम प्राणों से सहज उठता नही है। फैलता नहीं है। जिसे हम विवाह से उत्पन्न प्रेम कहते है। वह प्रेम केवल सहवास के कारण पैदा हुआ मोह होता है। प्राणों की ललक और प्राणों का आकर्षण और प्राणों की विद्‌युत वहां अनुपस्थित होती है।

और इस तरह से परिवार बनता है। इस विवाह से पैदा हुआ परिवार और परिवार की पवित्रता की कथाओं का कोई हिसाब नहीं है। परिवार की प्रशंसाओं,स्तुतियों की कोई गणना नहीं है। और यहीं परिवार सबसे कुरूप संस्था साबित हुई है। पूरी मनुष्यजाति को विकृत करने में। प्रेम से शून्य परिवार मनुष्य को विकृति करने में, अधार्मिक करने में, हिंसक बनाने में सब से बड़ा संस्था साबित हुई है। प्रेम से शून्य परिवार से ज्यादा असुंदर और कुरूप,अगली कुछ भी नहीं है। और वही अधर्म का अड्डा बना हुआ है।

जब हम एक युवक और युवती को विवाह में बाँधते है बिना प्रेम के, बिना आंतरिक परिचय के, बिना एक दूसरे के प्राणों के संगीत के; तब हम केवल पंडित के मंत्रों में और वेदों की पूजा में और थोथे उपक्रम में उनको विवाह से बाँध देते है। फिर आशा करते है कि उनके जीवन में प्रेम पैदा हो जायेगा। प्रेम तो पैदा नही होता है, सिर्फ उनके संबंध कामुक सेक्सुअल होते है। क्योंकि प्रेम तो पैदा किया जा सकता है। प्रेम पैदा हो जाय तो व्यक्ति साथ जुडकर परिवार निर्माण कर सकता है। दो व्यक्तियों को परिवार के निर्माण के लिए जोड़ दिया जाये और फिर आशा की जाये कि प्रेम पैदा हो जाये, यह नहीं हो सकता।

जब प्रेम पैदा नहीं होता है, तो क्या परिणाम होते है, आपको पता है?

एक-एक परिवार में कलह है। जिसको हम गृहस्थी कहते है, वि संघर्ष, कलह, द्वेष, ईर्ष्या, और चौबीस घंटे उपद्रव का अड्डा बनी हुई है। लेकिन न मालूम हम कैसे अंधे है कि देखने की कोशिश भी नहीं करते। बाहर जब हम निकलते है तो मुस्कराते हुए निकलते है। घर के सब आंसू पोंछकर बाहर जाते है—पत्नी भी हंसती हुई मालूम पड़ती है। पति भी हंसता हुआ मालूम पड़ता है। ये चेहरे झूठे है। ये दूसरों को दिखाई पड़ने वाले चेहरे है। घर के भीतर के चेहरे बहुत आंसुओं से भरे हुए है। चौबीस घंटे कलह और संघर्ष में जीवन बीत रहा है। फिर इस कलह और संघर्ष के परिणाम भी होंगे ही।

प्रेम के अतिरिक्त जगत के किसी व्यक्ति के जीवन में आत्म तृप्ति नहीं उपलब्ध होती।

क्रमश अगले लेख में...........

ओशो
प्रेम और विवाह

संभोग से समाधि की और

प्रवचन—8

संभोग से समाधि की और—28

Posted on मार्च 18, 2011by sw anand prashad

प्रेम ओर विवाह--ओशो

प्रेम ओर विवाह–

प्रेम जो है, वह व्यक्तित्व की तृप्ति का चरम बिंदु है। और जब प्रेम नहीं मिलता है तो व्यक्तित्व हमेशा मांग करता है कि मुझे पूर्ति चाहिए। व्यक्तित्व हमेशा तड़पता हुआ अतृप्त हमेशा अधूरा बेचैन रहता है। यह तड़पता हुआ व्यक्तित्व समाज में अनाचार पैदा करता है। क्योंकि तड़पता हुआ व्यक्तित्व प्रेम को खोजने निकलता है। उसे विवाह में प्रेम नहीं मिलता। वह विवाह के अतिरक्ति प्रेम को खोजने की कोशिश करता है।

वेश्याएं पैदा होती है विवाह के की कारण।

विवाह है मूल,रूट। विवाह है जड़ वेश्याओं के पैदा करने की। और अब तक तो स्त्री वेश्याएं थी, किंतु अब तो सभ्य मुल्कों में पुरूष वेश्याएं मेल प्रास्टीट्यूट उपलब्ध है। वेश्याएं पैदा होगीं। क्योंकि परिवार में जो प्रेम उपलब्ध होना चाहिए था। वह नहीं उपलब्ध हो रहा है। आदमी दूसरे घरों में झांक रहा है उस प्रेम के लिए। वेश्याएं होगी।
और अगर वेश्याएं रोक दी जायेगी तो दूसरे परिवारों में पीछे के द्वारों से पाप के रास्ते निर्मित होंगे। इसीलिए तो सारे समाज ने यह तय कर लिया है कि कुछ वेश्याएं निश्चित कर दो। ताकि परिवारों का आचरण सुरक्षित रहे। स्त्रीयों को पीड़ा में डाल दो। ताकि बाकी स्त्रियां पतिव्रता बनी रह सके।

लेकिन जो समाज ऐसा अनैतिक उपाय खोजता है, जिस समाज में वेश्याएं जैसी अनैतिक संस्थाएं ईजाद करना पड़ती है, जान लेना चाहिए कि वह पूरा समाज बुनियादी रूप में पूरा अनैतिक होगा। अन्यथा यह अनैतिक ईजाद की आवश्यकता नहीं थी।

वेश्या पैदा होती है, अनाचार पैदा होता है, व्यभिचार पैदा होता है। तलाक पैदा होते है। यदि तलाक न होता न व्यभिचार होता,और न अनाचार होत, तो घर एक चौबीस घंटे का मानसिक तनाव, ऐंग्जाइटी बन जाता।

सारी दुनिया में पागलों की संख्या बढती गयी है। ये पागल परिवार के भीतर पैदा होते है।

सारी दुनियां में स्त्रियां हिस्टीरिया और न्यूरोसिस से पीड़ित है। विक्षिप्त उन्माद से भरती चली जा रही है। बेहोश होती गिरती है, चिल्लाती है।

पुरूष पागल होते चले जा रहे है। एक घंटे में जमीन पर एक हजार आत्म हत्याएँ हो जाती है। और हम चिल्लाये जा रहे है—समाज हमारा बहुत महान है। ऋषि-मुनियों ने निर्मित किया है। हम चिल्लाये जा रहे है कि बहुत सोच-विचार से समाज के आधार रखे गये है। कैसे ऋषि-मुनि और कैसे ये आधार। अभी एक घंटा मैं बोलूं तो इस बीच एक हजार आदमी कहीं छुरा मार लेंगे। तो कहीं ट्रेन के नीचे लेट जायेंगे। तो कोई जहर पी लेगा। उन एक हजार लोगों की जिंदगी कैसी होगी, जो हर घंटे मरने को तैयार हो जाते है?

आप यह मत सोचना कि वे जो नहीं मरते है, वे बहुत सुखमय है। कुल जमा कारण यह है कि वे मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। उनके सुख का कोई भी सवाल नहीं है। वे कायर है। मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते है तो जिये चले जाते है। धक्के खाये चले जाते है। सोचते है, आज गलत है तो कल ठीक हो जायेगा। परसों सब ठीक हो जायेगा। लेकिन मस्तिष्क उनके रूग्ण होते चले जाते है।

प्रेम के अतिरिक्त कोई आदमी कभी स्वस्थ नहीं हो सकता।

प्रेम जीवन में न हो तो मस्तिष्क रूग्ण होगा। चिंता से भरेगा, आदमी शराब पियेगा। नशा करेगा। कहीं जाकर अपने को भूल जाना चाहेगा। दुनिया में बढ़ती हुई शराब शराबियों के कारण नहीं है। परिवार ने उस हालत में ला दिया है लोगों को कि बिना बेहोश हुए थोड़ी देर के लिए भी रास्ता मिलना मुश्किल हो गया है। तो लोग शराब पीने चले जायेंगे। लोग बेहोश पड़े रहेंगे लोग हत्या करेंगे, लोग पागल होते चले जायेंगे।

अमरीका में प्रतिदिन बीस लाख आदमी अपना मानसिक इलाज करवा रहे है। ये सरकारी आंकड़े है। आप तो भली भांति जानते है सरकारी आंकड़े कभी भी सही नहीं होते है। बीस लाख सरकार कहती है। तो कितने लोग इलाज करा रहे होंगे। यह कहना मुश्किल है। जो अमरीका की हालत है वह सारी दुनियां की हालत है।

आधुनिक युग के मानविद यह कहते है कि करीब-करीब चार आदमियों में दो आदमी एबनार्मल हो गये है। चार आदमियों में तीन आदमी रूग्ण हो गये है। स्वस्थ नहीं है। जिस समाज में चार आदमियों में तीन आदमी मानसिक रूप से रूग्ण हो जाते हों, उस समाज के

आधारों को उसकी बुनियादों को फिर से सोच लेना जरूरी है। नहीं तो कल चार आदमी भी रूग्ण होंगे और फिर सोचने वाले भी शेष नहीं रह जायेंगे। फिर बहुत मुश्किल हो जायेगी।

लेकिन होता ऐसा है कि जब एक ही बीमारी से सारे लोग ग्रसित हो जाते है। तो उस बीमारी का पता नहीं चलता। हम सब एक जैसे रूग्ण, बीमार, परेशान है; तो हमें पता नहीं चलता। सभी ऐसे हैइसीलिस स्वस्थ मालूम पड़ते है। जब सभी ऐसे है, तो ठीक है। दुनियां चलती है, यही जीवन हे। जब ऐसी पीड़ा दिखाई देती है तो हम ऋषि-मुनियों के बचन दोहराते है कि वह तो ऋषि-मुनियों ने पहले ही कह दिया था। की जीवन दुःख है।

यह जीवन दुःख नहीं है। यह दुःख हम बनाये हुए है। वह तो पहले ही ऋषि-मुनियों ने कह दिया था। कि जीवन तो आसार है, उससे छुटकारा पाना चाहिए। जीवन असार नहीं है। यह असार हमने बनाया हुआ है।

जीवन से छुटकारा पाने की सब बातें दो कौड़ी की है। क्योंकि जो आदमी जीवन से छुटकारा पाने की कोशिश करता है वह प्रभु को कभी उपलब्ध नहीं हो सकता। क्योंकि जीवन प्रभु है, जीवन परमात्मा है। जीवन में परमात्मा ही तो प्रकट हो रहा है। उससे जो दूर भागेगा,वह परमात्मा से ही दूर चला जायेगा।

जब एक सी बीमारी पकड़ती है। तो किसी को पता नहीं चलता है। पूरी आदमियत जड़ से रूग्ण है। इसलिए पता नहीं चलता, तो दूसरी तरकीबें खोजते है इलाज के लिए। मूल कारण, एक्जुअलटि जो है, बुनियादी कारण जो है। उसको सोचते नहीं। ऊपरी इलाज भी क्या सोचते है? एक आदमी शराब पीने लगता है। जीवन से घबराकर। एक आदमी नृत्य देखने लगता है, वेश्या के घर जाकर, दूसरा आदमी सिनेमा में बैठ जाता है। तीसरा आदमी चुनाव लड़ने लगता है। ताकि भूल जाय सबको। चौथा आदमी मंदिर में जाकर भजन कीर्तन करने वाला भी खुद के जीवन को भूलने की कोशिश कर रहा है। यह कोई परमात्मा को पाने का रास्ता नहीं है।

परमात्मा तो जीवन में प्रवेश से उपलब्ध होता है। जीवन से भागने से नहीं। ये सब पलायन एस्केप है। एक आदमी मंदिर में भजन कीर्तन कर रहा है हिल-डुल रहा है। हम कहते है कि भक्त जी बहुत आनंदित है। भक्ति जी आनंदित नहीं हो रहा है। भक्त जी किसी दुःख से भोगे हुए है। वह भुलाने की कोशिश कर रहे है। शराब काही यह दूसरा रूप है। यह आध्यात्मिक नशा, स्प्रिचुअल इंटाक्सीकेशन, यह अध्यात्म के नाम से नहीं शराबें है। जो सारी दुनिया में जलती है। इन लोगों ने भाग-भाग कर जिंदगी को बदला नहीं आज तक। जिंदगी वहीं की वही दुःख से भरी हुई है। और जब भी कोई दुःखी हो जाता है वह भी इनके पीछे चला जाता है। कि हमको भी गुरु मंत्र दे दें। हमारा भी कान फूंक दें कि हम भी इसी तरह

सुखी हो जायें। जैसे आप हो गये है। लेकिन यह जिंदगी क्यों दुःख पैदा कर रही है। इसको देखने के लिए इसके विज्ञान को खोजने के लिए कोई भी जाता नहीं है।

मेरी दृष्टि में यह है कि जहां जीवन की शुरूआत होती है, वहीं कुछ गड़बड़ हो गयी है। वह गड़बड़ यह हो गयी है कि हमने मनुष्य जाति पर प्रेम की जगह विवाह थोप दिया है। यदि विवाह होगा तो ये सारे रूप पैदा होंगे। और जब दो व्यक्ति एक दूसरे से बंध जाते है और उनके जीवन में कोई शांति और तृप्ति नहीं मिलती, तो वे दोनों एक दूसरे पर क्रुद्ध हो जाते है। कि तेरे कारण मुझे शांति नहीं मिल रही। वे कहते है, ''तेरे कारण मुझे शांति नहीं मिल पा रही है।'' वे एक दूसरे को सताना शुरू करते है। परेशान करना शुरू करते है। और इसी हैरानी इसी परेशानी इसी कलह के बीच बच्चों का जन्म होता है। ये बच्चे पैदाइश से ही विकृत परवर्टेड हो जाते है।

मेरी समझ में, मेरी दृष्टि में मेरी धारणा में जि दिन आदमी पूरी तरह आदमी के विज्ञान को विकसित करेगा। तो शायद आपको पता लगे कि दुनिया में बुद्ध कृष्ण और क्राइस्ट जैसे लोग शायद इसीलिए पैदा हो सके है कि उनमें मां-बाप ने जिस क्षण संभोग किया था, उस समय वे अपूर्व प्रेम से संयुक्त हुए थे। प्रेम के क्षण में गर्भस्थापन, कंसेप्शन हुआ था। यह कसी दिन जिस दिन जन्म विज्ञान पूरी तरह विकसित होगा। उस दिन शायद हमको यह पता चलेगा कि जो दुनिया मैं थोड़े से अद्भुत लोग हुए—शांत आनंदित, प्रभु को उपलब्ध—वे लोग वे ही थे। जिनका पहला अणु प्रेम की दीक्षा से उत्पन्न हुआ था। जिनका पहला अणु प्रेम के जीवन में सराबोर पैदा हुआ था।

पति और पत्नी कलह से भरे हुए है, क्रोध से, ईर्ष्या से; एक दूसरे के प्रति संघर्ष से, अहंकार से, एक दूसरे की छाती पर चढ़े हुए है। एक दूसरे के मालिक बनना चाह रहे है। इसी बीच उनके बच्चे पैदा हो रहे है। ये बच्चे किसी आध्यात्मिक जीवन में कैसे प्रवेश पायेंगे?

मैंने सुना है एक घर में एक मां ने अपने बेटे और छोटी बेटी को—वे दोनों बेटे और बेटी बाहर मैदान में लड़ रहे थे। एक दूसरे पर घूंसेबाजी कर रहे थे—कहा कि आरे यह क्या कर रहे हो। कितनी बार मैने समझाया कि लड़ा मत करो, आपस में लड़ों मत। उस लड़के ने कहा,हम लड़ नहीं रहे है, हम तो मम्मी—डैडी का खेल कर रहे है। वी आर जाट फाइटिंग, बी आर प्ले इंग मम्मी डैडी। जो घर में रोज हो रहा है। वह हम दोहरा रहे है। यह खेल जन्म के क्षण से शुरू हो जाता है। इस संबंध में दो चार बातें समझ लेनी बहुत जरूरी है।

ओशो
प्रेम और विवाह

संभोग से समाधि की और

प्रवचन—8

संभोग से समाधि की और—29

Posted on मार्च 23, 2011by sw anand prashad

विवाह ओर प्रेम--ओशो

प्रेम ओर विवाह–

मेरी दृष्टि में जब तक एक स्त्री और पुरूष परिपूर्ण प्रेम के आधार पर मिलते हे, उनका संभोग होता है। उनका मिलन होता है तो उस परिपूर्ण प्रेम के तल पर उनके शरीर ही नहीं मिलते है। उनकी आत्मा भी मिलती है। वे एक लयपूर्ण संगीत में डूब जाते है। वे दोनों विलीन हो जाते है, और शायद परमात्मा ही शेष रह जाता है उस क्षण। उस क्षण जिस बच्चो का गर्भाधान होता है। वह बच्चा परमात्मा को उपलब्ध हो सकता है। क्योंकि प्रेम के क्षण का पहला कदम उसके जीवन में उठा लिया गया है।

लेकिन जो मां-बाप, पति और पत्नी आपस में द्वेष से भरे है, धृणा से भरे है, क्रोध से भरे है। कलह से भरे है, वे भी मिलते है; लेकिन उनके शरीर ही मिलते है। उनकी आत्मा और प्राण नहीं मिलते। उनके शरीर के ऊपरी मिलन से जो बच्चे पैदा होते है। वे अगर शरीर वादी मैटिरियालिस्ट पैदा होते है। बीमार और रूग्ण पैदा होते है। और उनके जीवन में अगर आत्मा की प्यास पैदा न होती हो, तो दोष उन बच्चों को मत देना। बहुत दिया जा चुका यह दोष। दोष देना उन मां बाप को, जिनकी छवि लेकर वह जन्मते है। जिनका सब अपराध और जिनकी सब बीमारियां लेकिन जन्मते है। और जिनका सब क्रोध और घृणा लेकर जन्मते है। जन्म के साथ उनका पौधा विकृत हो जाता है। फिर इनको पिलाओ गीता, इनको समझाओ कुरान, इनसे कहो कि प्रार्थनाएं करो—जो झूठी हो जाती है। क्योंकि प्रेम का बीज ही शुरू नहीं हो सका जो प्रार्थनाएं कैसे शुरू हो सकती है।

जब एक स्त्री और पुरूष परिपूर्ण प्रेम और आनंद में मिलते है। तो वह मिलन एक आध्यात्मिक कृत्य स्प्रिचुअल एक्ट हो जाता है। फिर उसका काम, सेक्स से कोई संबंध नहीं है। वह मिलन फिर कामुक नहीं है। वह मिलन शारीरिक नही है। वह मिलन अनूठा है। वह

उतना ही महत्वपूर्ण है। जितनी किसी योगी की समाधि। उतना ही महत्वपूर्ण है वह मिलन, जब दो आत्माएं परिपूर्ण प्रेम से संयुक्त होती है। उतना ही पवित्र है वह कृत्य—क्योंकि परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्म देता है। और जीवन को गति देता है।

लेकिन तथाकथित धार्मिक लोगों ने, तथाकथित झूठे समाज ने, तथाकथित झूठे परिवार ने यही समझाने की कोशिश की है कि सेक्स,काम, यौन, अपवित्र है, घृणित है। नितांत पागलपन की बातें है। अगर यौन घृणित और अपवित्र है। तो सारा जीवन अपवित्र हो गया। अगर सेक्स पाप है तो पूरा जीवन पाप हो गया। पूरा जीवन निंदित कंडम हो गया। अगर जीवन ही पूरा निंदित हो जायेगा, तो कैसे सच्चे लोग उपलब्ध होंगे। जब जीवन ही पूरा का पूरा पाप है तो सारी रात अंधेरी हो गयी है। अब इसमें प्रकाश की किरण कहीं से लानी पड़ेगी।

मैं आपको बस एक बात कहना चाहता हूं कि एक नयी मनुष्यता के जन्म के लिए सेक्स की पवित्रता, सेक्स की धार्मिकता स्वीकार करना अत्यंत आवश्यक है; क्योंकि जीवन उससे जन्मता है। परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्माता है।

परमात्मा ने जिसको जीवन की शुरूआत बनाया है। वह पाप नहीं हो सकता है, लेकिन आदमी ने उसे पाप कर दिया है।

जो चीज प्रेम से रहित है, वह पाप हो जाती है। जों चीज प्रेम से शून्य हो जाती है। वह अपवित्र हो जाती है। आदमी की जिंदगी में प्रेम नहीं रहा। इसलिए केवल कामुकता, सेक्सुअलिटी रह गयी है। सिर्फ यौन रह गया है। वह यौन पाप हो गया है। वह यौन पाप नहीं है, वह हमारे प्रेम के आभाव का पाप है। और उस पाप से सारा जीवन शुरू होता है। फिर बच्चे पैदा होत है। फिर बच्चे जन्मते है।

स्मरण रहे, जो पत्नी अपने पति को प्रेम करती है। उसके लिए पति परमात्मा हो जाता है। शास्त्रों के समझाने से नहीं होती है यह बात। जो पति अपनी पत्नी से प्रेम करता है। उसके लिए पत्नी भी परमात्मा हो जाती है, क्योंकि प्रेम किसी को भी परमात्मा बना देता है। जिसकी तरफ उसकी आंखें प्रेम से उठती है, वह परमात्मा हो जाता है। परमात्मा को कोई अर्थ नहीं है।

प्रेम की आँख सारे जगत को धीरे-धीरे परमात्मा मय देखने लगती है।

लेकिन जो एक को ही प्रेम से भर नहीं पाता और सारे जगत को ब्रहमा मय देखने की बातें करता है, उसकी वे बातें झूठी है। उन बातों का कोई आधार और अर्थ नहीं है।

जिसने कभी एक को प्रेम नहीं किया। उसके जीवन में परमात्मा की कोई शुरूआत ही नहीं हो सकती, क्योंकि प्रेम के ही क्षण में पहली दफा कोई व्यक्ति परमात्मा हो जाता है। वह पहली झलक है प्रभु की। फिर उसी झलक को आदमी बढ़ता है, और एक दिन वही झलक पूरी हो जाती है। सारा जगत उसी रूप में स्थांतरित हो जाता है। लेकिन जिसने पानी की कभी बूंद नहीं देखी। वह कहता है पानी की बूंद से मुझे कोई मतलब नहीं है। पानी की बूंद का मैं क्या करूंगा। तुमने पानी की बूंद भी नहीं देखी, पानी की बूंद भी नहीं जानी, नहीं समझी, नहीं चखी। और चले हो सागर को खोजने। तो तूम पागल हो। क्योंकि सागर क्या है? पानी की अनंत बूँदों का जोड़।

परमात्मा क्या है? प्रेम की अनंत बूँदों का जोड़ हे। तो प्रेम की अगर एक बूंद निंदित है तो पूरा परमात्मा निंदित हो गया। फिर हमारे झूठे परमात्मा खड़े होंगे, मूर्तियां खड़ी होंगी। पूजा पाठ होंगे,सब बकवास होगी। लेकिन हमारे प्राणों का कोई अंतर संबंध उससे नहीं हो सकता। और यह भी ध्यान में रख लेना जरूरी है कि कोई स्त्री अपने पति को प्रेम करती है, जीवन साथी को प्रेम करती है, तभी प्रेम के कारण पूर्ण प्रेम के कारण ही वह ठीक अर्थों में मां बन पाती है। बच्चे पैदा कर लेने मात्र से कोई मां नहीं बन जाती। मां ता कोई स्त्री तभी बनती है और पिता कोई पुरूष तभी बनता है जब कि उन्होंने एक दूसरे को प्रेम किया हो।

जब पत्नी अपने पति को प्रेम करती है, अपने जीवन साथी को प्रेम करती है तो बच्चे उसे अपने पति का पुनर्जन्म मालूम पड़ते है। वह फिर वही शक्ल है,फिर वही रूप है। फिर वहीं निर्दोष आंखे है। जो उसके पति में छिपी थी। फिर प्रकट हुई है। उसने अगर अपने पति को प्रेम किया है। तो वह बच्चे को प्रेम कर सकती है। बच्चे को किया गया प्रेम, पति को किया गया प्रेम की प्रतिध्वनि है। यह पति ही फिर वापस लौट आया है। बच्चे का रूप लेकर। बच्चे को किया गया प्रेम, पति फिर पवित्र और नया हो कर वापस लोट आया है।

लेकिन अगर पति के प्रति प्रेम नहीं है तो बच्चे के प्रति कैसे हो सकता है।

बाप भी तभी कोई बनता है जब वह अपनी पत्नी को इतना प्रेम करता है। कि पत्नी भी उसे परमात्मा दिखाई देती है। तब बच्चा फिर से पत्नी का ही लोटा हुआ रूप है। पत्नी को जब उसने पहली बार देखा था। तब वह जैसी निर्दोष थी, तब वह जैसी शांत थी। तब जैसी सुंदर थी, तब उसकी आंखे जैसी झील की तरह थी। इस बच्चे में वापस लोट आई है। इन बच्चों में फिर वही चेहरा वापस लौट आया है। ये बच्चे फिर उसी छवि में नये होकर आ गये है—जैसे पिछले बसंत में फूल खिले थे। पिछले बसंत में पत्ते आये थे। फिर साल बीत गया। पुराने पत्ते गिर गये है। फिर नयी कोंपलें निकल आयी है। फिर नये पत्तों से वृक्ष भर गया है। फिर लौट आया है बसंत। फिर सब नया हो गया है। लेकिन जिसने पिछले बसंत को ही प्रेम नहीं किया था। वह इस बसंत को कैसे प्रेम कर सकेगा।

जीवन निरंतर लोट रहा है। निरंतर जीवन का पुनर्जन्म चल रहा है। रोज नया होता चला जाता है। पुराने पत्ते गिर जाते है। नये आ जाते है। जिसने पिछले बसंत को प्रेम नहीं किया इस बसंत को कैसे कर सकता है।

जीवन निरंतर लौट रहा है। निरंतर जीवन का पुनर्जन्म चल रहा है। रोज नया होता है, पुराने पत्ते गिर जाते है। नये आ जाते है। जीवन की यह सृजनात्मकता, क्रिएटिव टी ही तो परमात्मा है। यही तो प्रभु है। जो इसको पहचानेगा। वही तो उसे पहचानेगा।

लेकिन न मां बच्चे को प्रेम कर पाती है। न पिता बच्चे को प्रेम कर पाता है। और जब मां और बाप को प्रेम नहीं कर पाते है। तो बच्चे जन्म से ही पागल होने के रास्ते पर संलग्न हो जाते है। उनको दूध मिलता है, कपड़े मिलते है, मकान मिलता है। लेकिन प्रेम नहीं मिलता है। प्रेम के बिना उनको परमात्मा नहीं मिल सकता है। और सब मिल सकता है।

अभी रूस का एक वैज्ञानिक बंदरों के ऊपर कुछ प्रयोग करता था। उसने कुछ नकली बंदरियाँ बनायी। नकली बिजली के यंत्र, हाथ और पैर उनके बिजली के तारों का ढांचा। जो बंदर पैदा हुए, उनको नकली माताओं के पास धर दिया गया। नकली माताओं से वे चिपक गये। वे पहले दिन के बच्चे थे। उनको कुछ पता नहीं कि कौन असली है, कौन नकली। वे नकली मां के पास ले जाये गये। पैदा होते ही उनकी छाती से चिपक गये। नकली दूध है वह उनके मुंह में जा रहा हे। वे पी रहे है, वह चिपके रहते है। वह बंदरिया नकली है। वह हिलती रहती है, बच्चे समझते है मां हिल-हिल कर झूला रही हे। ऐसे बीस बंदर के बच्चों को नकली मां के पास पाला गया और उनको अच्छा दूध दिया गया। मां ने उनको अच्छी तरह हिलाया-डुलाया। मां कूदती -फाँदती सब करती। वे बच्चे स्वस्थ दिखाई पड़ते थे। फिर वे बड़े भी हो गये। लेकिन वे सब बंदर पागल निकले। वे सब असामान्य,एबनार्मल साबित हुए। उनको....उनका शरीर अच्छा हो गया; लेकिन उनका व्यवहार विक्षिप्त हो गया।

वैज्ञानिक...दूध मिला....बड़े हैरान हुए कि इनको क्या हुआ। इनको सब तो मिला, फिर वे विक्षिप्त कैसे हो गये?

एक चीज जो वैज्ञानिक की लेबोरेटरी में नहीं पकड़ी जा सकीं थी। वह उनको नहीं मिली—प्रेम उनको नहीं मिला,जो उन 20 बंदरों की हालत हुई, वहीं साढ़े तीन अरब मनुष्यों की हो रही है। झूठी मां मिलती है, झूठा बाप मिलता है। नकली मां हिलती है, नकली बाप हिलता है। और ये बच्चे विक्षिप्त हो जाते है। और हम कहते है कि ये शांत नहीं होते। अशांत होते चले जाते है। ये छुरे बाजी करते है। ये लड़कियों पर एसिड फेंकते है। ये कालेज में आग लगाते है। ये बस पर पत्थर फेंकते है, ये मास्टर को मारते है। मारेंगे,मारे बिना इनको कोई रास्ता नहीं। अभी थोड़ा–थोड़ा मारते है। कल और ज्यादा मारेंगे।

तुम्हारे कोई शिक्षक, तुम्हारे कोई नेता, तुम्हारे कोई धर्मगुरू इनको नहीं समझा सकेंगे। क्योंकि सवाल समझाने का नहीं है। आत्मा ही रूग्ण पैदा हुई हे। यह रूग्ण आत्मा प्यास पैदा करेगी। यह चीजों को तोड़गी, मिटाये गी। तीन हजार साल से जो चलती थी बात, वह चरम परिणति क्लाइमैक्स पर पहुंच रही है। सौ डिग्री तक हम पानी को गरम करते है। पानी भाप बनकर उड़ जाता है। निन्यानवे डिग्री तक पानी बना रहता है। फिर सौ डिग्री पर भाप बनने लगता है।

सौ डिग्री पर पहुंच गया है आदमियत का पागलपन। अब वह भाप बनकर उड़ना शुरू हो रहा है। मत चिल्लाइए, मत परेशान होइए। बनने दीजिए भाप। आप उपदेश देते रहिये। अपने साधु संतों से कहिए समझाते रहा करे। अच्छी-अच्छी बातें और गीता की टीकाएं करते रहें। करते रहो प्रवचन-टीका गीता पर, और दोहराते रहो पुराने शब्दों को। ये भाप बननी बंद नहीं होगी। ये भाप बननी तब बंद होगी। जब जीवन की पूरी प्रक्रिया को हम समझेंगे कि कहीं कोई भूल हो रही है। कहीं कोई भूल हुई है।

और वह कोई आज की भूल नहीं है। चार पाँच हजार साल की भूल है। जो शिखर क्लाइमैक्स पर पहुंच गयी है। इसलिए मुश्किल खड़ी हुई है। ये प्रेम रिक्त बच्चे जन्मते है और प्रेम से रिक्त हवा में पाले जाते है। फिर यही नाटक ये दोहरायेंगे। मम्मी और डैडी का पुराना खेल। ये फिर बड़े हो जायेंगे। फिर वे यह नाटक दोहरायेंगे, फिर विवाह में बांधे जायेंगे; क्योंकि समाज प्रेम को आज्ञा नहीं देता। न मां पसंद करती है कि मेरी लड़की किसी को प्रेम करे। न बाप पसंद करते है कि मेरा बेटा किसी को प्रेम करे। न समाज पसंद करता है कि कोई किसी को प्रेम करे। वह कहता है प्रेम तो होना ही नहीं चाहिए। प्रेम तो पाप है। वह तो बिलकुल ही योग्य बात नहीं है। विवाह होना चाहिए। फिर प्रेम नहीं होगा। वही पहिया पूरा का पूरा घूमता है।

आप कहेंगे कि जहां प्रेम होता है। वहां भी कोई बहुत अच्छी हालत मालूम नहीं पड़ती। नहीं मालूम पड़ती। नहीं मालूम होगी, क्योंकि प्रेम को आप जिस भांति मौका देते है, उसमें प्रेम एक चोरी की तरह होता है, प्रेम एक सीक्रेसी की तरह प्रेम करने वाले डरते है। घबराये हुए प्रेम करते है। चोरों की तरह प्रेम करते है। अपराधी विद्रोह में वे प्रेम करते है। यह प्रेम भी स्वास्थ नहीं है। प्रेम के लिए स्वस्थ हवा नहीं है, इसके परिणाम भी अच्छे नहीं हो सकते।

प्रेम के लिए समाज को हवा पैदा करनी चाहिए। मौका पैदा करना चाहिए। अवसर पैदा करना चाहिए।

प्रेम की शिक्षा दी जानी चाहिए, दीक्षा दी जानी चाहिए।

प्रेम की तरफ बच्चों को विकसित किया जाना चाहिए। क्योंकि वही उनके जीवन का आधार बनेगा। वहीं उनके पूरे जीवन का केंद्र बनेगा। उसी केंद्र से उनका जीवन विकसित होगा।

लेकिन अभी प्रेम की कोई बात नहीं है। उससे हम दूर खड़े रहते है, आंखे बंद किये खड़े रहते है। न मां बच्चे से प्रेम की बात करती है। और न बाप। न उन्हें कोई सिखाता है कि प्रेम जीवन का आधार है। न उन्हें कोई निर्भय बनाता है कि तुम प्रेम के जगत में निर्भय होना। न कोई उनसे कहता है कि जब तक तुम्हारा किसी से प्रेम न हो तब तक तुम विवाह मत करना, क्योंकि वह विवाह गलत होगा, झूठा होगा, पाप होगा। वह सारी कुरूपता की जड़ होगा और सारी मनुष्यता को पागल करने का कारण होगा।

ओशो
प्रेम और विवाह

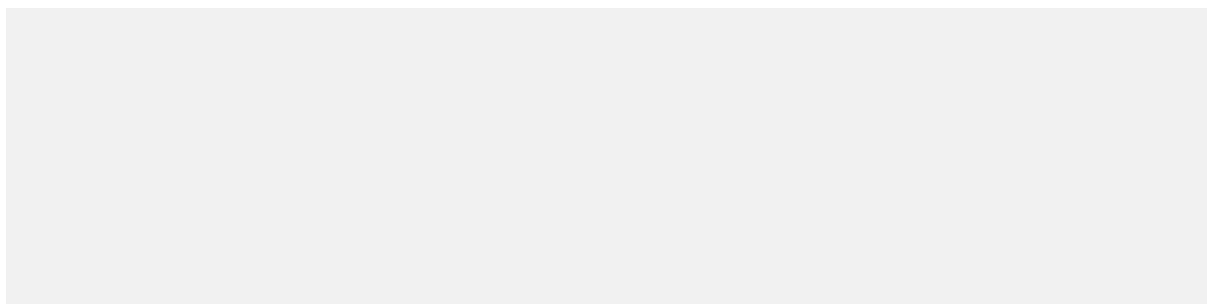
संभोग से समाधि की और

प्रवचन—8

संभोग से समाधि की और—30

Posted on अप्रैल 1, 2011by sw anand prashad

प्रेम ओर विवाह–



प्रेम ओर विवाह--ओशो

अगर मनुष्य जाति को परमात्मा के निकट लाना है, तो पहला काम परमात्मा की बात मत करिये। मनुष्य जाति को प्रेम के निकट ले आइये। जीवन जोखिम भरा है। न मालूम कितने खतरे हो सकते है। जीवन की बनी-बनाई व्यवस्था में न मालूम कितने परिवर्तन करने पड़ सकते है। लेकिन न पर करेंगे परिवर्तन तो यह समाज अपने ही हाथ मौत के किनारे पहुंच गया है। इसलिए मर जाएगा। यह बच नहीं सकता। प्रेम से रिक्त लोग ही युद्धों को पैदा

करते है। प्रेम से रिक्त लोग ही अपराधी बनते है। प्रेम से रिक्त ही अपराध, क्रिमीनलिटी की जड़ है और सारी दुनियां में अपराधी फैलते चले जाते है।
जैसे मैंने आपसे कहा कि अगर किसी दिन जन्म विज्ञान विकसित होगा, तो हम शायद पता लगा पाये कि कृष्ण का जन्म किन स्थितियों में हुआ। किसी समस्वरता हार्मनी में कृष्ण के मां-बाप ने किस प्रेम के क्षण में गर्भ स्थापन, कन्सैप्शन किया इस बच्चे का। किस प्रेम के क्षण में यह बच्चा अवतरित हुआ। तो शायद हमें दूसरी तरफ यह भी पता चल जाए कि हिटलर किस अप्रेम के क्षण में पैदा हुआ। मुसोलनी किस क्षण पैदा हुआ होगा। तैमुर लंग, चंगेज खां किस अवसर पर पैदा हुए थे।

हो सकता है यह पता चले कि चंगेज खां संघर्ष घृणा और क्रोध से भरे मां-बाप से पैदा हुआ हो। जिंदगी भी फिर वह क्रोध से भरा हुआ है। वह जो क्रोध का मौलिक वेग,ओरिजिनल मोमैंटम है हव उसको जिंदगी भर दौड़ाये चला जा रहा है। चंगेज खां जिस गांव में गया, लाखों लोगों को कटवाँ देता था।

तैमुर जिस राजधानी में जाता, दस-दस हजार बच्चों की गर्दनें कटवाँ देता। भाले मैं छिदवा देता। जुलूस निकालता तो दस हजार बच्चों की गर्दनें लटकी हुई है। भालों के ऊपर। पीछे तैमुर जा रहा है। लोग पूछते है यह तुम क्या कर रहे हो। तो वह कहता कि ताकि लोग याद रखें की कभी तैमुर लंग इस नगरी में आया था। इस पागल को याद रखने की कोई और बात समझ में नहीं पड़ती थी।

हिटलर ने जर्मनी में साठ लाख यहूदियों की हत्या की। पाँच सौ यहूदी रोज मारता रहा। स्टैलिन ने रूस में साठ लाख लोगों की हत्या की।

जरूर इनके जन्म के साथ कोई गड़बड़ हो गयी। जरूर ये जन्म के साथ पागल पैदा हुए। उन्माद इनके जन्म के साथ इनके खून में आया और फिरा वे इसको फैलाते चले गये।

पागलों में बड़ी ताकत होती है। पागल कब्जा कर लेते है और दौड़ कर हावी हो जाते है—धन पर,पद पर, यश पर, फिर वे सारी दूनिया को विकृत करते है। पागल ताकतवर होते है।

यह जो पागलों ने दुनिया बनायी है। यह दुनिया तीसरे महायुद्ध के करीब आ गयी है। सारी दुनिया मरेगी। पहले महायुद्ध में साढ़े तीन करोड लोगों की हत्या की गई। दूसरे महायुद्घ में साढ़े सात करोड़ लोगों की हत्या की गई। तब तीसरे में कितनी की जायेगी?

मैंने सूना है जब आइन्सटीन भगवान के घर पहुंच गया तो भगवान ने उससे पूछा कि मैं बहुत घबराया हुआ हूं। तीसरे महायुद्ध के संबंध में कुछ बताओगे? क्या होगा? उसने कहा,

तीसरे के बाबत कहना मुश्किल है, चौथे के संबंध में कुछ जरूर बता सकता हूं। भगवान ने कहा, तीसरे के बाबत नहीं बता सकते तो चौथे के बाबत कैसे बताओगे? आइन्सटीन ने कहा एक बात बता सकता हूं चौथे के बाबत कि चौथा महायुद्ध कभी नहीं होगा। क्योंकि तीसरे में सब समाप्त हो जायेगा। चौथे के होने की कोई संभावना नहीं है। और तीसरे के बाबत कुछ भी कहना मुश्किल है कि साढ़े तीर अरब पागल आदमी क्या करेंगे? तीसरे महायुद्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता कि क्या स्थिति होगी।

प्रेम से रहित मनुष्य मात्र एक दुर्घटना है—मैं अंत में यह बात निवेदन करना चाहता हूं।

मेरी बातें बड़ी अजीब लगी होंगी; क्योंकि ऋषि मुनि इस तरह की बातें करते ही नहीं। मेरी बात बहुत अजीब लगी होगी। आपने सोचा होगा कि मैं भजन-कीर्तन का कोई नुस्खा बताऊंगा। आपने सोचा होगा कि मैं कोई माला फेरने की तरकीब बतालाऊंगा। आपने सोचा होगा कि मैं कोई आपको ताबीज दे दूँगा। जिसको बांधकर आप परमात्मा से मिल जायें। ऐसी कोई बात में आपको नहीं बता सकता हूं। ऐसे बताने वाले सब बेईमान है, धोखेबाज है। समाज को उन्होंने बहुत बर्बाद किया है।

समाज की जिंदगी को समझने के लिए मनुष्य के पूरे विज्ञान को समझना जरूरी है। परिवार को दंपति को, समाज को—उसकी पूरी व्यवस्था को समझना जरूरी है। कि कहां गड़बड़ हुई है। अगर सारी दुनिया यह तय कर ले कि हम पृथ्वी में एक प्रेम का घर बनायेगे, झूठे विवाह का नहीं। हां, प्रेम से विवाह निकले तो यह सच्चा विवाह होगा। हम सारी दुनिया को प्रेम का एक मंदिर बनायेगे। जितनी कठिनाइयां होंगी। मुश्किलें होंगी, अव्यवस्था होगी। उसको संभालने का हम कोई उपाय खोजेंगे। उस पर विचार करेंगे। लेकिन दुनिया से हम यह अप्रेम का जो जाल है, इसको तोड़ देंगे। और प्रेम की एक दुनिया बनायेगे। तो शायद पूरी मनुष्यजाति बच सकती है। और स्वस्थ हो सकती है।

जोर देकर मैं आपके यह कहना चाहता हूं कि अगर सारे जगत में प्रेम के केंद्र पर परिवार बन जाये तो अति मानव सुपरमैन की कल्पना, जो हजारों साल से हो रही है। आदमी को महा मानव बनाने की—यह जो नीत्से कल्पना करता है, अरविंद कल्पना करते है—यह कल्पना पूरी हो सकती है, लेकिन न तो अरविंद को प्रार्थनाओं से और न नीत्से के द्वारा पैदा किये गये सिद्धांत से वह सपना पूरा हो सकता है।

अगर पृथ्वी पर हम प्रेम की प्रतिष्ठा को वापस लौटा लाये, अगर प्रेम जीवन में वापस लौट आये सम्मानित हो जाए; अगर प्रेम एक आध्यात्मिक मूल्य ले-ले, तो नये मानव का निर्माण हो सकता है। नयी संतति का नयी पीढ़ियों को नये आदमी का। और वह आदमी वह बच्चा

वह भ्रूण जिसका पहला अणु प्रेम से जन्मेंगा, विश्वास किया जा सकता है आश्वासन दिया जा सकता है कि उसकी अंतिम सांस परमात्मा में निकलेगी।

प्रेम है प्रारंभ। परमात्मा है अंत। वह अंतिम सीढी है।

जो प्रेम को ही नहीं पाता है, वह परमात्मा को पा ही नहीं सकता, यह असंभावना है।

लेकिन जो प्रेम में दीक्षित हो जाता है और प्रेम में विकसित हो जाता है। और प्रेम की सांसों में चलता है और प्रेम के फूल जिसकी सांस बन जाते है। और प्रेम जिसका अणु-अणु बन जाता है और जो प्रेम में बढ़ता जाता है। फिर एक दिन वह पाता है कि प्रेम की जि गंगा में वह चला था, वह गंगा अब किनारे छोड़ रही है। और सागर बन रही है। एक दिन वह पाता है कि गंगा के किनारे मिटते जाते है। और अनंत सागर आ गया सामने। छोटी-सी गंगा की धारा था गंगोत्री में, छोटी सी प्रेम की धारा होती है शुरू में फिर वह बढ़ती है, फिर वह बड़ी होती है। फिर वह पहाड़ों और मैदानों को पार करती है और एक वक्त आता है कि किनारे छूटने लगते है।

जिस दिन प्रेम के किनारे छूट जाते है, उसी दिन प्रेम परमात्मा बन जाता है। जब तक प्रेम के किनारे होते है। तब तक वह परमात्मा नहीं होता है। गंगा नदी होती है। जब तक कि वह इस जमीन के किनारे से बंधी होती है। फिर किनारे छूटते है और वह सागर में मिल जाते है। फिर वह परमात्मा से मिल जाती है।

प्रेम की सरिता और परमात्मा का सागर है। लेकिन हम प्रेम की सरिता ही नहीं है, हम प्रेम की नदिया ही नहीं है। और हम बैठे है हाथ जोड़े और प्रार्थनाएं कर रहे है। कि हमको भगवान चाहिए। जो सरिता नहीं है, वह सागर को कैसे पायेगी?

सारी मनुष्य जाती के लिए पूरा आंदोलन चाहिए। पूरी मनुष्य जाति के आमूल परिवर्तन की जरूरत है। पूरा परिवार बदलने की जरूरत है। बहुत कुरूप है हमारा परिवार। वह बहुत सुंदर हो सकता है। लेकिन केवल प्रेम के केंद्र पर ही पूरा समाज को बदलने की जरूरत है। और तब एक धार्मिक मनुष्यता पैदा हो सकती है।

प्रेम प्रथम, परमात्मा अंतिम।

और क्यों यह प्रेम परमात्मा पर पहुंच जाता है?

क्योंकि प्रेम है बीज और परमात्मा है वृक्ष। प्रेम का बीज ही फिर फूटता है और वृक्ष बन जाता है।

सारी दुनिया की स्त्रियों से मेरा कहने का यह मन होता है और खासकर स्त्रियों से, क्योंकि पुरूष के लिए प्रेम अन्य बहुत सी जीवन की दिशाओं में एक दिशा है। स्त्री के लिए प्रेम अकेली दिशा है। पुरूष के लिए प्रेम और बहुत से जीवन के आयामों में एक आयाम है। उसके और भी आयाम है व्यक्तित्व के; लेकिन स्त्री का एक ही आयाम है एक ही दिशा है—वह है प्रेम। स्त्री पूरी प्रेम भी है और दूसरी चीज भी है।

अगर स्त्री का प्रेम विकसित हो तो वह समझे,प्रेम की किमिया; प्रेम का रसायन। और बच्चों को दीक्षा दे प्रेम की और प्रेम के आकाश में उठने की शिक्षा दे; उनको पंखों को मजबूत करे। लेकिन अभी तो हम काट देते है पंख कि विवाह की जमीन पर सरको। प्रेम के आकाश में मत उड़ना। जब की होना यह चाहिए कि हम प्रेम की जोखिम सिखाए। लेकिन जो जोखिम नहीं उठाते। वे जमीन पर रेंगने वाले किले हो जाते है। जो जोखिम उठाते है, वे दूर अनंत आकाश में उड़ने वाले पक्षी सिद्ध होत है।

आदमी रेंगता हुआ कीड़ा हो गया है। क्योंकि हम सिखा रहे है; कोई जोखिम, रिसक न उठाना, कोई खतरा डेंजर मत उठाना। अपने घर का दरवाजा बंद करों और जमीन पर सरको। आकाश में मत उड़ना जब कि होना यह चाहिए कि हम प्रेम की जोखिम सिखाये, प्रेम का खतरा सिखाये। प्रेम का अभय सिखाये और प्रेम के आकाश में उड़ने के लिए उनके पंखों को मजबूर करें। और चारों तरफ जहां भी प्रेम पर हमला होता हो उसके खिलाफ खड़े हो जायें। प्रेम को मजबूत करें ताकत दें।

प्रेम के जितने दुश्मन खड़े है दुनियां में उनमें नीति शास्त्री भी है। क्योंकि प्रेम के विरोध में जो हो, वह क्या नीति शास्त्री होगा? साधु-संन्यासी खड़े है प्रेम के विरोध में। क्योंकि वे कहते है कि यह सब पाप है। यह सब बंधन है। इसको छोड़ो और परमात्मा की तरफ चलो।

जो आदमी कहता है कि प्रेम को छोड़कर परमात्मा की तरफ चलो। वह परमात्मा का शत्रु है; क्योंकि प्रेम के अतिरिक्त परमात्मा की तरफ जाने का कोई रास्ता ही नहीं है।

बड़े बूढ़े भी खड़े है प्रेम के विपरीत, क्योंकि उनका अनुभव कहता है कि प्रेम खतरा है। लेकिन अनुभवी लोगों से जरा सावधान रहना। क्योंकि जिंदगी में कभी कोई नया रास्ता वे नहीं बनने देते। वे कहते है कि पुराने रास्ते का हमें अनुभव है, हम पुराने रास्ते पर चले है, उसी पर सबको चलना चाहिए।

लेकिन जिंदगी को रोज नया रास्ता चाहिए। जिंदगी रेल की पटरियों पर दौड़ती हुई रेलगाड़ी नहीं है कि बनी पटरियों पर दौड़ती रहे। यदि दौड़ती तो एक मशीन हो जायेगी। जिंदगी तो एक सरिता है, जो रोज एक नया रास्ता बना लेती है। मैदानों में जंगलों में अनूठे रास्ते से निकलती है। अंजान जगत में प्रवेश करती है और सागर तक पहुंच जाती है।

नारियों के सामने आज एक ही काम है। वह काम यह नहीं है कि अनाथ बच्चों को पढ़ा रही है बैठकर। तुम्हारे बच्चे भी तो सब अनाथ है। नाम के लिए वे तुम्हारे बच्चे है। न उनकी मां है, न उनका बाप। समाज सेवक स्त्रीयां सोचती है। कि अनाथ बच्चों का अनाथालय खोल दिया। बहुत बड़ा काम कर दिया। उनको पता नहीं कि तुम्हारे अनाथ ऑरफंस है, कोई नहीं उनका—न तुम हो, न तुम्हारे पति है। न उनकी मां है और न उनका बाप है, क्योंकि वह प्रेम ही नहीं है,जो उनको सनाथ बना दे।

सोचते है हम कि आदिवासी बच्चों को जाकर शिक्षा दें। तुम आदिवासी बच्चों को जाकर शिक्षा दो और तुम्हारे बच्चे धीरे-धीरे आदिवासी हुए चले जा रहे है। ये जो बीटल है, बीट निक है; फलां है, ढिकां है; ये फिर से आदमी के आदिवासी होने की शक्लें है। तुम सोचते हो, स्त्रियां सोचती है कि जायें और सेवा करें।

जिस समाज में प्रेम नहीं है, उस समाज में सेवा कैसे हो सकती है?

सेवा तो प्रेम की सुगंध है।

मैं तो एक ही बात आज कहना चाहूंगा। आज तो सिर्फ एक धक्का आपको दे देना चाहूंगा। ताकि आपके भीतर चिंतन शुरू हो जाए। हो सकता है मेरी बातें आपको बुरी लगें तो बहुत अच्छा है। हो सकता है मेरी बातों से आपको चोट लगे। तिलमिलाहट पैदा हो जाए। उतना ही अच्छा है क्योंकि उससे कुछ सोच-विचार पैदा होगा।

हो सकता है मेरी सब बातें गलत हों, इसलिए मेरी बात मान लेने की कोई जरूरत नहीं है। लेकिन मैंने जो कहा है, उस पर आप सोचना। मैं फिर दोहरा देता हूं दो चार सूत्रों को और कहकर अपनी बात पूरी किये देता हूं।

आज तक का मनुष्य का समाज, प्रेम के केंद्र पर निर्मित नहीं है। इसीलिए विक्षिप्तता है। इसीलिए पागलपन है, इसीलिए युद्ध है, इसीलिए आत्मा हत्याएँ है। इसीलिए अपराध है। प्रेम के जगत ने एक झूठा स्थानापन्न सब्स्टीट्यूट विवाह का ईजाद कर लिया है। विवाह के कारण वेश्याएं हे, गुंडे है। विवाह के शराबी है। विवाह के कारण बेहोशियां है। विवाह के कारण

भागे हुए संन्यासी है, विवाह के कारण मंदिरों मे भजन करने वाले झूठे लोग है। जब तक विवाह है तब तक यह रहेगा।

मैं यह नहीं कह रहा हूं कि विवाह मिट जाये, मैं यह कहा रहा हूं कि विवाह प्रेम से निकले। विवाह से प्रेम नहीं निकलता है। प्रेम से विवाह निकले तो शुभ है, और विवाह से प्रेम को निकलने की कोशिश की जाये तो यह प्रेम झूठा होगा। क्योंकि जबर्दस्ती कभी भी कोई प्रेम नहीं निकल सकता है। प्रेम या तो निकलता है या नहीं निकलता है। जबर्दस्ती नहीं निकाला जा सकता है।

तीसरी बात मैंने यह कहीं है कि जो मां-बाप प्रेम से भरे हुए नहीं है; उनके बच्चे जन्म से ही विकृत, परवटेंड , एबनार्मल, रूग्ण और बीमार पैदा होंगे। मैंने यह कहा जो मां-बाप जो पति-पत्नी, जो प्रेमी युगल प्रेम के संभोग में लीन नहीं होते है। वे केवल उन बच्चों को पैदा करेंगे जो शरीवादी होंगे। भौतिकवादी होगें। उनकी जीवन की आँख पदार्थ से ऊपर कभी नहीं उठेगी। वे परमात्मा को देखने के लिए अंधे पैदा होंगे। आध्यात्मिक रूप से अंधे बच्चे हम पैदा कर रहे है।

मैंने आपसे चौथी बात यह कहीं कि मां-बाप अगर एक दूसरे को प्रेम करते है तो वे बच्चों के मां-बाप बनेंगे; क्योंकि बच्चे उनकी ही प्रतिध्वनि हे। वह आया हुआ नया बसंत है। वे फिर से जीवन के दरख़्त पर लगी हुई कोंपलें है। लेकिन जिसने पुराने बसंत को प्रेम नहीं किया, वह नये बसंत को प्रेम कैसे करेगा?

और मैने अंतिम बात यह कहीं कि प्रेम शुरूआत है और परमात्मा अंतिम विकाश है। प्रेम में जीवन शुरू हो तो परमात्मा में पूर्ण होता है। प्रेम बीज बने तो परमात्मा अंतिम वृक्ष की छाया बनता है। प्रेम गंगोत्री हो तो परमात्मा का सागर उपलब्ध होता है।

जिसके मन की कामना हो कि परमात्मा तक जाये, वह अपने जीवन को प्रेम के गीत से भर ले। और जिसकी भी आकांशा हो कि पूरी मनुष्यता परमात्मा के जीवन से भर जाए। वह सारी मनुष्यता को प्रेम की तरफ ले जाने के मार्ग पर जितनी बाधाएं हों वह उनको तोड़े मिटाये और प्रेम को उन्मुक्त आकाश दे; ताकि एक दिन एक नये मनुष्य का जन्म हो सके।

पुराना मनुष्य रूग्ण था। कुरूप था, अशुभ था। पुराने मनुष्य ने अपने आत्मघात का इंतजाम कर लिया था। वह आत्मा हत्या कर रहा था। सारे जगत में वह एक साथ आत्मघात कर लेगा। सार्वजनिक आत्मघात, यूनिवर्सल स्यूसाइड का उपाय कर लिया गया है। अगर इसे बचाना है तो प्रेम की वर्षा, प्रेम की भूमि और प्रेम के आकाश को निर्मित कर लेना जरूरी है।

ओशो

प्रेम और विवाह

संभोग से समाधि की और

प्रवचन—8

संभोग से समाधि की और—31

Posted on अप्रैल 3, 2011by sw anand prashad

जनसंख्या का विस्फोट-

पृथ्वी के नीचे दबे हुए, पहाड़ों की कंदराओं में छिपे हुए, समुद्र की सतह में खोजें गये बहुत से ऐसे पशुओ के अस्थिर पंजर मिले है, जिनका अब कोई नामों निशान नहीं रह गया है। वे कभी थे। आज से दस लाख साल पहले पृथ्वी बहुत से सरीसृप प्राणियों से भरी थी। लेकिन, आज हमारे घर में छिपकली के अतिरिक्त उनका कोई प्रतिनिधि नहीं है। छिपकली भी बहुत छोटा प्रतिनिधि है। दस लाख साल पहले उसके पूर्वज हाथियों से भी पाँच गुना बड़े होते थे। वे सब कहां खो गये, इतने शक्तिशाली पशु पृथ्वी से कैसे विलुप्त हो गये। किसी ने उन पर हमला किया? किसी ने उन पर एटम बम, हाइड्रोजन बम गिराया? नहीं उनके खत्म होने की अद्भुत कथा है।

उन्होंने कभी सोचा भी न होगा कि वे खत्म हो जायेंगे। वे खत्म हो गए, अपनी संतति के बढ़ जाने के कारण। वे इतने बढ़ गये कि पृथ्वी पर जीना उनके लिए असंभव हो गया। भोजन कम हुआ, पानी कम हुआ,लिव्हिंग स्पेस कम हुआ। जीने के लिए जितनी जगह चाहिए वह कम हो गयी। उन पशुओं को बिलकुल आमूल नष्ट हो जाना पडा।

ऐसी दुर्घटना आज तक मनुष्य जाति के जीवन में नहीं आयी है; लेकिन भविष्य में आ सकती है। आज तक नहीं आयी उसका कारण यह था कि प्रकृति ने निरंतर मृत्यु को और जन्म संतुलित रखा था। बुद्ध के जमाने में दस आदमी पैदा होते थे तो सात या आठ जन्म के बाद मर जाते थे। दुनिया की आबादी कभी इतनी नहीं बढ़ी थी कमी पड़ जाए, खाने की कमी पड़ जाये। विज्ञान और आदमी की निरंतर खोज ने और मृत्यु से लड़ाई लेने की होड़ ने यह स्थिति पैदा कर दी है। कि आज दस बच्चे पैदा होते है तो उनमें से मुश्किल से एक बच्चा मर पाता है।

स्थिति बिलकुल उल्टी हो गयी है। आज रूस में डेढ़ सौ वर्ष की उम्र के भी हजारों लोग है। औसत उम्र अस्सी और बयासी वर्ष तक कुछ मुल्कों में पहुच गई है। स्वाभाविक परिणाम जो

होना था, वह हुआ कि जन्म की दर पुरानी रही, किन्तु मृत्यु दस हमने कर दी। अकाल थे; किंतु आकाल में मरना हमने बंद कर दिया। महामारियाँ आती थी, प्लेग आते थे, मलेरिया होता था, हैजा होता था, वे सब हमने बंद कर दिये। हमने मृत्यु के बहुत से द्वार रोक दिये और जन्म के सब द्वार खुले छोड़ दिये। मृत्यु और जन्म के बीच जो संतुलन था, वह विलुप्त हो गया।

1945 में हिरोशिमा और नागासाकी में एटम बम गिरे, उनमें एक लाख आदमी मरे। इस समय लोगों को खतरा है की एटम बम बनते चले गये तो, सारी दुनियां नष्ट हो जायेगी। लेकिन आज जो लोग समझते है, वे कहते है कि दुनिया के नष्ट होने की संभावना एटम बम से बहुत कम है; दुनियां की नयी सम्भावना है यह है—लोगों के पैदा होने से। एक एटम बम गिराकर हिरोशिमा में एक लाख आदमी हमने मारे; लेकिन हम प्रतिदिन डेढ़ लाख आदमी दुनिया में बढ़ा देते है।

एक हिरोशिमा क्या, दो हिरोशिमा रोज हम पैदा कर लेते है। दो लाख आदमी प्रतिदिन बढ़ जाते है।

इसका डर है कि यदि इसी तरह संख्या बढ़ती चली गयी तो इस सदी के पूरे होते-होते हिलने के लिए भी जगह शेष न रह जाएगी। और तब सभाएँ करने की जरूरत नहीं रह जायेगी। क्योंकि तब हम लोग चौबीस घंटे सभाओं में होंगे। आदमी को न्यूयार्क और बम्बई में चौबीसों घंटे हिलने की फुरसत नहीं है। उसे सुविधा नहीं है अवकाश नहीं है।

इस समय सबसे बड़ी चिंता, जो मनुष्य जाति के हित के संबंध में सोचते है, उन लोगों के समक्ष अति तीव्र हो जाना सुनिश्चित है कि यदि मृत्युदर को रोक दिया और जनम दर को पुराने रास्ते चलने दिया तो बहुत डर है कि पृथ्वी हमारी संख्या से ही डूब जाये और नष्ट हो जाये। हम इतने ज्यादा हो गये कि जीना असंभव हो गया है। इसलिए जों भी विचारशील है, वे वहीं कहेंगे कि जिस भांति हमने मृत्यु दर को रोका है उसी भांति जन्म दर को भी रोकना बहुत महत्वपूर्ण है।

पहली बात तो यह ध्यान में रख लेनी है कि जीवन एक अवकाश चाहिए है। जंगल में जानवर मुक्त है मीलों के घेरे में घूमता है। दौड़ता है उसे कट घरे में बंद कर दें, तो उसका विक्षिप्त होना शुरू हो जाता है। बंदर भी मीलों नाचा करते है। पचास बंदरों को एक मकान में बंद कर दें, तो उनका पागल होना शुरू हो जायेगा। प्रत्येक बंदर को एक लिव्हिंग स्पेस, खुली जगह चाहिए जहां वह जी सके।

अब लंदन, मॉस्को, न्यूयॉर्क,और वाशिंगटन में लिव्हिंग स्पेस खो गये है। छोटे-छोटे कट घरों में आदमी बंद है। एक-एक घर में एक-एक कमरे में दस-दस बारह-बारह आदमी बंद है। वहां वे पैदा होते है, वहीं मरते है, वहीं वे भोजन करते है, वहीं बीमार पड़ते है। एक-एक कमरे में दस-दस बारह-बारह पंद्रह-पंद्रह लोग बंद है। अगर वे विक्षिप्त हो जायें तो कोई आश्चर्य नहीं है। अगर वे पागल हो जाये तो को चमत्कार नहीं है। वे पागल होंगे ही। वे पागल नहीं हो रहे है, यहीं चमत्कार है। यही आश्चर्य है, अगर इतने कम पागल हो पा रहे है यही कम आश्चर्य की बात है।

मनुष्य को खुला स्थान चाहिए जीने के लिए लेकिन संख्या जब ज्यादा हो जाये, तो यह बुराई हमें ख्याल में नहीं आती। जब आप एक कमरे में होते है, अब एक मुक्ति अनुभव करते है। दस लोग आकर कमरे में सिर्फ बैठ जायें कुछ न करें तो भी आपके मस्तिष्क में एक अंजान भार बढ़ना शुरू हो जाता है। मनोवैज्ञानिक कहते है कि चारों तरफ बढ़ती हुई भीड़ का प्रत्येक व्यक्ति के मन पर एक अनजाना भार है। आप रास्ते पर चल रहे है, अकेले कोई भी उस रास्ते पर नहीं है। तब आप दूसरे ढंग के आदमी होते है। और फिर उस रास्ते पर दो आदमी बगल की गली के निकल कर आ जाते है। तो आप दूसरे ढंग के आदमी हो जाते है। उनकी मौजूदगी आपके भीतर कोई तनाव पैदा कर देती है।

आप अपने बाथरुम में होते है, तब आपने ख्याल किया है कि आप वही आदमी नहीं होते बैठक घर में होते है। बाथरुम में आप बिलकुल दूसरे आदमी होते है। बूढा भी बाथरुम में बच्चे जैसा उन्मुक्त हो जाता है। बूढ़े भी बाथरुम के आईने में बच्चे जैसी जीभ दिखाई है। मुहर चिढ़ाते है। नाच भी लेते है। लेकिन अगर उन्हें पता चल जाये कि किसी छेद कोई झांक रहा है। तो फिर वे एकदम बूढ़े हो जायेगे। उनका बचपना खो जायेगा। फिर वे सख्त और मजबूर होकर बदल जायेंगे।

हमें कुछ क्षण चाहिए, जब हम बिलकुल अकेले हो सकें।

मनुष्य की आत्मा के जो श्रेष्ठ फूल है, वे एकांत और अकेले में ही खिलते है।

काव्य, संगीत अथवा परमात्मा की प्रतिध्वनि सब एकांत और अकेले में ही मिलती है।

आज तक जगत में भीड़-भाड़ में श्रेष्ठ काम नहीं हुआ, भीड़ ने अब तक कोई श्रेष्ठ काम किया ही नहीं।

जो भी जगत में श्रेष्ठ है—कविता,चित्र, संगीत,परमात्मा, प्रार्थना, प्रेम—वे सब एकान्त में और अकेले में ही फूले है।

लेकिन वे सब फूल शेष न रहे जायेंगे। मुर्झा जायेंगे, मुर्झा रही है। वे सब मिट जायेंगे। सब लुप्त हो जायेंगे। क्योंकि आदमी श्रेष्ठ से रिक्त हो गया है।

भीड़ में निजता मिट गई है। इंडीवीज़ुअलटी मिट जाती है।

स्वयं को बोध कम हो जाता है। आप अकेले नहीं मात्र भीड़ के अंग होते है। इसलिए भीड़ बुरे काम कर सकती है। अकेला आदमी इतने बुरे काम नहीं कर पाता।

अगर किसी मस्जिद को जलाना हो, तो अकेला आदमी उसे नहीं जला सकता है, चाहे वह कितना ही पक्का हिन्दू क्यों न हो। अगर किसी मंदिर में राम की मूर्ति तोड़नी हो तो अकेला मुसलमान नहीं तोड़ सकता है। चाहे वह कितना ही पक्का मुसलमान क्यों न हो। उसके लिए भीड़ चाहिए अगर बच्चों की हत्या करना हो स्त्रीयों के साथ बलात्कार करना और जिंदा आदमियों में आग लगानी हो तो अकेला बहुत कठिनाई अनुभव करता है लेकिन भीड़ एकदम सरलता से करवा लेती है। क्यों?

क्योंकि भीड़ में कोई व्यक्ति नहीं रह जाता और जब व्यक्ति नहीं रह जाता, तो दायित्व,रिस्पॉन्सबिलिटी,भी विदा हो जाती है। तब हम कह सकते है कि हमने नहीं किया,आप भी भीड़ में सम्मिलित थे।

कभी आपने देखा की भीड़ तेजी से चल रही हो; नारे लगा रही हो, तो आप भी नारे लगाने लगते है। और आप भी भीड़ के साथ एक हो जाते हे। ऐसा क्या?

एडल्ट हिटलर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि शुरू-शुरू में मेरे पास बहुत थोड़ लोग थे, दस पन्द्रह लोग थे। लेकिन दस-पन्द्रह लोगों से हिटलर, कैसे हुकूमत पर पहुंचा, सि अजीब कथा है। हिटलर ले लिखा है कि मैं अपने दस पन्द्रह लोगों को ही लेकर सभा में पहुंच जात था। उन पन्द्रह लोगों को अलग-अलग कोनों पर खड़ा कर देता था और जब मैं बोलता था तो उन पन्द्रह लोगों को अलग-अलग तालियां बजाने को कहा जाता था। वे पन्द्रह लोग ताली बजाते थे और बाकी भीड़ भी उनके साथ हो जाती थी। बाकी भीड़ भी तालियां बजाती थी।

कभी आपने ख्याल किया है कि जब आप भीड़ में ताली बजाते है तो आप नहीं बजाते। भीड़ बजवाती है। जब आप भीड़ में हंसते है तो भीड़ ही आपको हंसा देती है। भीड़ संक्रामक है, वह कुछ भी करवा लेती है। क्योंकि वह व्यक्ति को मिटा देती है। वह व्यक्ति की आत्मा को जो उसका अपना होता है उसे पोंछ डालती है।

अगर पृथ्वी पर भीड़ बढ़ती गयी,तो व्यक्ति विदा हो जायेगा। भीड़ रह जायेगी। व्यिक्तत्व क्षीण हो जायेगा। खत्म हो जायेगा। मिट जायेगा। यह भी सवाल नहीं है कि पृथ्वी आगे इतने जीवों को पालने में असमर्थ हो जाये। अगर हमने सब उपाय भी कर लिए, समुद्र से भोजन निकाल लिया, निकाल भी सकते है। क्योंकि मजबूरी होगी, कोई उपास सोचना पड़ेगा। समुद्र से भोजन निकल सकता है। हो सकता है हवा में भी खाना निकाला जा सके। और यह भी हो सकता है कि मिट्टी से भी भोजन को ग्रहण कर सकें। यह बस हो सकता है। सिर्फ गोलियां खाकर भी आदमी जिंदा रह सकता है। भीड़ बढ़ती गई तो भोजन का कोई हल तो हम कर लेंगे, लेकिन आत्मा का हल नहीं हो सकेगा।

इसलिए मेरे सामने परिवारनियोजन केवल आर्थिक मामला नहीं है, बहुत गहरे अर्थों में धार्मिक मामला है।

भोजन तो जुटाया जा सकता है। उसमे बहुत कठिनाई नहीं है। भोजन की कठिनाई अगर लोग समझते है तो बिलकुल गलत समझते है। अभी समुद्र भरे पड़े है। अभी समुद्रों में बहुत भोजन है। वैज्ञानिक प्रयोग यह कह रहे है कि समुद्रों के पानी से बहुत भोजन निकाला जा सकता है। आखिर मछली भी तो समुद्र से भोजन ले रही है। लाखों तरह के जानवर समुद्र से, पानी से भोजन ले रहे है। हम भी पानी से भोजन निकाल सकते है। हम मछली को खा लेते है तो हमारा भोजन बन जाती है। और मछली ने जो भोजन लिया, वह पानी से लिया। अगर हम एक ऐसी मशीन बना सके जो मछली का काम कर सकती है। तो हम पानी से सीधा भोजन पैदा कर सकते है। आखिर मछली भी एक मशीन का ही तो काम कर रही है।

गया घास खाती है, हम गाय का दूध पी लेते है। हम सीधा घास खाये तो मुश्किल होगी। बीच में मध्यस्थ गाय चाहिए। गाय घास को इस हालात में बदल देती है हमारे भोजन के योग्य हो जाता है। आज नहीं कल हम मशीन की गाय भी बना लेंगे। जो घास को इस हालत में बदल दे कि हम उसको खा लें। तब दूध जल्दी ही बन सकेगा। जब व्हेजिटबल घी बन सकता है तो व्हेजिटबल दूध क्यों नहीं बन सकता है। कोई कठिनाई नहीं है। भोजन का मसला तो हल हो जायेगा। लेकिन असली सवाल भोजन का नहीं है। असली सवाल ज्यादा गहरे है।

अगर आदमी की भीड़ बढ़ती जाती है तो पृथ्वी कीड़े मकोड़े की तरह आदमी से भर जायेगी। इससे आदमी की आत्मा खो जायेगी। और उस आत्मा को देन का विज्ञान के पास कोई उपाय नहीं है। आत्मा खो ही जायेगी। और अगर भीड़ बढ़ती चली गई तो, एक-एक व्यक्ति पर चारों और से अनजाना दबाव पड़ेगा। हमें अनजाने दबाव कभी दिखाई नहीं पड़ते।

आप जमीन पर चलते है आपके कभी सोचा की जमीन का ग्रेव्हिटेशन, गुरुत्वाकर्षण आपको खींच रहा है। हम बचपन से ही इसके आदी हो गये है इससे हमें पता नहीं चलता, लेकिन जमीन का बहुत बड़ा आकर्षण हमें पूरे वक्त खींचे हुए है। अभी चाँद पर जो यात्री गये है, उन्हें पता चला कि जमीन उन्हें लौटकर वैसी नहीं लगी। जैसी पहले लगती थी। चाँद पर वे यात्री साठ फिट छलांग भी लगा सकते थे। क्योंकि चाँद की पकड़ बहुत कम है। चाँद बहुत नहीं खींचता है। जमीन बहुत जोर से खींच रही है। हवाएँ चारों तरफ से दबाव डाले हुए है। लेकिन उनका पता हमें नहीं चलता। क्योंकि हम उसके आदी हो गये है।

क्रमश: अगले लेख में...........

ओशो
संभोग से समाधि की और

जनसंख्या विस्फोट

संभोग से समाधि की और—32

Posted on अप्रैल 14, 2011by sw anand prashad

जनसंख्या विस्फोट

और बहुत से अनजाने मानसिक दबाब भी है। गुरुत्वाकर्षण तो भौतिक दबाव हे; लेकिन चारों तरफ से लोगों की मोजूदगी भी हमको दबा रही है। वे भी हमें भीतर की तरफ प्रेस कर रहे है। सिर्फ उनकी मौजूदगी भी हमें परेशान किये हुए है। अगर यह भीड़ बढ़ती चली जाती है। तो एक सीमा पर पूरी मनुष्यता के ''न्यूरोटिक'' विक्षिप्त हो जाने का डर है।

सच तो यह है कि आधुनिक मनोविज्ञान, मनोविश्लेषण यह कहता है कि जो लोग पागल हुए जा रहे है, उन पागल होने वालों में नब्बे प्रतिशत पागल ऐसे है जो भीड़ के दबाव को नहीं सह पा रहे है। दबाव चारों तरफ से बढ़ता चला जा रहा है। और भीतर दबाब को सहना मुश्किल हुआ जा रहा है। उनके मस्तिष्क की नसें फटी जा रही है। इसलिए बहुत गहरे में सवाल सिर्फ मनुष्य के शारीरिक बचाव का नहीं है। फिजिकल सरवाइवल का ही नहीं है। उसके आत्मिक बचाव का भी है।
जो लोग यह कहते है कि संतति नियमन जैसी चीजें अधार्मिक है। उन्हें धर्म का कोई पता नहीं है। क्योंकि धर्म का पहला सूत्र है कि व्यक्ति को व्यक्तित्व मिलना चाहिए। और व्यक्ति के पास एक आत्मा होनी चाहिए। व्यक्ति भीड़ का हिस्सा न रह जाये।

लेकिन जितनी भीड़ बढ़ेगी,उतना ही हम व्यक्तियों की फिक्र करने में असमर्थ हो जायेंगे। जितनी भीड़ ज्यादा हो जायेगी। उतनी हमें भीड़ की फिक्र नहीं करनी पड़ेगी। जितनी भीड़ ही हमें पूरे जगत की इकट्ठी फिक्र करनी पड़ेगी। फिर यह सवाल नहीं होगा की आपको कौन सा भोजन प्रीतिकर है, और कौन से कपड़े प्रीतिकर हे और कैसे मकान प्रीतिकर हे। तब ये सवाल नहीं है। कैसा मकान दिया जा सकता है भीड़ को, कैसे कपड़े दिये जा सकते है भीड़ को, कैसा भोजन दिया जो सकता है भीड़ को। यह सवाल होगा। तब व्यक्ति का सवाल विदा हो जाता हे और भीड़ के एक अंश की तरह आपको भोजन कपड़ा और अन्य सुविधाएं दी जा सकती है।

अभी एक मित्र जापान से लौटे है, वे कह रहे थे कि जापान में घरों की कितनी तकलीफ है। भीड़ बढ़ती चली जा रही है। एक नये तरह के पलंग उन्होंने ईजाद किये है। आज नहीं कल हमें भी ईजाद करने पड़ेंगे। वे मल्टी-स्टोरी पलंग है। रात आप अकेले सो भी नहीं सकते। सब खाटें एक साथ जुड़ी हुई है। एक के उपर एक। रात मैं जब आप सोते है, तो अपने नम्बर की खाट पर चढ़कर सो जाते है। आप सोने में भी भीड़ के बाहर नहीं रह सकते है। क्योंकि भीड़ बढ़ती चली जा रही है। वह रात आपके सोने के कमरे में भी मौजूद हो जायेगी। पर दस आदमी एक ही खाट पर सो रहे हो। तो वे घर कम रह गया,रेलवे कम्पार्टमेंट ज्यादा हो गया। रेलवे कम्पार्टमेंट में भी अभी ''टेन-टायर'' नहीं है। लेकिन दस में भी मामला हल नहीं हो जायेगा।

अगर यह भीड़ बढ़ती जाती है तो यह सब तरफ व्यक्ति को एन्क्रोचमेंट करेगी। वह व्यक्ति को सब तरफ से घेरे गी सब तरफ से बंद करेगी। और हमें ऐसा कुछ कना पड़ेगा कि व्यक्ति धीरे-धीरे खोता ही चला जाये, उसकी चिंता ही बंद कर देनी पड़े।

मेरी दृष्टि में मनुष्य की संख्या का विस्फोट,जनसंख्या का विस्फोट बहुत गहरे अर्थों में धार्मिक सवाल है। सिर्फ भोजन का आर्थिक सवाल नहीं है।

जब परिस्थितियां बदल जाती है तब पुराने नियम विदा हो जाते है।

लेकिन, आज भी घर में एक बच्चा पैदा होता है, तो हम बैंड बाजा बजवाते है, शोरगुल करते है, प्रसाद बांटते है। पाँच हजार साल पहले बिलकुल ऐसी ही बात थी। क्योंकि पाँच हजार साल पहले दस बच्चे पैदा होते थे, तो सात और आठ मर जाते थे। और उस समय एक बच्चे का पैदा होना बड़ी घटना थी। समाज के लिए उसकी बड़ी जरूरत थी। क्योंकि समाज में बहुत थोड़े लोग थे। लोग ज्यादा होना चाहिए। नहीं तो पड़ोसी शत्रु के हमले में जीतना मुश्किल हो जायेगा। एक व्यक्ति का बढ़ जाना बढ़ी ताकत थी। क्योंकि व्यक्ति ही अकेली ताकत था। व्यक्ति से लड़ना था। पास के कबीले से हारना संभव हो जाता। अगर संख्या कम हो जाती

है। तब संख्या को बढ़ाने की कोशिश करना जरूरी था। संख्या जितनी बढ़ जाये, उतना कबीला मजबूत हो जाता था। इसलिए संख्या का बड़ा होना महत्व पर्ण था।

लोग कहते थे कि हम इतनी करोड़ है। उसमें बड़ी अकड़ थी। उसमें बड़ा अहंकार था। लेकिन वक्त बदल गया है, हालत बदल गई है उलटी हो गई है। नियम पुराना चल रहा है। हालतें बिलकुल उल्टी हो गई है।

अब जो जितना ज्यादा संख्या में है। वह उतनी ही जल्दी मरने के उपाय में है। तब जो

जितनी ज्यादा संख्या में था। उतनी ज्यादा उसके जीतने की संभावना थी। आज संख्या जितनी

ज्यादा होगी,मृत्यु उतनी ही नजदीक हो जायेगी।

आज जनसंख्या का बढ़ना स्युसाइडल है, आत्मघाती है।

आज कोई समझदार मुल्क अपनी संख्या नहीं बढ़ा रहा है, बल्कि समझदार मुल्कों में संख्या गिरने तक की संभावना पैदा हो गयी है। जैसे फ्रांस की सरकार थोड़ी चिंतित हो गयी है क्योंकि कहीं ज्यादा न गिर जाए, यह डर भी पैदा हो गया है। लेकिन कोई समझदार मुल्क अपनी संख्या नहीं बढ़ा रहा।

संख्या के बढ़ने के पीछे कई कारण है। पहला कारण तो यह है कि यदि जीवन में सुख चाहिए तो न्यूनतम लोग होने चाहिए। अगर दीनता चाहिए, दु:ख चाहिए,गरीबी चाहिए, बीमारी चाहिए, पागलपन चाहिए तो अधिकतम लोग पैदा करना उचित है।

जब एक बाप अपने पांचवें बच्चे के बाद भी बच्चे पैदा कर रहा है तो वह बच्चे का बाप नहीं, दुश्मन है। क्योंकि वह उसे ऐसी दुनिया में धक्का दे रहा है, जहां वह सिर्फ गरीबी ही बांट सकेगा। वह बेटे के प्रति प्रेम पैदा करना अब प्रेम नहीं सिर्फ नासमझी है और दुश्मनी है।

आप दुनियां में समझदार मां-बाप हो सकते है, इस बात को सोचकर की आप कितने बच्चे पैदा करेंगे। आने वाली दुनिया में संख्या दुश्मन हो सकती है। कभी संख्या उसकी मित्र थी, कभी संख्या बढ़ने से सुख बढ़ता था, आज संख्या बढ़ने से दुःख बढ़ता है। स्थिति बिलकुल बदल गई है।

आज जिन लोगों को भी इस जगत में सुख की मंगल की कामना है, उन्हें यह फिक्र करनी ही पड़ेगी कि संख्या निरंतर कम होती चली जाए।

हम अपने को अभागा बना सकते है, हमें उसका कोई भी बोध नहीं, हमें उसका कोई भी खयाल नहीं।1947 में हिंदुस्तान पाकिस्तान का बंटवारा हुआ था। तब किसी ने सोचा भी न होगा कि बीस साल में पाकिस्तान में जितने लोग गये थे। हम उससे ज्यादा फिर पैदा कर लेंगे।

हमने एक पाकिस्तान फिर पैदा कर लिया है।

1947 में जितनी संख्या पूरे हिंदुस्तान और पाकिस्तान को मिलाकर थी, आज अकेले हिन्दुस्तान की उससे ज्यादा है। यह संख्या इतने अनुपात से बढ़ती चली जा रही है।

और फिर दुःख बढ़ रहा है। दरिद्रता बढ़ रही है, दीनता बढ़ रही है, बेकारी बढ़ रही है। तो हम परेशान होते है। उससे डरते है और हम कहते है कि बेकारी नहीं चाहिए, बीमारी नहीं चाहिए, हर आदमी को जीवन का सारा सुख सुविधाएं मिलनी चाहिए। और हम यह भी नहीं सोचते है कि जो हम कर रहे है उससे हर आदमी को जीवन की सारी सुविधाएं कभी भी नहीं मिल सकती। हमारे बेटे बेकार ही रहेंगे। भिखमंगी और गरीबी बढ़ेगी। लेकिन हमारे धर्म गुरु समझाते है कि यह ईश्वर का विरोध है, संतति नियमन की बात ईश्वर का विरोध है।

हां धर्म गुरु जरूर चाह सकते है। क्योंकि मजे की बात यह है कि दुनिया में जितना दुःख बढ़ता है, धर्म गुरूओं की दुकानें उतनी ही ठीक से चलती है। दुनिया में सुख की दुकानें नहीं है। धर्म की दुकानें के दुःख पर निर्भर करती है।

सुखी और आनंदित आदमी धर्म गुरु की तरफ नहीं जाता है। स्वस्थ और प्रसन्न आदमी धर्म गुरु की तरफ नहीं जाता है। दुःखी बीमार और परेशान व्यक्ति धर्म की तलाश करता है।

दुःखी और परेशान आदमी आत्मा विश्वास खो देता है। वह किसी का सहारा चाहता है। किसी धर्म गुरु के चरण चाहता है। किसी का हाथ चाहता है। किसी का मार्ग दर्शन चाहता है।

दुनिया में जब तक दुःख है, तभी तक धर्म गुरु टिक सकता है। धर्म तो टिकेगा सुखी हो जाने के बाद भी लेकिन धर्म गुरु के टिकने का कोई उपाय नहीं है। इसलिए धर्म गुरु चाहेगा कि दुःख खत्म न हो जायें, दुःख समाप्त न हो जाये। उनके अजीब-अजीब धंधे है।

मैंने सुना एक रात एक होटल में बहुत देर तक कुछ मित्र आकर शराब पीते रहे, भोजन करते रहे। आधी रात जब वे विदा होने लगे तो मैनेजर ने अपनी पत्नी से कहा कि ऐसे भले प्यारे, दिल फेंक खर्च करने वाले लोग अगर रोज आयें तो हमारी जिंदगी में आनंद हो जायें। चलते वक्त मैनेजर ने उनसे कहा, ''आप जब कभी आया करें। बड़ी कृपा होगी। आप आये हम बड़े आनंदित हुए।'' जिस आदमी ने पैसे चुकाये थे, उसने कहा, भगवान से प्रार्थना करना कि हमारा धंधा ठीक चले हम रोज आते रहेंगे। मैनेजर ने पूछा,"क्या धंधा करते है आप?

उसने कहा कि मैं मरघट में लकड़ी बेचने का काम करता हूं। हमारा धंधा रोज चलता रहे तो हम बारबार आते रहेंगे। कभी-कभी होता है कि धंधा बिलकुल नहीं चलता। कोई गांव में मरता ही नहीं, लकड़ी बिलकुल बिकती नहीं। जिस दिन गांव में ज्यादा लोग मरते है, उस दिन लकड़ी ज्यादा बिकती है। जिस दिन ज्यादा धंधा होता है उस दिन आपके पास चले आते है।

आपने सूना डाक्टर लोग भी कुछ ऐसा ही कहते है। जो मरीज ज्यादा होते है, तो कहते है सीजन अच्छा चल रहा है। आश्चर्य की बात है। अगर किन्हीं लोगों का धंधा लोगों के बीमार होने से चलता हो, तो फिर बीमारी मिटना बहुत मुश्किल है।

अभी डॉक्टरों को भी हमने उलटा काम सौंपा हुआ है कि वह लोगों की बीमारी मिटाये। अत: उनकी भीतरी आकांशा यह है कि लोग ज्यादा बीमार हों, क्योंकि उनका व्यवसाय बीमारी पर खड़ा है।

इसलिए रूस ने क्रांति के बाद जो काम किये, उनमें एक काम यह था कि उन्होंने डाक्टर के काम को नेश्नलाइज कर दिया। उन्होंने कहा कि डाक्टर का काम व्यक्तिगत निर्धारित करना खतरनाक है, क्योंकि वह उपर से बीमार को ठीक करना चाहेगा और भीतर आंकाक्षा करेगा की ''बीमार'' बीमार ही बना रहे। कारण उसका धंधा तो किसी के बीमार रहने से ही चलता है। इसलिए उन्होंने डाक्टर का धंधा प्राइवेट प्रैक्टिस बिलकुल बंद कर दी। वहां डाक्टर को वेतन मिलता है। बल्कि उन्होंने एक नया प्रयोग भी किया है। हर डाक्टर को एक क्षेत्र दिया जाता है, उसमें यदि लोग बीमार होते है तो उससे एक्सप्लेनेशन मांगा जाता है। इस क्षेत्र में ज्यादा लोग बीमार कैसे हुए? वहां डाक्टर को यह चिंता करनी होती है की कोई बीमार ने पड़े।

चीन में माओ ने आते ही वकील के धंधे को नेश्नलाइज कर दिया। क्योंकि वकील का धंधा खतरनाक है। क्योंकि वकील का धंधा कांन्ट्राडिक्टरी है। है तो वह इसलिए कि न्याय उपलब्ध करायें। और उसकी सारी चेष्टा यह रहती है कि उपद्रव हो, चोरी हो, हत्याएँ हो, क्योंकि उसका धंधा इसी पर निर्भर करता है।

धर्म गुरु का धंधा भी बड़ा विरोधी है। वह चेष्टा तो यह करता है की लोग शांत हो, आनंदित हो, सुखी हो, लेकिन उसका धंधा इस पर निर्भर करता है कि लोग अशांत रहें, दुःखी रहें बेचैन और परेशान रहे। कारण अशांत लोग ही उसके पास यह जानने आते है कि हम शांत कैसे रहें। दुःखी लोग उसके पास आते है हमारा दुःख कैसे मिटे? दीन-दरिद्र उसके पास आते है कि हमारी दीनता का अंत कैसे हो?

धर्म गुरु का धंधा लोगों के बढ़ते हुए दुःख पर निर्भर है।

इसलिए जब भी दुनिया के धर्म गुरूओं ने सब बातें ईश्वर पर थोप दी है, और ईश्वर कभी गवाही देने आता नहीं है कि उसकी मर्जी क्या है? यह क्या चाहता है? उसकी क्या इच्छा है? इंग्लैण्ड और जर्मनी में अगर युद्ध हो तो इंग्लैण्ड का धर्म गुरु समझाता है कि ईश्वर की इच्छा है कि इंग्लैण्ड जीते? और जर्मनी का धर्म गुरु समझाता है कि ईश्वर की इच्छा है कि जर्मनी जीते। जर्मनी में उसी भगवान से प्रार्थना की जाती है कि अपने देश को जिताओ और इंग्लैण्ड में भी पादरी और पुरोहित प्रार्थना करता है कि है भगवान, अपने देश को जिताओ।

ईश्वर की इच्छा पर हम अपनी इच्छा थोपते रहते है। ईश्वर बेचारा बिलकुल चुप है। कुछ पता नहीं चलता कि उसकी इच्छा क्या है। अच्छा हो कि हम ईश्वर पर अपनी इच्छा न थोपों। हम इस जीवन को सोचें, समझें ओर वैज्ञानिक रास्ता निकाले।

यह भी ध्यान में रखने योग्य है कि जो समाज जितना समृद्ध होता है, वह उतने ही कम बच्चे पैदा करता है। लेकिन दुःखी दीन, दरिद्र लोग जीवन में किसी अन्या मनोरंजन और सुख की सुविधा न होने से सिर्फ सेक्स में ही सुख लेने लगते है। उनके पास और कोई उपाय नहीं रहता।

एक अगर संगीत भी सुनता है, साहित्य भी पढ़ता है, चित्र भी देखता है, घूमने भी जाता है, पहाड़ की यात्रा भी करता है, उसकी शक्ति बहुत दिशाओं में बह जाती है। एक गरीब आदमी के पास शक्ति बहाने का और कोई उपाय नहीं रहता। उसके मनोरंजन का कोई और उपाय नहीं रहता। क्योंकि सब मनोरंजन खर्चीला है; सिर्फ सेक्स ही ऐसा मनोरंजन है, जो मुफ्त उपलब्ध है। इसलिए गरीब आदमी बच्चे इकट्ठे करता चला जाता है।

गरीब आदमी इतने अधिक बच्चे इकट्ठे कर लेता है कि गरीबी बढ़ती चली जाती है। गरीब आदमी ज्यादा बच्चे पैदा करता है। गरीब के बच्चे और गरीब होते चले जाते है। वे और बच्चे पैदा करते जाते है और देश और गरीब होता चला जाता है। किसी ने किसी तरह गरीब आदमी की इस भ्रामक स्थिति को तोड़ना जरूरी है। इसे तोड़ना ही पड़ेगा,अन्यथा गरीबी का कोई पारावार न रहेगा। गरीबी इतनी बढ़ जायेगी की जीना असंभव हो जायेगा।

इस देश में तो गरीबी बढ़ ही रही है, जीना करीब-करीब असंभव हो गया है। कोई मान ही नहीं सकता कि हम जी रहे है। अच्छा हो कि कहा जाये कि हम धीरे-धीरे मर रहे है।

ओशो
संभोग से समाधि की और

प्रवचन—9

जनसंख्या विस्फोट

संभोग से समाधि की और—33

Posted on अप्रैल 24, 2011by sw anand prashad

जनसंख्या विस्फोट
जीने का क्या अर्थ?

जीने का इतना ही अर्थ है कि 'ईग्जस्ट' करते है। हम दो रोटी खा लेते है, पानी पी लेते है। और कल तक के लिए जी लेते है। लेकिन जीना ठीक अर्थों में तभी उपलब्ध होता है जब हम 'एफ्ल्युसन्स' को, समृद्धि को उपलब्ध हो।

जीवन का अर्थ है 'ओवर फ्लोइंग' जीने का अर्थ है, कोई चीज हमारे ऊपर से बहने लगे।

एक फूल है। आपने कभी ख्याल किया है कि फूल कैसे खिलता है पौधे पर? अगर पौधे को खाद न मिले, ठीक पानी न मिले, तो पौधा जिंदा रहेगा, लेकिन फूल नहीं खिलायेगे। फूल 'ओवर फ्लोइंग' है। जब पौधे में इतनी शक्ति इकट्ठी हो जाती है कि अब पत्तों को, शाखाओं को, जड़ों को कोई आवश्यकता नहीं रह जाती है। तब पौधे के पास कुछ अतिरिक्त इकट्ठा हो जाता है। तब फूल खिलता है। फूल जो है, वह अतिरक्ति है, इसलिए फूल सुन्दर है। वह अतिरेक है। वह किसी चीज का बहुत हो जाने के बहाव से है।
जीवन में सभी सौंदर्य अतिरेक है। जीवन सौंदर्य 'ओवर फ्लोइंग' है, ऊपर से बह जाना है।

जीवन के सब आनंद भी अतिरेक है। जीवन में जो भी श्रेष्ठ है, वह सब ऊपर से बह जाता है।

महावीर और बुद्ध राजाओं के बेटे है, कृष्णा और राम राजाओं के बेटे है। ये 'ओवर फ्लोइंग' है। ये फूल जो खिले है गरीब के घर में नहीं खिल सकते थे। कोई महावीर गरीब के घर में

पैदा नहीं होगा। कोई बुद्‌ध गरीब के घर में पैदा नहीं होगा। कोई राम और कोई कृष्ण भी नहीं।

गरीब के घर में ये फूल नहीं खिल सकते। गरीब सिर्फ जी सकता है, उसका जीना इतना न्यूनतम है कि उससे फूल खिलनें का कोई उपाय नहीं है। गरीब पौधा है, वह किसी तरह जी लेता है। किसी तरह उसके पत्ते भी हो जाते है, किसी तरह शाखाएं भी निकल आती है। लेकिन न तो वह पूरी ऊँचाई ग्रहण कर पाता है, न वह सूरज को छू पाता है। न आकाश की तरफ उठ पाता है। न उसमें फूल खिल पाते है। क्योंकि फूल तो तभी खिल सकते है, जब पौधे के पास जीने से अतिरिक्त शक्ति इकट्‌ठी हो जाय। जीने से अतिरिक्त जब इकट्‌ठा होता है, तभी फूल खिलते है।

ताज महल भी वैसा ही फूल हे। वह अतिरेक से निकला हुआ फूल है।

जगत में जो भी सुंदर है, साहित्य है, काव्य है, वे सब अतिरेक से निकले हुए फूल है।

गरीब की जिंदगी में फूल कैसे खिल सकते है?

लेकिन, हम रोज अपने को गरीब करने का उपाय करते चले जाते है? लेकिन ध्यान रहे, जीवन में जो सबसे बड़ा फूल है परमात्मा का....वह संगीत साहित्य, काव्य,चित्र और जीवन के छोटे-छोटे आनंद से भी ज्यादा शक्ति जब ऊपर इकट्‌ठी होती है, तब वह परम फूल खिलता है परमात्मा का।

लेकिन गरीब, समाज उस फूल के लिए कैसे उपयुक्त बन सकता है। गरीब समाज रोज दीन होता जाता है। रोज हीन होता चला जाता है। गरीब बाप जब दो बेटे पैदा करता है, तो अपने से दुगुने गरीब पैदा करता जाता है। जब वह अपने चार बेटों में संपति का विभाजन करता है तो उसकी संपति नहीं बँटती। संपति तो है ही नहीं। बाप ही गरीब था, बाप के पास ही कुछ नहीं था। तो बाप सिर्फ अपनी गरीबी बांट देता है। और चौगुना गरीब समाज में, अपने बच्चों को खड़ा कर जाता है।

हिंदुस्तान सैकड़ों सालों से अमीरी नही, सिर्फ गरीबी बांट रहा है।

हां, धर्म गुरु सिखाते है ब्रह्मचर्य। वे कहते है कि कम बच्चे पैदा करना हो तो ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। किन्तु गरीब आदमी के लिए मनोरंजन के सब साधन बंद है। और धर्म-गुरु कहते है कि वह ब्रह्मचर्य धारण करे। अर्थात जीवन में जो कुछ मनोरंजन का साधन उपलब्ध है। उसे भी ब्रह्मचर्य से बंद कर दे। तब तो गरीब आदमी मर ही गया। वह चित्र

देखने जाता है तो रूपया खर्च होता है। किताब पढ़ने जाता है तो रूपया खर्च होता है। संगीत सुनने जाता है तो रूपया खर्च होता है। एक रास्ता और सुलभ साधन था, धर्म-गुरु कहता है कि ब्रह्मचर्य से उसे भी बंद कर दे। इसीलिए धर्म-गुरु की ब्रह्मचर्य की बात कोई नहीं सुनता, खुद धर्म गुरु ही नहीं सुनते अपनी बात। यह बकवास बहुत दिनों चल चुकी। उसका कोई लाभ नहीं हुआ। उससे कोई हित भी नहीं हुआ।

विज्ञान ने ब्रह्मचर्य की जगह एक नया उपाय दिया, जो सर्वसुलभ हो सकता है। वह है संतति नियमन के कृत्रिम साधन,जिससे व्यक्ति को ब्रह्मचर्य में बंधने की कोई जरूरत नहीं। जीवन के द्वार खुले रह सकत है, अपने को स्पेस, दमित करने की कोई जरूरत नहीं।

और यह भी ध्यान रहे कि जो व्यक्ति एक बार अपनी यौन प्रवृति को जोर से दबा देता है। वह व्यक्ति सदा के लिए किन्हीं अर्थों में रूग्ण हो जाता है। यौन की वृति से मुक्त हुआ जा सकता है। लेकिन यौन की वृत्ति को दबा कर कोई कभी मुक्त नहीं हो सकता। यौन की वृति से मुक्त हुआ जा सकता है। अगर यौन में निकलने वाली शक्ति किसी और आयाम में किसी और दिशा में प्रवाहित हो जाये, तो मुक्त हुआ जा सकता है।

एक वैज्ञानिक मुक्त हो जाता है। बिना किसी ब्रह्मचर्य के, बिना राम-राम का पाठ किये, बिना किसी हनुमान चालीसा पढ़ एक वैज्ञानिक मुक्त हो जाता है। एक संगीतज्ञ भी मुक्त हो सकता है। एक परमात्मा का खोजी भी मुक्त हो सकता है।

ध्यान रहे,लोग कहते है ब्रह्मचर्य जरूरी है, परमात्मा की खोज के लिए। मैं कहता हूं,यह बात गलत है। हां परमात्मा की खोज पर जाने वाला ब्रह्मचर्य को उपलब्ध हो जाता है। अगर कोई परमात्मा की खोज में पूरी तरह चला जाये, तो उसकी सारी शक्तियां इतनी लीन हो जाती है। कि उसके पास यौन कि दिशा में जाने के लिए न शक्ति का बहाव बचता है और न ही आकांशा।

ब्रह्मचर्य से कोई परमात्मा की तरफ नहीं जा सकता, लेकिन परमात्मा की तरफ जाने वाला ब्रह्मचर्य को उपलब्ध हो जात है।

लेकिन, अगर हम किसी से कहें कि वह बच्चे रोकने के लिए ब्रह्मचर्य का उपयोग करे, तो यह अव्यावहारिक है।

गांधी जी निरंतर यहीं कहते रहे, इस मुल्क के और भी महात्मा यहीं कहते है कि ब्रह्मचर्य का उपयोग करो। लेकिन, गांधी जैसे महान आदमी भी ठीक-ठीक अर्थों में ब्रह्मचर्य को कभी उपलब्ध नहीं हुए। वे भी कहते है कि मेरे स्वप्न में कामवासना उतर आती है। वे भी कहते

है कि दिन में तो मैं संयम रख पाता हूं। पर स्वप्नों में सब संयम टूट जाता है। और जीवन के अंतिम दिनों में एक स्त्री को बिस्तर पर लेकर, सो कर वे प्रयोग करते थे कि अभी भी कहीं कामवासना शेष तो नहीं रह गयी। सत्तर साल की उम्र में एक युवती को रात में बिस्तर पर लेकर सोते थे, यह जानने के लिए कि कहीं काम-वासना शेष तो नहीं रह गई है। पता नहीं,क्या परिणाम हुआ। वे क्या जान पाये। लेकिन एक बात पक्की है कि उन्होंने सत्तर वर्ष की उम्र तक शक रहा होगा। कि ब्रह्मचर्य उपल्बध हुआ या नहीं। अन्यथा इस परीक्षा की क्या जरूरत थी।

ब्रह्मचर्य की बात एकदम अवैज्ञानिक और अव्यावहारिक है। कृत्रिम साधनों का उपयोग किया जा सकता है। और मनुष्य के चित पर बिना दबाव दिये उनका उपयोग किया जा सकता है।

ओशो
संभोग से समाधि की और

प्रवचन—9

जनसंख्या विस्फोट

संभोग से समाधि की और—34

Posted on अप्रैल 27, 2011by sw anand prashad

जनसंख्या विस्फोट

कुछ प्रश्न उठाये जाते है। यहां उनके उत्तर देना पसंद करूंगा:–

एक मित्र ने पूछा है कि अगर यह बात समझायी जाये तो जो समझदार है, बुद्धिजीवी है, इंटेलिजेन्सिया है, मुल्क का जो अभिजात वर्ग है, बुद्धिमान और समझदार है, वह तो संतति नियमन कर लेगा, परिवार नियोजन कर लेगा। लेकिन जो गरीब है, दीन-हीन है, वे पढ़े लिखे ग्रामीण है, जो कुछ समझते ही नही, वह बच्चे पैदा करते ही चले जायेंगे और लम्बे अरसे में परिणाम यह होगा कि बुद्धि मानों के बच्चे कम हो जायेगे और गैर-बुद्धि मानों के बच्चों की संख्या बढ़ती जायेगी।

इसे दूसरे तरह से धर्म-गुरु भी उठाते है। वे कहते है कि मुसलमान तो सुनते ही नहीं, ईसाई सुनते नहीं, कैथोलिक सुनते नही, वे कहते है कि 'संतति नियमन' हमारे धर्म के विरोध में है। मुसलमान फ्रिक नहीं करता तो हिन्दू क्यों फ्रिक करेगा। हिन्दू धर्म गुरु कहते है कि हिन्दू

सिकुड़े और मुसलमान, ईसाई बढ़ते चले जायेंगे। पचास साल में मुश्किल हो जायेगी, हिन्दू नगण्य हो जायेंगे। मुसलमान और ईसाई बढ़ जायेंगे। इस बात में भी थोड़ा अर्थ है। इन दोनों के संबंध में कुछ कहना चाहूंगा।

पहली बात तो यह है कि संतति नियमन कम्पलसरी, अनिवार्य होना चाहिए, वालेन्टरी, ऐच्छिक नहीं।

जब तक हम एक-एक आदमी को समझाने की कोशिश करेंगे की तुम्हें संतति नियमन करवाना चाहिए, तब तक इतनी भीड़ हो चुकी होगी कि संतति नियमन का कोई अर्थ नहीं रह जायेगा।

एक अमेरिकी विचार ने लिखा है कि इस वक्त सारी दुनिया में जितने डाक्टर परिवार नियोजन में सहयोगी हो सकते है, अगर वि सब के सब एशिया में लगा दिए जायें,और वे बिलकुल न सोये चौबीस घंटे आपरेशन करते रहें, तो भी उन्हें एशिया को उस स्थिति में लाने के लिए, जहां जनसंख्या नियंत्रण में आ जाय, पाँच सौ वर्ष लगेंगे। और पाँच सौ वर्ष में तो हमने इतने बच्चे पैदा कर लिए होंगे जिसका कोई हिसाब नहीं रह जायेगा।

ये दोनों संभावनाएं नहीं है। दुनिया के सभी डाक्टर एशिया में लाकर लगाये नहीं जा सकते। और पाँच सौ वर्ष में हम खाली थोड़े ही बैठे रहेंगे। पाँच सौ वर्षों में तो हम जाने क्या कर डालेंगे। नहीं यह संभव नहीं होगा। समझाने बुझाने के प्रयोग से तो सफलता दिखाई नहीं पड़ती है।

संतति नियमन तो अनिवार्य करना पड़ेगा और यह अलोकतांत्रिक नहीं है।

एक आदमी की हत्या करने में जितना नुकसान होता है, उससे हजार गुना नुकसान एक बच्चे को पैदा करने से होता है। आत्महत्या से जितना नुकसान होता है, एक बच्चा पैदा करने से उससे हजार गुणा नुकसान होता है। समझाने-बुझाने के प्रयोग से तो सफलता दिखाई नहीं पड़ती।

संतति नियमन तो अनिवार्य होना चाहिए।

तब गरीब व अमीर और बुद्धिमान व गैर बुद्धिमान का सवाल नहीं रह जायगा। तब हिन्दू, मुसलमान और ईसाई का सवाल नहीं रह जायेगा।

यह देश बड़ा अजीब है, हम कहते है कि हम धर्मनिरपेक्ष है, और फिर भी सब चीजों में धर्म का विचार करते है। सरकार भी विचार रखती है। 'हिन्दू कोड बिल' बना हुआ है। वह सिर्फ हिन्दू स्त्रियों पर ही लागू होता है। यह बड़ी अजीब बात है। सरकार जब धर्म निरपेक्ष है तो मुसलमान स्त्रियों को अलग करके सोचे, यह बात ही गलत है। सरकार को सोचना चाहिए स्त्रियों के संबंध में।

मुसलमान को हक है कि वह चार शादियाँ करे,किन्तु हिन्दू को हक नहीं है। तो मानना क्या होगा? यह धर्म निरपेक्ष राज्य कैसे हुआ?

हिन्दुओं के लिए अलग नियम और मुसलमान के लिए अलग नियम नहीं होना चाहिए।

सरकार को सोचना चाहिए 'स्त्री' के लिए। क्या यह उचित है कि चार स्त्रियां एक आदमी की पत्नी बने? यह हिन्दू हो या मुसलमान, यह असंगत है। चार स्त्रियों एक आदमी की पत्नियाँ बने, यह बात ही अमानवीय है।

यह सवाल नहीं है कौन हिन्दू है और कौन मुसलमान है। यह अपनी-अपनी इच्छा की बात है। फिर कल हम यह भी कह सकते है कि मुसलमान को हत्या करने की थोड़ी सुविधा देनी चाहिए। ईसाई को थोड़ी या हिन्दू को थोड़ी सुविधा देनी चाहिए हत्या करने की। नहीं, हमें व्यक्ति और आदमी की दृष्टि से विचार करने की जरूरत नहीं है। यह सवाल पूरे मुल्क का है, इसमें हिन्दू, मुसलमान और ईसाई अलग नहीं किये जा सकते।

दूसरी बात विचारणीय है कि हमारे देश में हमारी प्रतिभा निरंतर क्षीण होती चली गयी है। और अगर हम आगे भी ऐसे ही बच्चे पैदा करना जारी रखते है तो संभावना है कि हम सारे जगत में प्रतिभा में धीरे-धीरे पिछड़ते चले जायेंगे।

अगर इस जाति को ऊँचा उठाना हो—स्वास्थ्य में, सौन्दर्य में, प्रतिभा में, मेधा में तो हमें प्रत्येक आदमी को बच्चे पैदा करने का हक नहीं देना चाहिए।

संतति नियमन अनिवार्य तो होना ही चाहिए। बल्कि जब तक विशेषज्ञ आज्ञा न दें, तब तक बच्चा पैदा करने का हक किसी को भी नहीं रह जाना चाहिए। मेडिकल बोर्ड जब तक अनुमति न दे-दे, तब तक कोई आदमी बच्चे पैदा न कर सके।

कितने कोढ़ी बच्चे पैदा किये जाते है, कितने ईडियट, मूर्ख पैदा किये जाते है। कितने संक्रामक रोगों से भरे लोग बच्चे पैदा करते है और उनके बच्चे पैदा होते चले जाते है। और देश में दया और धर्म करने वाले लोग है। अगर वे खुद अपने बच्चे न पाल सकते हों, तो हम उनके

लिए अनाथालय खोलकर उनके बच्चों पालने का भी इंतजाम कर देते है। ये ऊपर से तो दान और दया दिखाई पड़ रही है, लेकिन है बड़ी खतरनाक इंतजाम। इंतजाम तो यह होना चाहिए कि बच्चे स्वस्थ,सुन्दर,बुद्धिमान, प्रतिभाशाली वह संक्रामक रोगों से मुक्त हों।

असल में शादी के पहले ही हर गांव में हर नगर में डॉक्टरों की, विचारशील मनोवैज्ञानिकों, साइकोलॉलिस्टस की सलाहकारसमिति होनी चाहिए। जो प्रत्येक व्यक्ति को निर्देश दे। अगर दो व्यक्ति शादी करते है, तो वे बच्चे पैदा कर सकेंगे या नहीं, यह बता दें। शादी करने का हक प्रत्येक को है। ऐसे दो लोग भी शादी कर सकेंगे जिनको सलाह नदी गयी हो, लेकिन बच्चो पैदा न कर सकेंगे।

हम जानते है कि पौधे पर 'क्रास ब्रीडिंग' से कितना लाभ उठाया जा सकता है। एक माली अच्छी तरह जानता है कि नये बीज कैसे विकसित किये जाते है। गलत बीजों को कैसे हटाया जा सकता है। छोटे बीज कैसे अलग किये जा सकते है, बड़े बीज कैसे बचाये जा सकते है। एक माली सभी बीज नहीं बो देता। बीजों को छाँटता है।

हम अब तक मनुष्य-जाति के साथ उतनी समझदारी नहीं कर सके, जो एक साधारण सा माली बग़ीचे में करता है। यह भी आपको ख्याल हो कि जब माली को बड़ा फूल पैदा करना होता है तो वह छोटे फूलों को पहले काट देता है। आपने कभी फूलों की प्रदर्शनी देखी है, जो फूल जीतते है,उनके जीतने का कारण क्या है?

उनका कारण यह है कि माली ने होशियारी से एक पौधे पर एक ही फूल पैदा किया। बाकी फूल पैदा ही नहीं होने दिये। बाकी फूलों को उसने जड़ से ही अलग कर दिया, पौधे की सारी शक्ति एक ही फूल में प्रवेश कर गयी।

एक आदमी बारह बच्चे पैदा करता है तो भी कभी भी बहुत प्रतिभाशाली बच्चे पैदा नहीं कर सकता। अगर एक ही बच्चा पैदा करे तो बारह बच्चों की सारी प्रतिभा एक बच्चे में प्रवेश कर सकती है।

प्रकृति के भी बड़े अद्भुत नियम है। प्रकृति बड़े अजीब ढंग से काम करती है। जब युद्ध होता है दुनिया में,तो युद्ध के बाद लोगों की संतति पैदा करने की क्षमता बढ़ जाती है। यह बड़ी हैरानी की बात है। युद्ध से क्या लेना-देना। जब-जब भी युद्ध होता है तो जन्म दर बढ़ जाती है। पहले महायुद्ध के बाद जन्म दर एकदम ऊपर उठ गई, कयोंकि पहले महायुद्ध में साढ़े तीन करोड़ लोग मर गये थे। प्रकृति कैसे इंतजाम रखती है। यह भी हैरानी की बात है। प्रकृति को कैसे पता चला कि युद्ध हो गया, और अब बच्चों की जन्म दर बढ़ जानी चाहिए।

दूसरे महायुद्ध में भी कोई साढ़े सात करोड़ लोग मारे गये। जन्म दर एकदम बढ़ गई। महामारी के बाद हैजा के बाद,प्लेग के बाद लोगों की जन्म दर बढ़ जाती है।

अगर एक आदमी पचास बच्चे पैदा करे तो उसकी शक्ति पचास पर बिखर जाती है। अगर वह एक ही बच्चे पर केन्द्रित करे तो उसकी शक्ति,उसकी प्रतिभा प्रकृति एक ही बच्चे में डाल सकती है। सौ लड़कियां पैदा होती है तो लड़के 116 पैदा होते है। यह अनुपात है सारी दुनिया में। और यह बड़े मजे की बात है कि 116 लड़के किस लिए पैदा होते है? 16 लड़ते बेकार रह जायेगे, इन्हें कौन लड़की देगा? 100लड़कियां पैदा होती है, 116 लड़के पैदा होते है। लेकिन प्रकृति का इंतजाम बड़ा अद्भुत है। प्रकृति का इंतजाम बहुत गहरा है। वह लड़कियों को कम पैदा करती है और लड़कों को अधिक; क्योंकि उम्र पाते-पाते प्रौढ़ होते-होते16 लड़के मर जाते है। और संख्या बराबर हो जाती है। असल में लड़कियों के जीवन में जीने की रेजिस्टेन्स, अवरोध-क्षमता लड़कों से ज्यादा होती है। इस लिए 16 लड़के ज्यादा पैदा होते है। हर 14 साल बाद संख्या बराबर हो जाती है। लड़कियों में जिंदा रहने की शक्ति लड़कों से ज्यादा है।

आमतौर पर पुरूष सोचता है कि हम सब तरह से शक्तिवान है। इस भूल में मत पड़ना। कुछ बातों को छोड़कर स्त्रियां पुरूषों से कई अर्थों में ज्यादा शक्तिवान है, उनका रेजिस्टेन्स, उनकी शक्ति कई अर्थों में ज्यादा है। शायद प्रकृति ने स्त्री को सारी क्षमता इसलिए दी है कि वह बच्चे को पैदा करने की बच्चे को झेलने की, बड़ा करने की जो इतनी तकलीफदेह प्रक्रिया है, उन सब को झेल सके। प्रकृति सब इंतजाम कर देती है। अगर हम बच्चे कम पैदा करेंगे तो प्रकृति जो अनेक बच्चों पर प्रतिभा देती है। वह एक बच्चे पर डाल देगी।

आदमी इस लिए रहा है कि वह दूसरी चीजों के विषय में वैज्ञानिक चिंतन कर लेता है, लेकिन आदमियों के संबंध में नहीं करता। आदमियों के संबंध में हम बड़े अवैज्ञानिक है। हम कहते है कि हम कुंडली मिलायेंगे। हम कहते है कि हम ब्राह्मण से ही शादी करेंगे।

विज्ञान तो कहता है की शादी जितनी दूर हो उतनी ही अच्छी है। अगर अन्तर जातीय होत बहुत अच्छा है। अंतर्देशीय हो; तो और भी अच्छा है। और अंतर्राष्ट्रीय हो तो अधिक अच्छा है। और आज नहीं तो कल अंतर्ग्रहीय हो जाये, मंगल पर या कहीं और आदमी मिल जाये तो और भी अच्छा है। क्योंकि हम जानते है कि अंग्रेजी सांड और हिन्दुस्तानी गाय हो तो जो बछड़े पैदा होंगे? उसका मुकाबला नहीं रहेगा।

हम आदमी के संबंध में समझ का उपयोग कब करेंगे?

अगर हम समझ का उपयोग करेंगे तो जो हम जानवरों के साथ कर रहे है, समृद्ध फूलों के साथ कर रहे है। वही आदमी के साथ करना जरूरी होगा। ज्यादा अच्छे बच्चे पैदा किये जा सकते है, ज्यादा स्वस्थ,ज्यादा उम्र जीने वाले, प्रतिभा शाली। लेकिन उनके लिए कोई व्यवस्था देने की जरूरत है।

परिवार नियोजन,मनुष्य के वैज्ञानिक संतति नियोजन का पहला कदम है।

अभी और कदम उठाने पड़ेंगे, यह तो अभी सिर्फ पहला कदम है। लेकिन पहले कदम से ही क्रांति हो जाती है। वह क्रांति आपके ख्याल में नहीं है। वह मैं आपसे कहना चाहूंगा। जो बड़ी क्रांति परिवार नियोजन की व्यवस्था से हो जाती है। हम पहली बार सेक्स को यौन को संतति से तोड़ देते है। अब तक यौन संभोग का अर्थ था—संतति का पैदा होना। अब हम दोनों को तोड़ देते है। अब हम कहते है, संतति को पैदा होने की कोई अनिवार्यता नहीं है।

यौन और संतति को हम दो हिस्सों में तोड़ रहे है—यह बहुत बड़ी क्रांति है।

इसका मतलब अंतत: यह होगा कि अगर यौन से संतति के पैदा होने की संभावना नहीं है तो कल हम ऐसी संतति को भी पैदा करने की व्यवस्था करेंगे जिसका हमारे यौन से कोई संबंध न हो—यह दूसरा कदम होगा।

संतति नियमन का अंतिम परिणाम यह होने वाला है कि हम वीर्य-कणों को सुरक्षित रखने की व्यवस्था कर सकेंगे? आइंस्टीन का वीर्य कण उपलब्ध हो सकता है।

एक आदमी के पास कितने वीर्य-कण है। कभी आपने सोचा है? एक संभोग में एक आदमी कितने वीर्य कण खोता है? एक संभोग में एक आदमी इतने वीर्य कण खोता है कि उनसे एक करोड़ बच्चे पैदा हो सकत है। और एक आदम अंदाजन जिंदगी में चार हजार बार संभोग करता है। याने एक आदम चार हजार करोड़ बच्चों को जन्म दे सकता है।

एक आदमी के वीर्य कण अगर संरक्षित हो सकें तो एक आदमी चार करोड़ बच्चों का बाप बन सकता है। एक आइंस्टीन चार हजार बच्चों को जन्म दे सकता है। एक बुद्ध चार हजार बच्चों को जन्म दे सकता है।

क्या ये उचित होगा की हम आदमी की बाबत विचार करे। और हम इस बात की खोज करें? संतति नियमन ने पहली घटना शुरू कर दी, हमने सेक्स को तोड़ दिया। अब हम कहते है कि बच्चे की फिक्र छोड़ दो संभोग किया जा सकता है। संभोग का सुख लिया जा सकता है।

बच्चे की चिंता की कोई जरूरत नहीं है। जैसे ही यह बात स्थापित हो जायेगी। दूसरी कदम भी उठाया जा सकता है।

और वह यह कि—अब जिससे संभोग करते हों, उससे ही बच्चा पैदा हो, तुम्हारे ही संभोग से बच्चा पैदा हो, यह भी अवैज्ञानिक है।

और अच्छी व्यवस्था की जा सकती है, और वीर्य-कण उपलब्ध किया जा सकता है। वैज्ञानिक व्यवस्था की जा सकती है। और तुम्हें वीर्य कण मिल सकता है। चूंकि अब तक हम उसको सुरक्षित नहीं रख सकते थे। अब तो उसको सुरक्षित रखा जा सकता है। अब जरूरी नहीं कि आप जिंदा हों, तभी आपका बेटा पैदा हो। आपके मरने के 50 साल बाद भी आपका बेटा पैदा हो सकता है।

इसलिए यह जल्दी करने की जरूरत नहीं है कि मेरा बेटा मेरे जिंदा रहने में ही पैदा हो जाये। वह बाद में 10 हजार साल बाद भी पैदा हो सकता है। अगर मनुष्यों ने समझा कि आपका बेटा पैदा करना जरूरी है। तो वह आपके लिए सुरक्षा कर सकता है।

आपका बच्चा कभी भी पैदा हो सकता है। अब बाप और बेटे का अनिवार्य संबंध उस हालत में नहीं रह जायेगा। जिस हालत में अब तक था, वह टूट जायेगा।

एक क्रांति हो रही है। लेकिन इस देश में हमारे पास समझ बहुत कम है। अभी तो हम संतति नियमन को ही नहीं समझ पा रहे है। यह पहला कदम है, यह सेक्स मारेलिटी के संबंध में पहला कदम है। और एक दफा सेक्स की पुरानी आदत, पुरानी नीति टूट जाये तो इतनी क्रांति होगी कि जिसका हिसाब लगाना मुश्किल है। क्योंकि हमें पता भी नहीं कि जो भी हमारी नीति है वह किसी पुरानी यौन व्यवस्था से संबंधित है। यौन व्यवस्था पूरी तरह टूट जाये तो पूरी नीति बदल जाती है।

धर्म-गुरु इसलिए भी डरा हुआ है। गांधी जी और विनोबा जी इसलिए भी डरे हुए है कि अगर यह कदम उठाया गया तो यह पुरानी नैतिक व्यवस्था को तोड़ देगा। नयी निति विकसित हो जायेगी। क्योंकि पुरानी नीति का कोई अर्थ नहीं रह जायेगा।

अब तक स्त्री को निरंतर दबाया जा सकता था। पुरूष अपने सेक्स के संबंध में स्वतंत्रता बरत सकता है। क्योंकि उसको पकड़ना मुश्किल है।

इसलिए, पुरूष ने ऐसी व्यवस्था बनायी था, जिसमे स्त्री की पवित्रता और अपनी स्वतंत्रता का पूरा इंतजाम रखा था। इसलिए स्त्री को सती होना पड़ता था, पुरूष को नहीं।

इसलिए स्त्री के कुँवारे रहने पर भारी बल था, पुरूष के कुँवारे रहने की कोई चिंता न थी। इस लिए अब भी माताएं ओर स्त्रियां कहती है। कि लड़के तो लड़के है, लेकिन लड़कियों के संबंध में हिसाब अलग है।

अगर संतति नियमन की बात पूरी होगी। होनी ही पड़ेगी। तो लड़कियां भी लड़कों जैसी मुक्त हो जायेगी। उनको फिर बांधने और दबाने का उपाय नहीं रहेगा। लड़कियां उपद्रव में पड़ सकती थीं,क्योंकि उनको गर्भ रह जा सकता है। पुरूष उपद्रव में नहीं पड़ता था, क्योंकि उसको गर्भ का कोई डर नहीं है।

नई व्यवस्था ने लड़कियों को भी लड़कों की स्थिति में खड़ा कर दिया है। पहली दफा स्त्री और पुरूष की समानता सिद्ध हो सकेगी। अब तक सिद्ध ने हो सकती थी। चाहे हम कितना भी चिल्लाते कि स्त्रियों और पुरूष समान है। वे इसलिए समान नहीं हो सकते थे। क्योंकि पुरूष स्वतंत्रता बरत सकता था। पकड़ा जाने के भय से स्त्री स्वतंत्रता नहीं बरत सकती थी।

विज्ञान की व्यवस्था ने स्त्री को पुरूष के निकट खड़ा कर दिया है। अब वे दोनों बराबर स्वतंत्र है। अगर पवित्रता निश्चित करनी है, तो दोनों को ही निश्चित करनी पड़ेगी। अगर स्वतंत्रता तय करनी है, तो दोनों समान रूप सक स्वतंत्र होगें।

बर्थ-कंट्रोल, संतति नियमन के कृत्रिम साधन स्त्री को पहली बार पुरूष के निकट बिठाते है। बुद्ध नहीं बिठा सके, महावीर नहीं बिठा सके। अब तक दुनियां में कोई महापुरुष नहीं बिठा सका।

उन्होंने कहा, दोनों बराबर हे। लेकिन वे बराबर हो नहीं सके। क्योंकि उनकी एन टॉमी,उनकी शरीर की व्यवस्था खास कर गर्भ की व्यवस्था कठिनाई में डाल देती थी। स्त्री कभी भी पुरूष की तरह स्वतंत्र नहीं हो सकती थी। आज पहली दफा स्त्री भी स्वतंत्र हो सकती है। अब इसके दो मतलब होंगे—या तो स्त्री स्वतंत्र की जाये या पुरूष की अब तक की स्वतंत्रता पर पुनर्विचार किया जाये।

अब सारी नीति को बदलना पड़ेगा। इसलिए धर्म-गुरु परेशान है। अब मनु की नीति को बदलना पड़ेगा। इस लिए धर्म गुरु परेशान है। अब मनु की नीति नहीं चलेगी, क्योंकि सारी व्यवस्था बदल जायेगी और इसलिए उनकी घबराहट स्वाभाविक है।

लेकिन, बुद्धिमान लोगों को समझ लेना चाहिए कि उनकी घबराहट,उनकी नीति को बचाने के लिए मनुष्यता की हत्या नहीं की जा सकती। उनकी नीति जाती हो कल, तो आज चली जाये।

लेकिन मनुष्यता को बचाना ज्यादा महत्वपूर्ण है और ज्यादा जरूरी है। मनुष्य रहेगा तो हम नयी नीति खोज लेंगे,और अगर मनुष्यता न रही तो मनु की याज्ञवल्क्य की किताबें सड़ जायेगी। और गल जायेगी तथा नष्ट हो जायेगी। उनको कोई बचा नहीं सकता।

मैं परिवार नियोजन में मनुष्य के लिए भविष्य में बड़ी क्रांति की संभावनाएं देखता हूं।

इतना ही नहीं कि आप दो बच्चों पर रोक लेंगे अपने को, बल्कि अगर परिवार नियोजन की स्वीकृति उसका पूरा दर्शन हमारे ख्याल में आ जाये तो मनुष्य की पूरी नीति पूरा धर्म, अंतत: परिवार की पूरी व्यवस्था और अंतिम रूप से परिवार का पूरा ढांचा बदल जाएगा। कभी छोटी चीजें सब बदल देती है। जिनका हमें ख्याल नहीं होता।

मैं परिवार नियोजन और कृत्रिम साधनों के पक्ष में हूं, क्योंकि मैं अनंत: जीवन को चारों तरफ से क्रांति से गुजरा हुआ देखना चाहता हूं।

चीन से एक आदमी ने जर्मनी के एक विचारक को एक छोटी सी पेटी भेजी। लकड़ी की पेटी,बहुत खूबसूरत खुदाई थी उस पेटी पर। अपने मित्र को वह पेटी भेजी और लिखा कि मेरी एक शर्त है उसको ध्यान में रखना, इस पेटी का मुंह हमेशा पूर्व की तरफ रखना। क्योंकि यह पेटी हजार वर्ष पुरानी है और जिन-जिन लोगों के हाथ में गई है, यह शर्त उनके साथ रही है कि इसका मुंह पूर्व की तरफ रहे, यह इसे बनाने वाले की इच्छा है। अब तक पूरी की गई थी। इस का ध्यान रखना।

उसके मित्र ने लिख भेजा कि चाहे कुछ भी हो, वह पेटी का मुंह पूर्व की तरफ रखेगा। इसमें कठिनाई क्या है? लेकिन पेटी इतनी खूबसूरत थी कि जब उसने अपने बैठक खाने में पेटी का मुंह पूर्व की और करके रखा तो देखा कि पूरा बैठक खाना बेमेल हो गया। उसे पूरे बैठक खाने को बदलना पड़ा,फिर से आयोजितकरना पड़ा, सोफा बदलने पड़े,टेबल बदलने पड़े, फोटो बदलनी पड़ी। तो उसे हैरानी हुई कि कमरे के जो दरवाजे खिड़कियाँ थी। वे बेमेल हो गई। पर उसके पक्का आश्वासन दिया था तो उसने खिड़की दरवाजे भी बदल डाले। लेकिन वह कमरा अब पूरे मकान में बेमेल हो गया। तो उसने पूरा मकान बदल लिया। आश्वासन दिया था। तो उसे पूरा करना था। तब उसने पाया कि उसका बग़ीचा, बाहर का दृश्य फूल सब बेमेल हो गये। तब उसको उन सब को बदलना पडा।

फिर भी उसने अपने मित्र को लिखा कि मेरा घर मेरी बस्ती में बेमेल हुआ जा रहा है। इसलिए मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया हूं। अपने घर तक तो बदल सकता हूं, लेकिन पूरे गांव को कैसे बदलूंगा और गांव को बदलूंगा तो शायद वह सारी दुनिया बेमेल हो जाए। तो बड़ी मुश्किल हो जायेगी।

यह घटना बताती है कि एक छोटी सी बदलाहट अंततः सब चीजों को बदल देती है।

धर्म गुरु का डरना ठीक है, वह डरा हुआ है। उसके कारण है। उसे अचेतन में यह बोध हो रहा है कि अगर संतति नियमन और परिवार नियोजन की व्यवस्था आ गई तो अब तक की परिवार की धारणा नीति सब बदल जायेगी।

और मैं क्यों पक्ष में हूं? क्योंकि मैं चाहता हूं कि वह जितनी जल्दी बदले, उतना ही अच्छा है। आदमी ने बहुत दुःख झेले लिए पुरानी व्यवस्था से, उसे नयी व्यवस्था चाहिए। जरूरी नहीं कि नयी व्यवस्था सुख ही लायेगी। लेकिन कम से कम पुराना दुःख तो न होगा। दुःख भी होगें तो नये होगें। और जो नये दुःख खोज सकता है, वह नये सुख भी खोज सकता है।

असल में नये की खोज की हिम्मत जुटानी जरूरी है। पूरे मनुष्य को नया करना है। और परिवार नियोजन और संतति नियमन केंद्रिय बन सकता है। क्योंकि सेक्स मनुष्य के जीवन में केंद्रिय है। हम उसकी बात करें या न करें। हम उसकी चर्चा करें या न करें, सेक्स मनुष्य के जीवन में केंद्रिय तत्व है। अगर उसमे कोई भी बदलाहट होती है तो हमारा पूरा धर्म पूरी नीति सब बदल जायेगी। वे बदल जानी ही चाहिए।

मनुष्य के भोजन निवास भविष्य की समस्याएं ही इससे बंधी नहीं है, मनुष्य की आत्मा मनुष्य की नैतिकता मनुष्य के भविष्य का धर्म मनुष्य के भविष्य का परमात्मा भी इस बात पर निर्भर है कि हम अपने यौन के संबंध में क्या दृष्टि कोण अख्तियार करते है।

ओशो
संभोग से समाधि की और

प्रवचन—9

जनसंख्या विस्फोट

← लूटने की आस है—(कविता)

बुद्ध पुरूष कहां पैदा होते है—(कथा –46) →

संभोग से समाधि की और—35

Posted on अप्रैल 29, 2011by sw anand prashad

जनसंख्या विस्फोट

प्रश्नकर्ता: भगवान श्री, परिवार नियोजन के बारे में अनेक लोग प्रश्न करते है कि परिवार द्वारा अपने बच्चों की संख्या कम करना धर्म के खिलाफ है। क्योंकि उनका कहना है कि

बच्चे तो ईश्वर की देन है, और खिलाने वाला परमात्मा है। हम कौन है? हम तो सिर्फ जरिया है, इंस्ट्रूमेंट है। हम तो सिर्फ बीच में इंस्टुमेंट है, जिसके ज़रिये ईश्वर खिलाता है। देने वाला वह, करने वाला वह, फिर हम क्यों रोक डालें? अगर हमको ईश्वर ने दस बच्चे दिये तो दसों को खिलाने का प्रबंध भी तो वहीं करेगा। इस संबंध में आपका क्या विचार है?
भगवान श्री: सबसे पहले तो 'धर्म क्या है' इस संबंध में थोड़ा सी बात समझ लेनी चाहिए।

धर्म है मनुष्य को अधिकतम आनंद, मंगल और सुख देने की कला।

मनुष्य कैसे अधिकतम रूप में मंगल और सुख को उपलब्ध हो, इसका विज्ञान ही धर्म है। तो, धर्म ऐसी किसी बात की सलाह नहीं दे सकता, जिससे मनुष्य के जीवन में सुख की कमी हो। परमात्मा भी वह नहीं चाह सकता, जिससे कि मनुष्य का दुःख बढ़े, परमात्मा भी चाहेगा कि मनुष्य का आनंद बढ़े। लेकिन परमात्मा मनुष्य को परतंत्र भी नहीं करता क्यों? क्योंकि परतंत्रता भी दुःख है। इसलिए परमात्मा ने मनुष्य को पूरी तरह स्वतंत्र छोड़ा है। और स्वतंत्रता में अनिवार्य रूप से यह भी सम्मिलित है कि मनुष्य चाहे तो अपने लिए दुःख निर्माण कर ले, तो परमात्मा रोकेगा नहीं।

हम अपना दुःख भी बना सकते है, और सुख भी। हम आनंदमय हो सकते है और परेशान भी। यह सारी स्वतंत्रता मनुष्य को है। इसलिए यदि हम दुःखी होते है, तो परमात्मा जिम्मेदार नहीं है। उस दुःख के कारण हमें खोजने पड़ेंगे और बदलने पड़ेंगे।

मनुष्य ने दुःख के कारण बदलने में बहुत विकास किया है। एक बड़ा दुःख था जगत में कि मृत्यु की दर बहुत ज्यादा थी। दस बच्चे पैदा होते थे तो नौ बच्चे मर जाते थे। खुद का मरना भी शायद दुखद न होगा। जितना दस बच्चो का पैदा होना और नौ कर मर जाना। तो मां बाप बच्चों के जन्म की करीब-करीब खुशी ही नहीं मना पाते,मरने का दुःख मनाते ही जिंदगी बीत जाती थी।

तो मनुष्य ने निरंतर खोज की और अब यह हालत आ गई है कि दस बच्चों में से नौ बच सकते है। और कल दस बच्चे भी बचाये जा सकते है। दस बच्चे में से नौ बच्चे मरते थे तो एक आदमी को अगर तीन बच्चे बचाना हो तो कम से कम औसतन तीस बच्चे पैदा करने होते थे। तब तीस बच्चे पैदा होते तो तीन बच्चे बचते थे।

अब मनुष्य ने खोज कर ली है नियमों की और वह इस जगह पहुंच गया है कि दस बच्चों में से नौ बच्चे जिन्दा रहेंगे; दस भी जिंदा रह सकते है। लेकिन, आदत उसकी पुरानी पड़ी हुई है—तीस बच्चे पैदा करने की।

आज परिवार नियोजन जो कह रहा है ''दो या तीन बच्चे बस'' यह कोई नई बात नहीं है। इतने बच्चे तब भी थे। इससे ज्यादा तो कभी होते ही नहीं थे। औसत तो यहीं था, तीन बच्चों का। और 27 बच्चे मर जाते थे। फिर 27 बच्चों के मर जाने से तीन का सुख भी समाप्त हो जाता था। तो हमने व्यवस्था कर ली कि हमने मृत्यु दर को कम कर लिया। वह भी हमने परमात्मा के नियमों को खोज कर किया। वे नियम भी कोई आदमी के बनाये नियम नहीं है। अगर बच्चे मर जाते थे तो वे भी हमारे नियम की नासमझी के कारण मरते थे। हमने नियम खोज लिया है। बच्चे ज्यादा बचा लेते है। बच्चे जब हम ज्यादा बचा लेते है तो सवाल खड़ा हुआ कि इतने बच्चों के लिए इस पृथ्वी पर सुख की व्यवस्था हम कर पायेंगे? इतने बच्चों के लिए सुख की व्यवस्था इस पृथ्वी पर नहीं की जा सकती।

बुद्ध के समय में हिंदुस्तान की आबादी दो करोड़ थी। आज हिंदुस्तान की आबादी 50 करोड़ के ऊपर है। जहां दो करोड़ खुशहाल हो सकते थे वहां, 50 करोड़ लोग कीड़े मकोड़ों की तरह मरने लगेंगे। और परेशान होने लगेंगे। क्योंकि जमीन नहीं बढ़ती। जमीन के उत्पादन की क्षमता नहीं बढ़ती। आज पृथ्वी पर साढ़े तीन खरब लोग है, यह संख्या इतनी ज्यादा है कि पृथ्वी संपन्न नहीं हो सकती। इतनी संख्या के होते हुए भी हमने मृत्यु दर रो ली है। उस वक्त हमने न कहां की भगवान चाहता है कि दस बच्चे पैदा हो और नौ मर जाये। अगर हम उस वक्त कहते तो भी ठीक था। उस वक्त हम राज़ी हो गये। लेकिन अब हम कहते है कि हम बच्चे पैदा करेंगे, क्योंकि भगवान दस बच्चे देता है। यह तर्क बेईमान तर्क है। इसका भगवान से धर्म से कोई संबंध नहीं है। जब हम दस बच्चे पैदा कर के नौ मारते थे। तब भी हमें यहीं कहना चाहिए था। हम न बचायेंगे। हम दवा न करेंगे। हम इलाज न करेंगे। हम चिकित्सा की व्यवस्था न करेंगे।

चिकित्सा की व्यवस्था इलाज,दवाएं सबकी खोज हमने की, जो कि बिलकुल उचित ही है और इसको निश्चित ही भगवान आशीर्वाद देगा। क्योंकि भगवान बीमारी का आशीर्वाद देता हो, और इतने बच्चे पैदा हों और उनमें अधिकतम मर जायें। इसके लिए उसका आशीर्वाद हो, ऐसी बात जो लोग कहते है, वे धार्मिक नहीं हो सकते। वे तो भगवान को भी क्रूर,हत्यारा और बुरा सिद्ध कर देते है।

अगर बच्चे मरते थे तो हमारी नासमझी थी। अब हमने समझ बढ़ा ली, अब बच्चे बचेंगे। अब हमें दूसरी समझ बढ़ानी पड़ेगी कि कितने बच्चे पैदा करें। मृत्यु दर जब हमने कम कर ली तो हमें जन्म दर भी कर करनी पड़ेगी, अन्यथा नौ बच्चों के मरने से जितना दुःख होता था, दस बच्चों के बचने से उससे कई गुणा ज्यादा दुख जमीन पर पैदा हो जायेगा।

आदमी स्वतंत्र है अपने दुःख और सुख के लिए।

वह आदमी की बुद्धिमत्ता पर निर्भर है कि वह कितना सुख अर्जित करे या कितना दुःख अर्जित करे।

तो अब जरूरी हो गया है कि हम कम बच्चे पैदा करे। ताकि अनुपात वही रहे जो की पृथ्वी संभाल सकती है।

और बड़े मजे की बात है कि हम भगवान का नाम लेते है तो यह भूल जाते है कि अगर भगवान बच्चे पैदा कर रहा है तो बच्चों को रोकने की जो कल्पना, जो ख्याल पैदा हो रहा है, वह कौन पैदा कर रहा है। अगर डाक्टर के भीतर से भगवान बच्चे को बचा रहा है तो डाक्टर के भीतर से उन बच्चों को आने से रोक भी रहा है। जो की पृथ्वी को कष्ट में दुख में डाल देंगे।

अगर सभी कुछ भगवान का है तो यह परिवार नियोजन का ख्याल भी भगवान का ही है।

और मनुष्य की यह आकांशा कह हम अधिकतम सुखी हों, यह भी इच्छा भगवान की ही है।

अधिकतम सुख चाहिए तो परिवार का नियमन चाहिए।

परिवार नियोजन का और कोई अर्थ नहीं है—इसका अर्थ इतना ही है कि पृथ्वी कितने लोगों को सुख दे सकती है। भोजन दे सकती है। उससे ज्यादा लोगों को पृथ्वी पर खड़े करना, अपने हाथ से पृथ्वी को नरक बनाना है।

पृथ्वी स्वर्ग बन सकती है, नरक बन सकती है—और यह आदमी के हाथ में है।

जब तक आदमी ना समझ था तो प्रकृति की अंधी शक्तियां काम करती थी। बच्चे कितने ही पैदा कर लो, मर जाते थे। बीमारी आती थी, महामारी आती थी। प्लेग आता था, मलेरिया आता था, और बच्चे विदा हो जाते थे। युद्ध होता। आकाल पड़ता भूकम्प होते और बच्चे विदा हो जाते थे।

मनुष्य ने प्रकृति की ये सारी विध्वंसक शक्तियां पर बहुत दूर तक कब्जा पा लिया है। प्लेग नहीं होगा, महामारी नहीं होगी, मलेरिया नहीं होगा, माता नहीं होगी, आकाल नहीं होगा, और बच्चे मरने नहीं देंगे। पिछला अकाल जो बिहार में पडा उसमें अनुमान था कि कोई दो करोड़ लोगों की मृत्यु हो जायेगी;लेकिन मरे केवल 40 आदमी। तो आकार भी जिन लोगों को मार सकता था उनको भी हमने सब भांति बचा लिया।

तो हमने प्रकृति की विध्वंसक शक्ति पर तो रोक लगा दि और उसकी सृजनात्मक शक्ति पर अगर हम उसी अनुपात में रोक न लगाये तो हम प्रकृति का संतुलन नष्ट करने वाले सिद्ध होंगे।

परमात्मा के खिलाफ कोई काम हो सकता है तो यह है प्रकृति का संतुलन नष्ट हो जाये। तो, जो लोग आज संख्या बढ़ा रहे है, जमीन की क्षमता से ज्यादा वे लोग परमात्मा के खिलाफ काम कर रहे है। क्योंकि परमात्मा का संतुलन बिगड़ने दे रहे है।

प्रकृति का संतुलन बचेगा,अगर प्रकृति की सृजनात्मक शक्तियों पर भी उसी अनुपात में रोक लगा दें, जिस अनुपात में विध्वंसक शक्तियों पर रोक लगा दी है। तो अनुपात वही होगा। और यह सुखद है बजाय इसके कि बच्चे पैदा हो और मरे बीमारी में, आकाल में, भूकम्प में, युद्ध में, इससे ज्यादा उचित है कि वे पैदा ही न हो। क्योंकि पैदा होने के बाद मरना, मारना मरने देना अत्यन्त दुखद है। न पैदा कना कतई दुखद नहीं है।

इसलिए मैं यह कतई नहीं मानता हूं कि परिवार नियोजन कोई परमात्मा के खिलाफ बात है।

बल्कि मैं तो मानता हूं कि इस वक्त जिनके भीतर से परमात्मा थोड़ी बहुत आवाज दे रहा है, वे यह कहेंगे कि परिवार नियोजन परमात्मा का काम है।

निश्चित ही परमात्मा का काम हर युग में बदल जाता है। क्योंकि कल जो परमात्मा का काम था, जरूरी नहीं कि वह आज भी वहीं हो। युग बदलता है परिस्थिति बदल जाती है। तो काम भी बदल जाता है।

अब सारी परिस्थितियां बदल गई है। और आदमी के हाथ में इतनी शक्तिआं गयी है कि वह पृथ्वी को अत्यंत आनंदपूर्ण बना सकता है।

सिर्फ एक चीज की रूकावट हो गयी है कि संख्या अत्यधिक हो गयी है। तो पृथ्वी नष्ट हो जायेगी। और बहुत से प्राणी भी अपनी बहुत संख्या करके मर चुके है, आज उनका अवशेष भी नहीं मिलता। मनुष्य भी मर सकता है।

इस समय वहीं मनुष्य धार्मिक है, जो मनुष्य की संख्या कम करने में सहयोगी हो रहा है।

इस समय परमात्मा की दिशा में और मनुष्य की सेवा की दिशा में इससे बड़ा कोई कदम नहीं हो सकता है। इसलिए धार्मिक चित तो यही कहेगा। कि परिवार नियोजन हो।

हां, यह हो सकता है। हम इसे बेईमान लोग है कि जो हमें करना होता है, उसके लिए हम भगवान का सहारा खोज लेते है। और जो हमें नहीं करना होता, उसके लिए हम भगवान के सहारे की बात नहीं करते। जब हमें बीमारी होती है तब हम अस्पताल जाते है; तब हम यह नहीं कहते की बीमारी भगवान ने भेजी है। कैंसर टी.बी भगवान ने भेजे है। तब हम डाक्टर को खोजते है। और जब डाक्टर हमें खोजता हुआ आता है और कहता है इतने बच्चे नहीं, तब हम कहते है कि ये तो भगवान के भेजे हुए है।

तो, हमें इन दो में से कुछ एक तय करना होगा कि बीमारी भी भगवान की भेजी हुई है—मलेरिया भी, प्लेग भी, आकाल भी, तब हमें इनमें मरने के लिए तैयार होना चाहिए। और अगर हम कहते है कि भगवान के भेजे हुए नहीं है। हम इनसे लड़ेंगे तो फिर हमें निर्णय लेना होगा कि फिर बच्चे भी जो हम कहते है भगवान के भेजे है, उन पर हमें नियंत्रण करना जरूरी है।

मुझे एक घटना याद है।

इथोपिया में बड़ी संख्या में बच्चे मर जाते है। तो इथोपिया के सम्राट ने एक अमेरिकन डॉक्टरों के मिशन को बुलाया और जांच पड़ताल करवाई कि क्या कारण है। तो पता चला कि इथोपिया में जो पानी पीने की व्यवस्था है, वह गंदी है। और पानी जो है, वे रोगाणुओं से भरा है। और लोग सड़क के किनारे के गंदे डबरों का ही पानी पीते रहते है। उसी में सब मल मूत्र भी बहता रहता है। और लोग उसी का पानी पीते है। वहीं उनकी बीमारियों और मृत्यु का बड़ा कारण है। साल भर मेहनत के बाद उनके मिशन ने रिपोट दी और सम्राट को कहा कि पानी पीने की यह व्यवस्था बंद करवाईये, सड़क के किनारे के गड्ढों का पानी बंद करवाईये और पानी की कोई नयी वैज्ञानिक व्यवस्था करवाईये।

तो इथोपिया के सम्राट ने कहा कि मैंने समझ ली आपकी बातें और कारण भी समझ लिया; लेकिन मैं ये नहीं करूंगा। क्योंकि आज अगर हम यह इंतजाम कर लें, आदमियों को बीमारी से बचाने का, तो फिर कल इन्हीं लोगों को समझाना मुश्किल होगा कि परिवार नियोजन करो। इथोपिया के सम्राट ने कहा यह दोहरा झंझट हम न लेंगे। पहले हम इनको यह समझायें कि तुम गंदा पानी मत पीओ। इसमे झंझट झगड़ा होगा। बामुश्किल बहुत खर्च करके हम इनको राजी कर पायेंगे। तब जनसंख्या बढ़ेगी। तब हम इन्हें समझायें गे दुबारा कि तुम बच्चे कम पैदा करो। तब उसने कहा, इससे यह जो हो रहा है, वहीं ठीक हो रहा है।

मैं भी समझता हूं कि यदि भगवान पर छोड़ना है तो फिर इथोपिया का सम्राट ठीक कहता है। तो फिर हमें भी इसी के लिए राज़ी होना चाहिए। अस्पताल बंद, लोग गंदा पानी पिये, बीमारी में रहें—फिर हम सब भगवान पर छोड़ दे—जितने जियें। इतना जरूर कहे देता हूं कि

भगवान के हाथ में छोड़कर इतने आदमी दुनिया में कभी न बचे थे। जितने आदमी ने अपने हाथ में लेकर बचाये। इतने आदमी भगवान के हाथ में बचते।

इसलिए जब हमने विध्वंस की शक्तियों पर रोक लगा दी तो हमें सृजन की शक्तियों पर भी रोक लगाने की तैयारी दिखानी चाहिए। और इस तैयारी में परमात्मा का कोई विरोध नहीं हो रहा है। और न इसमें कोई धर्म का विरोध हो रहा है। क्योंकि धर्म है ही इसी लिए कि मनुष्य अधिकतम सुखी कैसे हो इसका इंतजाम इसकी व्यवस्था करनी है।

ओशो
संभोग से समाधि की और

प्रवचन—9

संभोग से समाधि की और—36

Posted on मई 2, 2011by sw anand prashad

जनसंख्या विस्फोट

प्रश्न कर्ता: भगवान श्री, एक और प्रश्न है कि परिवार नियोजन जैसा अभी चल रहा है उसमें हम देखते है कि हिन्दू ही उसका प्रयोग कर रहे है, और बाकी और धर्मों के लोग ईसाई, मुस्लिम, ये सब कम ही उपयोग कर रहे है। तो ऐसा हो सकता है कि उनकी संख्या थोड़े वर्षों के बाद इतनी बढ़ जाये कि एक और पाकिस्तान मांग लें और तुर्किस्तान मांग लें और कुछ ऐसी मुश्किलें खड़ी हो जायें। फिर पाकिस्तान या चीन है, जहां जनसंख्या पर रूकावट नहीं है। तो उसमें अधिक लोग हो जायेंगे और पर हमला करने की चेष्टा रखते है। तो हमारी जनसंख्या कम होने से हमारी ताकत कम हो जाय। तो इसके बारे में आपके क्या ख्याल है?

भगवान श्री: इस संबंध में दो तीन बातें ख्याल में रखने की है।

पहली बात तो यह कि आज के वैज्ञानिक युग में जनसंख्या का कम होना, शक्ति का कम होना नहीं है। हालतें उल्टी है, हाल तो यह है कि जिस मुल्क की जनसंख्या जितनी ज्यादा है, या टेकांलॉजिकल दृष्टि से कमजोर है। क्योंकि इतनी बड़ी जनसंख्या के पालन-पोषण में, व्यवस्था में उसके पास अतिरिक्त सम्पति बचने वाली नहीं है। जिससे वह एटम बम बनाये, हाइड्रोजन बम बनाये, सुपर बन बनाये, और चाँद पर जाये। जितना गरीब देश होगा आज वह उतना ही वैज्ञानिक दृष्टि से शक्तिहीन देश है।

आज तो वहीं देश शक्ति शाली होगा, जिसके पास ज्यादा संपति है, ज्यादा व्यक्ति नहीं।

वह जमाना गया, जब आदमी ताकतवर था, अब मशीन ताकतवर है। और मशीन उसी देश के पास अच्छी से अच्छी हो सकेगी, जिस देश के पास जितनी सम्पन्नता होगी और सम्पन्नता उसी देश के पास ज्यादा होगी, जिसके पास प्राकृतिक साधन ज्यादा और जनसंख्या कम होगी।

तो पहली बात यह है कि आज जनसंख्या शक्ति नहीं है और इसलिए भ्रांति में पड़ने का कोई कारण नहीं है। चीन के पास चाहे जितनी जनसंख्या हो तो भी शक्तिशाली अमेरिका होगा। चीन के पास जितनी भी जनसंख्या हो तो भी छोटा सा मुल्क इंगलैंड शक्तिशाली है। और जापन जैसा मुल्क भी शक्ति शाली है। शक्ति का पूरा का पूरा आधार बदल गया है।

जब आदमी ही एक मात्र आधार था, तब तो ये बातें ठीक थी कि जनसंख्या बड़ा मूल्य रखती थी। लेकिन अब आदमी से भी बड़ी शक्ति हमने पैदा कर ली है, जो मशीन की है। मशीन ताकत है। और उतना ही सम्पन्न हो सकता है। जितना ज्यादा जनसंख्या उसकी कम हो, ताकि उसके पास सम्पति बच सके, लोगों को खिलाने कपड़ा पहिनाने, इलाज कराने के बाद; ताकि उस शक्ति को वैज्ञानिक विकास में लगा सकें।

दूसरी बात यह समझने जैसी है कि संख्या कम होने से उतना बड़ा दुर्भाग्य नहीं टूटेगा, जितना बड़ा दुर्भाग्य संख्या के बढ़ जाने से बिना किसी हमले के टूट जायेगा। यानी हमले का तो कोई उपाय भी किया जा सकता है कि कोई बड़ा मुल्क हम पर हमला करे तो हम दूसरों से सहायता ले लें, लेकिन हमारे ही बच्चे हमलावर सिद्ध हो जायें संख्या के अत्यधिक बढ़ जाने के कारण तो हम किसी की सहायता न ले सकेंगे। उस वक्त हम बिलकुल असहाय हो जायेंगे।

इस वक्त युद्ध इतना बड़ा खतरा नहीं है, जितना बड़ा खतरा जनसंख्या विस्फोट का है। खतरा बाहर नहीं है कि हमें कोई मार डाले,वरन जो हमारी उत्पाद क्षमता है बच्चें की, वहीं हमारे लिए सबसे बड़ा खतरा है—कि संख्या इतनी ही जाये कि हम सिर्फ मर जाये इस कारण से कि न पानी हो, न भोजन हो, न रहने को जगह।

तीसरी बात यह कि जो हम सोचते है क हिन्दू अपनी संख्या कम कर लें तो मुसलमान से कम न हो जायें, तो इस डर से हिंदू भी अपनी संख्या कम न करें। मुसलमान भी इस डर से अपनी संख्या कम न करें कि कहीं हिन्दू ज्यादा न हो जायें। ईसाई भी यही डर रखें। जैन भी यहीं डर रखें। तो इन सके डर एक है। तब परिणाम यह होगा कि मुल्क ही मर जायेगा। तो यह डर किसी को तो तोड़ना शुरू करना पड़ेगा। और जो समाज इस डर को तोड़ेगा, वह संपन्न हो जायेगा। मुसलमानों से उनके बच्चे ज्यादा स्वस्थ ज्यादा शिक्षित होंगे, ज्यादा अच्छे मकानों में रहेंगे। वे दूसरे समाजों को जिनकी संख्या कीड़े मकोड़ों की तरह बढ़ेगी

उनको पीछे छोड़कर आगे निकल जायेंगे। और इसका परिणाम यह भी होगा कि दूसरे समाजों में भी स्पर्धा पैदा होगी इस ख्याल से कि वे गलती कर रहे है।

आज दूनिया में यह बड़ा सवाल नहीं है कि हिन्दू कम हो गये तो कोई हर्ज हो रहा है। कि मुसलमान ज्यादा हो गये तो उनको कोई फायदा हो रहा है। बड़ा सवाल यह है कि अगर इन सारे लोगों के दिमाग में यही सवाल भरा रहे तो यह पूरा मुल्क मर जायेगा। मगर यही विकल्प है कि हिन्दू कम हो जायेंगे और इससे हिन्दुओं की संख्या को नुकसान पहुँचेगा। मुसलमान ज्यादा हो जायेंगे, ईसाई ज्यादा हो जायेंगे। तो भी मैं कहूंगा कि हिन्दू अपने को कम कर लें और भारत को बचाने का श्रेय ले लें। चाहे खुद मिट जायें। हालांकि इसकी कोई संभावना नहीं है। तो भी मैं कहूंगा कि मेरे लिए यह इतना बड़ा सवाल नहीं है, हिन्दू-मुसलमान का, जितना बड़ा मेरे लिए एक दूसरा सवाल है।

जब तक हम परिवार नियोजन को स्वेच्छा पर छोड़े हुए है, तब तक खतरा एक दूसरा है कि जो जितना शिक्षित आरे उन्नत है, जो जितना संपन्न है, जिसकी बुद्धि विकसित है, वह तो राजी हो जाएगा स्वभावत। वह तो आज परिवार नियोजन के लिए राज़ी हो जाएगा। सिर्फ बुद्धूओं को छोड़कर। बुद्धिमान तो राज़ी होंगे ही; क्योंकि परिवार नियोजन से उसके बच्चे ज्यादा सुखी होंगे। ज्यादा शिक्षित होंगे।

लेकिन खतरा यह है कि जो बुद्धिहीन वर्ग है—उसको न कोई शिक्षा है, न कोई ज्ञान है, न कोई सवाल है—वे समझ ही न पाये और बच्चे पैदा करते चले जायें। तो जो नुकसान हो सकता है लम्बे अर्थों में,वह यह हो सकता है वह अशिक्षित,अविकसित, पिछड़े हुए लोग ज्यादा बच्चे पैदा करें और शिक्षित वह संपन्न लोग कम बच्चे पैदा करें तो मुल्क की प्रतिभा को ज्यादा नुकसान पहुंचे। यह हो सकता है।

इसलिए मेरी यह मान्यता है कि परिवार नियोजन की बात धीरे-धीरे अनिवार्य हो जानी चाहिए।

कहीं ऐसा न हो कि बुद्धिमान तो स्वीकार कर लें और गैर-बुद्धिमान न करें,तो वह अनिवार्य होना चाहिए। इसलिए मैं अनिवार्य परिवार नियोजन के पक्ष में हूं।

परिवार नियोजन किसी का स्वेच्छा पर नहीं छोड़ा जा सकता है।

यह तो ऐसा है कि जैसे हम हत्या को स्वेच्छा पर छोड़ दें कि जिसको करना हो करें, जिनको न करना हो न करें। डाके को स्वेच्छा पर छोड़ दें कि जिसको डाका डालना हो डाले,न डालना

हो न डाले। सरकार समझाने की कोशिश करेगी ओर देखती रहेगी। डाका भी आज उतना खतरनाक नहीं है हत्या भी आज उतनी खतरनाक नहीं है जितना जनसंख्या का बढ़ना।

इस जीवंत सवाल को इस तरह स्वेच्छा पर नहीं छोड़ा जाना चाहिए। और जब हम इसे स्वेच्छा पर नहीं छोड़ते तो यह हिन्दू, मुसलमान, ईसाई का सवाल नहीं रह जाता। क्योंकि सिक्ख को उसका गुरु समझा रहा है कि तुम कम हो जाओगे। मुसलमान ज्यादा हो जायेंगे। मुसलमान को मौलवी समझा रहा है कि तुम कम हो जाओगे, हिन्दू कम ज्यादा हो जायेगे। वहीं ईसाई पादरी भी सोच रहा है वही हिन्दू पंडित भी सोच रहा है। ये बस जा सोच रहे है इनकी सोचने की वजह भी अनिवार्य परिवार नियोजन से मिट जायेगी।

यदि हम परिवार नियोजन कर देते है तो कोई हिन्दू, मुसलमान, ईसाई का सवाल नहीं रह जाता है।

मेरे लिए तो सवाल यह है कि सैकड़ों वर्षों में कुछ लोग विकसित हो गये है और कुछ लोग अविकसित रह गये है। जो अविकसित वर्ग है, वह बच्चे ज्यादा छोड़ जाये तो देश की प्रतिभा और बुद्धिमत्ता को भी भारी नुकसान पहुंच सकता है। और यह नुकसान खतरनाक सिद्ध हो सकता है। इसलिए इस दृष्टि से मैं सारे सवाल को सोचता हूं कि केवल परिवार नियोजन ही न हो, बल्कि ऐसा लगता है कि वह अनिवार्य हो। एक भी व्यक्ति सिर्फ इसलिए न छोड़ा जा सके कि वह राज़ी नहीं है। और यह हमें करना ही पड़ेगा। इसे बिना किये हम इन आने वाले 50 वर्षों में जिन्दा नहीं रह सकते।

शक्ति के सारे मापदंड बदल गये है, यह हमें ठीक से समझ लेना चाहिए।

आज शक्तिशाली वह है जो संपन्न है और संपन्न वह है, जिसके पास जनसंख्या कम है और उत्पादन के साधन ज्यादा है।

आज मनुष्य न तो उत्पादन का साधन है। न शक्ति का साधन है। आज मनुष्य सिर्फ भोक्ता है, कन्ज्यूमर है। मशीन पैदा करती है, जमीन पैदा करती है, मनुष्य खा रहा है।

और धीरे-धीरे जैसे टेक्नोलॉजी विकसित होती है, आदमी की शक्ति सा सारा मूल्य समाप्त हुआ जा रहा है। आदमी ने हो तो भी चल सकता है। एक लाख आदमी जिस फैक्टरी में काम करते हों, उसे एक आदमी चला सकेगा। न हो तो भी चल सकता है। और हिरोशिमा में एक लाख आदमी मारना हो तो उन्हें एक आदमी मार सकेगा। पुराने जमाने में तो कम से कम एक लाख आदमी ले जाने पड़ते। अब तो कोई एक आदमी जाता है और एटम बम गिराकर उनको समाप्त कर देता है। कल यह भी हो सकता है कि एक आदमी को भी न जाना पड़े।

कम्प्युटराइज्ड आदेश एक आदमी भर देगा मशीन में काम हो जायेगा। आदमी की संख्या बिलकुल महत्वहीन हो गयी है।

यह जरूरी नहीं है कि मेरी सारी बातें मान ली जायें। इतना ही काफी है कि आप मेरी बात पर सोचें,विचार करें, अगर इस देश में सोच-विचार आ जाये तो शेष चीजें अपने आप छाया की तरह पीछे चली आयेगी।

मेरी बातें ख्याल में ले और उस पर सूक्ष्मता से विचार करें तो हो सकता है कि आपको यह बोध आ जाये कि परिवार नियोजन की अनिवार्यता कोई साधारण बात नहीं है। जिसकी उपेक्षा की जा सके। वह जीवन की अनेक-अनेक समस्याओं की गहनत्म जड़ों से संबंधित है। और उसे क्रियान्वित करने की देरी पूरी मनुष्य जाति के लिए आत्म धात सिद्ध हो सकती है।

ओशो

संभोग से समाधि की और

जनसंख्या विस्फोट

प्रवचन—9

संभोग से समाधि की और—37 (विद्रोह क्या है?) भाग—1

Posted on मई 3, 2011by sw anand prashad

हिप्पी वाद मैं कुछ कहूं ऐसा छात्रों ने अनुरोध किया है।

इस संबंध में पहली बात, बर्नार्ड शॉ ने एक किताब लिखी है: मैक्सिम्प फॉर ए रेव्होल्यूशनरी, क्रांतिकारी के लिए कुछ स्वर्ण-सूत्र। और उसमें पहला स्वर्ण बहुत अद्भुत लिखा है। और एक ढंग से पहले स्वर्ण सूत्र लिखा है: 'दि फार्स्ट गोल्डन रूल इज़ दैट देयर आर नौ गोल्डन रूल्स' पहला स्वर्ण नियम यही है कि कोई भी स्वर्ण-नियम नहीं है।

हिप्पी वाद के संबंध में जो पहली बात कहना चाहूंगा, वह यह कि हिप्पी वाद कोई वाद नहीं है, समस्त वादों का विरोध है। पहली पहले इस 'वाद' को ठीक से समझ ले।

पाँच हजार वर्षों से मनुष्य को जिस चीज ने सर्वाधिक पीड़ित किया है वह है वाद—वह चाहे इस्लाम हो, चाहे ईसाइयत हो, चाहे हिन्दू हो, चाहे कम्यूनिज़म हो, सोशलिज्म हो, फासिस्ट, या गांधी-इज्म हो। वादों ने मनुष्य को बहुत ज्यादा पीड़ित किया है।

मनुष्य इतिहास के जितने युद्ध है, जितना हिंसा पात है, वह सब वादों के आसपास धटित हुआ है। वाद बदलते चले गये है, लेकिन नये वाद पुरानी बीमारियों को जगह ले लेते है और आदमी फिर वही का वहीं खड़ा हो जाता है।

1917 में रूस में पुराने वाद समाप्त हुए, पुराने देवी-देवता विदा हुए तो नये देवी-देवता पैदा हो गये। नया धर्म पैदा हो गया। क्रेमलिन अब मक्का और मदीना से कम नहीं है। वह नयी काशी है, जहां पूजा के फूल चढ़ाने सारी दूनिया के कम्युनिस्ट इकट्ठे होते है। मूर्तियां हट गई, जीसस क्राइस्ट के चर्च मिट गये। लेकिन लेनिन की मृत देह क्रेमलिन के चौराहे पर रख दी गयी है। उसकी भी पूजा चलती है।

वाद बदल जाता है,लेकिन नया वाद उसकी जगह ले लेता है।

हिप्पी समस्त बादों से विरोध है। हिप्पी के नाम से जिन युवकों को आज जाना जाता है, उनकी धारणा यह है कि मनुष्य बिना वाद के जी सकता है। न किसी धर्म की जरूरत है, न किसी शास्त्र, न किसी सिद्धांत की, न किसी विचार सम्प्रदाय, आइडियालॉजी की। क्योंकि उनकी समझ यह है जितना ज्यादा विचार की पकड़ जोती है, जीवन उतना ही कम हो जाता है। हिप्पियों की इस बात से मैं अपनी सहमति जाहिर करना चाहता हूं। इन अर्थों में वे बहुत सांकेतिक है, सिम्बालिक है और आने वाले भविष्य की एक सूचना देते है।

आज से 100 वर्ष बाद दुनिया में जो मनुष्य होगा, वह मनुष्य वादों के बाहर तो निश्चित ही चला जायेगा। वाद का इतना विरोध होने का कारण क्यो है?

हिप्पियों के मन में उन युवकों के मन में जो समस्त वादों के विरोध में चले गए है। समस्त मंदिरों, समस्त चर्चों के विरोध में चले गये है। जाने का कारण है। और कारण है इतने दिनों का निरंतर का अनुभव। वह अनुभव यह है कि जितना ही हम मनुष्य के ऊपर वाद थोपते है। उतनी ही मनुष्य की आत्मा मर जाती है।

जितना बड़ा ढांचा होगा वाद का, उतनी ही भीतर की स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है।

इसलिए यह कहा जा सकता है कि हममें से बहुत से लोग मर तो बहुत पहले जाते है दफनाए बहुत बाद में जाते है। कोई 30 साल में मर जाता है और 70 साल में दफनाया

जाता है। हम उसी दिन अपनी स्वतंत्रता, अपना व्यक्तित्व अपनी आत्मा खो देते है, जिस दिन कोई विचार का कोई ढांचा हमें सब तरफ से पकड़ लेता है।

सींकचे तो दिखाई पड़ते है लोहे के, कारागृह दिखाई पड़ते है लोहे के, लेकिन विचार के कारागृह दिखाई नहीं पड़ते और जो कारागृह जितना कम दिखाई पड़ता है उतना ही खतरनाक है।

अभी में एक नगर से विदा हुआ। बहुत से मित्र छोड़ने आए थे जिस कम्पार्टमेंट में मैं था उसमें एक साथी थे। उन्होंने देखा कि बहुत मित्र मुझे छोड़ने आये है। तो जैसे ही मैं अंदर प्रविष्ट हुआ, गाड़ी चली, उन्होंने जल्दी से मेरे पैर छुए और कहा कि महात्मा जी, नमस्कार करता हूं। बड़ा आनंद हुआ कि आप मेरे साथ होंगे। मैंने उनसे कहा कि ठीक से पता लगा लेना कि महात्मा हू या नहीं। आपने तो जल्दी पैर छू लिये। अब अगर मैं महात्मा सिद्ध न हुआ तो पैर छूने को वापस कैसे लेंगे?

उन्होंने कहा, नहीं-नहीं ऐसा कैसे हो सकता है, आपके कपड़े कहते है। मैंने कहा, अगर कपड़ों से कोई महात्मा होता तो तब तो पृथ्वी सारी की सारी कभी की महात्मा हो गई होती। उन्होंने कहा कि नहीं इतने लोग छोड़ने आये थे? तो मैंने कहा कि किराये के आदमी इतने ज्यादा लोगों को छोड़ने आते है कि उसका कोई मतलब नहीं रहा है। वे कहने लगे, कम से कम आप हिन्दू तो है?

उन्होंने सोचा कि न सही कोई महात्मा हों, हिन्दू होंगे तो भी चलेगा। कोई ज्यादा गुनाह नहीं हुआ, पैर छू लिए। तो मैंने कहा, नहीं, हिन्दू भी नहीं हूं। तो उन्होंने कहा,आप आदमी कैसे है? कुछ तो होंगे, मुसलमान होंगे, ईसाई होंगे? मैंने उनसे पूछा कि क्या मेरे सिर्फ आदमी होने से आपको कोई एतराज है? क्या सिर्फ आदमी होकर मैं नहीं हो सकता हूं, मुझे कुछ और होना ही पड़ेगा? उनकी बेचैनी देखने जैसी थी। कंडक्टर को बुलाकर वे दूसरे कंपार्टमेंट में अपना सामान ले गये।

मैं थोड़ी देर बाद उनके पास गया और मैंने उनको कहा आप तो कहते थे सत्संग होगा, बड़ा आनंद होगा। आप तो चले गये। क्या एक आदमी के साथ सफर कना उचित नहीं मालूम पड़ा? हिन्दू के साथ सफर हो सकता था। आदमी के साथ बहुत मुश्किल है।

आज पश्चिम में जिन युवकों ने हिप्पियों का नाम ले रखा है, उनकी पहली बगावत यह है कि वे कहते है कि हम सीधे आदमी की तरह जीयेंगे। न हम हिन्दू होंगे, न हम कम्युनिस्ट होंगे। न हम सोशलिस्ट होंगे, न ईसाई होंगे; हम सीधे निपट आदमी की तरह जीने की कोशिश करेंगे। निपट आदमी की तरह जीने की जो भी कोशिश है, वह मुझे तो बहुत प्रीतिकर हे।

हिप्पी नाम तो नया है। लेकिन घटना बहुत पुरानी है। मनुष्य के इतिहास में आदमी ने कई बाद निपट आदमी की तरह जीने की कोशिश की है। निपट आदमी की तरह जीने में बहुत से सवाल है।

धर्म नहीं, चर्च नहीं, समाज नहीं—अंतत: देश भी नहीं; क्योंकि देश, राष्ट्र सब उपद्रव है। सब बीमारियां है।

कल तक पाकिस्तान की भूमि हमारी मातृभूमि हुआ करती थी। अब वह हमारे शत्रु की मातृभूमि है। जमीन वहीं की वही है। कहीं टूटी नहीं, कहीं दरार नहीं पड़ी।

मैंने सुना है, एक पागल खाना था हिन्दुस्तान के बंट वारे के समय। हिन्दुस्तान पाकिस्तान की सीमा पर। अब वह भी सवाल उठा कि इस पागल खाने को कहां जाने दे—हिन्दुस्तान में कि पाकिस्तान में। कोई राजनैतिक उत्सुक न था कि वह पागलखाना कहीं भी ला जाये। तो पागलों से ही पूछा अधिकारियों ने कि तुम कहां जाना चाहते हो। हिन्दुस्तान में या पाकिस्तान में? तो उन पागलों ने कहा हम तो जहां है, वहां बड़े आनंद में है। हमें कहीं जाने की कोई इच्छा नहीं है। पर उन्होंने कहा कि जाना तो पड़ेगा ही, यह इच्छा का सवाल नही है। और तुम घबराओ मत। तुम हिन्दुस्तान में चाहो तो हिन्दुस्तान में चले जाओ,पाकिस्तान में चाहो तो पाकिस्तान में चले जाओ। तुम जहां हो वहीं रहोगे। यहां से हटना न पड़ेगा।

तब तो वे पागल बहुत हंसने लगे। उन्होंने कहा,हम तो सोचते थे कि हम ही पागल है। लेकिन ये अधिकारी और भी पागल मालूम पड़ता है। क्योंकि ये कहता है कि जाना कहीं न पड़ेगा और पूछते है जाना कहां चाहते हो। उन पागलों ने कहा, कि जब जाना ही नहीं पड़ेगा तो जाना चाहते हो का सवाल क्या है? उन पागलों को समझाना बहुत मुश्किल हुआ। आखिर आधा पागलखाना बीच से दीवार उठाकर पाकिस्तान में चला गया, आधा हिन्दुस्तान में चला गया।

मैंने सुना है कि अभी वे पागल एक दूसरे की दीवार पर चढ़ जाते है और आपस में सोचते है कि बड़ी अजीब बात है, हम वहीं के वहीं है, लेकिन तुम पाकिस्तान में चले गये हो और हम हिन्दुस्तान में चले गये है।

ये पागल हमसे कम पागल मालूम होत है। हमने जमीन को बांटा है, आदमी को बांटा है।

हिप्पी कह रहा है, हम बांटेंगे नहीं; हम निपट बिना बटे हुए आदमी की तरह जीना चाहते है। और बाद बांटते है। बांटने की सबसे सुविधापूर्ण तरकीब बाद है इज्म है।

इसलिए हिप्पी कहते है कि हम किसी इज्म में नहीं है। ऊब चुके तुम्हारे बादों से, तुम्हारे धर्मों से। हमें निपट आदमी की तरह छोड़ दो—हम जैसे है, वैसे जीना चाहते है।

यह तो पहला सूत्र है। इसलिए मैंने कहा, यह बात पहले समझ लेना जरूरी है। हिप्पी इज्म जैसी चीज नहीं है, हिप्पीज है। हिप्पी वाद नहीं है। हिप्पी जरूर है।

दूसरी बात ध्यान में लेने जैसी है और वह यह कि हिप्पियों की ऐसी धारण है कह न केवल आदमी की तरह जीयें बल्कि सहज आदमी की तरह जीयें। हजारों साल से सभ्यता ने आदमी को असहज बनाया है, जैसा वह नहीं है वैसा बनाया है। हजारों साल की सभ्यता संस्कार, व्यवस्था ने आदमी को कृत्रिम को झूठा बनाने की कोशिश की है। उसके हजार चेहरे बना दिये है।

मैने सुना है कह अगर एक कमरे में मैं और आप दो जन मिलें तो वहां दो जन नहीं होंगे, वहां कम से कम 6 जन होंगे। एक मैं—जैसा मैं हूं, एक मैं—जैसा की मैं सोचता हूं। और एक मैं—जैसाकि आप मुझे समझते है कि मैं हूं। और तीन आप और तीन मैं। उस कमरे में जहां दो आदमी मिलते है कम से कम 6 आदमी मिलते है। हजार मिल सकते है, क्योंकि हमारे हजार चेहरे है, मुखौटे है।

हर आदमी कुछ है ओर, कुछ दिखला रहा है। कुछ है, कुछ बन रहा है। और कुछ दिखला रहा है। और फिर न मालुम कितने चेहरे है—जैसे दर्पण के आगे दर्पण, और दर्पण के आगे दर्पण और एक दूसरे के प्रतिबिम्ब हजार-हजार प्रतिबिम्ब हो गये है। इन प्रतिबिम्बों की भीड़ में पता लगाना ही मुश्किल है कि कौन है आप। तय करना ही मुश्किल है कि कौन सा चेहरा है आपका अपना?

पत्नी के सामने आपका चेहरा दूसरा होता है। बेटे के सामने दूसरा हो जाता है। नौकर के सामने एक होता है। मालिक के सामने एक हो जाता है। जब आप मालिक के सामने खड़े होते है तो जो पूंछ आपके पास नहीं है, वह हिलती रहती है। और जब आप नौकर के पास खड़े होते है तब जो पूंछ उसके पास नहीं है, आप गौर से देखते रहते है कि वह हिला रहा है या नहीं हिला रहा है।

हिप्पियों की धारण मुझे प्रीतिकर मालूम पड़ती है। वे कहते है कि हम सहज आदमियों की तरह जीयेंगे। जैसे हम है। धोखा न देंगे। प्रवंचना, पाखंड, डिसेप्शन खड़ा न करेंगे। ठीक है, तकलीफ होगी तो तकलीफ झेलेंगे। लेकिन हम जैसे हम है, वैसे ही रहेंगे।

अगर हिप्पी को लगता है कि वह किसी से कहे कि मुझे आप पर क्रोध आ रहा है और गाली देने का मन होता है तो वह आपसे आकर कहेगा पास में बैठकर कि मुझे आप पर बहुत क्रोध आ रहा है और मैं आपको दो गाली देना चाहता हूं।

मैं समझता हूं कि वह बड़ा मानवीय गुण है। और वह क्षमा मांगने नहीं आयेगा पीछे, जब तक उसे लगे न, क्योंकि वह कहेगा गाली देने का मेरा मन था, मैंने गाली दी और अब जो भी फल हो उसे लेने के लिए मैं तैयार हूं। लेकिन गाली भीतर ऊपर मुस्कराहट इस बात को इंकार कर रहा हूं। लेकिन हमारी स्थिति यह है कि भीतर कुछ है, बहार कुछ। भीतर एक नर्क छिपाये हुए है हम, बाहर हम कुछ और हो गये है। एक आदमी एक जीता-जागता झूठ है।

हिप्पी का दूसरा सूत्र यह है कि हम जैसे है, वैसे है। हम कुछ भी रूकावट न करेंगे, छिपा वट न करेंगे।

मेरे एक मित्र हिप्पियों के एक छोटे से गांव में जाकर कुछ दिन तक रहे तो मुझसे बोले कि बहुत बेचैनी होती है वहां। क्योंकि वहां सारे मुखौटे उखड जाते है। वहां बजाय एक युवक एक युवती के पास आकर कविताएं कहे, प्रेम की और बातें करे हजार तरह की, वह उससे सीधा ही आकर निवेदन कर देगा कि मैं आपको भोगना चाहता हूं। वह कहेगा कि इतने सारे जाल के पीछे इरादा तो वही है। उस इरादे के लिए इतने जाल बनाने की कोई जरूरत नहीं है। वह कह सकता है एक लड़की को जाकर कि मैं तुम्हारे साथ बिस्तर पर सोना चाहता हूं।

बहुत घबरानें वाली बात लगेगी। लेकिन सारी बातचीत और सारी कविता और सारे संगीत और सारे प्रेम चर्चा के बाद यही घटना अगर घटने वाली है। तो हिप्पी कहता है कि इसे सीधा ही निवेदन कर देना उचित है। किसी को धोखा तो न हो, वह लड़की अगर न चाहती है सोना, तो कह तो सकती है कि क्षमा करो।

एक जाल सभ्यता ने खड़ा किया है, जिसने आदमी को बिलकुल ही झूठी इकाई बना दिया है।

अब एक पति है, वह अपनी पत्नी से रोज कहे जा रहा है कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं। और भीतर जानता है कि यह मैं क्यों कहा रहा हूं। एक पत्नी है, वह अपने पति से रोज कहे जा रही है कि मैं तुम्हारे बिना एक क्षण नहीं जी सकती और उसी पति के साथ एक क्षण जीना मुश्किल हुआ जा रहा है।

बाप बेटे से कुछ कह रहा है। कि बाप बेटे से कहा रह है कि मैं तुम्हें इसलिए पढ़ा रहा हूं कि मैं तुझे बहुत प्रेम करता हूं। और वह पढ़ा इसलिए रहा है कि बाप अपढ़ रह गया है। और उसके अहंकार की चोट घाव बन गयी है। वह अपने बेटे को पढ़ा कर अपने अहंकार की पूर्ति

करना चाहता है। बाप नहीं पहुंच पाया मिनिस्टरी तक, वह बेटे को पहुंचाना चाहता है। पर वह कहता है बेटे को मैं बहुत प्रेम करता हूं इसलिए.....लेकिन उसे पता नहीं है कि बेटे को मिनिस्टरी तक पहुंचाना बेटे को नर्क तक पहुंचा देना है। अगर प्रेम है तो कम से कम बाप एक बात तो न चाहेगा कि बेटा राजनीतिज्ञ हो जाए।

सारी दूनिया प्रेम कर रही है। लेकिन प्रेम का कोई विस्फोट कभी नहीं होता है। सारी दूनिया प्रेम कर रही है और जब भी विस्फोट होता है तो घृणा का होता है। हिप्पी कहता है जरूर हमारा प्रेम कहीं धोखे का है। कर रहे है घृणा कह रहे है प्रेम।

मैं एक स्त्री को कहता हूं कि मैं तुझे प्रेम करता हूं और मेरी स्त्री जरा पड़ोस के आदमी की तरफ गौर से देख ले तो सारा प्रेम विदा हो गया और तलवार खिंच गयी। कैसा प्रेम है। अगर मैं इस स्त्री को प्रेम करता हूं तो ईर्ष्यालु नहीं हो सकता। प्रेम में ईर्ष्या की कहां जगह है? लेकिन जिस को हम प्रेम कहते है वे सिर्फ एक दूसरे के पहरेदार बन जाते है और कुछ भी नहीं,और एक दूसरे के लिए ईर्ष्या का आधार खोज लेते है। जलते है,जलाते है परेशान करते है।

हिप्पी यह कह रहा है कि बहुत हो चुकी यह बेईमानी। अब हम तो जैसे है, वैसे है। अगर प्रेम है तो कह देंगे कि प्रेम है और जिस चुक जायेगा उस दिन निवेदन कर देंगे कि प्रेम चुक गया। अब झूठी बातों में पड़ने की कोई जरूरत नहीं है, मैं जाता हूं।

लेकिन पुराने प्रेम की धारणा कहती है कि प्रेम होता है तो फिर कभी नहीं मिटता, शाश्वत होता है। हिप्पी कहता है होता होगा। अगर होगा तो कह दूँगा कि शाश्वत है, टिका है। नहीं होगा तो कह दूँ की नहीं है।

एक जाल है जो सभ्यता ने विकसित किया है। उस जाल में आदमी की गर्दन ऐसे फंस गई है, जैसे फांसी लग गई हो उस जाल से बगावत है हिप्पी की।

ओशो
संभोग से समाधि की और

विद्रोह क्या है,

प्रवचन—10

संभोग से समाधि की और—38 (विद्रोह क्या है?) भाग—2

Posted on मई 13, 2011by sw anand prashad

विद्रोह क्या है?

दूसरा सूत्र है—सहज जीवन—जैसे हैं, है।

लेकिन सहज होना बहुत कठिन है। सहज होना सच में ही बहुत कठिन बात है। क्योंकि हम इतने असहज हो गए है कि हमने इतनी यात्रा कर ली है। अभिनय की कि वहां लौट जाना, जहां हमारी सच्चाई प्रकट हो जाये, बहुत मुश्किल है।

डॉक्टर पर्ल्स एक मनोवैज्ञानिक है, जो हिप्पियों का गुरु कहा जा सकता है। एक महिला गई थी वहां। मैंने उससे कहा था कि जरूर उस पहाड़ी पर हो आना, 2-4दिन रूक जाना। तो जब वह पर्ल्स के पास गयी और वहां का सारा हिसाब देखा, वह तो घबरा गई। बहुत घबरा गयी, क्योंकि वहां सहज जीवन सूत्र है। सारे लोग बैठे है और एक आदमी नंगा चला आयेगा हाल में और आकर बैठ जायेगा। अगर उसको नंगा होना ठीक लग रहा है तो यह उसकी मरजी है। इसमें किसी को कुछ लेना देना नहीं है। न कोई हाल में चीखेगी, न कोई चिल्लायेगा, न कोई गौर से देखेगा, उसे जैसा ठीक लग रहा है, उसे वैसा करने देना है।
और जो लोग पर्ल्स के पास महीने भर रह आते है। उनकी जिंदगी में कुछ नये फूल खिल जाते है। क्योंकि पहली दफा वे हल्के, पक्षियों की तरह जी पाते है। पौधों की तरह, या जैसे आकाश में कभी चील को उड़ते देखा हो—पंख भी नहीं चलाती। पंख भी बंद हो जाते है। बस हवा पर तैरती रहती है। उसे पहाड़ी पर पर्ल्स के पास भी व्यक्ति हवा में तैर रहे है। एक आदमी बहार नाच रहा है। कोई गीत गा रहा है। तो गीत गा रहा है। कोई रो रहा है तो रो रहा है। कोई रूकावट नहीं है।

लेकिन हमने तो आदमी को सब तरह से रोक रखा है। बच्चे को निर्देश देने से शुरू हो जाती है कहानी। हमारी सारी शिक्षा—'डू नाट' से शुरू हो जाती है। और हर बच्चे के दिमाग में हम ज्यादा से ज्यादा 'मत करो' थोपते चले जाते है। अंतत: करने की सारी क्षमता, सृजन की सारी क्षमता, 'न-करने' के इस जाल में लुप्त हो जाती है। या तो वह आदमी चोरी से शुरू कर देता है, जो-जो हमने रोका था, कि यह मत करो। और या फिर भीतर परेशानी में पड़ जाता है।

दो ही रास्ते है, या पाखंडी हो जाये, या पागल हो जाये।

अगर भीतर लड़ा और अगर सिंसियर होगा, ईमानदार होगा तो पागल हो जायेगा। अगर होशियार हुआ, चालाक हुआ, कौनिंग हुआ ता पाखंडी हो जायेगा। एक दरवाजा मकान के पीछे से बना लेगा। जहां से करने की दुनिया रहेगी। एक दरवाजा बाहर से रहेगा जहां 'न करने' के

सारे 'टेन कमांडमैंट्स' लिखे हुए है। वहां वह सदा ऐसा खड़ा होगा कि यह में नहीं करता हूं। और करने की अलग दुनिया बना लेगा।

मनुष्य को खंडित, स्किजोफ्रेनिक बनाने में, मनुष्य के मन को खंड-खंड करने में सभ्यता की 'न करने' की शिक्षा ने बड़ा काम किया है।

हिप्पी कह रहा है कि जो हमें करना है, वह हम करेंगे। और उसके लिए जो भी हमें भोगना है, हम भोग लेंगे। लेकिन एक बात हम न करेंगे कि करें कुछ, और दिखायें कुछ। यही बड़ी बगावत है।

हालांकि सदा से साधु-संतों ने कहा था कि बाहर और भीतर एक होना चाहिए। हिप्पी भी यही कहते है। लेकिन एक बुनियादी फर्क है। साधु-संत कहते है। कि बाहर और भीतर एक होना चाहिए। तब उनका मतलब है: बाहर जैसे हो वैसे ही भीतर होना चाहिए। हिप्पी जब कहता है कि बाहर भीतर एक होना चाहिए: तो वह कहता है कि भीतर जैसे हो वैसे ही बाहर भी होना चाहिए। इन दोनो में फर्क है।

साधु संत जब कहते है कि बहार भीतर एक जैसा होना चाहिए। तो वह कहते है कि भीतर का दरवाजा बंद करो। हिप्पी कहता है बहार भीतर एक होना चाहिए। तो वह कहता है: बाहर जो दस निषेध आज्ञाओं, टेन कमांडमैंट्स की तख्ती लगी है उसको उखाड़कर फेंक दो। और जैसे भी हो, वैसे हो जाओ। अगर चोर हो तो चोर अगर बेईमान हो तो बेईमान, क्रोधी हो तो क्रोधी। बड़ा खतरा तो यह है कि क्रोधी अभिनय कर रहा अक्रोध का, हिंसक अभिनय कर रहा है अहिंसक का, कामी अभिनय कर रहा है ब्रह्मचर्य का। और पुरानी सारी संस्कृतियां अभिनय को बड़ी कीमत देती है। और कुशल अभिनेता की बड़ी पूजा हाथी है।

हिप्पी कह रहा है हम अभिनय की पूजा नहीं करते। हम जीवन के पूजक है। हिप्पी यह कह रहा है कि झूठे ब्रह्मचर्य से सच्चा यौन भी अर्थपूर्ण है। झूठे ब्रह्मचर्य में भी वह सुगंध नहीं है, जो सच्चे यौन में हो सकती है। सच्चे ब्रह्मचर्य की तो बात ही दूसरी है। उसकी सुगंध का हमे क्या पता? लेकिन सच्चा यौन न हो तो सच्चे ब्रह्मचर्य की कोई संभावना ही नहीं है। अभी हिप्पी यह नहीं कह रहे है, लेकिन शीघ्र ही जानेंगे तो कहेंगे। हम अगर पशु है तो स्वीकृत है कि हम पशु है और हम पशु की भांति ही जीयेंगे।

तीसरी बात, जब मैं सोचता हूं तो मुझे लगता है कि अगर खोज की जाये तो ईसाईयों की कहानी के अदम और ईव हिप्पियों के आदि पुरूष कहे जाने चाहिए। क्योंकि अदम और ईव को ईश्वर ने कहा था कि तुम ज्ञान के वृक्ष का फल मत चखना। उन्होंने बगावत कर दी

और जिस वृक्ष का फल नहीं चखने को कहा था, उसी का फल चख लिया और ईड़न के बग़ीचे से बहिष्कृत कर दिये गये।

तीसरा सूत्र है हिप्पी का: विद्रोह, इनकार का साहस। एक तो कन्फरमिस्ट की जिन्दगी है, 'हां-हुज़ूर की' 'यस सर' की। वह जो भी कह रहा है, 'हां' कह रहा है। वह सदा 'हां हुज़ूर' कहने के लिए तैयार है। उसने चाहे बात भी ठीक से नहीं सुनी है, लेकिन 'हां हुज़ूर' कहे जा रहा है। उसे पता भी नहीं कि वह किस चीज में हां भर रहा है। लेकिन वह हां भरे चला जा रहा है। एक गुरु एक सीक्रेट उसे पता है। जिन्दगी में जीना हो तो सब चीज में 'हां' कहे चले जाओ।

हिप्पी कह रहा है जब तक हम समाज की हर चीज में 'हां' कह रहे है, तब तक व्यक्ति का जन्म नहीं होता। व्यक्ति का जन्म होता है 'नौ से इंग' से, न कहना शुरू करने से।

असल में मनुष्य की आत्मा ही तब पैदा होती है, जब कोई आदमी 'नो' नहीं कहने की हिम्मत जुटा लेता है।

जब कोई कह सकता है, नहीं, चाहे दांव पर पूरी जिंदगी लग जाती हो। और जब एक बार आदमी नहीं, कहना शुरू कर दे, 'नहीं' कहना सीख ले, तब पहली दफा उसके भीतर इस 'नहीं' कहने के कारण, 'डिनायल' के कारण व्यक्ति का जन्म शुरू होता है। यह 'न' की जो रेखा है, उसको व्यक्ति बनाती है। 'हां' की रेखा उसको समूह का अंग बना देती है। इसलिए समूह सदा आज्ञाकारिता पर जोर देता है।

बाप अपने 'गोबर गणेश' बेटे को कहेगा कि आज्ञाकारी है। क्योंकि गोबर गणेश बेटे से न निकलती ही नहीं। असल में 'न' निकलने के लिए थोड़ी बुद्धि चाहिए। हां निकलने के लिए बुद्धि की कोई जरूरत नहीं है। हां तो कम्प्युटराइज्ड है, वह तो बुद्धि जितनी कम होगी, उतनी जल्दी निकलता है। न तो सोच विचार मांगता है। न तो तर्क आर्गुमेंट मांगता है। न जब कहेंगे तो पच्चीस बार सोचना पड़ता है। क्योंकि न कहने पर बात खत्म नहीं होती। शुरू होती है। हां कहने पर बात खत्म हो जाती है। शुरू नहीं होती।

बुद्धिमान बेटा होगा तो बाप को ठीक नहीं लगेगा, क्योंकि बुद्धिमान बेटा बहुत बार बाप को निर्बुद्धि सिद्ध कर देगा। बहुत क्षणों में बाप को ठीक नहीं लगेगा, क्योंकि अपने आप को भी वह निर्बुद्धि मालूम पड़ रहा है। बड़ी चोट है, अहंकार को। वह कठिनाई में डाल देगा।

इसलिए हजारों साल से बाप, पीढ़ी, समाज 'हां' कहने की आदत डलवा रहा है। उसको वह अनुशासन कहे, आज्ञाकारिता कहे और कुछ नाम दे लेकिन प्रयोजन एक है। और वह यह है कहे विद्रोह नहीं होना चाहिए। बगावती चित नहीं होना चाहिए।

हिप्पियों का तीसरा सूत्र है कि अगर चित ही चाहिए हो तो सिर्फ बगावती ही हो सकता है। अगर आत्मा चाहिए हो तो वह 'रिबैलियस' ही हो सकती है। अगर आत्मा ही न चाहिए तो बात दूसरी।

कन्फरमिस्ट के पास कोई आत्मा नहीं होती।

यह ऐसा ही है, जैसे एक पत्थर पडा है, सड़क के किनारे। सड़क के किनारे पडा हुआ पत्थर मूर्ति नहीं बनता। मूर्ति तो तब बनता है। जब छैनी और हथौड़ी उस पर चोट करती और काटती है। जब कोई आदमी 'न' कहता है। और बगावत करता है। तो सारे प्राणों पर छैनी और हथौड़ियां पड़ने लगती है। सब तरफ से मूर्ति निखरना शुरू होती है। लेकिन जब कोई पत्थर कह देता है ''हां'' तो छैनी हथौड़ी नहीं होती वहां पैदा। वह फिर पत्थर ही रह जाता है। सड़क के किनारे पडा हुआ।

लेकिन समस्त सत्ताधिकारी यों को चाहे वे पिता हो, चाहे मां, चाहे शिक्षक हो। चाहे बड़ा भाई हो, चाहे राजनेता हो, समस्त सत्ताधिकारी यों को ''हां-हुजूर'' की जमात चाहिए।

हिप्पी कहते है कि इससे हम इंकार करते है। हमें जो ठीक लगेगा। वैसा हम जीयेंगे। निश्चित ही तकलीफ है और इसलिए हिप्पी भी एक तरह का संन्यासी है। असल में संन्यासी कभी एक दिन एक तरह का हिप्पी ही था, उसने भी इंकार किया था, अ-नागरिक था, समाज छोड़ दिया, चला गया स्वछंद जीने की राह पर।

जैसे महावीर नग्न खड़े हो गए, महावीर जिस दिन बिहार में नग्न हुए होंगे। उस दिन मैं नहीं समझता कि पुरानी जमात ने स्वीकार किया होगा। यहां तक बात चली कि अब महावीर को मानने वालों के दो हिस्से है। एक तो कहता है कि वस्त्र पहनते थे। लेकिन वे अदृश्य वस्त्र थे, दिखाई नहीं देते थे। यह पुराना कन्फरमिस्ट जो होगा, उसने आखिर महावीर को भी वस्त्र पहना दिये, लेकिन ऐसे वस्त्र जो दिखाई नहीं पड़ रहे है। इस लिए कुछ लोगों को भूल हुई कि वे नंगे थे। वे नंगे नहीं थे। वस्त्र पहने थे।

जीसस, बुद्ध, महावीर जैसे लोग सभी बगावती है। असल में मनुष्य जाति के इतिहास में जिनके नाम भी गौरव से लिये जा सकें वे सब बगावती है।

ओशो

संभोग से समाधि की और

विद्रोह क्या है,

प्रवचन—10

संभाेग से समाधि की और—39 सेक्स नैतिक या अनैतिक: (भाग-1)

Posted on दिसम्बर 30, 2011by sw anand prashad

सेक्स नैतिक या अनैतिक--ओशो

सेक्स से संबंधित किसी नैतिकता का कोई भविष्य नहीं है। सच तो यह है कि सेक्स और नैतिकता के संयोजन ने नैतिकता के सारे अतीत को विषैला कर दिया है। नैतिकता इतनी सेक्स केंद्रित हो गई कि उसके दूसरे सभी आयाम खो गये—जो अधिक महत्वपूर्ण है। असल में सेक्स नैतिकता से इतना संबंधित नहीं होना चाहिए।
सच, ईमानदारी, प्रामाणिकता, पूर्णता—इन चीजों का नैतिकता से संबंध होना चाहिए। चेतना, ध्यान, जागरूकता, प्रेम, करूण—इन बातों का असल में नैतिकता से संबंध होना चाहिए।
लेकिन अतीत में सेक्स और नैतिकता लगभग पर्यायवाची रहे है; सेक्स अधिक मजबूत, अत्यधिक भारी हो गया। इसलिए जब कभी तुम कहो कि कोई व्यक्ति अनैतिक है तब तुम्हारा मतलब होता है, कि उसके सेक्स जीवन के बारे में कुछ गलत है। और जब तुम कहते हो कि कोई व्यक्ति बहुत नैतिक है, तुम्हारा सारा अर्थ यह होता है, कि वह सभी नैतिकता एक आयामी हो गई; यह ठीक नहीं था। ऐसी नैतिकता का कोई भविष्य नहीं है, वह समाप्त हो रही है। वास्तव में यह मर चुकी है। तुम सिर्फ लाश को ढो रहे हो।

सेक्स तो आमोद-प्रमोद पूर्ण होना चाहिए। न कि गंभीर मामला जैसा कि अतीत में बना दिया गया। यह तो एक नाटक की तरह होना चाहिए, एक खेल कि तरह: मात्र दो लोग एक दूसरे की शारीरिक ऊर्जा के साथ खेल रहे है। यदि वे दोनों खुश है, तो इसमें किसी दूसरे की दखल

अंदाजी नहीं होनी चाहिए। वे किसी को नुकसान नहीं पहुंचा रहे। वे बस एक दूसरे की ऊर्जा का आनंद ले रहे है। यह ऊर्जाओं का एक साथ नृत्य है। इसमें समाज का कुछ लेना देना नहीं है। जब तक कि कोई एक दूसरे के जीवन में नुकसान न दें। अपने को थोपे, लादे, हिंसात्मक न हो, किसी के जीवन को नुकसान न पहुँचाए, तब ही समाज को बीच में आना चाहिए। अन्यथा कोई समस्या नहीं है; इसका किसी तरह से लेना देना नहीं होना चाहिए।

सेक्स के बारे में भविष्य में पूरा अलग ही नजरिया होगा। यह अधिक खेल पूर्ण, आनंद पूर्ण, अधिक मित्रतापूर्ण, अधिक सहज होगा। अतीत की तरह गंभीर बात नहीं। इसने लोगों का जीवन बर्बाद कर दिया है। बेवजह सरदर्द बन गया था। इसने बिना किसी कारण—ईर्ष्या, अधिकार, मलकियत, किचकिच, झगड़ा, मारपीट, भर्त्सना पैदा की।

सेक्स साधारण बात है, जैविक घटना मात्र। इसे इतना महत्व नहीं दिया जाना चाहिए। इसका इ तना ही महत्व है कि ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन किया जा सके। यह अधिक से अधिक आध्यात्मिक हो सकता है। और अधिक आध्यात्मिक बनाने के लिए इसे कम से कम गंभीर मसला बनाना होगा।

सेक्स से संबंधित नैतिकता के भविष्य को लेकर बहुत चिंतित मत होओ, यह पूरी तरह से समाप्त हो जाने वाला है। भविष्य में सेक्स के बारे में पूरी तरह से नया ही दृष्टिकोण होगा। और एक बार सेक्स का नैतिकता से इतना गहरा संबंध समाप्त हो जायेगा। तो नैतिकता का संबंध दूसरी अन्य बातों से हो जायेगा जिनका अधिक महत्व है।

सत्य, ईमानदारी, प्रामाणिकता, पूर्णता, करूण, सेवा, ध्यान, असल में इन बातों का नैतिकता से संबंध होना चाहिए। क्योंकि ये बातें है जो तुम्हारे जीवन को रूपांतरित करती है। ये बातें है जो तुम्हें अस्तित्व के करीब लाती है।

ओशो
आह, दिस

गंदा बूढ़ा जैसी अभिव्यक्ति क्यों बनी?
क्योंकि लंबे समय से समाज दमन करता चला आया है इसलिए गंदे बूढ़े होते है। यह तुम्हारे साधु-संतों, पंडित-पुजारियों की देन है।

यदि लोग अपने सेक्स जीवन को आनंदपूर्ण ढंग से जी सके तो बयालीस साल के होत-होत, याद रखो में कह रहा हूं, बयालीस, न कि चौरासी...बयालीस के होते सेक्स उन पर से अपनी पकड़ छोड़ना शुरू कर देगा। ऐसे ही जैसे कि चौदह के होते स्वयं सेक्स आता है और

ताकतवर होता है। ऐसे ही कोई बयालीस का होता है सेक्स विदा हो जाता है। बूढ़ा व्यक्ति अधिक प्रेम पूर्ण, करुणापूर्ण, एक उत्सव से भरा व्यक्ति हो जाता है। उसके प्रेम में कामुकता नहीं होती। कोई चाहत नहीं होगी, इसके द्वारा किसी तरह की वासना को पूरी करने की मंशा नहीं होगी। उसका प्रेम शुद्ध होगा। मासूम; उसका प्रेम आनंद होगा।

सेक्स तुम्हें सुख देता है। और सेक्स तभी सुख देता है जब तुम इसमें से गूजरों तब सुख इसका परिणाम होगा। यदि सेक्स अप्रासंगिक हो गया हो—न कि दमन, बल्कि तुमने इतनी गहनता से अनुभव किया कि इसका कोई मुल्य नहीं है। तुमने इसे पूर्णता से जान लिया, और ज्ञान हमेशा स्वतंत्रता लता है। तुमने इसे पूर्णता से जाना और चूंकि तुमने इसे जान लिया, रहस्य समाप्त हो गया, इससे अधिक जानने को कुछ नहीं रहा। इस जानने में, सारी ऊर्जा, काम की ऊर्जा, प्रेम और करूण में रूपांतरित हो जाती है। आनंद वश कोई देता है। तब बूढ़ा व्यक्ति दुनिया का सबसे सुंदर व्यक्ति है, दुनिया का सर्वाधिक स्वच्छ व्यक्ति।

दुनिया की किसी भाषा में स्वच्छ बूढ़ा जैसा कोई शब्द नहीं है। मैंने कभी नहीं सूना। लेकिन गंदा बूढ़ा सारी भाषाओं में होता है। कारण यह है कि शरीर बूढा हो गया है। शरीर थक गया है। शरीर सारी कामुकता से मुक्त होना चाहिए। लेकिन मन, दमित इच्छाओं की वजह से, अब भी लालायित रहता है। जब कि शरीर इसके काबिल नहीं रहा। और मन सतत मांग करता रहता है। जिसके लिए शरीर सक्षम नहीं है। सच तो बूढ़ा व्यक्ति परेशान होता है। उसकी आंखें, कामुक, वासना से भरी है, उसका शरीर मृतप्राय हो थका हुआ है। और उसका मन उसे उत्तेजित किये जाता है। वह भद्दे ढंग से देखने लगता है, गंदा-चेहरा; उसके भीतर कुछ गंदा निर्मित होने लगता है।

शरीर देर सबेर बूढ़ा होता है; इसका बूढ़ा होना पक्का है। लेकिन यदि तुमने अपनी वासनाओं को ठीक से नहीं जिया तो वे तुम्हारे आसपास घूमती रहेंगी। वे तुम्हारे भीतर कुछ गंदा निर्मित करके रहेगी। या तो बूढ़ा व्यक्ति दूनिया का सबसे सुंदर व्यक्ति होता है। क्योंकि उसने वहीं भोलापन अर्जित कर लिया है। जो छोटे बच्चे में होता है। या यूं कह लीजिए की छोटे बच्चे से भी अधिक गहरा भोलापन। वह संत हो जाता है। लेकिन यदि वासनाएं अभी भी है, आंतरिक विद्युत की भांति दौड़ती हुई, तब वह परेशानी में पड़ने ही वाला है।

यदि तुम बूढ़े हो रहे हो, याद रखो वृद्धावस्था जीवन का सबसे अधिक सुंदर अनुभव है। अगर तुम इसे बना सको तो। क्योंकि बच्चें को भविष्य की चिंता है। यह करना है और वह करना है उसकी महान इच्छाएं है। हर बच्चा सोचता है कि वह कुछ विशेष होने वाला है वह वासनाओं और भविष्य में जीता है। युवा अपनी सभी इंद्रियों में बहुत अधिक उलझा होता है। सेक्स वहां है, आधुनिक खोज कहती है। हर आदमी तीन सेकेंड में एक बार सेक्स के बारे में सोचता है। स्त्रियां थोड़ी अधिक ठीक है। वे छः सेकंड में एक बार सेक्स के बारे में सोचती

है। यह बहुत बड़ा अंतर है। लगभग दोगुना; पति पत्नी के बीच होने वाली कलह का यह एक कारण हो सकता है।

हर तीन सेकंड में सेक्स मन में कौंधता है। युवक प्रकृति की ऐसी ताकत होती है। इससे वह स्वतंत्र नहीं हो पाता। महत्वाकांक्षा है, और समय तेज गति से भागा जा रहा है। और उसे कुछ करना है। सभी इच्छाएं, वासनाएं और बचपन की परिकल्पनांए पूरी करनी है; वह पागल दौड़ में है, बहुत जल्दी में है।

बूढ़ा व्यक्ति जानता है कि यौवन के वे सारे दिन और उनकी परेशानियां जा चुकी है। बूढ़ा उसी दशा में है जैसे कि तूफान के बाद शांति उतर आती है। वह मौन अत्यधिक सुंदर, गहन संपदा से भरा हो सकता है। यदि बूढा व्यक्ति सचमुच प्रौढ़ है, जो कि बहुत कम होता है। तब वह सुंदर होगा। लेकिन लोग सिर्फ उम्र में बढ़ते है, वे प्रौढ़ नहीं होते। इस कारण समस्या है।

परिपक्व होओ, अधिक प्रौढ़ होओ, और अधिक जागरूक और सचेत होओ। और वृद्धावस्था तुम्हें अंतिम अवसर दिया गया है: इसके पहले कि मौत आये, तैयार हो जाओ। और कोई मृत्यु के लिए कैसे तैयार होता है? अधिक ध्यान पूर्ण होकर।

यदि कुछ वासनाएं अभी अटकी है, और शरीर बूढा हो रहा है। और शरीर उनको पूरा करने की दशा में नहीं है, चिंता मत करो। उन वासनाओं पर ध्यान करो, साक्षा बनो, सचेत होओ। सिर्फ सचेत होने व साक्षी होने से और जागरूक होने से, वे वासनाएं और उनमें लगी ऊर्जा रूपांतरित हो सकती है। लेकिन इसके पहले कि मौत आये सभी वासनाओं से मुक्त हो जाओ।

जब मैं कहता हूं कि सभी वासनाओं से मुक्त हो जाओं तो मरा यह मतलब है कि वासनाओं के सभी संसाधनों से मुक्त हो जाओ। तब वहां शुद्ध अभीप्सा होगी, बगैर किसी विषय वासना के बगैर किसी पते के, बगैर किसी दिशा के, बगैर किसी मंजिल के। शुद्ध ऊर्जा, ऊर्जा का कुंड, ठहरा हुआ। बुद्ध होने का यही मतलब है।

ओशो

दि बुक ऑफ विज़डन

ऐसा लगता है कि पश्चिम के लिए यह स्वीकारना बहुत मुश्किल है कि सेक्स का बिदा होना आनंद और अनंत का आशीर्वाद की तरह हो सकता है। क्योंकि वे मात्र भौतिक शरीर में ही विश्वास करते है। किसी भी पल काम तृप्ति का आनंद लेने के लिए सेक्स एक साधन मात्र है। यदि तुम पर्याप्त भाग्यशाली हो तो, जोकि लाखों लोग नहीं है।

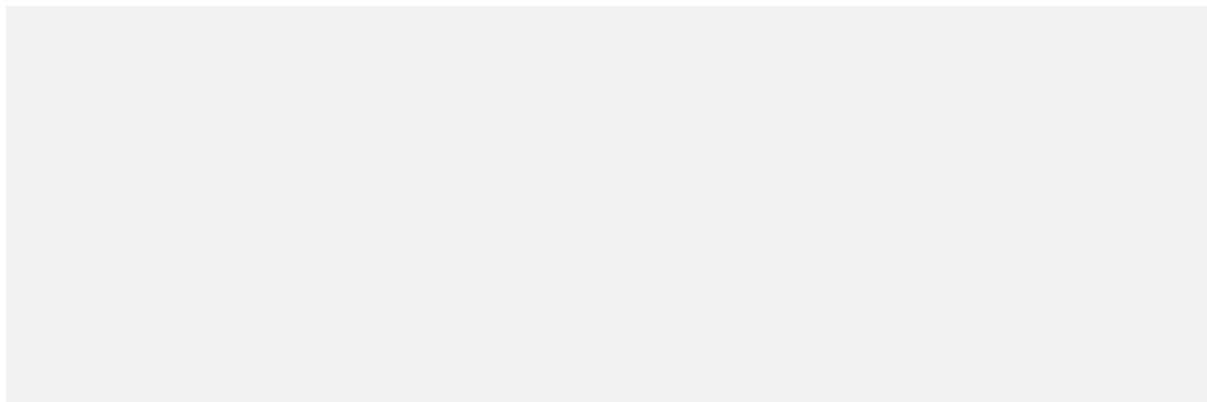
सिर्फ कभी-कभार कोई थोड़ा सा काम के चरमोत्कर्ष का अनुभव ले पाता है। तुम्हारे संस्कार तुम्हें रोकते है। पूरब में यदि सेक्स स्वत: गिर जाता है यह तो उत्सव है1 हमने जीवन को पूरा दूसरी ही तरह से लिया है, हमने इसे सेक्स का पर्यायवाची नहीं बनाया। इसके विपरीत, जब तक सेक्स रहता है इसका मतलब है कि तुम पर्याप्त प्रौढ़ नहीं हुए।

जब सेक्स बिदा हो जाता है, तुम में अत्यधिक प्रौढ़ता और केंद्रीयता आती है। और असली ब्रह्मचर्य, प्रामाणिक ब्रह्मचर्य। और अब तुम जैविक बंधनों से मुक्त हुए जो सिर्फ ज़ंजीरें मात्र है। जो तुम्हें अंधी शक्तियों के कैदी बनाते है, तुम आंखे खोलते हो और इस अस्तित्व की सुंदरता को देख सकते हो। तुम अपने ब्रह्मचर्य के दिनों में अपनी ही मूढ़ता पर हंसोगे। कि कभी तुम सोचते थे कि यही सब कुछ है जो जीवन हमें देता है।

ओशो
सत्यम, शिवम्, सुंदरम्

संभाेग से समाधि की और–39 सेक्स नैतिक या अनैतिक: (भाग-1)

Posted on दिसम्बर 30, 2011by sw anand prashad



सेक्स नैतिक या अनैतिक--ओशो

सेक्स से संबंधित किसी नैतिकता का कोई भविष्य नहीं है। सच तो यह है कि सेक्स और नैतिकता के संयोजन ने नैतिकता के सारे अतीत को विषैला कर दिया है। नैतिकता इतनी सेक्स केंद्रित हो गई कि उसके दूसरे सभी आयाम खो गये—जो अधिक महत्वपूर्ण है। असल में सेक्स नैतिकता से इतना संबंधित नहीं होना चाहिए।
सच, ईमानदारी, प्रामाणिकता, पूर्णता—इन चीजों का नैतिकता से संबंध होना चाहिए। चेतना, ध्यान, जागरूकता, प्रेम, करूण—इन बातों का असल में नैतिकता से संबंध होना चाहिए।

लेकिन अतीत में सेक्स और नैतिकता लगभग पर्यायवाची रहे है; सेक्स अधिक मजबूत, अत्यधिक भारी हो गया। इसलिए जब कभी तुम कहो कि कोई व्यक्ति अनैतिक है तब तुम्हारा मतलब होता है, कि उसके सेक्स जीवन के बारे में कुछ गलत है। और जब तुम कहते हो कि कोई व्यक्ति बहुत नैतिक है, तुम्हारा सारा अर्थ यह होता है, कि वह सभी नैतिकता एक आयामी हो गई; यह ठीक नहीं था। ऐसी नैतिकता का कोई भविष्य नहीं है, वह समाप्त हो रही है। वास्तव में यह मर चुकी है। तुम सिर्फ लाश को ढो रहे हो।

सेक्स तो आमोद-प्रमोद पूर्ण होना चाहिए। न कि गंभीर मामला जैसा कि अतीत में बना दिया गया। यह तो एक नाटक की तरह होना चाहिए, एक खेल कि तरह: मात्र दो लोग एक दूसरे की शारीरिक ऊर्जा के साथ खेल रहे है। यदि वे दोनों खुश है, तो इसमें किसी दूसरे की दखल अंदाजी नहीं होनी चाहिए। वे किसी को नुकसान नहीं पहुंचा रहे। वे बस एक दूसरे की ऊर्जा का आनंद ले रहे है। यह ऊर्जाओं का एक साथ नृत्य है। इसमें समाज का कुछ लेना देना नहीं है। जब तक कि कोई एक दूसरे के जीवन में नुकसान न दें। अपने को थोपे, लादे, हिंसात्मक न हो, किसी के जीवन को नुकसान न पहुँचाए, तब ही समाज को बीच में आना चाहिए। अन्यथा कोई समस्या नहीं है; इसका किसी तरह से लेना देना नहीं होना चाहिए।

सेक्स के बारे में भविष्य में पूरा अलग ही नजरिया होगा। यह अधिक खेल पूर्ण, आनंद पूर्ण, अधिक मित्रतापूर्ण, अधिक सहज होगा। अतीत की तरह गंभीर बात नहीं। इसने लोगों का जीवन बर्बाद कर दिया है। बेवजह सरदर्द बन गया था। इसने बिना किसी कारण—ईर्ष्या, अधिकार, मलकियत, किचकिच, झगड़ा, मारपीट, भर्त्सना पैदा की।

सेक्स साधारण बात है, जैविक घटना मात्र। इसे इतना महत्व नहीं दिया जाना चाहिए। इसका इ तना ही महत्व है कि ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन किया जा सके। यह अधिक से अधिक आध्यात्मिक हो सकता है। और अधिक आध्यात्मिक बनाने के लिए इसे कम से कम गंभीर मसला बनाना होगा।

सेक्स से संबंधित नैतिकता के भविष्य को लेकर बहुत चिंतित मत होओ, यह पूरी तरह से समाप्त हो जाने वाला है। भविष्य में सेक्स के बारे में पूरी तरह से नया ही दृष्टिकोण होगा। और एक बार सेक्स का नैतिकता से इतना गहरा संबंध समाप्त हो जायेगा। तो नैतिकता का संबंध दूसरी अन्य बातों से हो जायेगा जिनका अधिक महत्व है।

सत्य, ईमानदारी, प्रामाणिकता, पूर्णता, करूण, सेवा, ध्यान, असल में इन बातों का नैतिकता से संबंध होना चाहिए। क्योंकि ये बातें है जो तुम्हारे जीवन को रूपांतरित करती है। ये बातें है जो तुम्हें अस्तित्व के करीब लाती है।

ओशो

आह, दिस

गंदा बूढ़ा जैसी अभिव्यक्ति क्यों बनी?

क्योंकि लंबे समय से समाज दमन करता चला आया है इसलिए गंदे बूढ़े होते है। यह तुम्हारे साधु-संतों, पंडित-पुजारियों की देन है।

यदि लोग अपने सेक्स जीवन को आनंदपूर्ण ढंग से जी सके तो बयालीस साल के होत-होत, याद रखो में कह रहा हूं, बयालीस, न कि चौरासी...बयालीस के होते सेक्स उन पर से अपनी पकड़ छोड़ना शुरू कर देगा। ऐसे ही जैसे कि चौदह के होते स्वयं सेक्स आता है और ताकतवर होता है। ऐसे ही कोई बयालीस का होता है सेक्स विदा हो जाता है। बूढ़ा व्यक्ति अधिक प्रेम पूर्ण, करुणापूर्ण, एक उत्सव से भरा व्यक्ति हो जाता है। उसके प्रेम में कामुकता नहीं होती। कोई चाहत नहीं होगी, इसके द्वारा किसी तरह की वासना को पूरी करने की मंशा नहीं होगी। उसका प्रेम शुद्ध होगा। मासूम; उसका प्रेम आनंद होगा।

सेक्स तुम्हें सुख देता है। और सेक्स तभी सुख देता है जब तुम इसमें से गूजरों तब सुख इसका परिणाम होगा। यदि सेक्स अप्रासंगिक हो गया हो—न कि दमन, बल्कि तुमने इतनी गहनता से अनुभव किया कि इसका कोई मुल्य नहीं है। तुमने इसे पूर्णता से जान लिया, और ज्ञान हमेशा स्वतंत्रता लता है। तुमने इसे पूर्णता से जाना और चूंकि तुमने इसे जान लिया, रहस्य समाप्त हो गया, इससे अधिक जानने को कुछ नहीं रहा। इस जानने में, सारी ऊर्जा, काम की ऊर्जा, प्रेम और करूण में रूपांतरित हो जाती है। आनंद वश कोई देता है। तब बूढ़ा व्यक्ति दुनिया का सबसे सुंदर व्यक्ति है, दुनिया का सर्वाधिक स्वच्छ व्यक्ति।

दुनिया की किसी भाषा में स्वच्छ बूढ़ा जैसा कोई शब्द नहीं है। मैंने कभी नहीं सूना। लेकिन गंदा बूढ़ा सारी भाषाओं में होता है। कारण यह है कि शरीर बूढा हो गया है। शरीर थक गया है। शरीर सारी कामुकता से मुक्त होना चाहिए। लेकिन मन, दमित इच्छाओं की वजह से, अब भी लालायित रहता है। जब कि शरीर इसके काबिल नहीं रहा। और मन सतत मांग करता रहता है। जिसके लिए शरीर सक्षम नहीं है। सच तो बूढ़ा व्यक्ति परेशान होता है। उसकी आंखें, कामुक, वासना से भरी है, उसका शरीर मृतप्राय हो थका हुआ है। और उसका मन उसे उत्तेजित किये जाता है। वह भद्दे ढंग से देखने लगता है, गंदा-चेहरा; उसके भीतर कुछ गंदा निर्मित होने लगता है।

शरीर देर सबेर बूढ़ा होता है; इसका बूढ़ा होना पक्का है। लेकिन यदि तुमने अपनी वासनाओं को ठीक से नहीं जिया तो वे तुम्हारे आसपास घूमती रहेंगी। वे तुम्हारे भीतर कुछ गंदा निर्मित करके रहेगी। या तो बूढ़ा व्यक्ति दूनिया का सबसे सुंदर व्यक्ति होता है। क्योंकि

उसने वहीं भोलापन अर्जित कर लिया है। जो छोटे बच्चे में होता है। या यूं कह लीजिए की छोटे बच्चे से भी अधिक गहरा भोलापन। वह संत हो जाता है। लेकिन यदि वासनाएं अभी भी है, आंतरिक विद्युत की भांति दौड़ती हुई, तब वह परेशानी में पड़ने ही वाला है।

यदि तुम बूढ़े हो रहे हो, याद रखो वृद्धावस्था जीवन का सबसे अधिक सुंदर अनुभव है। अगर तुम इसे बना सको तो। क्योंकि बच्चें को भविष्य की चिंता है। यह करना है और वह करना है उसकी महान इच्छाएं है। हर बच्चा सोचता है कि वह कुछ विशेष होने वाला है वह वासनाओं और भविष्य में जीता है। युवा अपनी सभी इंद्रियों में बहुत अधिक उलझा होता है। सेक्स वहां है, आधुनिक खोज कहती है। हर आदमी तीन सेकेंड में एक बार सेक्स के बारे में सोचता है। स्त्रियां थोड़ी अधिक ठीक है। वे छः सेकंड में एक बार सेक्स के बारे में सोचती है। यह बहुत बड़ा अंतर है। लगभग दोगुना; पति पत्नी के बीच होने वाली कलह का यह एक कारण हो सकता है।

हर तीन सेकंड में सेक्स मन में कौंधता है। युवक प्रकृति की ऐसी ताकत होती है। इससे वह स्वतंत्र नहीं हो पाता। महत्वाकांक्षा है, और समय तेज गति से भागा जा रहा है। और उसे कुछ करना है। सभी इच्छाएं, वासनाएं और बचपन की परिकल्पनांए पूरी करनी है; वह पागल दौड़ में है, बहुत जल्दी में है।

बूढ़ा व्यक्ति जानता है कि यौवन के वे सारे दिन और उनकी परेशानियां जा चुकी है। बूढ़ा उसी दशा में है जैसे कि तूफान के बाद शांति उतर आती है। वह मौन अत्यधिक सुंदर, गहन संपदा से भरा हो सकता है। यदि बूढा व्यक्ति सचमुच प्रौढ़ है, जो कि बहुत कम होता है। तब वह सुंदर होगा। लेकिन लोग सिर्फ उम्र में बढ़ते है, वे प्रौढ़ नहीं होते। इस कारण समस्या है।

परिपक्व होओ, अधिक प्रौढ़ होओ, और अधिक जागरूक और सचेत होओ। और वृद्धावस्था तुम्हें अंतिम अवसर दिया गया है: इसके पहले कि मौत आये, तैयार हो जाओ। और कोई मृत्यु के लिए कैसे तैयार होता है? अधिक ध्यान पूर्ण होकर।

यदि कुछ वासनाएं अभी अटकी है, और शरीर बूढा हो रहा है। और शरीर उनको पूरा करने की दशा में नहीं है, चिंता मत करो। उन वासनाओं पर ध्यान करो, साक्षा बनो, सचेत होओ। सिर्फ सचेत होने व साक्षी होने से और जागरूक होने से, वे वासनाएं और उनमें लगी ऊर्जा रूपांतरित हो सकती है। लेकिन इसके पहले कि मौत आये सभी वासनाओं से मुक्त हो जाओ।

जब मैं कहता हूं कि सभी वासनाओं से मुक्त हो जाओं तो मरा यह मतलब है कि वासनाओं के सभी संसाधनों से मुक्त हो जाओ। तब वहां शुद्ध अभीप्सा होगी, बगैर किसी विषय

वासना के बगैर किसी पते के, बगैर किसी दिशा के, बगैर किसी मंजिल के। शुद्ध ऊर्जा, ऊर्जा का कुंड, ठहरा हुआ। बुद्ध होने का यही मतलब है।

ओशो

दि बुक ऑफ विज़डन

ऐसा लगता है कि पश्चिम के लिए यह स्वीकारना बहुत मुश्किल है कि सेक्स का बिदा होना आनंद और अनंत का आशीर्वाद की तरह हो सकता है। क्योंकि वे मात्र भौतिक शरीर में ही विश्वास करते है। किसी भी पल काम तृप्ति का आनंद लेने के लिए सेक्स एक साधन मात्र है। यदि तुम पर्याप्त भाग्यशाली हो तो, जोकि लाखों लोग नहीं है।

सिर्फ कभी-कभार कोई थोड़ा सा काम के चरमोत्कर्ष का अनुभव ले पाता है। तुम्हारे संस्कार तुम्हें रोकते है। पूरब में यदि सेक्स स्वत: गिर जाता है यह तो उत्सव है1 हमने जीवन को पूरा दूसरी ही तरह से लिया है, हमने इसे सेक्स का पर्यायवाची नहीं बनाया। इसके विपरीत, जब तक सेक्स रहता है इसका मतलब है कि तुम पर्याप्त प्रौढ़ नहीं हुए।

जब सेक्स बिदा हो जाता है, तुम में अत्यधिक प्रौढ़ता और केंद्रीयता आती है। और असली ब्रह्मचर्य, प्रामाणिक ब्रह्मचर्य। और अब तुम जैविक बंधनों से मुक्त हुए जो सिर्फ ज़ंजीरें मात्र है। जो तुम्हें अंधी शक्तियों के कैदी बनाते है, तुम आंखे खोलते हो और इस अस्तित्व की सुंदरता को देख सकते हो। तुम अपने ब्रह्मचर्य के दिनों में अपनी ही मूढ़ता पर हंसोगे। कि कभी तुम सोचते थे कि यही सब कुछ है जो जीवन हमें देता है।

ओशो

सत्यम, शिवम्, सुंदरम्

संभोग से समाधि की ओर–40 सेक्स नैतिक या अनैतिक: (भाग-2)

Posted on दिसम्बर 31, 2011by sw anand prashad

हास्य और सेक्स के बीच क्या संबंध है–

सेक्स नैतिक या अनैतिक—ओशो

इनमें निश्चित संबंध है; संबंध बहुत सामान्य है। सेक्स का चरमोत्कर्ष और हंसी एक ही ढंग से होता है; उनकी प्रक्रिया एक जैसी है। सेक्स के चरमोत्कर्ष में भी तुम तनाव के शिखर तक जाते हो। तुम विस्फोट के करीब और करीब आ रहे हो। और तब शिखर पर अचानक चरम सुख घटता है। तनाव के पास शिखर पर अचानक सब कुछ शिथिल हो जाता है। तनाव के शिखर और शिथिलता के बीच इतना बड़ा विरोध है कि तुम्हें ऐसा लगता है कि तुम शांत, स्थिर सागर में गिर गये—गहन विश्रांति, सधन समर्पण।
यही कारण है कि कभी भी किसी की मृत्यु सेक्स क्रिया के दौरान हार्ट अटेक से नहीं हुई। यह आश्चर्यजनक है। क्योंकि सेक्स क्रिया श्रमसाध्य कार्य है। यह महान योग है। लेकिन कभी कोई नहीं मरा इसका सामान्य सा कारण है कि यह गहन विश्रांति लाता है। सच तो यह है कि कार्डियोलॉजिस्ट और हार्ट स्पेशलिस्ट तो हार्ट के मरीजों को सेक्स औषधि की तरह सिफारिश करने लगे है। सेक्स उनके लिए बहुत मददगार हो सकता है। यह तनाव को विश्रांत करता है। और जब तनाव चला जाता है, तुम्हारा हार्ट अधिक प्राकृतिक ढंग से कार्य करने लगता है।

यही प्रक्रिया हंसी के साथ भी है: यह भी तुम्हारे भीतर का निर्माण करता है। एक निश्चित कहानी और तुम सतत उपेक्षा किये चले जाते हो। कि कुछ होगा। और जब सचमुच कुछ होता है वह इतना अनउपेक्षित होता है कि वह तनाव को मुक्त कर देता है। वह होना तार्किक नहीं है। हंसी के बारे में यह बहुत महत्वपूर्ण बात समझना आवश्यक है। यह होना बहुत मजाकिया होना चाहिए, इसे निश्चित हास्यास्पद होना चाहिये। यदि तुम इसका तार्किक ढंग से निष्कर्ष निकाल सको, तब वहां हंसी नहीं होगी।

एक और अर्थ में हंसी और सेक्स मन में गहरे से जुड़े है। तुम्हारी सेक्स की इंद्री तुम्हारे सेक्स का बाहरी हिस्सा है। असल में सेक्स वही नहीं है। सेक्स दिमाग के किसी केंद्र पर है। इसलिए देर-सबेर मानव इस पुराने तरह के सेक्स से मुक्त हो जायेगा। यह सचमुच

हास्यास्पद है। यही कारण है कि लोग सेक्स अंधेरे में, रात के कंबल की ओट में करते है। यह इतनी बेतुकी क्रिया है कि यदि तुम स्वयं अपने को सेक्स क्रिया में रत देखो, तुम फिर इसके बारे में कभी नहीं सोचोगे। इसलिए लोग छुपाते है। वे अपने दरवाजे बंद कर लेत है। दरवाज़ों पर ताले लगा लेते है। विशेष रूप से वे बच्चों से बहुत डरते है। क्योंकि वे इस हास्यास्पद स्थिति को तत्काल देख लेते हे। तुम क्या कर रहे हो। डैडी आप क्या कर रहे थे? क्या आप पागल हो गये है? और यह पागलपन लगता है। जैसे कि मिरगी का दौरा पडा हो।

सेक्स और हंसी के केंद्र दिमाग में बहुत पास-पास है, इसलिए कभी-कभी वे एक दूसरे को ढाँक सकते है। इसलिए जब तुम सेक्स क्रिया में जाते हो, यदि तुम इसे सचमुच होने दो, स्त्री को गुदगुदी होने लगेगी। यह गुदगुदाता है। क्योंकि केंद्र बहुत पास है। शिष्टता वश वह हंसेगी नहीं, क्योंकि पुरूष को बुरा लग सकता है। लेकिन केंद्र बहुत पास है। और कभी-कभी जब तुम गहरी हंसी में होते हो तो आनंद का वैसा ही विस्फोट होगा जैसा सेक्स में होता है।

वह मात्र सांयोगिक नहीं है। कि कई खूबसूरत चुटकुले सेक्स से जुड़े होते है। केंद्र बहुत नजदीक है.....मैं क्या कर सकता हूं?

ओशो

कम, कम, याट अगेन कम

सेक्स के प्रति ज़ेन नजरिया क्या है?

ज़ेन का सेक्स के प्रति कोई नजरिया नहीं है। और यह ज़ेन की खूबसूरती है। यदि तुम्हारा कोई नजरिया होता है इसका मतलब ही होता है कि तुम इस तरह या उस तरह उससे ग्रस्त हो। कोई सेक्स के विरोध में है—उसका एक तरह का नजरिया है; और कोई सेक्स के पक्ष में है—उसका दूसरे तरह का रवैया है। और पक्ष में या विपक्ष में दोनों एक साथ चलते है जैसे कि गाड़ी के दो पहिये। ये शत्रु नहीं है, मित्र है, एक ही व्यवसाय के भागीदार।

ज़ेन का किसी तरह नजरिया नहीं है। सेक्स के प्रति किसी का कोई भी नजरिया क्यों होना चाहिए? यही इसकी खूबसूरती है—ज़ेन पूरी तरह से सहज है। पानी पीने के बारे में तुम्हारा कोई नजरिया है? भोजन करने के बारे में तुम्हारा कोई नजरिया है? राज सोने को लेकर तुम्हारा कोई नजरिया है? कोई नजरिया नहीं है।

मैं जानता हूं कि पागल लोग है जिनका इन चीजों के बारे में भी नजरिया है, कि पाँच घटों से अधिक नहीं सोना भी एक तरह का पाप है, कुछ मानों आवश्यक बुराई, इसलिये किसी को पाँच घंटे से अधिक नहीं सोना चाहिए। या भारत में ऐसे लोग है जो सोचते है कि तीन घंटों से अधिक नहीं सोना चाहिए।

कई सदियों से यह बहुत बड़ी दुर्धटना घटी है। लोग सृजनहीन लोगों को पूजते रहे है। और कभी-कभी विकृत चीजों को। तब सोने के प्रति भी तुम्हारा नजरिया होगा। ऐसे लोग है जिनका भोजन के प्रति नजरिया है। यह खाओ या वह खाओ, इतना खाओ, इससे अधिक नहीं। वे अपने शरीर की नहीं सुनते है, शरीर भूखा है या नहीं। उनका अपना कोई विचार है जो वे प्रकृति पर थोपते है।

ज़ेन का सेक्स के बारे में किसी प्रकार का नजरिया नहीं है। जेन बहुत सामान्य है, ज़ेन मासूम है। ज़ेन बच्चे जैसा है। वह कहाता है कि किसी प्रकार के नज़रिये की जरूरत नहीं है। क्यों? क्या छींकने को लेकर तुम्हारा कोई नजरिया है? छींके या नहीं। यह पाप है या पुण्य। तुम्हारा कोई नजरिया नहीं है। लेकिन मैंने ऐसा व्यक्ति देखा है जो छींकने का विरोधी है। और जब कभी वह छींकता है स्वयं की रक्षा के लिए तत्काल मंत्र जाप करता है। वह एक छोटे से मूर्ख पंथ का हिस्सा था। वह संप्रदाय सोचता है जब तुम छिंकते हो तुम्हारी आत्मा बाहर चली जाती है। छींकने में आत्मा बाहर जाती है, और यदि तुम परमात्मा को याद नहीं करो तो हो सकता है वापस न आये। यदि तुम छींकते हुए मर जाते हो तो तुम नर्क चले जाओगे।

किसी भी चीज के लिए तुम्हारा नजरिया हो सकता है। एक बार तुम्हारा कोई नजरिया होता है, तुम्हारा भोलापन नष्ट हो जाता है। और वे नजरिया तुम्हारा नियंत्रण करने लगते है। ज़ेन न तो किसी चीज के पक्ष में है न ही किसी के विपक्ष में। ज़ेन के अनुसार जो कुछ सामान्य है वह ठीक है। साधारण होना, कुछ नहीं होना, शुन्य होना, बगैर किसी अवधारणा के होना, चरित्र के बगैर, चरित्र विहीन......

जब तुम्हारे पास कोई चरित्र होता है तुम किसी तरह के मनोरोगी होते हो। चरित्र का मतलब है कि कुछ तुम्हारे भीतर पक्का हो चुका है। चरित्र का मतलब है तुम्हारी अतीत। चरित्र का मतलब है संस्कार, परिष्कार। जब तुम्हारा कोई चरित्र होता है तब तुम इसके कैदी हो जाते हो, तुम अब स्वतंत्र नहीं रहे। जब तुम्हारे पास चरित्र होता है तब तुम्हारे आसपास कवच होता है। तुम स्वतंत्र व्यक्ति नहीं रहे। तुम अपना कैद खाना अपने साथ लेकिन चल रहे हो; यह बहुत सूक्ष्म कैद खाना है। सच्चा आदमी चरित्र विहीन होगा।

जब मैं कहता हूं चरित्र विहीन तब इसका क्या मतलब होता है। वह अतीत से मुक्त होगा। वह क्षण में व्यवहार करेगा। क्षण के अनुसार। सिर्फ वही तात्कालिक हो सकता है। वह स्मृति ने नहीं देखा कि अब क्या करना। एक तरह की स्थिति बनी और तुम अपनी स्मृति में देख रहे हो—इसका मतलब है कि तुम्हारे पास चरित्र है। जब तुम्हारे पास कोई चरित्र नहीं होता है तब तुम सिर्फ स्थिति को देखते हो और स्थिति तय करती है कि क्या किया जाना चाहिए। तब यह तात्कालिक होता है तब वहां जवाब होगा न कि प्रतिक्रिया।

ज़ेन के पास किसी बात के लिए कोई विश्वास-प्रक्रिया नहीं है। और इसमे सेक्स भी आ जाता है—ज़ेन इसके बारे में कुछ नहीं कहता है। और यह मूलभूत बात होनी चाहिए। समाज ने दमित मन पैदा किया, जीवन निरोधी मन, आनंद का विरोधी। समाज सेक्स के बहुत अधिक विरोध में है। समाज सेक्स के इतना विरोध में क्यों है। क्योंकि यदि तुम लोगों को सेक्स का मजा लेने दो, तुम उन्हें गुलाम नहीं बना सकते। यह असंभव है—एक आनंदित व्यक्ति गुलाम बनाये जा सकते है। आनंदित व्यक्ति स्वतंत्र व्यक्ति है; उसके पास अपनी आत्म निर्भयता है।

तुम एक आनंदित व्यक्ति को युद्ध के लिए भरती नहीं कर सकते। वे युद्ध के लिए क्यों जायेंगे? लेकिन यदि व्यक्ति ने अपने सेक्स का दामन किया है तो वह युद्ध के लिए तैयार हो जायेगा। वह युद्ध में जाने के लिए तत्पर होगा। क्योंकि उसने जीवन का आनंद नहीं लिया। वह जीवन का आनंद लेने काबिल नहीं रहा, इसलिए वह सृजन के भी काबिल नहीं रहा। अब वह मात्र एक काम कर सकता है—वह विध्वंस कर सकता है। उसकी सारी उर्जा जहर हो गई है।

यदि समाज आनंदित होने के पूरी स्वतंत्रता देता है, तो कोई भी विध्वंसात्मक नहीं होगा। जो लोग सुंदर ढंग से प्यार कर सकते है वे कभी विध्वंसात्मक नहीं हो सकते। और जो लोग सुंदर ढंग से प्रेम कर सकते है और जीवन का आनंद मना सकते हे वे प्रतियोगिक भी नहीं होंगे। सिर्फ प्रेम की मुक्ति इस दुनिया में क्रांति ला सकती है। साम्यवाद असफल हो गया, तानाशाही असफल हो गया। सभी वाद असफल हो गये क्योंकि गहरे में ये सभी सेक्स का दमन करते है। इस मामले में उनके बीच कोई फर्क नहीं है—वाशिंगटन और मॉस्को में कोई मतभेद नहीं है। बीजिंग और दिल्ली में—कोई मतभेद नहीं है। ये सभी एक बात पर सहमत है—सेक्स पर नियंत्रण किया जाना चाहिए। लोगों को सेक्स में सहज आनंद लेने की अनुमति नहीं देते है।

सामान्यतया समाज सेक्स के विरोध में है, तंत्र मानवता की मदद करने के लिए आया है, मानवता को सेक्स पुन: देने के लिए। और जब सेक्स वापस दिया जायेगा, तब ज़ेन की उत्पती होती है। ज़ेन का कोई नजरिया नहीं है। ज़ेन शुद्ध स्वास्थ्य है।

ओशो
दि डायमंड सूत्रा

Posted on सितम्बर 17, 2013by sw anand prashad

विद्रोह क्या है—प्रवचन दसवां

हिप्पी वाद मैं कुछ कहूं ऐसा छात्रों ने अनुरोध किया है।

इस संबंध में पहली बात, बर्नार्ड शॉ ने एक किताब लिखी है: मैक्सिम्प फॉर ए रेव्होल्यूशनरी, क्रांतिकारी के लिए कुछ स्वर्ण-सूत्र। और उसमें पहला स्वर्ण बहुत अद्भुत लिखा है। और एक ढंग से पहले स्वर्ण सूत्र लिखा है: 'दि फार्स्ट गोल्डन रूल इज़ दैट देयर आर नौ गोल्डन रूल्स' पहला स्वर्ण नियम यही है कि कोई भी स्वर्ण-नियम नहीं है।

हिप्पी वाद के संबंध में जो पहली बात कहना चाहूंगा, वह यह कि हिप्पी वाद कोई वाद नहीं है, समस्त वादों का विरोध है। पहली पहले इस 'वाद' को ठीक से समझ ले।

पाँच हजार वर्षों से मनुष्य को जिस चीज ने सर्वाधिक पीड़ित किया है वह है वाद—वह चाहे इस्लाम हो, चाहे ईसाइयत हो, चाहे हिन्दू हो, चाहे कम्यूनिज़म हो, सोशलिज्म हो, फासिस्ट, या गांधी-इज्म हो। वादों ने मनुष्य को बहुत ज्यादा पीड़ित किया है।
मनुष्य इतिहास के जितने युद्ध है, जितना हिंसा पात है, वह सब वादों के आसपास धटित हुआ है। वाद बदलते चले गये है, लेकिन नये वाद पुरानी बीमारियों को जगह ले लेते है और आदमी फिर वही का वहीं खड़ा हो जाता है।

1917 में रूस में पुराने वाद समाप्त हुए, पुराने देवी-देवता विदा हुए तो नये देवी-देवता पैदा हो गये। नया धर्म पैदा हो गया। क्रेमलिन अब मक्का और मदीना से कम नहीं है। वह नयी काशी है, जहां पूजा के फूल चढ़ाने सारी दूनिया के कम्युनिस्ट इकट्ठे होते है। मूर्तियां हट गई, जीसस क्राइस्ट के चर्च मिट गये। लेकिन लेनिन की मृत देह क्रेमलिन के चौराहे पर रख दी गयी है। उसकी भी पूजा चलती है।

वाद बदल जाता है,लेकिन नया वाद उसकी जगह ले लेता है।

हिप्पी समस्त बादों से विरोध है। हिप्पी के नाम से जिन युवकों को आज जाना जाता है, उनकी धारणा यह है कि मनुष्य बिना वाद के जी सकता है। न किसी धर्म की जरूरत है, न किसी शास्त्र, न किसी सिद्धांत की, न किसी विचार सम्प्रदाय, आइडियालॉजी की। क्योंकि उनकी समझ यह है जितना ज्यादा विचार की पकड़ जोती है, जीवन उतना ही कम हो जाता है। हिप्पियों की इस बात से मैं अपनी सहमति जाहिर करना चाहता हूं। इन अर्थों में वे बहुत सांकेतिक है, सिम्बालिक है और आने वाले भविष्य की एक सूचना देते है।

आज से 100 वर्ष बाद दुनिया में जो मनुष्य होगा, वह मनुष्य वादों के बाहर तो निश्चित ही चला जायेगा। वाद का इतना विरोध होने का कारण क्यो है?

हिप्पियों के मन में उन युवकों के मन में जो समस्त वादों के विरोध में चले गए है। समस्त मंदिरों, समस्त चर्चों के विरोध में चले गये है। जाने का कारण है। और कारण है इतने दिनों का निरंतर का अनुभव। वह अनुभव यह है कि जितना ही हम मनुष्य के ऊपर वाद थोपते है। उतनी ही मनुष्य की आत्मा मर जाती है।

जितना बड़ा ढांचा होगा वाद का, उतनी ही भीतर की स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है।

इसलिए यह कहा जा सकता है कि हममें से बहुत से लोग मर तो बहुत पहले जाते है दफनाए बहुत बाद में जाते है। कोई 30 साल में मर जाता है और 70 साल में दफनाया जाता है। हम उसी दिन अपनी स्वतंत्रता, अपना व्यक्तित्व अपनी आत्मा खो देते है, जिस दिन कोई विचार का कोई ढांचा हमें सब तरफ से पकड़ लेता है।

सींकचे तो दिखाई पड़ते है लोहे के, कारागृह दिखाई पड़ते है लोहे के, लेकिन विचार के कारागृह दिखाई नहीं पड़ते और जो कारागृह जितना कम दिखाई पड़ता है उतना ही खतरनाक है।

अभी में एक नगर से विदा हुआ। बहुत से मित्र छोड़ने आए थे जिस कम्पार्टमेंट में मैं था उसमें एक साथी थे। उन्होंने देखा कि बहुत मित्र मुझे छोड़ने आये है। तो जैसे ही मैं अंदर प्रविष्ट हुआ, गाड़ी चली, उन्होंने जल्दी से मेरे पैर छुए और कहा कि महात्मा जी, नमस्कार करता हूं। बड़ा आनंद हुआ कि आप मेरे साथ होंगे। मैंने उनसे कहा कि ठीक से पता लगा लेना कि महात्मा हू या नहीं। आपने तो जल्दी पैर छू लिये। अब अगर मैं महात्मा सिद्ध न हुआ तो पैर छूने को वापस कैसे लेंगे?

उन्होंने कहा, नहीं-नहीं ऐसा कैसे हो सकता है, आपके कपड़े कहते है। मैंने कहा, अगर कपड़ों से कोई महात्मा होता तो तब तो पृथ्वी सारी की सारी कभी की महात्मा हो गई होती। उन्होंने कहा कि नहीं इतने लोग छोड़ने आये थे? तो मैंने कहा कि किराये के आदमी इतने ज्यादा लोगों को छोड़ने आते है कि उसका कोई मतलब नहीं रहा है। वे कहने लगे, कम से कम आप हिन्दू तो है?

उन्होंने सोचा कि न सही कोई महात्मा हों, हिन्दू होंगे तो भी चलेगा। कोई ज्यादा गुनाह नहीं हुआ, पैर छू लिए। तो मैंने कहा, नहीं, हिन्दू भी नहीं हूं। तो उन्होंने कहा,आप आदमी कैसे है? कुछ तो होंगे, मुसलमान होंगे, ईसाई होंगे? मैंने उनसे पूछा कि क्या मेरे सिर्फ आदमी होने से आपको कोई एतराज है? क्या सिर्फ आदमी होकर मैं नहीं हो सकता हूं, मुझे कुछ और होना

ही पड़ेगा? उनकी बेचैनी देखने जैसी थी। कंडक्टर को बुलाकर वे दूसरे कंपार्टमेंट में अपना सामान ले गये।

मैं थोड़ी देर बाद उनके पास गया और मैंने उनको कहा आप तो कहते थे सत्संग होगा, बड़ा आनंद होगा। आप तो चले गये। क्या एक आदमी के साथ सफर कना उचित नहीं मालूम पड़ा? हिन्दू के साथ सफर हो सकता था। आदमी के साथ बहुत मुश्किल है।

आज पश्चिम में जिन युवकों ने हिप्पियों का नाम ले रखा है, उनकी पहली बगावत यह है कि वे कहते है कि हम सीधे आदमी की तरह जीयेंगे। न हम हिन्दू होंगे, न हम कम्युनिस्ट होंगे। न हम सोशलिस्ट होंगे, न ईसाई होंगे; हम सीधे निपट आदमी की तरह जीने की कोशिश करेंगे। निपट आदमी की तरह जीने की जो भी कोशिश है, वह मुझे तो बहुत प्रीतिकर हे।

हिप्पी नाम तो नया है। लेकिन घटना बहुत पुरानी है। मनुष्य के इतिहास में आदमी ने कई बाद निपट आदमी की तरह जीने की कोशिश की है। निपट आदमी की तरह जीने में बहुत से सवाल है।

धर्म नहीं, चर्च नहीं, समाज नहीं—अंततः देश भी नहीं; क्योंकि देश, राष्ट्र सब उपद्रव है। सब बीमारियां है।

कल तक पाकिस्तान की भूमि हमारी मातृभूमि हुआ करती थी। अब वह हमारे शत्रु की मातृभूमि है। जमीन वहीं की वही है। कहीं टूटी नहीं, कहीं दरार नहीं पड़ी।

मैंने सुना है, एक पागल खाना था हिन्दुस्तान के बंट वारे के समय। हिन्दुस्तान पाकिस्तान की सीमा पर। अब वह भी सवाल उठा कि इस पागल खाने को कहां जाने दे—हिन्दुस्तान में कि पाकिस्तान में। कोई राजनैतिक उत्सुक न था कि वह पागलखाना कहीं भी ला जाये। तो पागलों से ही पूछा अधिकारियों ने कि तुम कहां जाना चाहते हो। हिन्दुस्तान में या पाकिस्तान में? तो उन पागलों ने कहा हम तो जहां है, वहां बड़े आनंद में है। हमें कहीं जाने की कोई इच्छा नहीं है। पर उन्होंने कहा कि जाना तो पड़ेगा ही, यह इच्छा का सवाल नही है। और तुम घबराओ मत। तुम हिन्दुस्तान में चाहो तो हिन्दुस्तान में चले जाओ,पाकिस्तान में चाहो तो पाकिस्तान में चले जाओ। तुम जहां हो वहीं रहोगे। यहां से हटना न पड़ेगा।

तब तो वे पागल बहुत हंसने लगे। उन्होंने कहा,हम तो सोचते थे कि हम ही पागल है। लेकिन ये अधिकारी और भी पागल मालूम पड़ता है। क्योंकि ये कहता है कि जाना कहीं न पड़ेगा और पूछते है जाना कहां चाहते हो। उन पागलों ने कहा, कि जब जाना ही नहीं पड़ेगा तो जाना चाहते हो का सवाल क्या है? उन पागलों को समझाना बहुत मुश्किल हुआ। आखिर

आधा पागलखाना बीच से दीवार उठाकर पाकिस्तान में चला गया, आधा हिन्दुस्तान में चला गया।

मैंने सुना है कि अभी वे पागल एक दूसरे की दीवार पर चढ़ जाते है और आपस में सोचते है कि बड़ी अजीब बात है, हम वहीं के वहीं है, लेकिन तुम पाकिस्तान में चले गये हो और हम हिन्दुस्तान में चले गये है।

ये पागल हमसे कम पागल मालूम होत है। हमने जमीन को बांटा है, आदमी को बांटा है।

हिप्पी कह रहा है, हम बांटेंगे नहीं; हम निपट बिना बटे हुए आदमी की तरह जीना चाहते है। और बाद बांटते है। बांटने की सबसे सुविधापूर्ण तरकीब बाद है इज्म है।

इसलिए हिप्पी कहते है कि हम किसी इज्म में नहीं है। ऊब चुके तुम्हारे बादों से, तुम्हारे धर्मों से। हमें निपट आदमी की तरह छोड़ दो—हम जैसे है, वैसे जीना चाहते है।

यह तो पहला सूत्र है। इसलिए मैंने कहा, यह बात पहले समझ लेना जरूरी है। हिप्पी इज्म जैसी चीज नहीं है, हिप्पीज है। हिप्पी वाद नहीं है। हिप्पी जरूर है।

दूसरी बात ध्यान में लेने जैसी है और वह यह कि हिप्पियों की ऐसी धारण है कह न केवल आदमी की तरह जीयें बल्कि सहज आदमी की तरह जीयें। हजारों साल से सभ्यता ने आदमी को असहज बनाया है, जैसा वह नहीं है वैसा बनाया है। हजारों साल की सभ्यता संस्कार, व्यवस्था ने आदमी को कृत्रिम को झूठा बनाने की कोशिश की है। उसके हजार चेहरे बना दिये है।

मैने सुना है कह अगर एक कमरे में मैं और आप दो जन मिलें तो वहां दो जन नहीं होंगे, वहां कम से कम 6 जन होंगे। एक मैं—जैसा मैं हूं, एक मैं—जैसा की मैं सोचता हूं। और एक मैं—जैसाकि आप मुझे समझते है कि मैं हूं। और तीन आप और तीन मैं। उस कमरे में जहां दो आदमी मिलते है कम से कम 6 आदमी मिलते है। हजार मिल सकते है, क्योंकि हमारे हजार चेहरे है, मुखौटे है।

हर आदमी कुछ है ओर, कुछ दिखला रहा है। कुछ है, कुछ बन रहा है। और कुछ दिखला रहा है। और फिर न मालुम कितने चेहरे है—जैसे दर्पण के आगे दर्पण, और दर्पण के आगे दर्पण और एक दूसरे के प्रतिबिम्ब हजार-हजार प्रतिबिम्ब हो गये है। इन प्रतिबिम्बों की भीड़ में पता लगाना ही मुश्किल है कि कौन है आप। तय करना ही मुश्किल है कि कौन सा चेहरा है आपका अपना?

पत्नी के सामने आपका चेहरा दूसरा होता है। बेटे के सामने दूसरा हो जाता है। नौकर के सामने एक होता है। मालिक के सामने एक हो जाता है। जब आप मालिक के सामने खड़े होते है तो जो पूंछ आपके पास नहीं है, वह हिलती रहती है। और जब आप नौकर के पास खड़े होते है तब जो पूंछ उसके पास नहीं है, आप गौर से देखते रहते है कि वह हिला रहा है या नहीं हिला रहा है।

हिप्पियों की धारण मुझे प्रीतिकर मालूम पड़ती है। वे कहते है कि हम सहज आदमियों की तरह जीयेंगे। जैसे हम है। धोखा न देंगे। प्रवंचना, पाखंड, डिसेप्शन खड़ा न करेंगे। ठीक है, तकलीफ होगी तो तकलीफ झेलेंगे। लेकिन हम जैसे हम है, वैसे ही रहेंगे।

अगर हिप्पी को लगता है कि वह किसी से कहे कि मुझे आप पर क्रोध आ रहा है और गाली देने का मन होता है तो वह आपसे आकर कहेगा पास में बैठकर कि मुझे आप पर बहुत क्रोध आ रहा है और मैं आपको दो गाली देना चाहता हूं।

मैं समझता हूं कि वह बड़ा मानवीय गुण है। और वह क्षमा मांगने नहीं आयेगा पीछे, जब तक उसे लगे न, क्योंकि वह कहेगा गाली देने का मेरा मन था, मैंने गाली दी और अब जो भी फल हो उसे लेने के लिए मैं तैयार हूं। लेकिन गाली भीतर ऊपर मुस्कराहट इस बात को इंकार कर रहा हूं। लेकिन हमारी स्थिति यह है कि भीतर कुछ है, बहार कुछ। भीतर एक नर्क छिपाये हुए है हम, बाहर हम कुछ और हो गये है। एक आदमी एक जीता-जागता झूठ है।

हिप्पी का दूसरा सूत्र यह है कि हम जैसे है, वैसे है। हम कुछ भी रूकावट न करेंगे, छिपा वट न करेंगे।

मेरे एक मित्र हिप्पियों के एक छोटे से गांव में जाकर कुछ दिन तक रहे तो मुझसे बोले कि बहुत बेचैनी होती है वहां। क्योंकि वहां सारे मुखौटे उखड जाते है। वहां बजाय एक युवक एक युवती के पास आकर कविताएं कहे, प्रेम की और बातें करे हजार तरह की, वह उससे सीधा ही आकर निवेदन कर देगा कि मैं आपको भोगना चाहता हूं। वह कहेगा कि इतने सारे जाल के पीछे इरादा तो वही है। उस इरादे के लिए इतने जाल बनाने की कोई जरूरत नहीं है। वह कह सकता है एक लड़की को जाकर कि मैं तुम्हारे साथ बिस्तर पर सोना चाहता हूं।

बहुत घबरानें वाली बात लगेगी। लेकिन सारी बातचीत और सारी कविता और सारे संगीत और सारे प्रेम चर्चा के बाद यही घटना अगर घटने वाली है। तो हिप्पी कहता है कि इसे सीधा ही निवेदन कर देना उचित है। किसी को धोखा तो न हो, वह लड़की अगर न चाहती है सोना, तो कह तो सकती है कि क्षमा करो।

एक जाल सभ्यता ने खड़ा किया है, जिसने आदमी को बिलकुल ही झूठी इकाई बना दिया है।

अब एक पति है, वह अपनी पत्नी से रोज कहे जा रहा है कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं। और भीतर जानता है कि यह मैं क्यों कहा रहा हूं। एक पत्नी है, वह अपने पति से रोज कहे जा रही है कि मैं तुम्हारे बिना एक क्षण नहीं जी सकती और उसी पति के साथ एक क्षण जीना मुश्किल हुआ जा रहा है।

बाप बेटे से कुछ कह रहा है। कि बाप बेटे से कहा रह है कि मैं तुम्हें इसलिए पढ़ा रहा हूं कि मैं तुझे बहुत प्रेम करता हूं। और वह पढ़ा इसलिए रहा है कि बाप अपढ़ रह गया है। और उसके अहंकार की चोट घाव बन गयी है। वह अपने बेटे को पढ़ा कर अपने अहंकार की पूर्ति करना चाहता है। बाप नहीं पहुंच पाया मिनिस्टरी तक, वह बेटे को पहुंचाना चाहता है। पर वह कहता है बेटे को मैं बहुत प्रेम करता हूं इसलिए.....लेकिन उसे पता नहीं है कि बेटे को मिनिस्टरी तक पहुंचाना बेटे को नर्क तक पहुंचा देना है। अगर प्रेम है तो कम से कम बाप एक बात तो न चाहेगा कि बेटा राजनीतिज्ञ हो जाए।

सारी दूनिया प्रेम कर रही है। लेकिन प्रेम का कोई विस्फोट कभी नहीं होता है। सारी दूनिया प्रेम कर रही है और जब भी विस्फोट होता है तो घृणा का होता है। हिप्पी कहता है जरूर हमारा प्रेम कहीं धोखे का है। कर रहे है घृणा कह रहे है प्रेम।

मैं एक स्त्री को कहता हूं कि मैं तुझे प्रेम करता हूं और मेरी स्त्री जरा पड़ोस के आदमी की तरफ गौर से देख ले तो सारा प्रेम विदा हो गया और तलवार खिंच गयी। कैसा प्रेम है। अगर मैं इस स्त्री को प्रेम करता हूं तो ईर्ष्यालु नहीं हो सकता। प्रेम में ईर्ष्या की कहां जगह है? लेकिन जिस को हम प्रेम कहते है वे सिर्फ एक दूसरे के पहरेदार बन जाते है और कुछ भी नहीं,और एक दूसरे के लिए ईर्ष्या का आधार खोज लेते है। जलते है,जलाते है परेशान करते है।

हिप्पी यह कह रहा है कि बहुत हो चुकी यह बेईमानी। अब हम तो जैसे है, वैसे है। अगर प्रेम है तो कह देंगे कि प्रेम है और जिस चुक जायेगा उस दिन निवेदन कर देंगे कि प्रेम चुक गया। अब झूठी बातों में पड़ने की कोई जरूरत नहीं है, मैं जाता हूं।

लेकिन पुराने प्रेम की धारणा कहती है कि प्रेम होता है तो फिर कभी नहीं मिटता, शाश्वत होता है। हिप्पी कहता है होता होगा। अगर होगा तो कह दूँगा कि शाश्वत है, टिका है। नहीं होगा तो कह दूँ की नहीं है।

एक जाल है जो सभ्यता ने विकसित किया है। उस जाल में आदमी की गर्दन ऐसे फंस गई है, जैसे फांसी लग गई हो उस जाल से बगावत है हिप्पी की।

सहज जीवन—जैसे हैं, है।

लेकिन सहज होना बहुत कठिन है। सहज होना सच में ही बहुत कठिन बात है। क्योंकि हम इतने असहज हो गए है कि हमने इतनी यात्रा कर ली है। अभिनय की कि वहां लौट जाना, जहां हमारी सच्चाई प्रकट हो जाये, बहुत मुश्किल है।

डॉक्टर पर्ल्स एक मनोवैज्ञानिक है, जो हिप्पियों का गुरु कहा जा सकता है। एक महिला गई थी वहां। मैंने उससे कहा था कि जरूर उस पहाड़ी पर हो आना, 2-4दिन रूक जाना। तो जब वह पर्ल्स के पास गयी और वहां का सारा हिसाब देखा, वह तो घबरा गई। बहुत घबरा गयी, क्योंकि वहां सहज जीवन सूत्र है। सारे लोग बैठे है और एक आदमी नंगा चला आयेगा हाल में और आकर बैठ जायेगा। अगर उसको नंगा होना ठीक लग रहा है तो यह उसकी मरजी है। इसमें किसी को कुछ लेना देना नहीं है। न कोई हाल में चीखेगी, न कोई चिल्लायेगा, न कोई गौर से देखेगा, उसे जैसा ठीक लग रहा है, उसे वैसा करने देना है।

और जो लोग पर्ल्स के पास महीने भर रह आते है। उनकी जिंदगी में कुछ नये फूल खिल जाते है। क्योंकि पहली दफा वे हल्के, पक्षियों की तरह जी पाते है। पौधों की तरह, या जैसे आकाश में कभी चील को उड़ते देखा हो—पंख भी नहीं चलाती। पंख भी बंद हो जाते है। बस हवा पर तैरती रहती है। उसे पहाड़ी पर पर्ल्स के पास भी व्यक्ति हवा में तैर रहे है। एक आदमी बहार नाच रहा है। कोई गीत गा रहा है। तो गीत गा रहा है। कोई रो रहा है तो रो रहा है। कोई रूकावट नहीं है।

लेकिन हमने तो आदमी को सब तरह से रोक रखा है। बच्चे को निर्देश देने से शुरू हो जाती है कहानी। हमारी सारी शिक्षा—'डू नाट' से शुरू हो जाती है। और हर बच्चे के दिमाग में हम ज्यादा से ज्यादा 'मत करो' थोपते चले जाते है। अंततः करने की सारी क्षमता, सृजन की सारी क्षमता, 'न-करने' के इस जाल में लुप्त हो जाती है। या तो वह आदमी चोरी से शुरू कर देता है, जो-जो हमने रोका था, कि यह मत करो। और या फिर भीतर परेशानी में पड़ जाता है।

दो ही रास्ते है, या पाखंडी हो जाये, या पागल हो जाये।

अगर भीतर लड़ा और अगर सिंसियर होगा, ईमानदार होगा तो पागल हो जायेगा। अगर होशियार हुआ, चालाक हुआ, कौनिंग हुआ ता पाखंडी हो जायेगा। एक दरवाजा मकान के पीछे से बना लेगा। जहां से करने की दुनिया रहेगी। एक दरवाजा बाहर से रहेगा जहां 'न करने' के

सारे ‘टेन कमांडमैंट्स’ लिखे हुए है। वहां वह सदा ऐसा खड़ा होगा कि यह में नहीं करता हूं। और करने की अलग दुनिया बना लेगा।

मनुष्य को खंडित, स्किजोफ्रेनिक बनाने में, मनुष्य के मन को खंड-खंड करने में सभ्यता की ‘न करने’ की शिक्षा ने बड़ा काम किया है।

हिप्पी कह रहा है कि जो हमें करना है, वह हम करेंगे। और उसके लिए जो भी हमें भोगना है, हम भोग लेंगे। लेकिन एक बात हम न करेंगे कि करें कुछ, और दिखायें कुछ। यही बड़ी बगावत है।

हालांकि सदा से साधु-संतों ने कहा था कि बाहर और भीतर एक होना चाहिए। हिप्पी भी यही कहते है। लेकिन एक बुनियादी फर्क है। साधु-संत कहते है। कि बाहर और भीतर एक होना चाहिए। तब उनका मतलब है: बाहर जैसे हो वैसे ही भीतर होना चाहिए। हिप्पी जब कहता है कि बाहर भीतर एक होना चाहिए: तो वह कहता है कि भीतर जैसे हो वैसे ही बाहर भी होना चाहिए। इन दोनो में फर्क है।

साधु संत जब कहते है कि बहार भीतर एक जैसा होना चाहिए। तो वह कहते है कि भीतर का दरवाजा बंद करो। हिप्पी कहता है बहार भीतर एक होना चाहिए। तो वह कहता है: बाहर जो दस निषेध आज्ञाओं, टेन कमांडमैंट्स की तख्ती लगी है उसको उखाड़कर फेंक दो। और जैसे भी हो, वैसे हो जाओ। अगर चोर हो तो चोर अगर बेईमान हो तो बेईमान, क्रोधी हो तो क्रोधी। बड़ा खतरा तो यह है कि क्रोधी अभिनय कर रहा अक्रोध का, हिंसक अभिनय कर रहा है अहिंसक का, कामी अभिनय कर रहा है ब्रह्मचर्य का। और पुरानी सारी संस्कृतियां अभिनय को बड़ी कीमत देती है। और कुशल अभिनेता की बड़ी पूजा हाथी है।

हिप्पी कह रहा है हम अभिनय की पूजा नहीं करते। हम जीवन के पूजक है। हिप्पी यह कह रहा है कि झूठे ब्रह्मचर्य से सच्चा यौन भी अर्थपूर्ण है। झूठे ब्रह्मचर्य में भी वह सुगंध नहीं है, जो सच्चे यौन में हो सकती है। सच्चे ब्रह्मचर्य की तो बात ही दूसरी है। उसकी सुगंध का हमे क्या पता? लेकिन सच्चा यौन न हो तो सच्चे ब्रह्मचर्य की कोई संभावना ही नहीं है। अभी हिप्पी यह नहीं कह रहे है, लेकिन शीध्र ही जानेंगे तो कहेंगे। हम अगर पशु है तो स्वीकृत है कि हम पशु है और हम पशु की भांति ही जीयेंगे।

तीसरी बात, जब मैं सोचता हूं तो मुझे लगता है कि अगर खोज की जाये तो ईसाईयों की कहानी के अदम और ईव हिप्पियों के आदि पुरूष कहे जाने चाहिए। क्योंकि अदम और ईव को ईश्वर ने कहा था कि तुम ज्ञान के वृक्ष का फल मत चखना। उन्होंने बगावत कर दी

और जिस वृक्ष का फल नहीं चखने को कहा था, उसी का फल चख लिया और ईड़न के बग़ीचे से बहिष्कृत कर दिये गये।

तीसरा सूत्र है हिप्पी का: विद्रोह, इनकार का साहस। एक तो कन्फरमिस्ट की जिन्दगी है, 'हां-हुजूर की' 'यस सर' की। वह जो भी कह रहा है, 'हां' कह रहा है। वह सदा 'हां हुजूर' कहने के लिए तैयार है। उसने चाहे बात भी ठीक से नहीं सुनी है, लेकिन 'हां हुजूर' कहे जा रहा है। उसे पता भी नहीं कि वह किस चीज में हां भर रहा है। लेकिन वह हां भरे चला जा रहा है। एक गुरु एक सीक्रेट उसे पता है। जिन्दगी में जीना हो तो सब चीज में 'हां' कहे चले जाओ।

हिप्पी कह रहा है जब तक हम समाज की हर चीज में 'हां' कह रहे है, तब तक व्यक्ति का जन्म नहीं होता। व्यक्ति का जन्म होता है 'नौ से इंग' से, न कहना शुरू करने से।

असल में मनुष्य की आत्मा ही तब पैदा होती है, जब कोई आदमी 'नो' नहीं कहने की हिम्मत जुटा लेता है।

जब कोई कह सकता है, नहीं, चाहे दांव पर पूरी जिंदगी लग जाती हो। और जब एक बार आदमी नहीं, कहना शुरू कर दे, 'नहीं' कहना सीख ले, तब पहली दफा उसके भीतर इस 'नहीं' कहने के कारण, 'डिनायल' के कारण व्यक्ति का जन्म शुरू होता है। यह 'न' की जो रेखा है, उसको व्यक्ति बनाती है। 'हां' की रेखा उसको समूह का अंग बना देती है। इसलिए समूह सदा आज्ञाकारिता पर जोर देता है।

बाप अपने 'गोबर गणेश' बेटे को कहेगा कि आज्ञाकारी है। क्योंकि गोबर गणेश बेटे से न निकलती ही नहीं। असल में 'न' निकलने के लिए थोड़ी बुद्धि चाहिए। हां निकलने के लिए बुद्धि की कोई जरूरत नहीं है। हां तो कम्प्युटराइज्ड है, वह तो बुद्धि जितनी कम होगी, उतनी जल्दी निकलता है। न तो सोच विचार मांगता है। न तो तर्क आर्गुमेंट मांगता है। न जब कहेंगे तो पच्चीस बार सोचना पड़ता है। क्योंकि न कहने पर बात खत्म नहीं होती। शुरू होती है। हां कहने पर बात खत्म हो जाती है। शुरू नहीं होती।

बुद्धिमान बेटा होगा तो बाप को ठीक नहीं लगेगा, क्योंकि बुद्धिमान बेटा बहुत बार बाप को निर्बुद्धि सिद्ध कर देगा। बहुत क्षणों में बाप को ठीक नहीं लगेगा, क्योंकि अपने आप को भी वह निर्बुद्धि मालूम पड़ रहा है। बड़ी चोट है, अहंकार को। वह कठिनाई में डाल देगा।

इसलिए हजारों साल से बाप, पीढ़ी, समाज 'हां' कहने की आदत डलवा रहा है। उसको वह अनुशासन कहे, आज्ञाकारिता कहे और कुछ नाम दे लेकिन प्रयोजन एक है। और वह यह है कहे विद्रोह नहीं होना चाहिए। बगावती चित नहीं होना चाहिए।

हिप्पियों का तीसरा सूत्र है कि अगर चित ही चाहिए हो तो सिर्फ बगावती ही हो सकता है। अगर आत्मा चाहिए हो तो वह 'रिबैलियस' ही हो सकती है। अगर आत्मा ही न चाहिए तो बात दूसरी।

कन्फरमिस्ट के पास कोई आत्मा नहीं होती।

यह ऐसा ही है, जैसे एक पत्थर पडा है, सड़क के किनारे। सड़क के किनारे पडा हुआ पत्थर मूर्ति नहीं बनता। मूर्ति तो तब बनता है। जब छैनी और हथौड़ी उस पर चोट करती और काटती है। जब कोई आदमी 'न' कहता है। और बगावत करता है। तो सारे प्राणों पर छैनी और हथौड़ियां पड़ने लगती है। सब तरफ से मूर्ति निखरना शुरू होती है। लेकिन जब कोई पत्थर कह देता है ''हां'' तो छैनी हथौड़ी नहीं होती वहां पैदा। वह फिर पत्थर ही रह जाता है। सड़क के किनारे पडा हुआ।

लेकिन समस्त सत्ताधिकारी यों को चाहे वे पिता हो, चाहे मां, चाहे शिक्षक हो। चाहे बड़ा भाई हो, चाहे राजनेता हो, समस्त सत्ताधिकारी यों को ''हां-हुजूर'' की जमात चाहिए।

हिप्पी कहते है कि इससे हम इंकार करते है। हमें जो ठीक लगेगा। वैसा हम जीयेंगे। निश्चित ही तकलीफ है और इसलिए हिप्पी भी एक तरह का संन्यासी है। असल में संन्यासी कभी एक दिन एक तरह का हिप्पी ही था, उसने भी इंकार किया था, अ-नागरिक था, समाज छोड़ दिया, चला गया स्वछंद जीने की राह पर।

जैसे महावीर नग्न खड़े हो गए, महावीर जिस दिन बिहार में नग्न हुए होंगे। उस दिन मैं नहीं समझता कि पुरानी जमात ने स्वीकार किया होगा। यहां तक बात चली कि अब महावीर को मानने वालों के दो हिस्से है। एक तो कहता है कि वस्त्र पहनते थे। लेकिन वे अदृश्य वस्त्र थे, दिखाई नहीं देते थे। यह पुराना कन्फरमिस्ट जो होगा, उसने आखिर महावीर को भी वस्त्र पहना दिये, लेकिन ऐसे वस्त्र जो दिखाई नहीं पड़ रहे है। इस लिए कुछ लोगों को भूल हुई कि वे नंगे थे। वे नंगे नहीं थे। वस्त्र पहने थे।

जीसस, बुद्ध, महावीर जैसे लोग सभी बगावती है। असल में मनुष्य जाति के इतिहास में जिनके नाम भी गौरव से लिये जा सकें वे सब बगावती है।.............

दूसरा सूत्र है—सहज जीवन—जैसे हैं, है।

लेकिन सहज होना बहुत कठिन है। सहज होना सच में ही बहुत कठिन बात है। क्योंकि हम इतने असहज हो गए है कि हमने इतनी यात्रा कर ली है। अभिनय की कि वहां लौट जाना, जहां हमारी सच्चाई प्रकट हो जाये, बहुत मुश्किल है।

डॉक्टर पर्ल्स एक मनोवैज्ञानिक है, जो हिप्पियों का गुरु कहा जा सकता है। एक महिला गई थी वहां। मैंने उससे कहा था कि जरूर उस पहाड़ी पर हो आना, 2-4दिन रूक जाना। तो जब वह पर्ल्स के पास गयी और वहां का सारा हिसाब देखा, वह तो घबरा गई। बहुत घबरा गयी, क्योंकि वहां सहज जीवन सूत्र है। सारे लोग बैठे है और एक आदमी नंगा चला आयेगा हाल में और आकर बैठ जायेगा। अगर उसको नंगा होना ठीक लग रहा है तो यह उसकी मरजी है। इसमें किसी को कुछ लेना देना नहीं है। न कोई हाल में चीखेगी, न कोई चिल्लायेगा, न कोई गौर से देखेगा, उसे जैसा ठीक लग रहा है, उसे वैसा करने देना है।

और जो लोग पर्ल्स के पास महीने भर रह आते है। उनकी जिंदगी में कुछ नये फूल खिल जाते है। क्योंकि पहली दफा वे हल्के, पक्षियों की तरह जी पाते है। पौधों की तरह, या जैसे आकाश में कभी चील को उड़ते देखा हो—पंख भी नहीं चलाती। पंख भी बंद हो जाते है। बस हवा पर तैरती रहती है। उसे पहाड़ी पर पर्ल्स के पास भी व्यक्ति हवा में तैर रहे है। एक आदमी बहार नाच रहा है। कोई गीत गा रहा है। तो गीत गा रहा है। कोई रो रहा है तो रो रहा है। कोई रूकावट नहीं है।

लेकिन हमने तो आदमी को सब तरह से रोक रखा है। बच्चे को निर्देश देने से शुरू हो जाती है कहानी। हमारी सारी शिक्षा—'डू नाट' से शुरू हो जाती है। और हर बच्चे के दिमाग में हम ज्यादा से ज्यादा 'मत करो' थोपते चले जाते है। अंतत: करने की सारी क्षमता, सृजन की सारी क्षमता, 'न-करने' के इस जाल में लुप्त हो जाती है। या तो वह आदमी चोरी से शुरू कर देता है, जो-जो हमने रोका था, कि यह मत करो। और या फिर भीतर परेशानी में पड़ जाता है।

दो ही रास्ते है, या पाखंडी हो जाये, या पागल हो जाये।

अगर भीतर लड़ा और अगर सिंसियर होगा, ईमानदार होगा तो पागल हो जायेगा। अगर होशियार हुआ, चालाक हुआ, कौनिंग हुआ ता पाखंडी हो जायेगा। एक दरवाजा मकान के पीछे से बना लेगा। जहां से करने की दुनिया रहेगी। एक दरवाजा बाहर से रहेगा जहां 'न करने' के सारे 'टेन कमांडमैंट्स' लिखे हुए है। वहां वह सदा ऐसा खड़ा होगा कि यह में नहीं करता हूं। और करने की अलग दुनिया बना लेगा।

मनुष्य को खंडित, स्किजोफ्रेनिक बनाने में, मनुष्य के मन को खंड-खंड करने में सभ्यता की 'न करने' की शिक्षा ने बड़ा काम किया है।

हिप्पी कह रहा है कि जो हमें करना है, वह हम करेंगे। और उसके लिए जो भी हमें भोगना है, हम भोग लेंगे। लेकिन एक बात हम न करेंगे कि करें कुछ, और दिखायें कुछ। यही बड़ी बगावत है।

हालांकि सदा से साधु-संतों ने कहा था कि बाहर और भीतर एक होना चाहिए। हिप्पी भी यही कहते है। लेकिन एक बुनियादी फर्क है। साधु-संत कहते है। कि बाहर और भीतर एक होना चाहिए। तब उनका मतलब है: बाहर जैसे हो वैसे ही भीतर होना चाहिए। हिप्पी जब कहता है कि बाहर भीतर एक होना चाहिए: तो वह कहता है कि भीतर जैसे हो वैसे ही बाहर भी होना चाहिए। इन दोनो में फर्क है।

साधु संत जब कहते है कि बहार भीतर एक जैसा होना चाहिए। तो वह कहते है कि भीतर का दरवाजा बंद करो। हिप्पी कहता है बहार भीतर एक होना चाहिए। तो वह कहता है: बाहर जो दस निषेध आज्ञाओं, टेन कमांडमैंट्स की तख्ती लगी है उसको उखाड़कर फेंक दो। और जैसे भी हो, वैसे हो जाओ। अगर चोर हो तो चोर अगर बेईमान हो तो बेईमान, क्रोधी हो तो क्रोधी। बड़ा खतरा तो यह है कि क्रोधी अभिनय कर रहा अक्रोध का, हिंसक अभिनय कर रहा है अहिंसक का, कामी अभिनय कर रहा है ब्रहमचर्य का। और पुरानी सारी संस्कृतियां अभिनय को बड़ी कीमत देती है। और कुशल अभिनेता की बड़ी पूजा हाथी है।

हिप्पी कह रहा है हम अभिनय की पूजा नहीं करते। हम जीवन के पूजक है। हिप्पी यह कह रहा है कि झूठे ब्रहमचर्य से सच्चा यौन भी अर्थपूर्ण है। झूठे ब्रहमचर्य में भी वह सुगंध नहीं है, जो सच्चे यौन में हो सकती है। सच्चे ब्रहमचर्य की तो बात ही दूसरी है। उसकी सुगंध का हमे क्या पता? लेकिन सच्चा यौन न हो तो सच्चे ब्रहमचर्य की कोई संभावना ही नहीं है। अभी हिप्पी यह नहीं कह रहे है, लेकिन शीध्र ही जानेंगे तो कहेंगे। हम अगर पशु है तो स्वीकृत है कि हम पशु है और हम पशु की भांति ही जीयेंगे।

तीसरी बात, जब मैं सोचता हूं तो मुझे लगता है कि अगर खोज की जाये तो ईसाईयों की कहानी के अदम और ईव हिप्पियों के आदि पुरूष कहे जाने चाहिए। क्योंकि अदम और ईव को ईश्वर ने कहा था कि तुम ज्ञान के वृक्ष का फल मत चखना। उन्होंने बगावत कर दी और जिस वृक्ष का फल नहीं चखने को कहा था, उसी का फल चख लिया और ईड़न के बग़ीचे से बहिष्कृत कर दिये गये।

तीसरा सूत्र है हिप्पी का: विद्रोह, इनकार का साहस। एक तो कन्फरमिस्ट की जिन्दगी है, 'हां-हुजूर की' 'यस सर' की। वह जो भी कह रहा है, 'हां' कह रहा है। वह सदा 'हां हुजूर' कहने के लिए तैयार है। उसने चाहे बात भी ठीक से नहीं सुनी है, लेकिन 'हां हुजूर' कहे जा रहा है। उसे

पता भी नहीं कि वह किस चीज में हां भर रहा है। लेकिन वह हां भरे चला जा रहा है। एक गुरु एक सीक्रेट उसे पता है। जिन्दगी में जीना हो तो सब चीज में 'हां' कहे चले जाओ।

हिप्पी कह रहा है जब तक हम समाज की हर चीज में 'हां' कह रहे है, तब तक व्यक्ति का जन्म नहीं होता। व्यक्ति का जन्म होता है 'नौ से इंग' से, न कहना शुरू करने से।

असल में मनुष्य की आत्मा ही तब पैदा होती है, जब कोई आदमी 'नो' नहीं कहने की हिम्मत जुटा लेता है।

जब कोई कह सकता है, नहीं, चाहे दांव पर पूरी जिंदगी लग जाती हो। और जब एक बार आदमी नहीं, कहना शुरू कर दे, 'नहीं' कहना सीख ले, तब पहली दफा उसके भीतर इस 'नहीं' कहने के कारण, 'डिनायल' के कारण व्यक्ति का जन्म शुरू होता है। यह 'न' की जो रेखा है, उसको व्यक्ति बनाती है। 'हां' की रेखा उसको समूह का अंग बना देती है। इसलिए समूह सदा आज्ञाकारिता पर जोर देता है।

बाप अपने 'गोबर गणेश' बेटे को कहेगा कि आज्ञाकारी है। क्योंकि गोबर गणेश बेटे से न निकलती ही नहीं। असल में 'न' निकलने के लिए थोड़ी बुद्धि चाहिए। हां निकलने के लिए बुद्धि की कोई जरूरत नहीं है। हां तो कम्प्युटराइज्ड है, वह तो बुद्धि जितनी कम होगी, उतनी जल्दी निकलता है। न तो सोच विचार मांगता है। न तो तर्क आर्गुमेंट मांगता है। न जब कहेंगे तो पच्चीस बार सोचना पड़ता है। क्योंकि न कहने पर बात खत्म नहीं होती। शुरू होती है। हां कहने पर बात खत्म हो जाती है। शुरू नहीं होती।

बुद्धिमान बेटा होगा तो बाप को ठीक नहीं लगेगा, क्योंकि बुद्धिमान बेटा बहुत बार बाप को निर्बुद्धि सिद्ध कर देगा। बहुत क्षणों में बाप को ठीक नहीं लगेगा, क्योंकि अपने आप को भी वह निर्बुद्धि मालूम पड़ रहा है। बड़ी चोट है, अहंकार को। वह कठिनाई में डाल देगा।

इसलिए हजारों साल से बाप, पीढ़ी, समाज 'हां' कहने की आदत डलवा रहा है। उसको वह अनुशासन कहे, आज्ञाकारिता कहे और कुछ नाम दे लेकिन प्रयोजन एक है। और वह यह है कहे विद्रोह नहीं होना चाहिए। बगावती चित नहीं होना चाहिए।

हिप्पियों का तीसरा सूत्र है कि अगर चित ही चाहिए हो तो सिर्फ बगावती ही हो सकता है। अगर आत्मा चाहिए हो तो वह 'रिबैलियस' ही हो सकती है। अगर आत्मा ही न चाहिए तो बात दूसरी।

कन्फरमिस्ट के पास कोई आत्मा नहीं होती।

यह ऐसा ही है, जैसे एक पत्थर पडा है, सड़क के किनारे। सड़क के किनारे पडा हुआ पत्थर मूर्ति नहीं बनता। मूर्ति तो तब बनता है। जब छैनी और हथौड़ी उस पर चोट करती और काटती है। जब कोई आदमी 'न' कहता है। और बगावत करता है। तो सारे प्राणों पर छैनी और हथौड़ियां पड़ने लगती है। सब तरफ से मूर्ति निखरना शुरू होती है। लेकिन जब कोई पत्थर कह देता है ''हां'' तो छैनी हथौड़ी नहीं होती वहां पैदा। वह फिर पत्थर ही रह जाता है। सड़क के किनारे पडा हुआ।

लेकिन समस्त सत्ताधिकारी यों को चाहे वे पिता हो, चाहे मां, चाहे शिक्षक हो। चाहे बड़ा भाई हो, चाहे राजनेता हो, समस्त सत्ताधिकारी यों को ''हां-हुजूर'' की जमात चाहिए।

हिप्पी कहते है कि इससे हम इंकार करते है। हमें जो ठीक लगेगा। वैसा हम जीयेंगे। निश्‍चित ही तकलीफ है और इसलिए हिप्पी भी एक तरह का संन्यासी है। असल में संन्यासी कभी एक दिन एक तरह का हिप्पी ही था, उसने भी इंकार किया था, अ-नागरिक था, समाज छोड़ दिया, चला गया स्वछंद जीने की राह पर।

जैसे महावीर नग्न खड़े हो गए, महावीर जिस दिन बिहार में नग्न हुए होंगे। उस दिन मैं नहीं समझता कि पुरानी जमात ने स्वीकार किया होगा। यहां तक बात चली कि अब महावीर को मानने वालों के दो हिस्से है। एक तो कहता है कि वस्त्र पहनते थे। लेकिन वे अदृश्य वस्त्र थे, दिखाई नहीं देते थे। यह पुराना कन्फरमिस्ट जो होगा, उसने आखिर महावीर को भी वस्त्र पहना दिये, लेकिन ऐसे वस्त्र जो दिखाई नहीं पड़ रहे है। इस लिए कुछ लोगों को भूल हुई कि वे नंगे थे। वे नंगे नहीं थे। वस्त्र पहने थे।

जीसस, बुद्‌ध, महावीर जैसे लोग सभी बगावती है। असल में मनुष्य जाति के इतिहास में जिनके नाम भी गौरव से लिये जा सकें वे सब बगावती है।

और कृष्ण से बड़ा-महा हिप्पी खोजना तो असंभव ही है। इसलिए कृष्ण को मानने वाल कृष्ण को काट-काटकर स्वीकार करता है। अगर सूरदास के पास जायें तो वे कृष्ण को बच्चे से ऊपर बढ़ने ही नहीं देते। क्योंकि बच्चे के ऊपर बढ़कर वह जो उपद्रव करेगा, वह सूरदास की पकड़ के बाहर है। तो बालकृष्ण को ही वे स्वीकार कर सकते है, छोटे बच्चे को। तब उसकी चोरी भी निर्दोष हो जाती है। लेकिन सूरदास सोच ही नहीं सकते कि उनका कृष्ण रास रचा सकता है। गोपियों से प्रेम कर सकता है। नहाती हुई स्त्रियों के कपड़े लेकर वृक्ष पर चढ़ कर कहता है। हाथ उठाओं। फिर पूराना कन्फरमिस्ट जब आयेगा व्याख्या करने तो वह कहेगा वे गोपियां नही है। गोपी का मतलब होता है इंद्रियां। तो इंद्रियों को निवारण करने वे वृक्ष पर चढ़ गये है। किसी स्त्री को निवारण करके नहीं।

कन्फरमिस्ट बार-बार लौटकर विद्रोहो को भी अपने कैंप में खड़ा कर लेता है। इसलिए जीसस को सूली देनी पड़ती है। लेकिन दो चार सौ वर्ष बाद जीसस भी उसी कतार में सम्मिलित हो जाते है। अब कभी हमने नहीं सोचा कि जीसस को सूली देने का कारण क्या था?

जीसस को सूली देने का कारण बड़ा अजीब था। बड़े से बड़े कारणों में एक तो यह था कि गैर-पारंपरिक, नान-कन्फरमिस्ट थे। वे अंध-स्वीकारी नहीं थे। वे इंकार करने वाल व्यक्ति थे। लोगों ने कहां वह मेग्दलीन वेश्या के, उसके घर में मत ठहरो। तो जीसस ने कहा, मैं भी अगर वैश्या के घर में नहीं ठहरूंगा तो फिर कौन ठहरेगा?

इसलिए जानकर हैरानी होगी कि जिस दिन जीसस को सूली हुई, उस सूली के पास ने तो जीसस को कोई अनुयायी था, न कोई शिष्य था। उसकी सूली के पास जीसस के बुद्धिमान शिष्यों में से कोई भी न था। जीसस के पास सिर्फ दो औरते थी। एक तो वह वेश्या थी, जो उनकी फांसी का कारण थी। सूली से जिसने लाश को उतारा वह मेग्दलीन थी।

तो जीसस को स्वीकार करना उस समाज के लिए असंभव रहा होगा। इसलिए जीसस को जब सूली दी तो दो चोरों के बीच में सूली दी। दो तरफ दो चोर लटकाये, बीच में जीसस को लटकाया। और जनता में से लोगों ने यह भी चील्लाकर कहा कि इन चोरों को क्यों मार रहे हो। लेकिन किसी ने यह न कहा कि जीसस का क्यों मार रहे हो। फिर हम सब साफ-सुथरा कर लेते है।

बग़ावत आत्मा का जन्म है।

हिप्पी विद्रोह को जी रहा है।

इस संबंध में एक बात और मुझे कह लेने जैसी है कि हिप्पी क्रांतिकारी, रिव्योल्यूशनरी नहीं है—विद्रोहो, रिबेलियस है। क्रांतिकारी नहीं है—बगावती है। विद्रोहो है।

और क्रांति और बगावत के फर्क को थोड़ा समझ लेना उपयोगी है। असल में हजारों साल में कितनी ही क्रांतियां हो चुकीं, लेकिन सब क्रांतियां असफल हो गयीं। हिप्पी का कहना है, सब क्रांतियां असफल हो गयीं, क्योंकि क्रांति सफल हो ही नहीं सकती है। सफल हो सकता है, केवल अनियोजित विद्रोह। 1917 की क्रांति असफल हो गयी, क्योंकि एक जार को मारा और दूसरा जार उसकी जगह बैठ गया। सिर्फ नाम बदल गया है। स्टैलिन हो गया उसका नाम। वह दूसरा जार है। किसी जार ने इतने आदमी न मारे थे।

स्टेलिन ने अपनी जिंदगी में एक करोड़ लोगों की हत्या की, किसी जार ने अथवा सब जारों ने मिलकर भी इतने आदमी नहीं मारे थे! तो बड़ी कठिन बात है कि क्रांति भी होती है तो फिर उसके ऊपर एक जार बैठ जाता है। नाम बदल जाता है, झंडा बदल जाता है, बैठने वाले नहीं बदलते। वही चंगेज, वही तैमूर, फिर वापिस बैठ जाता है।

हिटलर सोशलिस्ट था। उनकी पार्टी का नाम था 'नेशनलिस्ट सोशलिस्ट पार्टी',राष्ट्रीयवादी समाजवादी दल! किसने सोचा था कि हिटलर यह करेगा, जो उसने किया।

क्रांतियां जब सफल होती हैं, तब पता चलता है कि सब व्यर्थ हो गया। जब तक सफल नहीं होतीं, तब तक तो लगता है बहुत कुछ हो रहा है। फिर एकदम व्यर्थ हो जाती हैं।

हमारे ही देश में क्रांति हुई और 1947 के बाद हमने सोचा, आजादी आ जायेगी। फिर 1947 के बाद भी हम सोच ही रहे हैं कि 22 साल हो गये, अभी तक आई नहीं? कब आयेगी? हां, फर्क हो गया है। सफेद चमड़ी के मालिक बदल गये, उनकी जगह काली चमड़ी के लोग बैठ गये। काली चमड़ी वालों को भी लगा कि सफेद चमड़ी होनी चाहिए। चमड़ी तो सफेद करना बहुत मुश्किल थी, कपड़े उसने सफेद कर लिए। बस इतना फर्क हो गया। अंग्रेजों ने जितनी गोलियां नहीं चलायी इस देश में, इन्हें जिनको हम अपने ही आदमी कहें, उन्होंने चलायी। कभी अगर इतिहास पूछेगा तो वह पूछ सकेगा कि गुलाम कौम पर इतनी गोलियां नहीं चलानी पड़ी, आजाद होने के बाद इतनी गोलियां अपने ही लोगों पर चलानी पड़ीं, यह बात क्या है? हो क्या गया है!

कोई क्रांति सफल नहीं हो पायी, न होने का कारण है। एक तो यह कि क्रांति के उपकरण बड़े गैर-क्रांतिकारी होते हैं, बड़े दकियानूसी होते हैं।

दूसरा यह कि क्रांति वस्तुत: प्रतिक्रियाअक, रिक्ष्मानरी होती है। उनके प्राण उसी में होते हैं, जिससे कि वह लड़ती है। फिर इसलिए शत्रु के मरते ही उसके होने का भी कोई कारण नहीं रह जाता है। क्रांति की सफलता ही मृत्यु बन जाती है।

हिप्पी का खयाल यह है कि क्रांति इसलिए भी सफल नहीं होती कि क्रांति पुन: समाज को ही केंद्र मानकर चलती है। वह कहती है, समाज बदले।

विद्रोह व्यक्ति को केंद्र मानता है, क्रांति समाज को केंद्र मानती है।

क्रांति कहती है, समाज बदले।

हिप्पी कहता है भाड़ में जाये तुम्हारा पूरा समाज, मैं बदलता हूं। मैं तुम्हारे समाज के लिए नहीं रुला। मैं अकेला बदल जाता हूं। इसलिए हिप्पी व्यक्तिगत विद्रोही है।

और मेरी समझ में यह बात भी बड़ी कीमती है, क्योंकि सब क्रांतियां सफल हो गयीं, फिर भी हम नयी क्रांतियों की बात सोचते चले जाते हैं। असल में क्रांति करने में जो इलजाम करना पडता है, वह क्रांति की ही हत्या कर देता है। पहले तो क्रांति करने के लिए संगठन बनाना पडता है और जैसे ही संगठन बनता है तो संगठन के अपने नियम हैं। वह संगठन किसी का भी हो-जब संगठन बनता है और कोई विचार इंस्टीट्यूशन बनता है, तब सब रोग वापस लौट आते हैं। जो रोग पुराने संगठन में थे, वे पुराने संगठन की वजह न थे। संगठन के कारण कुछ रोग अनिवार्य हैं।

संगठन होगा तो कोई पद पर होगा, मालिक होगा, कोई अधिनायक, डिक्टेटर होगा। कोई आशा चलायेगा। संगठन होगा तो कुछ थोड़े से लोग शक्तिशाली हो जायेंगे। संगठन होगा तो धन इकट्ठा होगा। संगठन होगा तो भीड़ इकट्ठी होगी। और ध्यान रहे भीड़ सदा परम्परानुगत,

कन्फरमिस्ट है। भीड़ सदा 'हां-हुजूर' है।

हिप्पी यह कहता है कि अब क्रांति से नहीं होगा, अब तो विद्रोह करना पड़ेगा।

विद्रोह का मतलब है कि जिसे लगता है गलत है, वह तत्काल गलत से विदा हो जाये।

उनका एक शब्द है 'ड्रापिंग आउट'। वे कहते हैं रास्ते पर भीड़ चली जा रही है, हम कोई आग्रह नहीं करते कि सारी भीड़ को बदलेंगे। हमें लगता है कि गलत है यह भीड़, गलत है यह रास्ता, 'वी जस्ट ड्राप आउट', हम रास्ता छोड़कर नीचे उतर जाते हैं। हम कहते हैं, 'नमस्कार, तुम जाओ। '

यह धारणा बड़ी नयी है, व्यक्तिगत विद्रोह की। बड़ी सबल भी है, क्योंकि शायद किसी क्रांतिकारी ने इतना दांव नहीं लगाया। वे कहते हैं, सब बदलेंगे। तो एक कम्युनिस्ट भी करोड़पति हो सकता है। कोई कठिनाई नहीं है। वह कहता है जब समाज बदलेगा, जब सबकी संपत्ति बटेगी तो मेरी भी बंट जायेगी। लेकिन जब तक. सबकी नहीं बंटी, तब तक मुझे क्यों बांटने की फिकर करना है। लेकिन हिप्पी कहता है, सम्पत्ति अगर रोग है तो मैं तो बाहर हुआ जाता हूं। फिर जब समाज बदलेगा, बदलेगा। लेकिन फिर तुम मुझे जिम्मेदार न ठहरा सकोगे।

अगर वियतनाम में गलत युद्ध हो रहा है तो क्रांतिकारी कहेगा कि आन्दोलन चलाओ, हड़ताल करो, घेराव करो। हिप्पी कहता है सब घेराव करो, सब हड़ताल करो, सब आंदोलन चलाओ। लेकिन चलाने में हिंसा चाहिए, घेराव करने में हिंसा चाहिए। और अगर जीत गये तुम किसी दिन तो जीतते-जीतते इतने हिंसक हो जाओगे कि वियतनाम की जगह दूसरा वियतनाम तुम चला दोगे। हिप्पी कहता है कि हमको लगता है कि गलत है वियतनाम, हम युद्ध पर जाने से इन्कार करते हैं। तुम हमें गोली मार दो, हम ये बैठे हैं, हम नहीं जायेंगे।

व्यक्तिगत विद्रोह-पहली दफा निपट एक व्यक्ति साहस कर रहा है कि सारा समाज गलत लगता है तो हम बाहर हो जायें। वह यह नहीं कह रहा कि समाज के विवाह के नियम बदलेंगे, तब हम सुधरेंगे। वह यह कह रहा है, हमने बदल दिये हैं नियम अपने लिए। अब जो तकलीफ होगी, वह हम सह लेंगे।

अब हिप्पी ऐसी लड़कियों के साथ रह रहा है जिससे वह विवाहित नहीं है। हिप्पी लड़कियां ऐसे युवकों के साथ रह रही हैं, जिनसे उनका कोई विवाह नहीं हुआ।

क्योंकि हिप्पी कहता है कि विवाह जो है, वह 'लीगलाइब्द प्रॉस्टीट्यूशन' है। समाज के द्वारा आदेशित, लाइसेस्ट वेश्यागिरी है।

समाज लाइसेंस देता है दो आदमियों के लिए कि अब हम तुम्हारे बीच में बाधा नहीं बनेंगे। लाइसेंस देने की कई तरकीबें है। कहीं सात चक्कर लगा कर लाइसेंस देता है, कहीं माला पहनवा कर देता है, कहीं दफ्तर में रजिस्टर पर दस्तखत करवाकर देता है। वे विधियां तो गैर-महत्वपूर्ण, नॉन-एसेन्यिायल हैं। महत्वपूर्ण यह है कि समाज एक लाइसेंस देता है कि अब इन दो आदमियों के बीच जो यौन संबंध होंगे, उनमें हम बाधा न देंगे।

हिप्पी यह कहता है कि मेरा प्रेम मेरी निजी बात है। और जिससे मेरा प्रेम है, यह दो व्यक्तियों की बात है, इसमें हमें समाज से स्वीकृति का सवाल कहां है। इसमें पूरे समाज का संबंध कहां है? यह पूरा समाज हमारे प्रेम तक पर भी काबू रखने की कोशिश क्यों करता है? यह हमें स्वतंत्र व्यक्ति बिल्कुल नहीं रहने देना चाहता। प्रेम पर भी इसका काबू होना चहिए।

लेकिन वह तकलीफें झेल रहा हैं। क्योंकि बच्चा हो जायेगा हिप्पी लड़की को, स्कूल में भरती करने जायेगी तो वहां शिक्षक पूछता है, इसके बाप का नाम? तो हिप्पी लड़की लिखवाती है कि नहीं, इसका कोई बाप नहीं है? मां ही है। बड़ी तकलीफ है, जिस गांव में एक लड़की यह कह सकती हो कि इसका बाप नहीं है, सिर्फ मां दे। आप अगर बिना बाप के नाम लिख सकते हों तो ठीक।

मुझे उपनिषद की एक कहानी याद आती है, सत्यकाम जाबाल की। वक्त बदल जाता है इसलिए हम कहानी 'तो बढ़िया रूप दे देते हैं। सत्यकाम गुरु के आश्रम गया तो पूछा, तेरे पिता का नाम क्या है? तो वह वापिस लौटा। उसने अपनी मां को कहा कि मेरे पिता का नाम क्या है? तो उसकी मां ने कहा, जब मैं युवा थी और तेरा जन्म हुआ तो बहुत लोगों की मैं सेवा करती थी। कौन तेरा पिता है, मुझे पता नहीं। तो तू जा वापस। अपने गुरु को कह देना सत्यकाम मेरा नाम है, जाबाल मेरी मां का नाम है, इसलिए सत्यकाम जाबाल आप मुझे कह सकते हैं। और मेरी मां ने कहा है कि जब वह युवा थी तो बहुत लोगों के सम्पर्क में आयी। पता नहीं पिता कौन है।

सत्यकाम वापस गया उसने गुरु से कहा कि मेरी मां ने कहा है कि जब मैं युवा थी, तब बहुत लोगों के सम्पर्क में आयी, पता नहीं कि तेरा पिता कौन है। इतना ही उसने कहा कि मेरा नाम सत्यकाम है और मां का नाम जाबाल है इसलिए आप मुझे सत्यकाम जाबाल कह सकते हैं।

मैंने तो सुना है, कोई कह रहा था कि जबलपुर जाबाल के नाम पर ही निर्मित है। पता नहीं मुझे, मुझे कोई कह रहा था, हो सकता है।

लेकिन गुरु ने कहा कि तब तुझे मैं ले लेता हूं क्योंकि मैं मान लेता हूं कि तू निश्रित ही ब्राह्मण है, क्योंकि इतना सत्य सिर्फ ब्राह्मण ही बोल सकता है। इतना सत्य तेरी मां ने बोला कि मुझे पता नहीं बहुत लोगों के सम्पर्क में आयी, पता नहीं कौन पिता था। इतना सत्य सिर्फ ब्राह्मण ही बोल सकता है।

हिप्पी एक अर्थ में ब्राह्मण है। इस अर्थ में ब्राह्मण है कि जीवन का जो सत्य है, जैसा है, वह वैसा बोल रहा है, कह रहा है। ये तीन बातें।

और चौथी अन्तिम बात। फिर मेरी दृष्टि क्या है हिप्पी के बाबत, वह मैं आपको कहूं। चौथी बात।

मनुष्य ने इतनी सम्पत्ति, इतनी सुविधा, इतनी सामग्री पैदा की है, लेकिन किसी गहरे अर्थ में मनुष्य भीतर दरिद्र हो गया है, चेतना संकुचित हो गयी है।

तो हिप्पी का चौथा सूत्र है, चेतना का विस्तार, एक्सपान्शन ऑफ कान्शसनेस। वह यह कह रहा है कि हम अपनी चेतना को कैसे फैलायें। तो चेतना फैलाने के लिए वह सब तरह के प्रयोग कर रहा है। गांजा, अफीम, भांग, हशीश, एल एस डी, मेस्केलिन, मारीजुआना,योग-ध्यान, वह यह सब कर रहा है कि चेतना कैसे फैले, संकुचित चेतना का विस्तार कैसे उपलब्ध हो

जाये। तो केमिकल ड्रग्स का भी उपयोग कर रहा है। एल एस डी, मेस्केलीन, जिनके द्वारा थोड़ी देर के लिए चित्त नये लोक में प्रवेश कर जाता है।

कानून विरोध में है, क्योंकि कानून तो हर नई चीज के विरोध में है। क्योंकि कानून तो बनता है कभी और युग बदल जाता है। कानून तो विरोध में है। कानून तो एल एस डी को पाप मानता है। मैं नहीं समझ पा रहा हूं। एल एस डी और मेस्केलीन में बड़ी संभावनाएं हैं। इस बात की बहुत संभावनाएं हैं कि ये दोनों चीजें मनुष्य की चेतना को नये दर्शन कराने में सफल रूप से प्रयुक्त की जा सकती हैं। ऐसा मैं नहीं मानता हूं कि इनके द्वारा कोई समाधि को उपलब्ध हो जायेगा, लेकिन समाधि की एक झलक मिल सकती है। और झलक ?? जाये तो समाधि की प्यास पैदा हो जाती है। आज तो पश्चिम में योग और ध्यान के लिए इतना आकर्षण है, उसके बहुत गहरे में एल एस डी है। लाखों लोग एल एस डी लेकर देख रहे हैं।

जब कोई आदमी एल एस डी की एक टिकिया लेता है तो कई घंटों के लिए उसकी सारी दुनिया बदल जाती है। जैसे 'ब्लेक' की कविता हम पढ़ें तो ऐसा लगता है कि ब्लेक कुछ ऐसे रंग जानता है, जो हम नहीं जानते। उसे फूल कुछ ऐसा दिखायी देता पड़ता है, जैसा हमें दिखाई नहीं पडता।

लेकिन एल एस डी लेकर हम भी वही जान पाते हैं। पत्ते-पत्ते रंगीन हो जाते हैं फूल-फूल अदभुत हो जाता है। एक आदमी की आख में इतनी गहराई दिखाई पड़ने लगती है, जितनी कभी नहीं दिखाई पड़ी। एक साधारण-सी कुर्सी भी एक जीवंत अर्थ ले लेती हैं। थोड़ी देर के लिए जगत और ढंग का दिखाई पड़ने लगता है। जैसे कि बिजली चमक जाये अंधेरी रात में, और एक सेकेंड को वृक्ष दिखाई पड़े, फूल दिखाई पड़े, रास्ता दिखाई पड़े। बिजली तो गयी तो फिर अंधेरा भर गया, लेकिन अब हम वही आदमी नहीं हो सकते, जो बिजली के पहले है।

इन साइकेडेलिक ड्रग्स का, इन रासायनिक तत्वों का हिप्पी बड़े पैमाने पर प्रयोग कर रहे हैं। मेरी समझ में सोमरस इससे भिन्न बात न थी। अस्तुअस हक्सले ने तो एक किताब लिखी है। तो उसमें सन 2000 वर्ष के बाद जो विकसित साइकेडेलिक ड्रग, रासायनिक द्रव्य होगा उसका नाम ही सीमा दिया है, सोमरस के आधार पर ही।

और एल एस डी और मेस्केलीन जिन्होंने लिया है तो पहली दफा उनको खयाल आया कि वैदिक ऋषियों को देवी-देवता एकदम जमीन पर चलते-चलते नजर क्यों आते थे। वे हमको भी आ सकते हैं। भांग में कुछ थोड़ी-सी बात है, बहुत ज्यादा नहीं, बहुत थोड़ी। लेकिन भांग के पीछे थोड़ा-सा 'हैंग ओवर' होता है। एल एस डी का कोई 'हैंग ओवर' नहीं है। गांजे में कुछ थोडी बात है, लेकिन बहुत ज्यादा नहीं। हजारों साल से साधु, भांग, गांजा, अफीम का उपयोग

करते रहे हैं। वह अकारण नहीं है। और इधर जितनी खोज होती है, उससे कुछ हैरानी के तथ्य सामने आते हैं।

अगर एक आदमी बहुत देर तक उपवास करे तो भी शरीर में जो फर्क होते हैं, वे केमिकल हैं। अब ऊपर से देखने में लगता है कि महावीर तो गांजे के बिल्कुल खिलाफ हैं। लेकिन उपवास के बहुत पक्ष में हैं। हालांकि उपवास से भी 30 दिन भूखा रहने से शरीर में जो फर्क होंगे, वे केमिकल हैं। कोई फर्क नहीं है।

प्राणायम से भी जो फर्क होते हैं, वे केमिकल हैं। अगर एक आदमी विशेष विधि से श्वास लेता है तो आक्सीजन की मात्रा के अन्तर पड़ने शुरू हो जाते हैं। ज्यादा ऑक्सीजन कुछ तत्वों को जला देती है, कुछ तत्वों ही बचा लेती है। भीतर जो फर्क होते हैं, वे केमिकल हैं।

हिप्पी यह कह रहा है कि अब तक की जितनी साधना पद्धतियां हैं, वे किसी न किसी रूप में केमिकल फर्क ही ला रही हैं। तो केमिकल फर्क एक गोली से भी लाया जा सकता है। चौथा जो हिप्पी का जोर है, जिसकी वजह से वह परेशानी में पड़ा हुआ है, वह इन ड्रग्स के कारण है। कानून इनके खिलाफ है। कानून उन्होंने बनाया था, जिनको एल एस डी का कुछ भी पता नहीं था।

डा. लियरी एक अदभुत आदमी हैं इस दिशा में, जिस आदमी ने इधर बहुत काम किया कि ड्रग्स कैसे मनुष्य को समाधि तक पहुंचा सकते हैं।

और जिन लोगों ने एक बार इस तरह का प्रयोग किया है, वे आदमी और ही तरह के हो गये, उनकी जिन्दगी और ही तरह की हो जाती है। जैसे हम जीते हैं एक तनाव में, जैसे ही कोई इस तरह के ड्रग्स लेता है तो सारा मन रलेक्स्ड, विश्रामपूर्ण हो जाता है। जीते हैं फिर आप तनाव में नहीं, अभी और यहां। हिप्पीज का जो शब्द है उसके लिए, वह है, 'टर्निंग आन' -कोई एक टर्न है, मोड़ है, दरवाजा है, जो एक गोली देने से आपके लिए खुल जाता है। जैसे 'ड्रापिंग आफ', रास्ते के किनारे उतर जाना; ऐसे ही 'टर्निंग आन ' जहां हम हैं, वहां से कहीं और मुड़ जाना-उस दुनिया में, उस आयाम, डायमेशन में जिसका हमें कोई पता नहीं है। रासायनिक प्रयोग के द्वारा मनुष्य की चेतना विस्तीर्ण हो सकती है और सौंदर्यबोध, एस्थेटिक से भर सकती है।

इस दिशा में डा. लियरी बड़े गहरे प्रयोग कर रहे हैं। छोटी-छोटी उनकी जमातें बनी हुई हैं- जंगलों में, पहाड़ों में, गांवों के बाहर। पुलिस उनका पीछा कर रही है। उन्हें उखाड़ रही है।

केवल अमेरिका में दो लाख हिप्पी हैं। और यह तो ठीक गणना की संख्या है। लेकिन बहुत-से लोग जो पीरियाडिकल, सावधिक हिप्पी हो जाते हैं-कोई दो चार महीने के लिए; फिर वापिस दुनिया में लौट आते हैं, उनकी संख्या भी बड़ी है। बहुत से सेंटर्स हैं, जहां बैठकर इन सबका प्रयोग चल रहा है। जहां बिल्कुल ही ठीक सायंटीफिक निरीक्षण में लोग एल एस डी और ये सारी चीजें ले रहे हैं।

एल्डुअस हक्सले ने एक किताब लिखी है, 'डोर्स ऑफ परसेपान्स'। उस किताब में उसने कहा है कि कबीर और नानक को जो हुआ, मैं अब जानता हूं कि क्या हुआ। एल एस डी लेने के बाद हक्सले को लगता है कि क्या दुआ! क्योंकि जिस तरह की बातें वे कह रहे हैं कि अनहद नाद बज रहा है और अमृत की वर्षा हो रही है और आकाश में बादल ही बादल घिरे हैं और अमृत ही अमृत बरस रहा है और कबीर नाच रहे हैं। अब यह जो हम कविता में पढ़कर समझने की कोशिश करते हैं, लेकिन न तो कभी कोई बादल दिखाई पड़ते हैं, जिनमें अमृत भरा हो। न कभी अमृत बरसता दिखाई पड़ता है, न कोई अनहद नाद सुनाई पड़ता है।

लेकिन एल एस डी लेने पर ऐसी ध्वनियां सुनाई पड़नी शुरू होती हैं, जो कभी नहीं सुनी गयीं। और ऐसी बरखा शुरू हो जाती है, जो कभी नहीं हुई। और इतना मन हल्का और नया हो जाता है, जैसा कभी न था।

चौथी बात, हिप्पीज को जो नवीनतम है वह है, 'एक्सपांशन आफ कान्दासनेस भ्रू ड्रग्स', रासायनिक द्रव्यों द्वारा चेतना का विस्तार। ये चार सूत्र मैं मौलिक मानता हूं।

मेरी क्या प्रतिक्रिया है, वह मैं संक्षेप में कहूं।

हिप्पियों ने छोटी-छोटी कयून बना रखी हैं। वे कयून वैकल्पिक समाज, आलरनेट सोसायटी हैं। वे कहते हैं, एक समाज तुम्हारा है 'हां-हुजूरों' का, वियतनाम में लड़ने वालों का, कश्मीर किसका है यह दावा करने वालों का। और एक हमारा है, जिनका कोई दावा नहीं है। जिनका वियतनाम में किसी से कोई संघर्ष नहीं, कश्मीर में जिनका कोई झगड़ा नहीं राजधानियों में जाने की जिनकी कोई इच्छा नहीं।

एक समाज तुम्हारा है, जिसमें तुम कहते हो कि भविष्य में सब कुछ होगा। एक हमारा है जो कहते हैं, अभी और यहीं, जो होना है वह हो। एक आलरनेट सोसायटी, एक वैकल्पिक समाज है हिप्पियों का। तो इस समाज से जो ऊब गये, घबड़ा गये, परेशान हो गये, वे उस समाज में प्रवेश कर जाते हैं।

हिप्पी अभी और यहीं-सदा आनन्द में है। जो कहता है इसी वक्त आनंद में हूं और कल की चिन्ता नहीं करता।

हिप्पियों के विद्रोह के संबंध में मेरी पहली दृष्टि तो यह है-पीछे से शुरू करूं, साइकेडेलिक ड्रग्स से-निश्रय ही रासायनिक तत्वों के द्वारा झलक पायी जा सकती है, लेकिन सिर्फ झलक, अवस्था नहीं।

महावीर या कबीर या बुद्ध के पास जो है, वह अवस्था है, झलक नहीं।

लेकिन झलक भी कीमती चीज है। झलक को अवस्था समझ लेना भूल है। तो हिप्पियों से यहां मेरा फर्क है। वे झलक को अवस्था समझ रहे हैं! झलक सिर्फ झलक है। और झलक किसी गोली पर निर्भर है, वह व्यक्ति को रूपांतरित, ट्रांसफार्म नहीं कर पाती। गोली के असर के बाद आदमी वहीं का वहीं होता है।

लेकिन बुद्ध दूसरे आदमी हैं। उस अनुभव के बाद वे दूसरे आदमी हैं। सत्य की, ब्रह्म की, आत्मा की, मोक्ष की, निर्वाण की प्रतीति के बाद आदमी दूसरा आदमी है, पहला आदमी मर गया। यह दूसरा जन्म हुआ उसका, वह द्विज हुआ। यह दूसरा ही आदमी है। यह वही आदमी नहीं है।

लेकिन ड्रग्स के द्वारा जो झलक मिलती है, वह झलक ही है अवस्था नहीं है। हिप्पी इतना तो ठीक कहते हैं कि यह झलक कीमती है। और जिन्हें नहीं मिली उन्हें मिल जाए तो शायद वह अनुभव, अवस्था की भी तलाश करें। जैसे यहां मैं बैठा हूं। लंदन मैं नहीं गया हूं न्यूयार्क मैं नहीं गया हूं; लेकिन एक फिल्म यहां बनाई जा सकती है, जिसमें मैं लंदन को देख लूं। लेकिन यह मेरा लंदन में होना नहीं है। हालांकि फिल्म को देखकर -लंदन में होने का खयाल पैदा हो सकता है। एक यात्रा शुरू हो सकती है।

ड्रग्स यात्रा के पहले बिन्दु पर उपयोगी हो सकते हैं। इससे मैं हिप्पियों से राजी हूं। और हिप्पी विरोधियों के विरोध में हूं जो कहते हैं ड्रग्स का कोई उपयोग नहीं, कोई अर्थ नहीं। दूसरी बात में मैं हिप्पी विरोधियों से राजी हूं क्योंकि यह अवस्था नहीं है। और हिप्पियों के विरोध में हूं क्योंकि उन्होंने अगर झलक को अवस्था समझा और बाहर से आरोपित, फोर्स्ट केमिकल प्रभाव को उन्होंने समझा कि मेरी आत्मा नयी हो गयी तो वे निश्रित ही भूल में पड़े जा रहे हैं

शराबी सदा से इसी भूल में है। इस भूल के मैं विरोध में हूं। लेकिन यह मुझे लगता है कि आने वाले मनुष्य के लिए साइक्खैलिक ड्रग्स का बहुत कीमती उपयोग किया जा सकता है।

दूसरी बात। हिप्पी क्रांति के विरोध में हैं, विद्रोह के पक्ष में। लेकिन मजा यह है कि जितने हिप्पी गये छोड़कर समाज को उनका भी पैटर्न, ढांचा बन गया है। अगर आप बाल काटकर हिप्पियों में पहुंच जायें तो हिप्पी आपको ऐसे गुस्से से देखेंगे, जैसे गुस्से से बाल बड़े आदमी कौ समाज देखता है! अगर आप हिप्पी समाज में कहें कि संभोग से समाधि की ओरा मैं रोज स्नान करूंगा तो आप उसी क्रोध से देखे जायेंगे, जिस तरह से किसी ब्राह्मण के घर में ठहरा हूं और कहूं कि आज खान न करूंगा। ऐसा यह जो विद्रोह है, वह विद्रोह रिएक्शनरी, प्रतिक्रियाअक है।

हिप्पी स्नान नहीं करता। महावीर को मानने वाले मनुष्यों को बड़ा प्रसन्न हो जाना चाहिए। वे भी स्नान नहीं करते। हिप्पी गंदगी को ओढ़ता है। क्योंकि वह कहता है, जैसा मैं हूं हूं। अगर मेरे पसीने में बदबू आती है तो मैं सुगंध परफ्यूम न डालूंगा। आने दो पसीने में बदबू। पसीने में बदबू है। यह बिल्कुल ठीक है। लेकिन यह प्रतिक्रिया अगर है तो खतरनाक है। माना कि पसीने में बदबू है, लेकिन परफ्यूम से बदबू मिटाई जा सकती है। और दूसरे आदमी को बदबू झेलने के लिए मजबूर करना, दूसरे की सीमाओं का अनधिकृत अतिक्रमण, ट्रेसपास दै। मेरे पसीने में बदबू है, मैं मजे से अपने पसीने में रहूं। लेकिन जब भी दूसरा आदमी मेरे पड़ोस में है, तो उसको 'भी मेरी बदबू झेलने के लिए मजबूर करना, तो हिंसा शुरू हो गयी। यानी उसकी स्वतंत्रता में बाधा डालना शुरू हो गया।

एक् घटना मैंने कहीं सुनी है कि रवीन्द्रनाथ के पास गांधीजी मेहमान थे। सांझ को जा रहे थे दोनों घूमने तो रवीन्द्रनाथ ने कहा, मैं जरा तैयार हो लूं। पर उन्हें तैयार होने में बहुत देर लगी। गांधीजी को तैयार होने की बात में ही हैरानी थी। फिर देर होते देख उन्होंने झांककर भीतर देखा तो पाया कि रवीन्द्रनाथ आदम कद आइने के सामने खड़े स्वयं को सजाने में लीन हैं! गांधीजी ने कहा, यह क्या कर रहे हैं, और इस उम्र में! तो कवि ने कहा, 'जब उम्र कम थी, तब तो बिना सजे भी चला जाता था, अब नहीं चलता है। और मैं किसी को कुरूप दिलू तो लगता है कि उसके साथ हिंसा कर रहा हूं। '

मैं मानता हूं कि रिक्ष्मानरी कभी भी ठीक अर्थों में रिबेलियस नहीं हो पाता है। प्रतिक्रियावादी जो सिर्फ प्रतिक्रिया कर रहा है, वह समाज से उलटा हो जाता है। तुम ऐसे कपड़े पहनते हो, हम ऐसे पहनेंगे। तुम स्वच्छता से रहते हो, हम गंदगी से रहेंगे। तुम ऐसे हो, हम उलटे चले जायेंगे। लेकिन उलटा जाना विद्रोह नहीं है, प्रतिक्रिया है। मैं मानता हूं, विद्रोह की बड़ी कीमत है। लेकिन हिप्पी प्रतिक्रिया में पड़ गया है। प्रतिक्रिया की कोई कीमत नहीं है। विद्रोह तो एक मूल्य है, लेकिन प्रतिक्रिया एक रोग है।

और ध्यान रहे प्रतिक्रियावादी हमेशा उससे बंधा रहता है, जिसकी वह प्रतिक्रिया कर रहा है। अब ऐसा जरूरी नहीं है, कि एक आदमी नंगा आकर इस कमरे में बैठे तो वह सहज ही हो।

यह भी हो सकता है कि वह सिर्फ कपड़े पहनने वाले लोगों की प्रतिक्रिया में इधर नंगा आकर बैठ गया हो, सहज बिल्कुल न हो। सहजता का तो मूल्य है, लेकिन असहजता कपड़े पहनने में हो ही नहीं सकती, ऐसा कौन कह सकता है। प्रतिक्रिया पकड़ रही है। प्रतिक्रिया के परिणाम खतरनाक हैं और प्रतिक्रिया ज्यादा स्थायी नहीं होती, सिर्फ संक्रमण की बात होती है। इसलिए धीरे- धीरे प्रतिक्रिया भी सेटल, व्यवस्थित होती जा रही है। हिप्पियों का भी एक समाज बन गया, उसके भी नियम और कानून बन गये। उनकी भी आर्थोडाक्सी बन गयी है! उनका भी पुरोहित, पंडित, नेता सब हो गया है! वहां भी आप जायें तो आप जैसे हैं, वे आपको बेचैनी देना शुरू कर देंगे।

अभी मैं एक घटना पढ़ रहा था। एक अमेरिकन पत्रकार महिला हिप्पियों का अध्ययन करने बहुत से समाजों मैं गई। वह एक समाज में गई है, वहां भोजन चल रहा है हिप्पियों का, तो उन्होंने चम्मचें नहीं ली है। हिन्दुस्तान में क्या करेंगे? अगर हिप्पी आयें तो बडा मुश्किल पड़ेगा। अमेरिका में तो हाथ से खाना बगावत है। हिन्दुस्तान में चम्मच से खाना भी बगावत हो सकता है।

हाथ से ही भोजन खा रहे हैं वे! हाथ से खाने की आदत भी नहीं है तो सब गंदे हाथ हो गये हैं। और इकट्ठा भोजन रखा हुआ है, वह सब गंदा हो गया है! और इस तरह भोजन खा रहे हैं! अब यह जो महिला पत्रकार है यह अपनी चम्मच उठाती है तो किसी ने उसकी चम्मच छीन ली। और उसका हाथ भोजन में डाल दिया है। अब वह बहुत घबड़ा गयी तै। लेकिन वहां यही नियम है! अगर वह महिला हां भरती है तो मैं कहता हूं अब वह महिला फिर कन्फरमिस्ट हो गयी है। उसे इंकार करना चाहिए। लेकिन वहां इंकार करना मुश्किल है।

वहां एक हिप्पी ने एक स्त्री का ब्लाऊज फाड़ डाला है। उसके ऊपर उसने सब खाना डाल दिया और उसके शरीर से चाट रहा है। अब यह सब प्रतिक्रियाएं हो गयीं। यह पागलपन हो गया। हां, किसी प्रेम के क्षण में किसी सी के शरीर का स्वाद भी अर्थपूर्ण हो सकता है। वह अनिवार्यत: अनर्थ नहीं है। लेकिन बस किसी क्षण में। लेकिन किसी स्त्री के शरीर पर शोरवा डालकर, उसे चाटकर तो वे सिर्फ मुंह दिखा रहे हैं तुम्हारे समाज को; वे यह कह रहे हैं कि क्या तुम समझते हो हमें।

गिन्सबर्ग हिप्पी कवि है। एक छोटी-सी 'पोयट्स गेदरिग', कवि सम्मेलन में बोल रहा है। साहस पर कोई कविता बोल रहा है। और उसमें अश्लील शब्दों का प्रयोग कर रहा है। एक आदमी ने खड़े होकर कहा कि इसमें कौन सा साहस है-इस गाली-गलौज का उपयोग करने में। तो गिन्सबर्ग ने उत्तर में कहा, फिर साहस देखोगे? असली साहस दिखलाये? उस आदमी ने कहा, दिखलाओ। तो उसने पैंट खोल दिया और वह नंगा खडा हो गया! और उसने उस आदमी से कहा कि तुम भी नंगे खड़े हो जाओ, अगर साहसी हो तो। लेकिन नंगे खड़े होने में कौन

सा साहस है? नंगे खड़े होने में साहस है, ऐसा कहने वाला आदमी नंगा खड़ा होने से डरा हुआ होना चाहिए। अन्यथा साहस दिखाना न पड़े!

मेरे एक शिक्षक थे हाईस्कूल में। उनको जब भी मौका मिल जाये, वे अपनी बहादुरी की बात कहे बिना नहीं रहते थे कि मैं अकेला ही मरघट चला जाता हूं। अंधेरी रात में, और बिल्कुल अकेले। मैंने एक दिन उनसे कहा कि आप ऐसी बातें न किया करें। लड़कों को शक होता है कि आप कुछ डरपोक आदमी हैं। इन बातों का क्या बहादुर आदमी भी कहेगा? मैं अकेला ही अंधेरी रात में चला जाता हूं यह तो सिर्फ भयभीत आदमी ही कह सकता है। जिसको भय नहीं है, उसको पता ही नहीं चलता कि कब अंधेरी रात है और कब सूरज निकला। वह बस चला जाता है और हिसाब नहीं रखता!

पीछे गिन्सबर्ग मुझे कभी मिले तो उससे मैं कहना चाहूंगा कि तुमने बहादुरी नहीं बताई, तुमने सिर्फ मुंह बिचकाया। वह आदमी कपड़े पहने हुए है, तुमने कपड़े निकाल दिए, कुछ बहादुरी न हो गई। और इससे उलटा भी हो सकता है कि कल पांच सौ आदमी नंगे बैठे हों और मैं कपड़े पहने पहुंच जाऊँ। और मैं कहूं कि मैं बहादुर हूं। क्योंकि मैं कपड़े पहने हूं। तब भी कोई कठिनाई नहीं है।

मैंने एक घटना सुनी है-नैतिक साहस, मॉरल करेज की। मैंने सुना है एक स्कूल में एक पादरी नैतिक साहस, मॉरल करेज क्या है, यह समझा रहा है। उसने कहा कि 30 बच्चे पिकनिक पर गए हैं। वे दिन भर में थक गए, फिर सांझ को आकर उन्होंने भोजन किया। 29 बच्चे तो तत्काल अपने बिस्तर में चले गए, एक बच्चा ठंडी रात थका—मादा, उसके बाद भी घुटने टेक कर उसने प्रार्थना की। उस पादरी ने कहा इस बच्चे में 'मॉरल करेज' है, इसमें नैतिक साहस है। रात कह रही है सो जाओ, ठंड कह रही है सो जाओ, थकान कह रही है सो जाओ। 29 लड़के कंबलों के भीतर हो गए हैं और एक लडका बैठकर रात की आखिरी प्रार्थना कर रहा है।

महीने भर बाद वह वापस लौटा। उसने कहा, नैतिक साहस पर मैंने तुम्हें कुछ सिखाया था। तुम्हें कुछ याद हो तो मुझे तुम कुछ घटना बताओ। एक लड़के ने कहा, मैं भी आपको एक काल्पनिक घटना बताता हूं। आप जैसे 30 पादरी पिकनिक पर गए। दिन भर थके, भूखे—प्यासे वापस लौटे। २९ पादरी प्रार्थना करने लगे, एक पादरी कंबल ओढ़कर सो गया। तो हम उसको नैतिक साहस कहते हैं। जहां 29 पादरी प्रार्थना कर रहे हों और एक—एक की आंखें कह रही हों कि नर्क जाओगे, अगर प्रार्थना न की; वहां एक पादरी कंबल ओढ़कर सो जाता है।

लेकिन नैतिक साहस का क्या मतलब इतना ही है कि जो सब कर रहे हों, उससे विपरीत करना नैतिक साहस हो जायेगा? सिर्फ विपरीत होना साहस हो जायेगा? नहीं, विपरीत होने से साहस नहीं हो जाता। विपरीत होना जरूरी रूप से सही होना नहीं है।

और अक्सर तो यह होता है कि गलत के विपरीत जब कोई होता है, तब दूसरी गलती करता है और कुछ भी नहीं करता। अक्सर दो गलतियों के बीच में वह जगह होती है, जहां सही होता है। एक गलती से आदमी पेंडुलम की तरह दूसरी गलती पर चला जाता है। बीच में ठहरना बड़ा मुश्किल होता है।

मुझे लगता है, हिप्पी जिसे विद्रोह कह रहे हैं वह विद्रोह तो है—होना चाहिए वैसा विद्रोह, लेकिन वह प्रतिक्रिगा ज्यादा है। और प्रतिक्रिया से मेरा विरोध है।

एक रिबेलियस, विद्रोही आदमी बहुत और तरह का आदमी है। एक विद्रोही आदमी इसलिए 'नहीं' नहीं कहता कि नहीं कहना चाहिए.। अगर नहीं कहना चाहिए, इसलिए कोई नहीं कहता है तो यह 'हां—हुजूरी' है। इसमें कोई फर्क न हुआ। वह 'नहीं' इसलिए कहता है कि उसे लगता है कि नहीं कहना उचित है। और अगर उसे लगता है कि 'हां' कहना उचित है तो दस हजार 'नहीं' कहने वालों के बीच में भी वह 'हां' कहेगा, यानी वह सोचेगा।

मेरा कहना यह है कि विद्रोह अनिवार्य रूप से विवेक है और प्रतिक्रिया अविवेक है।

तो हिप्पी विद्रोह की बात करके प्रतिक्रिया की तरफ चला जाता है। वहां सब बातें व्यर्थ हो जाती हैं।

दूसरी बात मैंने कही कि हिप्पी कह रहा है. सहज जीवन। लेकिन सहज जीवन क्या है? जो मेरे लिये सहज है, वह जरूरी नहीं है कि आपके लिए भी सहज हो। जो आपके लिए सहज है, वह मेरे लिए जरूरी नहीं है कि सहज हो। जो एक के लिए जहर हो, वह दूसरे के लिए अमृत हो सकता है। असल में एक—एक व्यक्ति का अपना— अपना होने का यही अर्थ है। लेकिन हिप्पी कह रहा है कि सहज जीवन, और सहज जीवन के भी नियम बनाये ले रहा है! वह कह रहा है सहज जीवन यही है, जहां पाखाना किया है, उसी के बगल में बैठकर खाना खा लो!

हमारे मुल्क ने भी परमहंस पैदा किये हैं। उनका भी सहज जीवन यही था कि पाखाना पड़ा है, वहीं बैठकर खाना खा लेते। लेकिन एक के लिए यह सहज हो सकता है। और दूसरे के लिए यह बहुत असहज हो सकता है कि पाखाना पडा हो वहां और वह खाना खाये। सहज जीवन का कोई नियम नहीं हो सकता।

लेकिन हिप्पियों ने भी नियम बना लिए हैं—कितना लम्बा बाल होना चाहिए, किस कट का कोट होना चाहिए! किस छींट की कमीज होनी चाहिए, पैंट की मोरी कितनी संकरी होनी चाहिए! जूते कैसे होने चाहिए, चाल कैसी होनी चाहिए! गले में हिन्दुस्तान की एक रुद्राक्ष की एक माला भी होनी चाहिए! उसके भी नियम, उसकी भी सारी व्यवस्था हो गयी है! असल में

आदमी कुछ ऐसा है कि वह व्यवस्था के बाहर हो ही नहीं पाता। इधर से व्यवस्था तोड़ता है, उधर से व्यवस्था बना लेता है। यहां मैं हिप्पियों से राजी नहीं हूं।

मैं मानता हूं कि एक सहज दूनिया सब तरह के लोग को स्वीकार करेगी। यानी वह इस आदमी को भी स्वीकार करेगी, जिसको हम समझते हों कि सहज नहीं है। लेकिन उसके लिए वह सहज होना हो सकता है। सबका स्वीकार ही सहजता का आधार बन सकता है।

लेकिन हिप्पी के लिए सब स्वीकार नहीं है। वह दूसरों को ऐसे ही देखता है, जैसे कि दूसरे उसको देखते हैं। कंडेमनेशन से, निन्दा की नजर से। दूसरे लोगों को वह कहता है 'स्कवॉयर', चौखटे लोग। वह स्वयं भर स्कवॉयर नहीं है। बाकी जितने लोग हैं, वे चौखटे हैं—जों दफ्तर जा रहे हैं, स्कूल में पढ़ा रहे हैं, दुकान कर रहे हैं, पति हैं, पिता हैं। लेकिन किसी के लिए पति होना उतना ही सहज हो सकता है, जितना किसी के लिए प्रेमी होना। और किसी के लिए एक ही सी जीवन भर के लिए सहज हो सकती है, जितना किसी अन्य का स्त्री को बदल लेना। लेकिन हिप्पी यदि कहे कि सी का बदलना ही सहज है, तब फिर दूसरी अति पर वही भूल शुरू हो गयी। इसलिए मैं इस सूत्र में भी उनसे राजी नहीं हूं। मैं राजी हूं कि प्रत्येक व्यक्ति का अंगीकार होना जरूरी है।

और अंतिम बात। जब कोई वादों को भी जानकर और चेष्टा से विरोध करता है, तब चाहे वह कितना ही कहे कि वाद नहीं है, वाद बनना शुरू हो जाता है। जिसको हम अ—कविता कहते हैं, वह भी कविता ही बन जाती है। जिसको जापान में अ—नाटक, 'नो ड्रामा' कहा जाता है, वह भी ड्रामा है। और जिसको हम अ—वाद कहते हैं, वह भी नये तरह का वाद हो जाता है। असल में मनुष्य जब तक वाद का विरोध भी करेगा तो भी वाद निर्मित हो जायेगा। अगर अ—वादी किसी को होना है तो उसे तो मौन ही होना पड़ेगा। उसे वाद के विरोध का भी उपाय है। इसलिए अ—वादी तो दूनिया में सिर्फ वे ही लोग थे, जो चुप ही रह गये। क्योंकि बोले तो वाद बन जाये।

अब नागार्जुन है, वह सारे वादों का खंडन करता है। कोई उससे पूछे कि तुम्हारा वाद क्या है तो वह कहता है, मेरा कोई वाद नहीं है। वह सबका खण्डन करता है और उसका अपना कोई वाद नहीं है। लेकिन तब सबका खंडन करना भी वाद बन सकता है।

असल में एंटी—फिलासफी भी फिलासफी ही है। नान—फिलासफिक होना बहुत मुश्किल है। एंटी—फिलासफिक होना बहुत आसान है। दर्शन के विरोध में होने में कठिनाई नहीं है। क्योंकि एक दर्शन विकसित हो जायेगा, जो दर्शन का विरोध करेगा। लेकिन नान—फिलासफिक होना— दर्शन के ऊपर चले जाना, बियांड—पार चले जाना तो सिर्फ मिस्टिक के लिए संभव है, रहस्यवादी के लिए संभव है, संत के लिए सं० है। जो कहता है, सत्य के, सिद्धान्त के, वाद के

पार। इतना ही नहीं, वह कहता है बुद्धि के पार, विचार के पार, मन के पार, जहां मैं ही नहीं हूं वहां। जब सबके पार जो शेष रह जाता है, वही है। लेकिन उसे तो कैसे कहें। अ हिप्पी वहां नहीं पहुंचा, लेकिन कभी पहुंच सकता है।

फिर हिप्पी बड़ी जमात है। उसमें वर्ग भी हैं। अगर हमें रास्ते में एक पीत वस्त्रधारी भिक्षु मिल जाये तो उसे देखकर बुद्ध को नहीं तौलना चाहिए। काशी में जो हिप्पी भीख मांग रहा है सड़क पर, उसे देखकर डा. तिमोती लियरी को या डा. पर्ल्स को नहीं तौलना चाहिये। वे बड़े अद्भुत लोग हैं। लेकिन सभी वर्ग के लोग इकट्ठे हो जाते हैं।

हिप्पियों का एक श्रेष्ठ वर्ग निश्चित ही पार जा रहा है। और इस बात की संभावना है कि पश्चिम में मिस्टिसिज्य का जन्म हिप्पियों का जो श्रेष्ठतम वर्ग है, उससे पैदा होगा। एक नये वैज्ञानिक युग में भी, बुद्धि को आग्रह करने वाले युग में भी, बुद्धि—अतीत की ओर इशारा करने वाला एक वर्ग पैदा होगा।

लेकिन ये दो चार हिप्पियों की बात है। बाकी जो बड़ा समूह है, वह भीड़—भाड़ है। वह सिर्फ घर से भागे हुए छोकरों का समूह है। कोई पढ़ना नहीं चाहता है, कोई बाप से क्रोध में है। कोई किसी लड़की से विवाह करना चाहता है। कोई गांजा पीना चाहता है। कोई कैसे भी रहना चाहता है। कोई सुबह दस बजे तक सोना चाहता है। इन सारे लोगों का समूह है। इसलिए मैं दो बातें अंत में कह दूं।

एक यह कि हिप्पी में जो श्रेष्ठतम फूल हैं, उनसे तो मुझे आशा बंधती है कि उनसे एक नये तरह के मिस्टिसिज्य, एक नये तरह के रहस्य का जन्म होगा।

लेकिन हिप्पियों में जो नीचे का वर्ग है, उनसे कोई आशा नहीं बंधती। वे सिर्फ घर—भगोड़े हैं। हिप्पी शब्द भी 'हिप' से ही बनता है, अर्थात पीठ दिखाकर भाग जाने वाले। ऐसे भगोड़े थोड़े दिन में वापिस भी लौट जाते हैं। वे घर लौट जायेंगे ही।

इसलिए आपको 35 साल से ऊपर का हिप्पी मुश्किल से मिलेगा,नीचे का ही मिलेगा। अधिकतर तो टीन एजर्स, उन्नीस वर्ष के भीतर के हैं। क्योंकि जैसे ही उनको एक बच्चा हुआ और प्रेम हो गया एक सी से कि घर बनाने का सवाल शुरू हो जाता है। फिर उन्हें नौकरी चाहिए। फिर वे वापस लौट आते हैं। स्कवॉयर लोगों की दुनिया में, चौखटे लोगों की दूनिया में वे फिर वापस आ जाते हैं। फिर किसी दफ्तर में नौकरी। फिर घर है, फिर गृहस्थी है, फिर सब चलने लगता है।

लेकिन ऐसा मैं जरूर सोचता हूं कि हिप्पियों ने एक सवाल खड़ा किया है सारी मनुष्य संस्कृति पर और उस सवाल के उत्तर में भविष्य के लिए बड़े संकेत हो सकते हैं। इसलिए सोचने योग्य है हमारे लिए बहुत। हिन्दुस्तान तो अभी हिप्पी नहीं पैदा कर सकता।

गरीब कौम हिप्पी पैदा नहीं करती। समृद्धि ही हिप्पी पैदा करती है।

गौतम बुद्ध राजा के बेटे है। महावीर राजा के बेटे हैं। जैनियों के सब तीर्थंकर राजाओं के बेटे हैं। राम, कृष्ण, सब राजाओं के बेटे हैं। जहां सब मिल जाता है, वहां से बगावती और आगे जाने वाला आदमी पैदा होता है।

हिप्पी का अभी यहां भारत में सवाल नहीं है। अभी हम हिप्पी भी पैदा करेंगे तो वह सिर्फ बाल बढ़ाने वाला आदमी होगा और कुछ भी नहीं। उसको कहो कि एक आदमी दस हजार रुपये दे रहा है, लड़की की शादी के लिए तो वह कहेगा, फिर घोड़ा कहां है!

गरीब कौम हिप्पी पैदा नहीं कर सकती, समृद्ध कौम ही कर सकती है। असल में इसका मतलब यह हुआ कि 'वी केन नाट अफर्ड'—यह हमारे लिए महंगा सौदा है। यह दुखद है। यह सुखद नहीं है। हम अभी हिप्पी पैदा नहीं कर सकते, यह बड़े दुख की बात है। हम गरीब हैं बहुत। अभी हम उस जगह नहीं हैं, जहां कि हमारे लड़के कुछ भी न करें, तो जी सकें।

अगर दो लाख आदमी बिना कुछ किये जी रहे हैं, तो उसका मतलब है कि समाज समृद्ध, एस्थूअंट है, समाज में बहुत पैसा है। एक हिप्पी है, वह दो दिन काम कर आता है गांव में, और महीने भर के लिए कमा है। वह 28 दिन पड़ा रहता है, एक वृक्ष के नीचे ढोल बजाता रहता है। हरि भजन करता रहता है। हरि कीर्तन करता रहता है।

गरीब कौम ऐसा विद्रोह नहीं पैदा कर सकती। लेकिन सदा के लिए तो हम गरीब नहीं रहेंगे। इसलिए छात्रों ने आकर कहा कि हिप्पियों पर कुछ कहें तो मैंने कहा अच्छा है, आज नहीं कल हिप्पी हम भी तो पैदा करेंगे ही। तो उसके पहले साफ हो जाना चाहिये कि हिप्पी याने क्या?

वैसे इस देश ने अपनी समृद्धि के दिनों में बहुत तरह के हिप्पी पैदा किए। जिनका पश्चिम को कुछ पता भी नहीं गिन्सबर्ग जब काशी आया तो एक संन्यासी से उसको मिलाने ले गए। उस संन्यासी से जब कहा गया कि '? हिप्पी है तो वह संन्यासी खूब हंसा और उसने कहा, तुम तो सिर्फ हिप्पी हो, हम महाहिप्पी हैं। हम काशीवासी हैं और काशी है नामी महाहिप्पी भगवान शंकर की भूमि। शंकर जैसे परम स्वतन्त्र व्यक्तित्व भारत ने कभी पैदा किए थे।

लेकिन वह समृद्ध दिनों की पुरानी याददाश्त है। भविष्य में हम फिर कभी हिप्पी पैदा कर सकते हैं।

लेकिन सोचना तो बहुत जरूरी है। और सोचकर यह देखना जरूरी है कि हिप्पियों की इस घटना में क्या मूल्यवान घटित हो रहा है मनुष्य की चेतना के लिए।

मनुष्य—चेतना क्रांति के एक कगार पर खड़ी है और एक निर्णायक छलांग अति निकट है।

बाह्य विस्तार अब सार्थक नहीं है। अंतस विस्तार की खोज बेचैनी से चल रही है अनेक आयामों में।

स्वयं की भावी चेतना को खोज रहा है। सुबह होने के पहले अंधेरा भी निश्चित ही गहन हो गया है, लेकिन 'स्वर्ण—प्रभात की योजना भी मिल रही है।

ओशो
संभोग से समाधि कि ओर

सभोग से समाधि की और—43

Posted on सितम्बर 17, 2013by sw anand prashad

युवक कौन—ग्याहरवां प्रवचन

युवकों के लिए कुछ भी बोलने के पहले यह ठीक से समझ लेना जरूरी है कि युवक का अर्थ क्या है?

युवक का कोई भी संबंध शरीर की अवस्था से नहीं है। उम्र से युवा है। उम्र का कोई भी संबंध नहीं है। बूढ़े भी युवा हो सकते हैं, और युवा भी बूढ़ा हो सकते हैं। लेकिन ऐसा कभी—कभी ही होता है कि बूढ़े युवा हो, ऐसा अकसर होता है कि युवा बूढ़े होते हैं। और इस देश में तो युवक पैदा होते हैं यह संदिग्ध बात है।

युवा होने का अर्थ है—चित्त की एक दशा, चित्त की एक जीवंत दशा, लिविंग स्टेट ऑफ माइंड। बूढ़े होने का अर्थ है—चित्त की मरी हुई दशा।
'इस देश में युवक पैदा ही शायद नहीं होते हैं। 'जब ऐसा मैं कहता हूं तो उसका अर्थ यही है कि हमारा चित्त जीवंत नहीं है। वह जो जीवन का उत्साह, वह जो जीवन का आनंद और संगीत हमारे हृदय की वीणा पर होना चाहिए, वह नहीं है। आंखों में, प्राणों में, रोम—रोम में, वह जो जीवन को जो। की उद्दाम लालसा होनी चाहिए, वह हममें नहीं है। जीवन को जियें,

इससे पहले ही हम जीवन से उदास हो जाते हैं। जीवन को जानें, इससे पहले।। हम जीवन को जानने की जिज्ञासा की हत्या कर देते हैं।

मैंने सुना है, स्वर्ग के एक रेस्तरां में एक दिन सुबह एक छोटी—सी घटना घट गई। उस रेस्तरां में तीन अदभुत लोग एक टेबिल के आसपास बैठे हुए थे—गौतम बुद्‌ध, कन्फ्यूशियस, और लाओत्से। वे तीनों स्वर्ग के रेस्तरां में बैठ कर गपशप करते थे। फिर एक अप्सरा जीवन का रस लेकर आयी

उस अप्सरा ने कहा, जीवन का रस पियेंगे?

बुद्‌ध ने सुनते ही आंख बंद कर ली और कहा, जीवन व्यर्थ है, असार है, कोई सार नहीं।

कन्फ्यूशियस ने आधी आंख बन्द कर ली और आधी खुली रखी। वह गोल्डन मीन को मानता था, हमेशा मध्य—मार्ग। उसने थोड़ी—सी खुली आंखों से देखा और कहा, एक घूंट लेकर चखूंगा। अगर आगे भी पीने योग्य लगा तो विचार करूंगा। उसने थोड़ा—सा जीवन—रस लेकर चखा और कहा, न पीने योग्य है, न छोड़ने योग्य; कोई सार भी नहीं, कोई असार भी नहीं। उसने मध्य की बात कही।

लाओत्से ने पूरी की पूरी सुराही हाथ में ले ली और जीवन—रस को कुछ कहे बिना पूरा पी गया। और तब नाचने लगा और कहने लगा, आश्रर्य कि गौतम तुमने बिना पिये ही इन्कार कर दिया और आश्चर्य कि कन्फ्यूशियस, तुमने थोड़ा सा चखा। लेकिन कुछ चीजें ऐसी होती हैं कि पूरी ही जानी जायें तो ही जानी जा सकती हैं। थोड़ा चखने से उनका कोई भी पता नहीं चलता।

अगर किसी कविता का एक छोटा—सा टुकड़ा किसी को दिया जाये—दो पंक्तियों का, तो उससे पूरी कविता के संबंध में कुछ भी पता नहीं चलता। एक उपन्यास का पन्ना फाड़कर किसी को दे दिया जाये, तो उससे पूरे उपन्यास के संबंध में कोई पता नहीं चलता है। कोई वीणा पर संगीत बजाता हो, उसका एक स्वर किसी को सुनने ० मिल जाये तो उससे उसको, वीणाकार ने क्या बजाया था, इसका कुछ भी पता नहीं चलता। एक बड़े चित्र का छोटा—सा टुकडा फाड़कर किसी को दे दिया जाये, तो उसे बड़े चित्र में क्या है, उस छोटे टुकड़े से कुछ भी पता नहीं चल सकता।

कुछ चीजें हैं, जिनके थोड़े स्वाद से कुछ पता नहीं चलता, जिन्हें उनकी होलनेस में, उनकी समग्रता, टोटेलिटी ”ही पीना पड़ता है, तभी पता चलता है।

लाओत्से कहने लगा, नाच उठा हूं मैं। अदभुत था जीवन का रस।

और अगर जीवन का रस भी अदभुत नहीं है तो अदभुत क्या होगा? जिनके लिए जीवन का रस ही व्यर्थ है, उसके लिए सार्थकता कहां मिलेगी? फिर वे खोजें और खोजें। वे जितना खोजेंगे, उतना ही खोते चले जायेंगे। क्योंकि जीवन ही है एक सारभूत, जीवन ही है एक रस, जीवन ही है एक सत्य। उसमें ही छिपा है सारा सौन्दर्य, सारा आनंद, सारा संगीत।

लेकिन भारत में युवक उस जीवन के उद्दाम वेग से आपूरित नहीं मालूम पड़ते और न ऐसा लगता है कि उनके है में, उनके प्राणों में उन शिखरों को छूने की कोई आकांक्षा है, जो जीवन के शिखर हैं। न ऐसा लगता है कि अतीत शिखरों को खोजने के लिए प्राणों में कोई प्रबल पीड़ा है—उन शिखरों को जो जीवन के शिखर हैं, जीवन के अंधेरे को, न जीवन के प्रकाश को, न जीवन की गहराई को, न जीवन की ऊंचाई को, न जीवन की को, न जीवन की जीत को, कुछ भी जानने का जो उद्दाम वेग, जो गति, जो ऊर्जा होनी चाहिए, वह युवक के पास नहीं है। इसलिए युवक भारत में हैं—ऐसा कहना केवल औपचारिकता है, फार्मिलिटी है।

भारत में युवक नहीं हैं, भारत हजारों साल से बूढ़ा देश है। उसमें बूढ़े पैदा होते हैं, बूढ़े ही जीते हैं और बूढ़े मरते हैं। न बच्चे पैदा होते हैं, न जवान पैदा होते हैं।

हम इतने बूढ़े हो गये है कि हमारी जड़ें ही जीवन के रस को नहीं खींचती और न हमारी शाखाएं जीवन के आकाश में फैलती हैं और न हमारी शाखाओं में जीवन के पक्षी बसेरा करते हैं और न हमारी शाखाओं पर जीवन का सूरज उगता है और न जीवन का चांद चांदनी बरसात। है, सिर्फ धूल जमती जाती है, जड़ें सूखती जाती हैं, पत्ते कुम्हलाते जाते हैं। फूल पैदा नहीं होते, फल आते नहीं हैं। वृक्ष हैं, न उनमें पत्ते हैं, न फूल हैं। सूखी शाखाएं खड़ी हैं। ऐसा अभागा हो गया है यह देश!

जब युवकों के संबंध में कुछ बोलना हो तो पहली बात यही ध्यान देनी जरूरी है। यदि युवक कोई शारीरिक अवस्था है, तब तो हमारे पास भी युवक हैं। युवक अगर कोई मानसिक दशा है, स्टेट आफ माइंड है, तो युवक हमारे पास नहीं हैं।

अगर युवक हमारे पास होते तो देश में इतनी गंदगी, इतनी सड़ांध, इतना सड़ा हुआ समाज जीवित रह सकता था? कभी की उन्होंने आग लगा दी होती। अगर युवक हमारे पास होते, तो हम एक हजार साल तक गुलाम रहते? कभी की गुलामी को उन्होंने उखाड़ फेंका होता। अगर युवक हमारे पास होते तो हम हजारों—हजारों साल तक दरिद्रता और दीनता और दुख में बिताते? हमने कभी की दरिद्रता मिटा दी होती या खुद मिट गये होते।

लेकिन नहीं, युवक शायद नहीं हैं। युवक हमारे पास होते तो इतना पाखंड, इतना अंधविश्वास पलता इस देश में? युवक बरदाश्त करते? एक—एक करोड़ रुपये यज्ञों में जलाने देते, युवक अगर मुल्क के पास होते? अब मैं सुनता हूं कि और भी करोड़ों रुपये जलाने का इंतजाम करने के लिए साधु—संन्यासी लालायित हैं। और युवक ही जाकर चंदा इकट्ठा करेंगे और वालंटियर बनकर उस यज्ञ को करवाये जायेंगे, जहां देश की संपत्ति जलेगी निपट गंवारी में! अगर युवक मुल्क में होते तो ऐसे लोगों को क्रिमिनल्स कहकर, पकड़कर अदालतों में खड़ा किया होता, जो मुल्क की संपत्ति को इस भांति बर्बाद करते हैं। एक करोड़ रुपये की संपत्ति जलाने में जो आदमी जितना अपराधी हो जाता है, उससे भी ज्यादा अपराधी एक करोड़ रुपये यश में जलाने से होता है। क्योंकि एक करोड़ रुपये की संपत्ति को जलाने वाला थोड़ा बहुत अपराध भी अनुभव करेगा। यश में जलाने वाले पायस क्रिमिनल है, पवित्र अपराधी हैं! उनको अपराध भी नहीं मालूम पड़ता है।

लेकिन युवक मुल्क में नहीं हैं, इसलिए किसी भी तरह की मूढ़ता चलती है, इसलिए मुल्क में किसी भी तरह का अंधकार चलता है। युवकों के होने का सबूत नहीं मिलता देश को देखकर! क्या चल रहा है देश में? युवक किसी भी चीज पर राजी हो जाते हैं!

वह युवक कैसा जिसके भीतर विद्रोह न हो, रिवोल्युशन न हो? युवक होने का मतलब क्या हुआ उसके भीतर? जो गलती के सामने झुक जाता हो, उसको युवक कैसे कहें? जो टूट जाता हो लेकिन झुकता न हो, जो मिट जाता हो लेकिन गलत को बरदाश्त न करता हो, वैसी स्पिरिट, वैसी चेतना का नाम ही युवक होना है। टु बी यंग—युवा होने का एक ही मतलब है। संभोग से समाधि की ओरा

वैसी आत्मा विद्रोही की, जो झुकना नहीं जानती, टूटना जानती है, जो बदलना चाहती है। जो जिंदगी को नयी दिशओ में, नये आयामों में ले जाना चाहते हैं, जो जिंदगी को परिवर्तित करना चाहते हैं। क्रांति की वह उद्दाम आकांक्षा ही युवा होने के लक्षण हैं।

कहां है क्रांति की उद्दाम आकांक्षा?

एक विचारक भारत आया था, काउंट केसरले। लौटकर उसने एक किताब लिखी है। उस किताब को मैं पढ़ता तो मुझे बहुत हैरानी होने लगी। उसने एक वाक्य लिखा है, जो मेरी समझ के बाहर हो गया, क्योंकि वाक्य कुछ मालूम पड़ता था, जो कि कंट्राडिक्टरी है, विरोधाभासी है।

फिर मैंने सोचा कि छापेखाने की कोई भूल हो गयी होगी। तो ख्याल आया कि किताब जर्मनी में छपी है। में छापेखाने की तो भूलें होती नहीं। वह तो हमारे ही देश में होती हैं। यहां तो

किताब छपती है, उसके ऊपर —छः पन्ने की भूल—सुधार छपी रहती है और उन पांच—छह पन्नों को गौर से पढ़िये तो उसमें भूलें मिल जायेंगी! किताब जर्मनी में छपी है, भूल नहीं हो सकती।

फिर मैंने गौर से पढ़ा, फिर बार—बार सोचा, फिर ख्याल आया, भूल नहीं की है, उस आदमी ने मजाक की है। लिखा है कि मैं हिन्दुस्तान गया। मैं एक नतीजा लेकर वापस आया हूं 'इण्डिया इज ए रिच कंट्री, व्हेअर पीपुल लिव। ' हिन्दुस्तान एक अमीर देश है, जहां गरीब आदमी रहते हैं!

मैं बहुत हैरान हुआ, यह कैसी बात है! अगर देश अमीर है तो गरीब आदमी क्यों रहते हैं वहां? और देश अमीर है तो वहां के लोग गरीब क्यों हैं? लेकिन वह मजाक कर रहा है। वह यह कह रहा है कि हिन्दुस्तान पास जवानी नहीं है, जो कि देश के छिपे हुए धन को प्रगट कर दे और देश को धनवान बना दे। देश में धन छिपा हुआ है, लेकिन देश बूढ़ा है।

बूढ़ा कुछ कर नहीं सकता। धन खजाने में पड़ा रह जाता है, का भूखा मरता रहता है। धन जमीन में दबा जाता है, बूढ़ा भूखा मरता है! देश का है, इसलिए गरीब है। देश जवान हो तो गरीब होने का कोई कारण नहीं। देश के पास क्या कमी है?

लेकिन अगर हमें कुछ सूझता है तो एक ही बात सूझती है कि जाओ दूनिया में और भीख मांगो। जाओ अमरीका, जाओ रूस, हाथ फैलाओ सारी दुनिया में। भिखारी होने में हमें शर्म भी नहीं आती! हम जवान हैं?

रास्ते पर एक जवान, स्वस्थ आदमी भीख मांगता हो तो हम उससे कहते हैं कि जवान होकर भीख मांगते हो? हम कभी नहीं सोचते कि हमारा पूरा मुल्क सारी दुनिया में भीख मांग रहा है! हमें जवान होने का हक रह है? सड़क पर भीख मांगते आदमी को कोई भी कह देता है कि जवान होकर भीख मांगते हो। हम जानते है कि होकर भीख मांगना लज्जा से भरी हुई बात है, अपमानजनक है। जवान को पैदा करना चाहिए। हां, बूढ़ा छ मांगता हो तो हम क्षमा कर सकते हैं, अब उससे आशा नहीं पैदा करने की।

सारी दुनिया में हम भीख मांग रहे हैं! 1947 के बाद अगर हमने कोई महान कार्य किया है तो वह यही कि सारी दूनिया से भीख मांगने में सफलता पायी है! शर्म भी नहीं आती हमें! दूनिया क्या सोचती होगी कि बूढ़ा देश है, कुछ कर नहीं सकता, सिर्फ भीख मांग सकता है!

लेकिन उन्हें पता नहीं है कि हम पहले से ही पैदा करने की बजाय, भीख मांगने को आदर देते रहे हैं। हिन्दुस्तान में जो भीख मांगता है, वह आदृत है। ब्राह्मण हजार साल तक देश में आश्रित रहे, सिर्फ इसलिए कि वे पैदा नहीं करते और भीख मांगते हैं।

और हिन्दुस्तान ने बड़े—बड़े भिखारी पैदा किये हैं! महापुरुष—बुद्‌ध से लेकर विनोबा तक भीख मांगने वाले महापुरुष! अगर सारा मुल्क भीख मांगने लगा हो तो हर्ज क्या है? हम सब महापुरुष हो गये हैं। महापुरुषों का देश है, सारा देश महापुरुष हो गया है। हम सारी दुनिया में भीख मांग रहे हैं! भिक्षा—वृत्ति बड़ी धार्मिक वृत्ति है!

पैदा करने में हिंसा भी होती है, पैदा करने में हमें श्रम भी उठाना पड़ता है। और फिर हम पैदा क्यों करें? जब भगवान ने हमें पैदा कर दिया है तो भगवान इंतजाम करे। जिसने चोंच दी है, वह ऋ देगा। हम अपनी चोंच को हिलाते फिरेंगे सारी दुनिया में कि चून दो, क्योंकि हमें पैदा किया है और जो हमें भीख न देंगे, हम गालियां देंगे उन्हें कि तुम भौतिकवादी हो—यू मैटीरियालिस्ट—तुम भौतिकवाद में मरे जा रहे हो, हम आध्यात्मिक लोग हैं! हम इतने आध्यात्मिक हैं कि हम पैदा भी नहीं करते! हम खाते हैं; खाना आध्यात्मिक काम है, पैदा करना भौतिक काम है! भोगना आध्यात्मिक काम है! श्रम? श्रम आध्यात्मिक लोग कभी नहीं करते, हीन आत्माएं श्रम करती हैं! महात्मा भोग करते हैं। पूरा देश महात्मा हो गया है!

1962 में चीन में अकाल की हालत थी। ब्रिटेन के कुछ भले मानुषों ने एक बड़े जहाज पर बहुत—सा सामान, बहुत—सा भोजन, कपड़े, दवाइयां भरकर वहां भेजे। हम अगर होते तो चन्दन तिलक लगाकर फूल मालाएं पहनाकर उस जहाज की पूजा करते, लेकिन चीन ने उसको वापस भेज दिया और जहाज पर बड़े—बड़े अक्षरों में लिख दिया, हम मर जाना पसंद करेंगे, लेकिन भीख स्वीकार नहीं कर सकते।

शक होता है कि यहां कुछ जवान लोग होंगे!

जवान ही यह हिम्मत कर सकता है कि भूखे मरते देश में, और आया हो भोजन बाहर से और लिख दे जहाज पर कि हम भूखों मर सकते हैं, लेकिन भीख नहीं मांग सकते।

भूखा मरना इतना बुरा नहीं है, भीख मांगना बहुत बुरा है। लेकिन जवानी हो तो बुरा लगे, भीतर जवान खून हो तो चोट लगे, अपमान हो। हमारा अपमान नहीं होता! हम शांति से अपमान को झेलते चले जाते हैं! हम बड़े तटस्थ हैं, अपमान को झेलने में कुछ भी हो जाये, हम आंख बंद करके झेल लेते हैं। यह तो संतोष का, शांति का लक्षण है कि जो भी हो, उसको झेलते रहो, बैठे रहो चुपचाप और झेलते रहो।

हजारों साल से देश दुख झेल—झेल कर मर गया तो कैसे हम स्वीकार कर लें कि देश के पास जवान आदमी हैं, अथवा युवक हैं। युवक देश के पास नहीं हैं।

और इसलिए पहला काम तथाकथित युवकों के लिए.. जो उम्र से युवक दिखायी पड़ते हैं, वह यह है कि वह मानसिक यौवन को पैदा करने की देश में चेष्टा करें। वे शरीर के यौवन को मानकर तृप्त न हो जायें। आत्मिक यौवन, स्प्रीचुअल यंगनेस पैदा करने का एक आदोलन सारे देश में चलना चाहिए। हम इससे राजी नहीं होंगे कि एक आदमी शकल सूरत से जवान दिखायी पड़ता है तो हम जवान मान लें। हम इसकी फिक्र करेंगे कि हिन्दुस्तान के पास जवान आत्मा हो।

स्वामी राम भारत के बाहर यात्रा में पहली दफा गये थे। जिस जहाज पर वे यात्रा कर रहे थे, उस पर एक बूढ़ा जर्मन था, जिसकी उम्र कोई 90 साल होगी। उसके सारे बाल सफेद हो चुके थे, उसकी आंखों में 90 साल की स्मृति ने गहराइयां भर दी थीं, उसके चेहरे पर झूर्रियां थीं लम्बे अनुभवों की; लेकिन वह जहाज के डैक पर बैठकर चीनी भाषा सीख रहा था!

चीनी भाषा सीखना साधारण बात नहीं है, क्योंकि चीनी भाषा के पास कोई वर्णमाला नहीं है, कोई अ ब स नहीं होता चीनी भाषा के पास। वह पिक्टोरियल लैंग्वेज है, उसके पास तो चित्र हैं। साधारण आदमी को साधारण शान के लिए कम से कम पांच हजार चित्रों का ज्ञान चाहिए तो एक लाख चित्रों का ज्ञान हो, तब कोई आदमी चीनी भाषा का पंडित हो सकता है। दस—पन्द्रह वर्ष का श्रम मांगती है चीनी भाषा। 90 साल का बूढ़ा सुबह से बैठकर सांझ तक चीनी भाषा सीख रहा है!

रामतीर्थ बेचैन हो गये। यह आदमी पागल है, 90 साल की उस में चीनी भाषा सीखने बैठा है, कब सीख पायेगा? आशा नहीं कि मरने के पहले सीख जायेगा। और अगर कोई दूर की कल्पना भी करे कि यह आदमी जी जायेगा दस—पन्द्रह साल, सौ साल पार कर जायेगा, जो कि भारतीय कभी कल्पना नहीं कर सकता कि सौ साल पार कर जायेगा। 35 साल पार करना तो मुश्किल हो जाता है, सौ कैसे पार करोगे? लेकिन समझ लें भूल—चूक भगवान की कि यह सौ साल से पार निकल जायेगा तो भी फायदा क्या है? जिस भाषा को सीखने में 15 वर्ष खर्च हों, उसका उपयोग भी तो दस—पच्चीस वर्ष करने का मौका मिलना चाहिए। सीखकर भी फायदा क्या होगा?

दो तीन दिन देखकर रामतीर्थ की बेचैनी बढ़ गयी। वह का तो आंख उठाकर भी नहीं देखता था कि कहां क्या हो रहा है, वह तो अपने सीखने में लगा था। तीसरे दिन उन्होंने जाकर उसे हिलाया और कहा कि महाशय, क्षमा करिये, मैं यह पूछता हूं कि आप यह क्या कर रहे हैं?

इस उम्र में चीनी भाषा सीखने बैठे हैं? कब सीख पाइयेगा? और सीख भी लिया तो इसका उपयोग कब करियेगा? आपकी उम्र क्या है?

तो उस बूढ़े ने कहा, उम्र? मैं काम में इतना व्यस्त रहा कि उम्र का हिसाब रखने का कुछ मौका नहीं मिला। उम्र अपना हिसाब रखती होगी। हमें फुर्सत कहां कि उम्र का हिसाब रखें। और फायदा क्या है उम्र का हिसाब रखने में? मौत जब आनी है, तब आनी है। तुम चाहे कितने हिसाब रखो, कि कितने हो गये, उससे कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है। मुझे फुर्सत नहीं मिली उम्र का हिसाब रखने की, लेकिन जरूर नब्बे तो पार कर गया हूं।

रामतीर्थ ने कहा कि फिर यह सीखकर क्या फायदा? बूढ़े हो। अब कब सीख पाओगे? उस बूढ़े आदमी ने क्या कहा? उसने कहा, मरने का मुझे ख्याल नहीं आता, जब तक मैं सीख रहा हूं। जब सीखना खत्म हो जाएगा तो सोचूंगा मरने की बात। अभी तो सीखने में जिंदगी लगा रहा हूं अभी तो मैं बच्चा हूं क्योंकि मैं सीख रहा हूं। बच्चा सीखता है। लेकिन उस बूढ़े ने कहा कि चूंकि मैं सीख रहा हूं इसलिए बच्चा हूं।

यह आध्यात्मिक जगत में परिवर्तन हो गया।

उसने कहा, चूंकि मैं सीख रहा हूं और अभी सीख नहीं पाया, अभी तो जिंदगी की पाठशाला में प्रवेश किया है। अभी तो बच्चा हूं अभी से मरने की कैसे सोचें? जब सीख लूंगा, तब सोचूंगा मरने की बात।

फिर उस बूढ़े ने कहा, मौत हर रोज सामने खड़ी है। जिस दिन पैदा हुआ था, उस दिन उतनी ही सामने खड़ी थी, जितनी अभी खड़ी है। अगर मौत से डर जाता तो उसी दिन सीखना बंद कर देता। सीखने का क्या फायदा नहीं था? मौत आ सकती है कल, लेकिन 90 साल का अनुभव मेरा कहता है कि मैं 90 साल मौत को जीता हूं। रोज मौत का डर रहा है कि कल आ जायेगी, लेकिन आयी नहीं। 90 साल तक मौत नहीं आयी तो कल भी कैसे आयेगी? 90 साल का अनुभव कहता है कि अब तक नहीं आयी तो कल भी कैसे आ पायेगी? अनुभब करे मानता हूं। 90 साल तक डर फिजूल था। वह बूढ़ा पूछने लगा रामतीर्थ से आपकी उम्र क्या है?

रामतीर्थ तो घबरा ही गये थे उसकी बात सुनकर। उनकी उम्र केवल 30 वर्ष थी।

उस बूढ़े ने कहा, तुम्हें देखकर, तुम्हारे भय को देखकर मैं कह सकता हूं, भारत बूढ़ा क्यों हो गया। तीस साल का आदमी मौत की सोच रहा है! मर गया। मौत की सोचता कोई तब है, जब मर जाता है। तीस साल का आदमी सोचता है कि सीखने से क्या फायदा, मौत करीब आ

रही है! यह आदमी जवान नहीं रहा। उस बूढ़े ने कहां, मैं समझ गया कि भारत बूढा क्यों हो गया है? इन्हीं गलत धारणाओं के कारण।

भारत को एक युवा अध्यात्म चाहिए। युवा अध्यात्म। बूढा अध्यात्म हमारे पास बहुत है। हमारे पास ऐसा अध्यात्म है, जो बूढ़ा करने की कीमिया है, केमिस्ट्री है। हमारे पास ऐसी आध्यात्मिक तरकीबें हैं कि किसी भी जवान के आसपास उन तरकीबों का उपयोग करो, वह फौरन बूढ़ा हो जायगा। हमने बूढ़े होने का राज खोज लिया है, सीक्रेट खोज लिया है। बूढ़े होने का क्या राज है?

बूढ़ा होने का राज है : जीवन पर ध्यान मत रखो, मौत पर ध्यान रखो। यह पहला सीक्रेट है। जिंदगी पर ध्यान मत देना, ध्यान रखना मौत पर। जिंदगी की खोज मत करना, खोज करना मोक्ष की। इस पृथ्वी की फिक्र मत करना, फिक्र करना परलोक की, स्वर्ग की। यह बूढ़ा होने का पहला सीक्रेट है। जिन—जिन को बूढ़ा होना हो, इसे नोट कर लें। कभी जिंदगी की तरफ मत देखना। अगर फूल खिल रहा हो तो तुम खिलते फूल की तरफ मत देखना, तुम बैठकर सोचना कि जल्द ही यह मुरझा जायेगा। यह बूढ़े होने की तरकीब है।

अगर एक गुलाब के पौधे के पास खड़े हों तो फूलों की गिनती मत करना, कांटों की गिनती करना की सब असार है, कांटे ही कांटे पैदा होते हैं। एक फूल खिलता है, मुश्किल से हजार कांटों में। हजार कांटों की गिनती कर लेना। उससे जिंदगी असार सिद्ध करने में बड़ी आसानी मिलेगी।

अगर दिन और रात को देखो, तो कभी मत देखना कि दो दिन के बीच एक रात है। हमेशा ऐसा देखना कि दो रातों के बीच में एक छोटा—सा दिन है।

बूढ़े होने की तरकीब कह रहा हूं। जिंदगी में जहां अंधेरे हों, उनको मैग्रीफाई करना। बड़ा दिखाने वाला कौन अपने पास रखना, जहां अंधेरा दिखाई पड़े, फौरन मैग्रीफाई ग्लास लगा देना, बड़ा भारी अंधेरा देखना है। और जहां रोशनी दिखाई पड़े, वहां छोटा कर देने वाला ग्लास अपने पास रखना, जो जल्दी से रोशनी को छोटा कर दे। जहां फूल दिखाई पड़े, गिनती मत करना और फौरन सोच लेना क्या रखा है फूल में? क्षण भर को है, अभी खिला है, अभी मुरझा जायेगा। और कांटा स्थायी है, शाश्वत है, सनातन है, न कभी खिलता है, न कभी मुरझाता है। हमेशा है। इन बातों पर ध्यान देने से आदमी बहुत जल्दी बूढ़ा हो जाता है।

मैंने सुना है कि न्यूयार्क की सौवीं मंजिल से एक आदमी गिर रहा था। सौवी मंजिल से वह आदमी गिर रहा था। जब वह पचासवीं मंजिल के पास से गुजर रहा था, तो खिड़की से एक

आदमी ने चिल्लाकर उससे पूछा कि दोस्त क्या हाल है? उसने कहा कि अभी तक तो सब ठीक है। यह आदमी गड़बड़ आदमी है। यह आदमी जवान होने का ढंग जानता है।

लेकिन यह ठीक नहीं है। उस आदमी ने कहा, अभी तक सब ठीक है, अभी जमीन तक पहुंचे नहीं हैं, जब पहुंचेंगे तब देखेंगे। अभी पचासवीं खिड़की तक सब ठीक चल रहा है। ओके। यह आदमी जवान होने की तरकीब जानता है।

लेकिन हमको ऐसी तरकीबें कभी नहीं सीखनी चाहिए। हमें तो बूढ़े होने के रास्ते पर चलना चाहिए। बूढ़ा होने का रास्ता—कभी जिंदगी में जो सुन्दर हो, उसकी तरफ ध्यान मत देना, जो असुन्दर हो उसकी खोज—बीन करना। और कोई आदमी आकर आपको कहे कि फलां आदमी बहुत बड़ा संगीतज्ञ है, कितनी अदभुत बांसुरी बजाता है। तो फौरन उसको कहना कि वह बांसुरी क्या खाक बजायेगा। वह आदमी चोर है, बेईमान है, वह बांसुरी कैसे बजा सकता है। आप धोखे में पड़ गये होंगे, वह आदमी पका बेईमान है, वह बांसुरी नहीं बजा सकता। यह बूढ़े होने की तरकीब है।

अगर जवान आदमी उस गांव में जायेगा और कोई उससे कहेगा, उस आदमी को जानते हो? वह बड़ा चोर, बेईमान है? तो वह जवान आदमी कहेगा कि यह कैसे हो सकता है कि वह चोर है, बेईमान है। मैंने उसे बड़ी सुन्दर बांसुरी बजाते देखा है। इतनी अदभुत बांसुरी जो बजाता है, वह चोर नहीं हो सकता।

बूढे का जिंदगी को देखने का ढंग है—दुखद को देखना, अंधेरे को देखना, मौत को देखना, कांटे को देखना।

हिंदुस्तान हजारों साल से दुखद को देख रहा है। जन्म भी दुख है, जीवन भी दुख है, मरण भी दुख है! प्रियजन का बिछुड़ना दुख है, अप्रियजन का मिलना दुख है, सब दुख है! मां के पेट का दुख झेलो, फिर जन्म का दुख झेलो, फिर बड़े होने का दुख झेलो, फिर जिंदगी में गृहस्थी के चक्कर झेलो, फिर बुढ़ापे की बिमारियां झेली, फिर मौत झेलो, फिर जलने की अस में अंतिम पीड़ा झेलो! ऐसे जीवन की एक दुख की लम्बी कथा है। बूढ़ा होना हो तो इसका स्मरण करना चाहिए।

बूढ़ा होना है तो बगीचे में नहीं जाना चाहिए, हमेशा मरघट पर बैठकर ध्यान करना चाहिए, जहां आदमी जलाये जाते हों। सुंदर से बचना चाहिए, असुंदर को देखना चाहिए। विकृत को देखना चाहिए, स्वस्थ को छोडना चाहिए। सुख मिले तो कहना चाहिए क्षणभंगुर है, अभी खत्म हो जायेगा। दुख मिले तो छाती से लगाकर बैठ जाना चाहिए। और सदा आंखें रखनी चाहिए जीवन के उस पार, कभी इस जीवन पर नहीं।

इस जीवन को समझना चाहिए एक वेटिंग रूम है।

जैसे बड़ौदा के स्टेशन पर एक वेटिग रूम हो, उसमें बैठते हैं आप थोड़ी देर। वहीं छिलके फेंक रहे हैं वहीं पान थूक रहे हैं, क्योंकि हमको क्या करना है, अभी थोड़ी देर में हमारी ट्रेन आयेगी और फिर हम चले जायेंगे। तुमसे पहले जो बैठा था, वह भी वेटिंग रूम के साथ यही सदव्यवहार कर रहा था, तुम भी वही सदव्यवहार करो, तुम्हारे बाद वाला भी वही करेगा।

वेटिंग रूम गंदगी का एक घर बन जायेगा, क्योंकि किसी को क्या मतलब है। हमको थोड़ी देर रुकना है तो आंख बंद करके राम—राम जप के गुजार देंगे। अभी ट्रेन आती है, चली जायेगी।

जिंदगी के साथ जिन लोगों की आंखें मौत के पार लगी हैं उनका व्यवहार वेटिंग रूम का व्यवहार है। वे कहते हैं, क्षण भर की तो जिंदगी है; अभी जाना है, क्या करना है हमें। हिंदुस्तान के संत—महात्मा यही समझा रहे हैं लोगों को— क्षणभंगुर है जिंदगी, इसके मायामोह में मत पड़ना। ध्यान वहां रखना आगे, मौत के बाद। इस छाया में सारा देश बूढा हो गया है।

अगर जवान होना है तो जिंदगी को देखना, मौत को लात मार देना। मौत से क्या प्रयोजन है? जब तक जिंदा हैं, तब तक जिंदा हैं। तब तक मौत नहीं है। सुकरात मर रहा था। ठीक मरते वक्त जब उसके लिए बाहर जहर घोला जा रहा था। वह जहर घोलने वाला धीरे—धीरे घोल रहा है। वह सोचता है, जितने देर सुकरात और जिंदा रह ले, अच्छा है। जितनी देर लग जाय।

वक्त हो गया है, जहर आना चाहिए। सुकरात उठकर बाहर जाता है और पूछता है मित्र, कितनी देर और?

उस आदमी ने कहा, तुम पागल हो गये हो सुकरात, मैं देर लगा रहा हूं इसलिए कि थोड़ी देर तुम और रह लो, थोड़ी देर सांस तुम्हारे भीतर और आ जाय, थोड़ी देर सूरज की रोशनी और देख लो, थोड़ी देर खिलते फूलों को, आकाश को, मित्रों की आंखों को और झांक लो, बस थोड़ी देर और। नदी भी समुद्र में गिरने के पहले पीछे लौटकर देखती है। तुम थोड़ी देर लौटकर देख लो। मैं देर लगाता हूं तुम जल्दी क्यों कर रहे हो? तुम इतनी उतावली क्यों किये जा रहे हो?

सुकरात ने कहा, मैं जल्दी क्यों किये जा रहा हूं! मेरे प्राण तड़पे जा रहे हैं मौत को जानने को। नयी चीज को जानने की मेरी हमेशा से इच्छा रही है। मौत बहुत बड़ी नयी चीज है; सोचता हूं देखूं क्या चीज है!

यह आदमी जवान है, यह का नहीं है। मौत को भी देखने के लिए इसकी आतुरता है। मित्र कहने लगा कि थोड़ी देर और जी लो।

सुकरात ने कहा, जब तक मैं जिन्दा हूं मैं यह देखना चाहता हूं कि जहर पीने से मरता हूं कि जिंदा रहता हूं। लोगों ने कहा कि अगर मर गये तो?

उसने कहा कि यदि मर ही गये तो फिक्र ही खअ हो गयी। चिंता का कोई कारण न रहा और जब तक जिंदा हूं जिंदा हूं।। जब मर ही गये, चिंता की कोई बात नहीं, खत्म हो गयी बात। लेकिन जब तक मैं जिंदा हूं जिंदा हूं तब तक मैं मरा हुआ नहीं हूं और पहले से क्यों मर जाऊं? मित्र सब डरे हुए बैठे हैं पास, रो रहे हैं, जहर की घबराहट आ रही है।

वह सुकरात प्रसन्न है! वह कहता है, जब तक मैं जिन्दा हूं तब तक मैं जिंदा हूं तब तक जिंदगी को जानूं। और सोचता हूं कि शायद मौत भी जिंदगी में एक घटना है।

सुकरात को बूढ़ा नहीं किया जा सकता। मौत सामने खड़ी हो जाय तो भी यह बूढ़ा नहीं होता।

और हम?.. जिंदगी सामने खड़ी रहती है और बूढ़े हो जाते हैं। यह रुख भारत में युवा मस्तिष्क को पैदा नहीं होने देता है। जीवन का विषादपूर्ण चित्र फाड़कर फेंक दो। और उसमें जिंदगी के दुख और जिंदगी के विषाद को बढ़ा—चढ़ा कर बतलाते हैं; वे जिंदगी के दुश्मन हैं, देश में युवा को पैदा होने देने में दुश्मन हैं। वह युवक को पैदा होने के पहले का बना देते हैं।

अभी मैं कुछ दिन पहले भावनगर में था। एक छोटी सी लड़की ने, तेरह चौदह साल उम्र थी, उसने मुझे आकर कहा कि मुझे आवागमन से छुटकारे का रास्ता बताइए! तेरह—चौदह साल की लड़की कहती है कि आवागमन से कैसे छूटूं फिर इस मुल्क में कैसे जवानी पैदा होगी? तेरह—चौदह साल की लड़की बूढ़ी हो गयी! वह कहती है, मैं मुक्त कैसे होऊं? जीवन से छूटने का विचार करने लगी है!

अभी जीवन के द्वार पर थपकी भी नहीं दी, अभी जीवन की खिड़की भी नहीं खुली, अभी जीवन की वीणा भी नहीं बजी, अभी जीवन के फूल भी नहीं खिले। वह द्वार के बाहर ही पूछने लगी, छुटकारा, मुक्ति, मोक्ष कैसे मिलेगा?

जहर डाल दिया होगा किसी ने उसके दिमाग में। मां—बाप ने, गुरुओं ने, शिक्षकों ने उसको पायजन बना दिया। उसकी जवानी पैदा नहीं होगी अब। अब वह बूढ़ी ही जियेगी। उसका विवाह भी होगा तो वह एक बूढ़ी औरत का विवाह है, जवान लड़की का नहीं। उसके घर के

द्वार पर शहनाइयां बजेगी तो एक बूढ़ी औरत सुनेगी उन शहनाइयों को, एक जवान लड़की नहीं। उन शहनाइयों से' भी मौत की आवाज सुनाई पड़ेगी, जीवन का संगीत नहीं? वह बूढ़ी हो गयी!

पहली बात, अगर बूढ़ा होना है तो मौत पर ध्यान रखना, जीवन पर नहीं।

और अगर जवान होना है तो मौत को लात मार देना। वह जब आयेगी, तब मुकाबला कर लेंगे। जब तक जीते हैं, तब तक पूरी तरह से जियेंगे, उसकी टोटलिटी में जीवन के रस को खोजेंगे, जीवन के आनन्द को खोजेंगे।

रवीन्द्रनाथ मर रहे थे। एक बूढे मित्र आये और उन्होंने कहा, अब मरते वक्त तो भगवान से प्रार्थना कर लो कि अब दोबारा जीवन में न भेजे। अब आखिरी वक्त प्रार्थना कर लो कि अब आवागमन से छुटकारा हो जाये। अब इस ख्वाब, इस गंदगी के चक्कर में न आना पड़े।

रवीन्द्रनाथ ने कहा, क्या कहते हैं आप? मैं और यह प्रार्थना करूं? मैं तो मन ही मन यह कह रहा हूं कि हे प्रभु, अगर तूने मुझे योग्य पाया हो, तो बार—बार तेरी पृथ्वी पर भेज देना। बड़ी रंगीन थी, बड़ी सुन्दर थी; ऐसे फूल नहीं देखे, ऐसा चांद, ऐसे तारे, ऐसी आंखें , ऐसा सुन्दर चेहरा! मैं दंग रह गया हूं मैं आनन्द से भर गया हूं। अगर तूने मुझे योग्य पाया हो तो हे परमात्मा, बार—बार इस दूनिया में मुझे भेज देना। मैं तो यह प्रार्थना कर रहा हूं मैं तो डरा हुआ हूं कि कहीं मैं अपात्र न सिद्‌ध हो जाऊं कि दोबारा न भेजा जाऊं।

रवीन्द्रनाथ को बूढ़ा बनाना बहुत मुश्किल है। शरीर बूढ़ा हो जायेगा। लेकिन इस आदमी के भीतर जो आत्मा है, वह जवान है, वह जीवन की मांग कर रही है।

रवीन्द्रनाथ ने मरने के कुछ ही घड़ी पहले, कुछ कड़ियां लिखवायी। उनमें दो कड़ियां हैं। देखा तो मैं नाचने लगा! क्या प्यारी बात कही है!

किसी मित्र ने रवीन्द्रनाथ को कहा कि तुम तो महाकवि हो, तुमने छह हजार गीत लिखे, जो संगीत में बांधे जा सकते है! शेली को लोग पश्चिम में कहते हैं, उसके तो सिर्फ दो हजार गीत संगीत में बंध सकते हैं, तुम्हारे तो छह हजार गीत! तुमसे बड़ा कोई कवि दुनिया में कभी नहीं हुआ।

रवीन्द्रनाथ की आंखों से आंसू बहने लगे। रवीन्द्रनाथ ने कहा क्या कहते हो, मैं तो भगवान से कह रहा हूं कि अभी मैंने गीत गाये कहां थे, अभी तो साज बिठा पाया था और विदा का क्षण आ गया। अभी तो ठोक—पीटकर तंबूरा ठीक किया था सिर्फ, अभी मैंने गीत गाया ही कहां

था। अभी तो मैंने तंबूरे की तैयारी की थी, ठोक—पीटकर तैयार हो गया था, साज बैठ गया था। अब मैं गाने की चेष्टा करता और यह तो विदा का क्षण आ गया। और मेरे तंबूरे के ठोकने—पीटने से लोगों ने समझ लिया है कि यह महाकवि हो गया है! भगवान से कह रहा हूं कि ' का साज तैयार हो गया और मुझे विदा कर रहे हो? अब तो मौका आया था कि मैं गीत गाऊं। मरते रवीन्द्रनाथ कहते हैं कि अभी तो मौका आया है कि मैं गीत गाऊं!

वह यह कहे रहे थे कि अभी मौका आया था कि मैं जवान हुआ था। वह यह कह रहे हैं कि अब तो मौका आया था कि सारी तैयारी हो गयी थी और मुझे विदा कर रहे हो। बूढ़ा आदमी यह कह सकता है तो फिर वह आदमी बूढ़ा नहीं है।

अगर जवान होना है तो जिंदगी को उसको सामने से पकड़ लेना पड़ेगा। एक—एक क्षण जिन्दगी भागी जा रही है, उसे मुट्ठी में पकड़ लेना पड़ेगा, उसे जीने की पूरी चेष्टा करनी पड़ेगी। और जी केवल वे ही सकते हैं जो उसमें रस का दर्शन करते हैं। और वहां दोनों चीजें है जिन्दगी के रास्ते पर, कांटे भी हैं और फूल भी। बूढ़ा होना हो वे कांटों की गिनती कर लें। जिन्हें जवान होना हो वे फूल को गिन लें।

और मैं कहता हूं कि करोड़ कांटे भी फूल की एक पंखुड़ी के मुकाबले कम हैं। एक गुलाब की छोटी—सी पंखुड़ी इतना बड़ा मिरेकल है, इतना बड़ा चमत्कार है कि करोड़ों कांटे इकट्ठे कर लो, उससे और कुछ सिद्ध नहीं होता उससे सिर्फ इतना ही सिद्ध होता है कि बड़ी अदभुत है यह दुनिया। जहां इतने कांटे हैं, वहां मखमल जैसा गुलाब का फूल पैदा हो सका है। उससे सिर्फ इतना सिद्ध होता है और कुछ भी सिद्ध नहीं होता। लेकिन यह देखने कि दृष्टि पर निर्भर है कि हम कैसे देखते हैं।

पहली बात, जिन्दगी पर ध्यान चाहिए। मेडीटेशन आन लाइफ, मौत पर नहीं। तो आदमी जवान से जवान होता चला जाता है। बुढ़ापे के अंतिम क्षण तक मौत द्वार पर भी खड़ी हो तो वैसा आदमी जवान होता है।

दूसरी बात, जो आदमी जीवन में सुंदर को देखता है, जो आदमी जवान है; वह आदमी असुंदर को मिटाने के लिए लड़ता भी है। जवानी फिर देखती नहीं, जवानी लड़ती भी है।

जवानी स्पेक्टेटर नहीं, जवानी तमाशबीन है कि तमाशा देख रहे हैं खड़े होकर।

जवानी का मतलब है जीना, तमाशगीरी नहीं।

जवानी का मतलब है सृजन।

जवानी का मतलब है सम्मिलित होना, पार्टिसिपेशन।

दूसरा सूत्र है।

खड़े होकर रास्ते के किनारे अगर देखते हो जवानी की यात्रा को, तुम तमाशबीन हो; तुम जवान नहीं हो, एक निक्रिय देखने वाले। निष्क्रिय देखने वाला आदमी जवान नहीं हो सकता। जवान सम्मिलित होता है जीवन में।

और जिस आदमी को सौंन्दर्य से प्रेम है, जिस आदमी को जीवन का आल्हाद है, वह जीवन को बनाने के लिए श्रम करता है, सुन्दर बनाने के लिए श्रम करता है। वह जीवन की कुरूपता से लड़ता है, वह जीवन को कुरूप करने वालों के खिलाफ विद्रोह करता है। कितनी कुरूपता है समाज में और जिन्दगी में?

अगर तुम्हें प्रेम है सौंदर्य से.. तो एक युवक एक सुंदर लड़की की तस्वीर लेकर बैठ जाये और पूजा करने लगे? एक युवती एक सुंदर युवक की तस्वीर लेकर बैठ जाय और कविताएं करने लगे? इतने से जवानी का काम पूरा नहीं हो जाता?

सौंदर्य से प्रेम का मतलब है? सौंदर्य को पैदा करो, क्रियेट, करो; जिन्दगी को सुंदर बनाओ। आनंद की उपलब्धि और आनंद की आकांक्षा और अनुभूति को बिखराओ। फूलों को चाहते हो तो फूलों को पैदा करने की चेष्टा में संलग्र हो जाओ। जैसा तुम चाहते हो जिन्दगी को वैसी बनाओ।

जवानी मांग करती है कि तुम कुछ करो, खड़े होकर देखते मत रहो।

हिन्दुस्तान की जवानी तमाशबीन है। हम ऐसे रहते हैं खड़े होकर जीवन में, जैसे कोई जुलूस जा रहा है। वैसे रुके हैं, देख रहे हैं; कुछ भी हो रहा है! शोषण हो रहा है, जवान खड़ा हुआ देख रहा है! बेवकूफियां हो रही हैं, जवान खड़ा देख रहा है! बुद्धिहीन लोग देश को नेतृत्व दे रहे हैं, जवान खड़ा देख रहा है। जड़ता धर्मगुरु बनकर बैठी है, जवान खड़ा हुआ देख रहा है! सारे मुल्क के हितों को नष्ट किये जा रहे हैं, जवान खड़ा हुआ देख रहा है! यह कैसी जवानी है?

कुरूपता से लड़ना पड़ेगा, असौंदर्य से लड़ना पड़ेगा, शोषण से लड़ना पड़ेगा, जिन्दगी को विकृत करने वाले तत्वों से लड़ना पड़ेगा। जो आदमी जवान होता है, वह सागर की लहरों और तूफानों में जीता है, फिर आकाश में उसकी उड़ान होनी शुरू होती है। लेकिन लड़ोगे तुम? व्यक्तिगत लड़ाई ही नहीं हैं यह, सामूहिक लड़ाई की बात है। कोई फाइट नहीं!

और बिना फाइट के, बिना लड़ाई के, जवानी निखरती नहीं। जवानी सदा लड़ाई के बिना निखरती नहीं। जवानी सदा लड़ती है और निखरती है, जितनी लड़ती है, उतनी निखरती है। सुंदर के लिए, सत्य के लिए जवानी जितनी लड़ती है, उतनी निखरती है। लेकिन क्या लड़ोगे?

तुम्हारे पिता आ जायेंगे, तुम्हारी गर्दन में रस्सी डालकर कहेंगे, इस लड़की से विवाह करो और तुम घोड़े पर बैठ जाओगे! तुम जवान हो? और तुम्हारे बाप जाकर कहेंगे कि दस हजार रुपये लेंगे इस लड़की के पिता से और तुम मजे से मन में गिनती करोगे कि दस हजार में स्कूटर खरीदें कि क्या करें? तुम जवान हो? ऐसी जवानी दो कौड़ी की जवानी है।

जिस लड़की को तुमने कभी चाहा नहीं, जिस लड़की को तुमने कभी प्रेम नहीं किया, जिस लड़की को तुमने कभी छुआ नहीं, उस लड़की से विवाह करने के लिए तुम पैसे के लिए राजी हो रहे हो? समाज की व्यवस्था के लिए राजी हो रहे हो? तो तुम जवान नहीं हो। तुम्हारी जिन्दगी में कभी भी वे फूल नहीं खिलेंगे, जो युवा मस्तिष्क छूता है। तुम हो ही नहीं; तुम एक मिट्टी के लौदें हो, जिसको कहीं भी सरकाया जा रहा हो, कहीं पर भी लिया जा रहा हो। कुछ भी नहीं तुम्हारे मन में, न संदेह है, न जिज्ञासा है, न संघर्ष है, न पूछ है, न इन्क्वायरी है कि यह क्या हो रहा है! कुछ भी हो रहा है, हम देख रहे हैं खड़े होकर! नहीं, ऐसे जवानी नहीं पैदा होती है।

इसलिए दूसरा सूत्र तुमसे कहता हूं और वह यह कि जवानी संघर्ष से पैदा होती है।

संघर्ष गलत के लिए भी हो सकता है और तब जवानी कुरूप हो जाती है। संघर्ष बुरे के लिए भी हो सकता है, तब जवानी विकृत हो जाती है। संघर्ष अधूरे की लिए भी हो सकता है, तब जवानी आत्मघात कर लेती है।

लेकिन संघर्ष जब सत्य के लिए, सुन्दर के लिए, श्रेष्ठ के लिए होता है, संघर्ष जब परमात्मा के लिए होता है, संघर्ष जब जीवन के लिए होता है; तब जवानी सुन्दर, स्वस्थ, सत्य होती चली जाती है।

हम जिसके लिए लड़ते हैं, अंततः वही हम हो जाते हैं।

लड़ो सुन्दर के लिए और तुम सुन्दर हो जाओगे। लड़ो सत्य के लिए और तुम सत्य हो जाओगे। लड़ो श्रेष्ठ के लिए तुम श्रेष्ठ हो जाओगे। और मरो—सड़ो तुम—खड़े—खड़े सडोगे और मर जाओगे और कुछ भी नहीं होओगे।

जिंदगी संघर्ष है और संघर्ष से ही पैदा होती है। जैसा हम संघर्ष करते हैं, वैसे ही हो जाते हैं।

हिन्दुस्तान में कोई लड़ाई नहीं है, कोई फाइट नहीं है! सब कुछ हो रहा है, अजीब हो रहा है। हम सब हैं, देखते हैं, सब हो रहा है और होने दे रहे हैं! अगर हिन्दुस्तान की जवानी खड़ी हो जाय, तो हिन्दुस्तान में फिर ये सब नासमझियां नहीं हो सकती हैं, जो हो रही हैं। एक आवाज में टूट जायेंगी। क्योंकि जवान नहीं है, 'कुछ भी हो रहा है। मैं यह दूसरी बात कहता हूं। लड़ाई के मौके खोजना सत्य के लिए, ईमानदारी के लिए।

अगर अभी न लड़ सकोगे तो बुढ़ापे में कभी नहीं लड़ सकोगे। अभी तो मौका है कि ताकत है, अभी मौका है कि शक्ति है, अभी मौका है कि अनुभव ने तुम्हें बेईमान नहीं बनाया है। अभी तुम निर्दोष हो, अभी तुम सकते हो, अभी तुम्हारे भीतर आवाज उठ सकती है, यह गलत है। जैसे—जैसे उम्र बढ़ेगी, अनुभव बढ़ेगा चालाकी बढ़ेगी।

अनुभव से ज्ञान नहीं बढ़ता है, सिर्फ कनिंगनेस बढ़ती है, चालाकी बढ़ती है।

अनुभवी आदमी चालाक हो जाता है, उसकी लड़ाई कमजोर हो जाती है, वह अपना हित देखने लगता है हमें क्या मतलब है, अपनी फिक्र करो, इतनी बड़ी दुनिया के झंझट में मत पड़ो।

जवान आदमी जूझ सकता है, अभी उसे कुछ पता नहीं। अभी उसे अनुभव नहीं है चालाकियों का।

इसके पहले कि चालाकियों में तुम दीक्षित हो जाओ और तुम्हारे उपकुलपति और तुम्हारे शिक्षक और? मां—बाप दीक्षांत समारोह में तुम्हें चालाकियों के सर्टिफिकेट देंगे, उसके पहले लड़ना। शायद लडाई तुम्हारी रहे, तो तुम चालाकियों में नहीं, जीवन के अनुभव में दीक्षित हो जाओ। और शायद लड़ाई तुम्हारी जारी रहे, वह जो छिपी है भीतर आत्मा, वह निखर जाये, वह प्रकट हो जाये। और जैसे आदमी अपने भीतर छिपे हुए का पूरा अनुभव करता है, उसी दिन पूरे अर्थों में जीवित होता है।

और मैं कहता हूं कि जो आदमी एक क्षण को भी पूरे अर्थों में जीवन का रस जान लेता है, उसकी फिर कभी मृत्यु कभी नहीं होती। वह अमृत से संबंधित हो जाता है।

युवा होना अमृत से संबंधित होने का मार्ग है। युवा होना आत्मा की खोज है। युवा होना परमात्मा के मंदिर पर प्रार्थना है।

'युवक कौन'
बडौदा

संभोग से समाधि की ओर—44

Posted on सितम्बर 18, 2013by sw anand prashad

युवा चित्त का जन्म—बाहरवां प्रवचन

मेरे प्रिय आत्मन

सोरवान विश्वविद्यालय की दीवालों पर जगह—जगह एक नया ही वाक्य लिखा हुआ दिखायी पड़ता है। जगह—जगह दीवालों पर, द्वारों पर लिखा है : ' 'प्रोफेसर्स, यू आर ओल्ड' ' — अध्यापकगण, आप बूढ़े हो गये हैं!

सोरवान विश्वविद्यालय की दीवालों पर जो लिखा है, वह मनुष्य की पूरी संस्कृति, पूरी सभ्यता की दीवालों पर लिखा जा सकता है। सब कुछ बूढ़ा हो गया है, अध्यापक ही नहीं। मनुष्य का मन भी बूढ़ा हो गया है।

मैंने सुना है कि लाओत्से के संबंध में एक कहानी है कि वह बूढ़ा ही पैदा हुआ है। यह कहानी कैसे सच होगी? कहना मुश्किल है। सुना नहीं कि कभी कोई आदमी बूढ़ा ही पैदा हुआ हो! शरीर से तो कभी नहीं सुना है कि कोई आदमी बूढ़ा पैदा हुआ हो! लेकिन ऐसा हो सकता है कि मन से आदमी पैदा होते ही बूढ़ा हो जाये।

और लाओत्से भी अगर बूढ़ा पैदा हुआ होगा, तो इसी अर्थ में कि वह कभी बच्चा नहीं रहा होगा। कभी जवान नहीं हुआ होगा। चित्त के जो वार्धक्य के, ' ओल्डनेस' के जो लक्षण हैं, वे पहले दिन से ही उसमें प्रविष्ट हो गये होंगे। लेकिन लाओत्से बूढ़ा पैदा हुआ हो या न हुआ हो, आज जो मनुष्यता हमारे सामने है, वह बूढ़ी ही पैदा होती है। हमने बूढे होने के सूत्र पकड़ रखे हैं।
और इसके पहले मैं कहूं कि युवा चित्त का जन्म कैसे हो, मैं इस भाषा में कहूंगा कि चित्त बूढ़ा कैसे हो जाता है; क्योंकि बहुत गहरे में चित्त का बूढ़ा होना, मनुष्य की चेष्टा से होता है।

चित्त अपने आप में सदा जवान है। शरीर की तो मजबूरी है कि वह बूढा हो जाता है; लेकिन चेतना की कोई मजबूरी नहीं है कि वह बूढ़ी हो जाये। चेतना युवा ही है। 'माइंड' तो 'यंग' ही है। वह कभी का नहीं होता, लेकिन अगर हम व्यवस्था करें, तो उसे भी बूढ़ा बना सकते हैं।

इसलिए जवान चित्त कैसे पैदा हो, 'यंग माइंड' कैसे पैदा हो, यह सवाल उतना महत्वपूर्ण नहीं है; जितना गहरे में सवाल यह है कि चित्त को बूढ़ा बनाने की तरकीबों से कैसे बचा जाये। अगर हम चित्त को बूढ़ा बनाने की तरकीबों से बच जाते हैं, तो जवान चित्त अपने—आप पैदा हो जाता है।

चित्त जवान है ही। चित्त कभी का होता ही नहीं। वह सदा ताजा है। चेतना सदा ताजी है। चेतना नयी है, रोज नयी है।

लेकिन हमने जो व्यवस्था की है, वह उसे रोज बूढ़ा और पुराना करती चली जाती है। तो पहले मैं समझाना चाहूंगा कि चित्त के बूढ़ा होने के सूत्र क्या हैं :

पहला सूत्र है फियर, भय। जिस चित्त में जितना ज्यादा भय प्रविष्ट हो जायेगा, वह उतना ही 'पैरालाइब्द' और 'क्रिपल्ड ' हो जायेगा। वह उतना ही बूढा हो जायेगा।

और हमारी पूरी संस्कृति—आज तक के मनुष्य की पूरी संस्कृति, भय पर खड़ी हुई है।

हमारा तथाकथित सारा धर्म भय पर खड़ा हुआ है। हमारे भगवान की मूर्तियां हमने भय के कारखाने में डाली हैं। वहीं वे निर्मित हुई है। हमारी प्रार्थनाएं हमारी पूजाएं— थोड़ा हम भीतर प्रवेश करें, तो भय की आधारशिलाओं पर खड़ी हुई मिल जायेंगी। हमारे संबंध, हमारा परिवार, हमारे राष्ट्र, बहुत गहरे में, भय पर खड़े ?? परिवार निर्मित हो गये हैं; लेकिन पति भयभीत है! पुरुष भयभीत है! सी भयभीत है! बच्चे भयभीत हैं! साथ खड़े हो जाने से भय थोड़ा कम मालूम होता है।

संप्रदाय, संगठन खड़े हो गये हैं भय के कारण! राष्ट्र, देश खड़े हैं भय के कारण!

हमारी जो भी आज तक की व्यवस्था है, वह सारी व्यवस्था भय पर खड़ी है। एक—दूसरे से हम भयभीत हैं। दूसरे से ही नहीं, हम अपने से भी भयभीत हैं।

इस भय के कारण, चित्त का युवा होना कभी संभव नहीं है, क्योंकि चित्त तभी युवा होता है, जब अभय हो। खतरे और जोखिम उठाने में समर्थ हो। जो जितना ही भयभीत है, वह खतरे में उतना ही प्रवेश नहीं करता है। वह सुरक्षा का रास्ता लेता है, 'सिक्योरिटी' का रास्ता लेता है। जहां कोई खतरे न हों, वह रास्ता लेता है।

और सिर्फ उन्हीं रास्तों पर खतरा नहीं मालूम होता है, जो हमारे परिचित हैं। जिन पर हम बहुत बार गुजरकर गये हैं। तो बूढ़ा मनुष्य, कोल्हू के बैल की तरह एक ही रास्ते पर घूमता रहता है। रोज सुबह वहीं उठता है, जहां कल सांझ सोया था! रोज वही करता है, जो कल किया था! रोज वही—जो कल था, उसी में जीने की कोशिश करता है! नये से डरता है। नये में खतरा भी हो सकता है। भयभीत चित्त बूढ़ा होता है। और भय हमारे पूरे प्राणों को किस बुरी तरह मार डालता है, यह हमें पता नहीं है।

मैंने सुना है, एक गांव के बाहर एक फकीर का झोपड़ा था। एक सांझ अंधेरा उतरता था। फकीर झोपड़े के बाहर बैठा है। एक काली छाया उसे गांव की तरफ भागती जाती मालूम पड़ी। रोका उसने उस छाया को! पूछा, तुम कौन हो? और कहां जाती हो? उस छाया ने कहा, मुझे पहचाना नहीं, मैं मौत हूं और गांव में जा रही हूं। प्लेग आने वाला है। गांव में मेरी जरूरत पड गयी है।

उस फकीर ने पूछा, कितने लोग मर गये हैं? कितने लोगों के मरने का इंतजाम है, कितने की योजना है? उस मौत की काली छाया ने कहा, बस! हजार लोग ले जाने हैं।

मौत चली गयी। महीना भर बीत गया। गांव में प्लेग फैल गया। कोई पचास हजार आदमी मरे। दस लाख की नगरी थी। कुल पचास हजार आदमी मर गए।

फकीर बहुत हैरान हुआ कि आदमी धोखा देता था। यह मौत भी धोखा देने लगी, मौत भी झूठ बोलने लगा! और मौत क्यों झूठ बोले? क्योंकि आदमी झूठ बोलता है डर के कारण! मौत किससे डरती होगी, कि झूठ बोले। मौत को तो डरने का कोई कारण नहीं, क्योंकि मौत ही डरने का कारण है, तो मौत को क्या डर हो सकता है? फकीर बैठा रहा कि मौत वापस लौटे, तो पूछ लूं। महीने भर के बाद मौत वापस लौटी। फिर रोका और कहा कि बड़ा धोखा दिया। कहा था, हजार लोग मरेंगे, पचास हजार लोग मर चुके हैं।

मौत ने कहा, मैंने हजार ही मारे हैं, बाकी भय से मर गये हैं। उनसे मेरा कोई संबंध नहीं है। वे अपने—आप मर गये हैं।

और भय से कोई आदमी बिलकुल मर जाये, बड़ा खतरा नहीं है, लेकिन भय से हम भीतर मर जाते हैं, और बाहर जीते चले जाते हैं। भीतर लाश हो जाती है, बाहर जिंदा रह जाते हैं। भीतर सब 'डेड—वेट' हो जाता है—मुर्दा, मरा हुआ। और बाहर हमारी आंखें ,हाथ—पैर चलते हुए मालूम पड़ते हैं।

बूढ़े होने का मतलब यह है कि जो आदमी भीतर से मर गया है, सिर्फ बाहर से जी रहा है। जिसका जिंदगी सिर्फ बाहर है। भीतर जो मर चुका है, वह आदमी बूढ़ा है।

यह हो सकता है, कि एक आदमी बाहर से बूढ़ा हो जाये। शरीर पर झुर्रईयां पड़ गयी हैं, और मृत्यु के चरण—चिहन दिखायी पड़ने लगे हैं। मृत्यु की पग— ध्वनियां सुनायी पड़ने लग गयी हैं। और भीतर से जिंदा हो, जवान हो, उस आदमी को बूढ़ा कहना गलत है। बूढ़ा, शारीरिक मापदण्ड से नहीं तौला जा सकता है। बुढ़ापा तौला जाता है, भीतर कितना मृत हो गया है, उससे। कुछ लोग बूढ़े ही जीते हैं; जन्मते हैं, और मरते हैं!

कुछ थोड़े—से सौभाग्यशाली लोग युवा जीते हैं। और जो युवा होकर जी लेता है, वह युवा ही मरता है। वह मौत के आखिरी क्षण में भी युवा होता है। मृत्यु उसे छीन नहीं पाती। क्योंकि जिसे बुढ़ापा ही नहीं छू पाता है, उसे मृत्यु कैसे छू पायेगी। लेकिन संस्कृाति हमारी, भय को ही प्रचारित करती है। हजार तरह के भय खड़े करती है।

सारे पुराने धर्मों ने ईश्वर का भय सिखाया है। और जिसने भी ईश्वर का भय सिखाया है, उसने पृथ्वी पर अधर्म के बीज बोये हैं। क्योंकि भयभीत आदमी धार्मिक हो ही नहीं सकता। भयभीत आदमी धार्मिक दिखायी पड़ सकता है।

भय से कभी किसी व्यक्ति के जीवन में क्रांति हुई है? रूपांतरण हुआ है? पुलिस वाला चौरास्ते पर खड़ा है, इसलिए मैं चोरी न करूं, तो मैं अच्छा आदमी हूं! पुलिस वाला हट जाये, तो मेरी चोरी अभी शुरू हो जाये।

अगर पका पता चूल जाये कि ईश्वर मर गया है—उसकी खबरें तो बहुत आती हैं; लेकिन पका नहीं हो पाता कि ईश्वर मर गया है। तो जिसको हम धार्मिक आदमी कहते हैं, वह एक क्षण में अधार्मिक हो जाये। अगर इसकी गारंटी हो जाये कि ईश्वर मर गया है, तो जिसको हम धार्मिक आदमी कहते हैं, मंदिर कभी न जाये। फिर सचाई, सत्य और गीता और कुरान और बाइबिल की बातें वह भूलकर भी न करें। वह फिर टूट पड़े जीवन पर, पागल की तरह! उसने भगवान को एक बहुत बड़ा सुप्रीम कांस्टेबल की तरह समझा हुआ है। हैड कांस्टेबल, सबके ऊपर बैठा हुआ पुलिसवाला, वह उसको डराये हुए है।

पुराना शब्द है 'गॉड—फियरिग', ईश्वर— भीरू! धार्मिक आदमी को हम कहते हैं—ईश्वर भीरू!

परसों मैं एक मित्र के घर था बड़ौदा में, उन्होंने कहा, मेरे पिता बहुत 'गॉड फीयरिग' हैं, बड़े धार्मिक आदमी हैं। सुन लिया मैंने! लेकिन 'गॉड—फियरिग' धार्मिक कैसे हो सकता है? 'गॉड—लविंग', ईश्वर को प्रेम करने वाला धार्मिक हो सकता है। ईश्वर से डरने वाला कैसे धार्मिक हो सकता है?

और ध्यान रहे, जो डरता है, वह प्रेम कभी नहीं कर सकता है। जिससे हम डरते हैं, उसको हम प्रेम कर सकते हैं? उसको हम घृणा कर सकते हैं, प्रेम नहीं कर सकते! हां, प्रेम दिखा सकते हैं। भीतर होगी घृणा, बाहर दिखायेंगे प्रेम! प्रेम एक्टिंग होगा, अभिनय होगा!

जो भगवान से डरा हुआ है, उसकी प्रार्थना झूठी है। उसके प्रेम की सब बातें झूठी हैं। क्योंकि जिससे हम डरे हैं, उससे प्रेम असंभव है। उससे प्रेम का संबंध पैदा ही नहीं होता है।

कभी आपको खयाल है, जिससे आप डरे हैं, उसे आपने प्रेम किया है? लेकिन यह भ्रांति गहरी है। वह ऊपर बैठा हुआ पिता भी इस तरह पेश किया गया है कि उससे हम डरे हैं। नीचे भी जिसको हम पिता कहते हैं, मां कहते हैं, गुरु कहते हैं, वे सब डरा रहे हैं। और सब सोचते हैं कि डर से प्रेम पैदा हो जाये।

बाप, बेटे को डरा रहा है। डराकर सोच रहा है कि प्रेम पैदा होता है। नहीं! दुश्मनी पैदा हो रही है। हर बेटा, बाप का दुश्मन हो जायेगा। जो बाप भी बेटे को डरायेगा, दुश्मनी पैदा हो जाना निश्चित है। और बेटा आज नहीं कल, बदले में बाप को डरायेगा। थोड़ा वक्त लगेगा, थोड़ा समय लगेगा। बाप जब बूढ़ा हो जायेगा, बेटा जब जवान होगा, तो बाप ने जब जवान था और बेटा जब बच्चा था, जिस भांति डराया था, पहलू बदल जायेगा, अब बेटा बाप को डरायेगा! और बाप चिल्लायेगा बेटे बिलकुल बिगड़ गये हैं!

बेटे कभी नहीं बिगड़ते। पहले बाप को बिगड़ना पडता है। तब बेटे बिगड़ते हैं।

बाप पहले बिगड़ गया। उसने बचपन में बेटे के साथ वह सब कर लिया है, जो बेटे को बुढ़ापे में उसके साथ करना पड़ेगा। सब चक्के घूमकर अपनी जगह आ जाते हैं।

अगर भय हमने पैदा किया है तो परिणाम में भय लौटेगा, घृणा लौटेगी, दुश्मनी लौटेगी। प्रेम नहीं लौटता।

और हमने जो ईश्वर बनाया था, वह भय का साकार रूप था। भय ही भगवान था। स्वाभाविक रूप से आदमी उससे डरा। डरकर धार्मिक बना तो धार्मिकता झूठी ही थोपी! एकदम ऊपरी। भीतर भय था। भीतर डर था। आज एक युवती ने मुझे आकर कहा कि बचपन से मुझे ऐसा लगता है कि ईश्वर मुझे मिल जाये तो उसे मार डालूं। मैंने कहा, यह सब खयाल है तेरे मन में? लेकिन जो भी डराने वाला है, उसको मारने का खयाल हमारे मन में पैदा होगा ही। उस युवती को ठीक ही खयाल पैदा हुआ है। हिम्मत है, उसने कह दिया है। हममें हिम्मत नहीं है, हम नहीं कहते। वैसे हर आदमी इस खोज में है कि ईश्वर को कैसे खत्म कर दें, कैसे मार डालें।

दोस्तोवस्की ने अपने उपन्यास में कहा है कि अगर ईश्वर न हो, 'देन एवरी थिंग इज कमिटेड'। एक बार पका हो जाये, ईश्वर नहीं है तो हर चीज की आज्ञा मिल जाये। फिर हमें जो करना है, हम कर सकते हैं। फिर कोई डर न रह जाय। वही तो निश्चित है। बाद में उसने कहा कि तुम छोड़ दो भय। खबर नहीं मिली तुम्हें—गॉड इज नाउ डैड, मैन इज फ्री, ईश्वर मर चुका है और आदमी मुक्त है!

ईश्वर बंधन था कि उसके मरने से आदमी मुक्त होगा? इसमें ईश्वर का कसूर नहीं है। इसमें धर्म के नाम पर जो परंपराएं बनीं, उन्होंने भय का बंधन बना दिया था। जरूरी हो गया था कि ईश्वर के बेटे किसी दिन उसे कत्ल कर दें।

आज दुनिया भर के बेटे ईश्वर का कत्ल कर दे रहे हैं। रूस ने कत्ल किया है, चीन ने कत्ल किया है; हिन्दुस्तान में भी कत्ल करेंगे। बचाना बहुत मुश्किल है। नक्सलवादी ने शुरू किया है, बंगाल में शुरू किया है। गुजरात थोड़ा पीछे जायेगा। थोड़ा गणित बुद्धि का है, थोड़ी देर में; लेकिन आयेगा, बच नहीं सकता।

ईश्वर पृथ्वी के कोने—कोने में कत्ल किया जायेगा। उसका जिम्मा नास्तिकों का नहीं होगा, गौर रखना। उसका जिम्मा उनका होगा, जिन्होंने ईश्वर के साथ भय को जोड़ा है, प्रेम को नहीं। इसके लिए जिम्मेदार तथाकथित धार्मिक लोग होंगे—वे चाहे हिंदु हों, चाहे मुसलमान हों, चाहे ईसाई हों; इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। जिन्होंने भी, मनुष्य—जाति के मन में ईश्वर और भय का एसोसिएशन करवा दिया है, दोनों को जुड़वा दिया है, उन्होंने इतनी खतरनाक बात पैदा की है कि आदमी के धार्मिक होने में सबसे बडी बाधा बन गयी है। या तो ईश्वर को भय से मुक्त करो—या ईश्वर आदमी को बूढ़ा करने और मारने का कारण हो गया है—क्योंकि भय बूढ़ा करता है और मारता है।

और ध्यान रहे, चीजें संयुक्त हो जाती हैं। विपरीत चीजें भी संयुक्त हो सकती हैं। मन के नियम हैं। अब भय से भगवान का कोई संबंध नहीं है। अगर इस पृथ्वी पर, इस जगत में, इस जीवन में कोई एक चीज है, जिससे निर्भय हुआ जा सकता है तो वह भगवान है। कोई एक तत्व है, जिससे निर्भय हुआ जा सकता है पूरा, तो वह परमात्मा है; क्योंकि बहुत गहरे में हम उसकी ही किरणें हैं, उसके ही हिस्से हैं। उसके ही भाग हैं, उससे ही लगे हैं। उससे भय का सवाल क्या है? उससे भयभीत होना अपने से भयभीत होने का मतलब रखेगा। लेकिन हम जोड़ सकते हैं चीजों को।

पावलव ने रूस में बहुत प्रयोग किये हैं एसोसिएशन पर, संयोग पर। एक कुत्ते को पावलव रोज रोटी खिलाता है। रोटी सामने रखता है, कुत्ते की लार टपकने लगती है। फिर रोटी के साथ वह घंटी बजाता है। रोज रोटी देता है, घंटी बजाता है। रोटी देता है, घंटी बजाता है। पन्द्रह दिन बाद रोटी नहीं देता है, सिर्फ घंटी बजाता है। और कुत्ते की लार टपकनी शुरू हो जाती है! अब घंटी से लार टपकने का कोई भी संबंध कभी सुना है? घंटी बजने से कुत्ते की लार टपकने का क्या संबंध है?

कोई भी संबंध नहीं है। तीन काल में कोई संबंध नहीं है। लेकिन एसोसिएशन हो जाता है। रोटी के साथ घंटी जुड़ गयी। जब रोटी मिली तब घंटी बजी, जब घंटी बजी तब रोटी मिली।

रोटी और घंटी मन में कहीं एक साथ हो गयीं। अब सिर्फ घंटी बज रही है, लेकिन रोटी का खयाल साथ में आ रहा है और तकलीफ शुरू हो गयी है।

मनुष्य कुछ खतरनाक संयोग भी बना सकता है। भगवान और भय का संयोग ऐसा ही खतरनाक है। पावलव का प्रयोग बहुत खतरनाक नहीं है। घंटी और रोटी में संबंध हो जाये, हर्ज क्या है? लेकिन भगवान और भय में संबंध हो जाये तो मनुष्यता बूढ़ी हो जायेगी।

अतीत का मनुष्य बूढ़ा मनुष्य था। अतीत का इतिहास वृद्ध मनुष्यता का इतिहास है, 'ओल्ड माइंड का'। बूढ़े मन का इतिहास है, क्योंकि वह भय पर खड़ा हुआ है।

धर्म... भय पर खड़े हुए मंदिर हैं, हाथ जोड़े हुए भयभीत लोग! यह फासला, भय, डर, कि भगवान मिटा देगा! वह तो तैयार बैठा हुआ है। भगवान तैयार बैठा हुआ है आदमियों को सताने को, डराने को। आदमी जरा ही इंकार करेगा और भगवान बर्बाद कर देगा, और नरकों में सड़ा देगा।

नरक के कैसे—कैसे भय पैदा हमने किये हैं भगवान के साथ? कैसे अदभुत भय पैदा किये हैं? क्रिमिनल माइंड भी, अपराधी से अपराधी आदमी भी ऐसी योजना नहीं बना सकता है जैसी, जिन्हें हम ऋषि—मुनि कहते हैं, उन्होंने नरक की योजना बनायी है! नरक की योजना देखने लायक है। और ध्यान रहे, नरक की योजना कोई बहुत सौंदर्य को, सत्य को, प्रेम को, परमात्मा को खयाल में रखने वाला बना नहीं सकता है। यह असंभव है कि अगर वास्तव में परमात्मा हो तो नरक भी हो सके। ये दोनों बातें एक साथ संभव नहीं हैं। या तो परमात्मा नहीं होगा, तो नरक हो सकता है। और अगर नरक है, तो फिर परमात्मा को विदा करो। वह नहीं हो सकता है। ये दोनों चीजें एक साथ संभव नहीं हैं। उनका को—इग्जिसूटेंस नहीं हो सकता है। उनका सह—अस्तित्व संभव नहीं है।

नरक की क्या—क्या योजना है, सोचा है आपने कभी? कितना डराया होगा आदमी को? और आदमी इतना कम जानता था कि डराया जा सकता है। इतना कम जानता था कि घबड़ाया जा सकता है। आदमी एक अर्थ में अबोध था। वह बहुत भयभीत किया जा सकता था।

हर मुल्क को नरक की अलग—अलग कल्पना करनी पड़ी। क्यों? क्योंकि हर मुल्क में भय का अलग—अलग उपाय खोजा गया है। स्वाभाविक था। कुछ चीजें, जिनसे हम भयभीत हैं, दूसरे लोग भयभीत नहीं हैं। जैसे तिब्बत में ठंड भय पैदा करती है, हिन्दुस्तान में पैदा नहीं करती। ठंड अच्छी लगती है। तो हमारे नरक में ठंड का बिलकुल इन्तजाम नहीं है। हमारे नरक में आग जल रही है और धूप और गर्मी हमें परेशान करती है, भयभीत करती है। और हमने नरक में आग के अखंड क्यूं जला रखे हैं! यज्ञ ही यज्ञ हो रहे है नरक में! आग ही आग जल

रही है और अनंत काल से उसमें घी डाला जा रहा होगा! भड़कती ही चली जा रही है। और उस आग का कभी बुझना नहीं होगा। वह इटर्नल फायर है, और वह कभी बुझती नहीं है, अनंत आग है। और उसमें पापियों को डाला जा रहा है, सड़ाया जा रहा है। मजा एक है कि कोई मरेगा नहीं उस आग में डालने से, क्योंकि मर गये तो दुख खल हो जायेगा। इंतजाम यह है, आग में डाले जायेंगे। जलेंगे सडेंगे, गलेंगे, मरेंगे भर नहीं। जिंदा तो रहना ही पड़ेगा।

नरक में कोई मरता नहीं है, खयाल रखना!

क्योंकि मरना भी एक राहत हो सकती है, किसी स्थिति में। मरना भी कंफर्टेबल हो सकता है किसी हालात में। किसी क्षण में आदमी चाह सकता है, मर जाऊं!

वहां कोई आत्महत्या नहीं कर सकता है। पहाड़ से गिरो, गर्दन टूट जायेगी, आप बच जाओगे। फांसी लगाओ, गला कट जायेगा, आप बच जाओगे। छुरा मारो, छुरा घुप जायेगा, आप बच जाओगे। जहर पियो, फोड़े—फुंसिया पैदा हो जायेंगी, जहर उगाने लगेगा शरीर, लेकिन आप नहीं मरोगे। नरक में आत्महत्या का उपाय नहीं है! आग जल रही है, जिसे हम जला रहे हैं।

तिब्बत में... और तिब्बत के नरक में आग नहीं जलती, क्योंकि तिब्बत में अण बड़ी सुखद है। तो तिब्बत में आग की जगह शाश्वत बर्फ जमा हुआ है, जो कभी नहीं पिघलता है! वह बर्फ में दबाये जायेंगे, तिब्बत के पापी। वह बर्फ में दबाया जायेगा। तिब्बत के स्वर्ग में आग है। सूरज चमकता है तेज धूप है, बर्फ बिलकुल नहीं जमती। हिन्दुस्तान के स्वर्ग बिलकुल एयरक्कीशंड है, वातानुकूलित है। शीतल मंद पवन हमेशा बहती रहती है। कभी ऐसा नहीं होता कि ठंडक में कमी आती है। ठंडक ही बनी रहती है। सूरज भी निकलता है तो किरणें तपाने वाली नहीं है, बड़ी शीतल हैं।

दुख, भय, आदमी को नरक का, पापों का, पापों के कर्मों का.. लंबे—लंबे भय, हमने मनुष्य के मानस में निर्धारित किये हैं! और किसलिए? यह आदमी धार्मिक है? यह आदमी धार्मिक नहीं हुआ, सिर्फ बूढ़ा हो गया है। सिर्फ वृद्ध हो गया है। इतना भयभीत हो गया है कि वृद्ध हो गया है। भय बड़ी तेजी से वार्धक्य लाता है।

यहां तक घटनाएं संग्रहीत की गयी हैं कि एक आदमी को कोई तीन सौ वर्ष पहले हालैंड में फांसी की सजा दी गयी। वह आदमी जवान था। जिस दिन उसे फांसी की सजा सुनायी गयी, सांझ वह जाकर अपनी कोठरी में सोया। सुबह उठकर पहरेदार उसे पहचान न सके कि यह आदमी वही है। उसके सारे बाल सफेद हो गये हैं! उसके चेहरे पर झुर्रियां पड़ गयी हैं, वह आदमी बूढ़ा हो गया है!

ऐसी कुछ घटनाएं इतिहास में संग्रहीत हैं, जब आदमी क्षण भर में बूढ़ा हो गया हो। इतनी तेजी से! भयभीत अगर हो गया होगा, तो हो सकता है। जो रस स्रोत तीस वर्ष में सूखते, वह भय के क्षण में, एक ही क्षण में सूख गये हों। कठिनाई क्या है? निश्चित, बाल सफेद होंगे ही। तीस—चालीस वर्ष, पचास वर्ष समय लगता है उनके बाल सफेद होने में। यह हो सकता है कि इतनी तीव्रता से भय ने पकड़ा हो कि भीतर के जिन रस स्रोतों से बालों में कालिख आती हो, वे एक ही भय के धक्के में सूख गये हों। बाल सफेद हो गये हों।

आदमी एक क्षण में बूढ़ा हो सकता है, भय से।

और अगर दस हजार साल की पूरी संस्कृति भय पर ही खड़ी है। सिवाय भय के कोई आधार ही न हो, तो अगर आदमी का मन बूढ़ा हो जाये, तो आश्चर्य नहीं है।

जिसे बूढ़ा होना हो, उसे भय में दीक्षा लेनी चाहिए। उसे भय सीखना चाहिए, उसे भयभीत होना चाहिए।

यूरोप में ईसाइयों के दो संप्रदाय थे—एक तो अब भी जिन्दा है, क्वेकर। क्वेकर का मतलब होता है, कैप जाना। जमीन कंप जाती है। क्वेकर का मतलब होता है, कंप जाना।

क्वेकर संप्रदाय का जन्म ऐसे लोगों से हुआ है, जिन्होंने लोगों को इतना भयभीत कर दिया—कि उनकी सभा में लोग कंपने लगते हैं, गिर जाते हैं और बेहोश हो जाते हैं। इसलिए इस संप्रदाय का नाम क्वेकर हो गया। एक और संप्रदाय था, जिसका नाम था शेकर। वह भी कंपा देता था। जान बकेले जब बोलता था तो स्त्रियां बेहोश हो जाती थीं, आदमी गिर पड़ते थे, लोग कांपने लगते थे, लोगों के नथुने फूल जाते थे। क्या बोलता था? नरक के चित्र खींचता था। साफ चित्र। और लोगों के मन में चित्र बिठा देता था। और डर बिठा देता था। वे सारे लोग हाथ जोड़कर कहते थे कि हमें प्रभु ईसा के धर्म में दीक्षित कर दो। डर गये।

इसलिए जितने दुनिया में धर्म नये पैदा होते हैं, वे घबराते हैं कि दुनिया का अंत जल्दी हौने वाला है। बहुत शीघ्र दुनिया का अंत आने वाला है। सब नष्ट हो जायेगा। जो हमें मान लेंगे, वही बच जायेंगे। घबड़ाहट में लोग उन्हें मानने लगते है।

अभी भी इस मुल्क में कुछ संप्रदाय चलते हैं, जो लोगों को घबराते है कि जल्दी सब अंत होने वाला है। सब खतम हो जायेगा। और जो हमारे साथ होंगे, वे बच जायेंगे, शेष सब नरक में पड़ जायेंगे।

सब धर्म यही कहते हैं कि जो हमारे साथ होंगे, वे बच जायेंगे, बाकी सब नरक में पड़ जायेंगे। अगर उन सब की बातें सही हैं तो एक भी आदमी के बचने का उपाय नहीं दिखता है। जीसस को नरक में जाना पड़ेगा, क्योंकि जीसस हिन्दू नहीं हैं, जैन नहीं हैं, बौद्ध नहीं हैं। महावीर को भी नरक में पड़ना पड़ेगा, क्योंकि महावीर ईसाई नहीं हैं, बौद्ध नहीं हैं, हिन्दू नहीं हैं, मुसलमान नहीं हैं। बुद्ध को भी नरक में पडना पड़ेगा, क्योंकि वह हिन्दू नहीं हैं, ईसाई नहीं हैं, जैन नहीं हैं। दूनिया के सब धर्म कहते हैं कि हम सिर्फ बचा लेंगे, बाकी सब डुबा देंगे। उस घबराहट में ठीक से— भय शोषण का उपाय बन गया है।

भयभीत करो, आदमी शोषित हो जाता है।

भयभीत कर दो आदमी को, फिर वह होश में नहीं रह जाता है। फिर वह कुछ भी स्वीकार कर लेता है। डर में वह इनकार नहीं करता। भयभीत आदमी कभी संदेह नहीं करता और जो संदेह नहीं करता है, वह का हो जाता है।

जो आदमी संदेह कर सकता है, वह सदा जवान है।

जो आदमी भयभीत होता है, वह विश्वास कर लेता है, 'बिलीव' कर लेता है, मान लेता है कि जो है, वह ठीक है। क्योंकि इतनी हिम्मत जुटानी कठिन है कि गलत है। बूढ़ा आदमी विश्वासी होता है। युवा सिर्फ निरंतर संदेह करता है—खोजता है, पूछता है, प्रश्न करता है।

यह ध्यान रहे, युवा चित्त से विज्ञान का जन्म होता है और बूढ़े चित्त से विज्ञान का जन्म नहीं होता है।

जिन देशों में जितना भय और जितना वार्धक्य लादा गया है, उन देशों में वितान का जन्म नहीं हो सका, क्योंकि विचार नहीं, सन्देह नहीं, प्रश्न नहीं, जिज्ञासा नहीं!

क्या हम सब भयभीत नहीं हैं? क्या हम सब भयभीत होने के कारण सारी व्यवस्था को बांधे हुए, 'पकड़े हुए नहीं खड़े हैं? क्या हम सब डरे हुए नहीं हैं?

अगर हम डरे हुए हैं तो यह संस्कृति और यह समाज सुंदर नहीं है, जिसने हमें डरा दिया है। संस्कृति और समाज तो तब सुंदर और स्वस्थ होगा, जब हमें भय से मुक्त करे, हमें अभय बनाये। अभय, 'फियरलेसनेस', निर्भय नहीं। निर्भय और अभय में बडा फर्क है। फर्क है, यह समझ लेना जरूरी है।

भयभीत आदमी, भीतर भयभीत है और बाहर से अकड़कर डर इनकार करने लगे, तो वह निर्भय होता है। भय शांत नहीं होता है उसके भीतर। वह बहादुरी दिखायेगा बाहर से, भीतर भय होगा। जिनके हाथ में भी तलवार है, वे कितने भी बहादुर हों, वे भयभीत जरूर रहे होंगे, क्योंकि बिना भय के हाथ में तलवार का कोई भी अर्थ नहीं है। जिनके भी हाथ में तलवार है, चाहे उनकी मूर्तियां चौरस्ते पर खड़ी कर दी गयी हों, और चाहे घरों में चित्र लगाये गये हों, वे घोड़े पर बैठे हुए—तलवारें हाथ में लिए हुए लोग, भयभीत लोग हैं। भीतर भय है। तलवार उनकी सुरक्षा है— भय की।

और ध्यान रहे, जो आदमी निर्भय हो जायेगा, वह दूसरे को भयभीत करने के उपाय शुरू कर देगा। क्योंकि भीतर उसके भय है, वह डरा हुआ है। मैक्यावेलि ने कहा है, डिफेंस का, सुरक्षा का एक सबसे अच्छा उपाय आक्रमण है, 'अटैक' है। प्रतीक्षा मत करो कि दूसरा आक्रमण करेगा, तब हम उत्तर देंगे। आक्रमण कर दो, ताकि, दूसरे को आक्रमण का मौका न रहे।

जितने लोग आक्रामक हैं, एग्रेसिव हैं, सब भीतर से भय से भरे हुए हैं। भयभीत आदमी हमेशा आक्रामण होगा, क्योंकि वह डरता है। इसके पहले कि कोई मुझ पर हमला करे, मैं हमला कर दूं। पहला मौका मुझे मिल जाये। हमला हो जाने के बाद, कहा नहीं जा सकता है, क्या हो? इसलिए भयभीत आदमी हमेशा तलवार लिए हुए है। वह कवच बांधे हुए मिलेगा। कवच बहुत तरह के हो सकते हैं। एक आदमी कह सकता है कि मैं तो भगवान में विश्वास करता हूं। मुझे कोई डर नहीं है। मैं तो भगवान का सहारा मांगता हूं। यह भी कवच बनाया है भगवान का, तलवार बना रहा है भगवान को। भगवान की तलवारें मत डालो। भगवान कोई लोहा नहीं है कि तलवारें ढाली जा सकें और कवच बनाया जा सके।

वह आदमी कहता है, मुझे कोई डर नहीं है। रोज मैं हनुमान चालीसा पढ़ता हूं। वह हनुमान चालीसा को ढाल बना रहा है। और भीतर भयभीत है। और भयभीत आदमी कितना ही हनुमान चालीसा पढ़े.. तो हनुमान फिर पूछते होंगे कि कई दिनों से यह पागल क्या कर रहा है? भयभीत आदमी कितनी ही कवच उपलब्ध कर लें, मृत नहीं मिटता है। निर्भय भी भय करने लगेगा और दिखाने की कोशिश करेगा कि मैं किसी से भयभीत नहीं हूं। जो भी आदमी दिखाने की कोशिश करे कि मैं किसी से भयभीत नहीं हूं जान लेना कि दिखाने की कोशिश में भीतर भय उपस्थित है। अभय बिलकुल और बात है।

अभय का मतलब है, भय का विसर्जित हो जाना।

अभय का मतलब, भय का विसर्जन। निर्भय नहीं हो जाना है। अभय का मतलब है, भय का विसर्जित हो जाना। सिर्फ अभय को जो उपलब्ध हुआ हो, वही व्यक्ति अहिंसक हो सकता है। निर्भय व्यक्ति, अहिंसक नहीं हो सकता। भीतर भय काम करता ही रहेगा। और भय सदा

हिंसा की मांग करता रहेगा। भय सदा सुरक्षा चाहेगा। सुरक्षा के लिए हिंसा का आयोजन करना पड़ेगा।

आज तक का पूरा समाज हमारा हिंसक समाज रहा है।

अच्छे लोग भी हिंसक रहे हैं, बुरे लोग भी हिंसक रहे हैं।

इस धर्म के मानने वाले भी हिंसक हैं, उस धर्म के मानने वाले भी हिंसक हैं। इस देश के, उस देश के; सारी पृथ्वी हिंसक रही है।

सारी पृथ्वी का पूरा इतिहास हिंसा और युद्धों का इतिहास है।

नाम हम कुछ भी देते हों, नाम गौण है। जैसे कोई आदमी अपने कोट को खूंटी पर टांग दे। खूंटी गौण है, असली सवाल कोट है। यह खूंटी न मिलेगी, दूसरी खूंटी पर टागेगा। दूसरी न मिलेगी, तीसरी खूंटी पर टांगेगा। खूंटी से कोई मतलब नहीं है।

हजार खूंटियों पर आदमी अपनी हिंसा टांगता रहा है। धर्म की खूंटी पर भी हिंसा टांग देता है, आश्चर्य की बात है। हिन्दू—मुसलमान लड़ पड़ते हैं, हिंसा हो जाती है। धर्म की खूंटी पर युद्ध टांगता है। धर्म की खूंटी पर युद्ध टैग सकता है। भाषा की खूंटी पर युद्ध याता रहता है। राष्ट्रों के चुनाव पर युद्ध टैग जायेगा।

कोई भी बहाना चाहिए आदमी को लड़ने का।

आदमी को लड़ने का बहाना चाहिए, क्योंकि आदमी भय से भरा है।

और जब तक आदमी भय से भरा है, तब तक वह लड़ने से मुक्त नहीं हो सकता। लड़ना ही पड़ेगा। लड़ने से वह अपनी हिम्मत बढ़ाता है।

कभी देखा है, अंधेरी गली में कोई जाता हो तो जोर से गीत गाने लगता है! समझ मत रखना कि कोई गीत गा रहा है अन्दर। सिर्फ गीत गाकर भुला रहा है अपने भय को। सीटी बजाने लगाता है आदमी अंधेरे में! ऐसा लगता है कि सीटी से बहुत प्रेम है। सीटी बजाकर भुला रहा है, भीतर के भय को। हजार उपाय हम उपयोग करते हैं भीतर के भय को भुलाने के, लेकिन भीतर का भय मिटता नहीं।

मैंने सुना है, चीन में एक बहुत बड़ा फकीर था। उसकी बड़ी ख्याति थी। दूर—दूर तक ख्याति थी कि वह अभय को उपलब्ध हो गया है। 'फियरलेसनेस' को उपलब्ध हो गया है। वह भयभीत नहीं रहा है। यह सबसे बड़ी उपलब्धि है। क्योंकि जो आदमी अभय को उपलब्ध हो जायेगा वह ताजा, जवान चित्त पा लेता है। और ताजा, जवान चित्त फौरन परमात्मा को जान लेता है, सत्य को जान लेता है।

सत्य को जानने के लिए चाहिए ताजगी, 'फ्रेशनेस', जैसे सुबह के फूल में होती है, जैसे सुबह की पहली किरण में होती है।

और बूढ़े चित्त में—सिर्फ सड़ गये, गिर गये फूलों की दुर्गंध होती है और विदा हो गयी किरणों के पीछे का अंधेरा होता है। ताजा चित्त चाहिए।

तो खबर मिली, दूर—दूर तक खबर फैल गयी कि फकीर अभय को उपलब्ध हो गया है। एक युवक संन्यासी उस फकीर की खोज में गया जंगल में—घने जंगल में, जहां बहुत भय था, वह फकीर वहां रहता था। जहां शेर दहाड़ करते थे, जहां पागल हाथी वृक्षों को उखाड़ देते थे, उनके ही बीच, चट्टानों पर ही, वह फकीर पड़ा रहता था। और रात जहां अजगर रेंगते थे, वहां वह सोया रहता था निश्चित। युवक संन्यासी उसके पास गया। उसी चट्टान के पास बैठ गया। उससे बात करने लगा, तभी एक पागल हाथी दौड़ता हुआ निकला पास से। उसकी चोटों से पत्थर हिल गये। वृक्ष नीचे गिर गये। वह युवक कंपने लगा खड़े होकर। उस बूढ़े संन्यासी के पीछे छिप गया, उसके हाथ—पैर कंप रहे हैं।

वह बूढ़ा संन्यासी खूब हंसने लगा और उसने कहा, तुम अभी डरते हो? तो संन्यासी कैसे हुए? क्योंकि जो डरता है, उसका संन्यास से क्या संबंध? हालांकि अधिक संन्यासी डरकर ही संन्यासी हो जाते हैं। पत्नी तक से डरकर आदमी संन्यासी हो जाते हैं। और डर की बात दूर है—बड़े डर तो दूर है, बड़े—छोटे डरो से डरकर संन्यासी हो जाता है।

उस बूढ़े संन्यासी ने कहा, तुम डरते हो? संन्यासी हो तुम? कैसे संन्यासी हो? वह युवक कैप रहा है। उसने कहा, मुझे बहुत डर लग गया। सच में, बहुत डर लग गया। अभी संन्यास वगैरह का कुछ खयाल नहीं आता। थोड़ा पानी मिल सकेगा, मेरे तो ओंठ सूख गये,बोलना मुश्किल है।

बूढ़ा उठा, वृक्ष के नीचे, जहां उसका पानी रखा था, पानी लेकर गया। जब तक बूढ़ा लौटा, उस युवक संन्यासी ने एक पत्थर उठाकर उस चट्टान पर जिस पर बूढ़ा बैठा था, लेटता था, बुद्ध का नाम लिख दिया—नमो बुद्धा:। बूढ़ा लौटा, चट्टान पर पैर रखने को था, नीचे दिखायी पड़ा नमो बुद्धा:। पैर कंप गया, चट्टान से नीचे उतर गया!

वह युवक खूब हंसने लगा। उसने कहा, डरते आप भी हैं। डर में कोई फर्क नहीं है। और मैं तो एक हा से डरा, जो बहुत वास्तविक था। और एक लकीर से मैंने लिख दिया, नमो बुद्धाः, तो पैर रखने में डर लगता कि भगवान के नाम पर पैर न पड़ जाये!

किसका डर ज्यादा है? वह युवा पूछने लगा। क्योंकि मैं खोजने आया था अभय। मैं पाता हूं आप " निर्भय हैं, अभय नहीं। निर्भय हैं सिर्फ। भय को मजबूत कर लिया है भीतर। चारों तरफ घेरा बना लिया है अभय का। सिंह नहीं डराता, पागल हाथी नहीं डराता, अजगर निकल जाते हैं; सख्त हैं बहुत आप। लेकिन जिसके आधार पर सख्ती होगी, वह आपका भय बना हुआ है। भगवान के आधार पर सख्त हो गये है। भगवान? सुरक्षा बना लिया है। तो भगवान के खड़िया से लिखे नाम पर पैर रखने में डर लगता है!

उस युवक ने कहा, डरते आप भी हैं। डर में कोई फर्क नहीं पड़ा। और ध्यान रहे, हाथी से डर जाना, पा से—बुद्धिमत्ता भी हो सकती है। जरूरी नहीं कि डर हो। बुद्धिमानी ही हो सकती है। लेकिन भगवान के नाम पर पैर रखने से डर जाना तो बुद्धिमानी नहीं कही जा सकती है। पहला डर, बहुत स्वाभाविक हो सकता है। दूसरा डर, बहुत साइकोलॉजिकल, बहुत मानसिक और बहुत भीतरी है। हम सब डरे हुए हैं। बहुत भीतरी डर है, सब तरफ से मन को पकड़े हुए हैं। और हमारे भीतरी डरो का आधार वही होगा, जिसके आधार पर हमने दूसरे डरो को बाहर कर दिया है।

हम गाते हैं न कि निर्बल के बल राम! गा रहे हैं सुबह से बैठकर कि हे भगवान, निर्बल के बल तुम्हीं हो!

किसी निर्बल का कोई बल राम नहीं है। जिसकी निर्बलता गयी, वह राम हो जाता है।

निर्बलता गयी कि राम और श्याम में फासला ही नहीं रह जाता। निर्बलता ही फासला है, वही डिस्टेंस है। निर्बल के बल राम नहीं होते। निर्बलता राम होती ही नहीं। निर्बलता सिर्फ राम की कल्पना है। और निर्बलता को बचाने के लिए ढाल है। और सारी प्रार्थना, पूजा, भय को छिपाने का उपाय है। 'सिक्योरिटी मेजरमेंट' है, और कुछ भी नहीं है। इंतजाम है सुरक्षा का।

कोई बैंक में इंतजाम करता है रुपये डालकर, कोई राम—राम—राम जपकर इंतजाम करता है भगवान की पुकार करके। सब इंतजाम है।

लेकिन इंतजाम से भय कभी नहीं मिटता। ज्यादा से ज्यादा निर्भय हो सकते हैं आप, लेकिन भय कभी नही मिटता। निर्भय से कोई अंतर नहीं पड़ता, भय मौजूद रह जाता है। भय मौजूद ही रहता है, भीतर सरकता चला जाता है।

जिस व्यक्ति के भीतर भय की पर्त चलती रहती है, वह व्यक्ति कभी भी युवा चित्त का नहीं हो सकता। उसकी सारी आत्मा बूढ़ी हमें जाती है। फियर जो है, वह क्रिपलिग है, वह पंगु कर देता है, सब हाथ—पैर तोड़ डालता है, सब अपंग कर देता है।

और हम सब भयभीत हैं—क्या करें? अभय कैसे हों? फियरलेसनेस कैसे आये?

निर्भयता तो हम सब जानते हैं, आ सकती है। दंड—बैठक लगाने से भी एक तरह की निर्भयता आती है, क्योंकि आदमी जंगली जानवर की तरह हो जाता है। एक तरह की निर्भयता आती है। लोग ऊब जाते हैं दंड बैठक लगाने से। एक तरह की निर्भयता आ जाती है। वह निर्भयता नहीं है अभय। तलवार रख ले कोई। खुद के हाथ में न रखकर, दूसरे के हाथों में रख दे।

पद पर पहुंच जाये कोई, तो एक तरह की निर्भयता आ जाती है। दूनिया भर के सब भयभीत लोग पदों की खोज करते हैं। पद एक सुरक्षा देता है। अगर मैं राष्ट्रपति हो जाऊं तो जितना सुरक्षित रहूंगा, बिना राष्ट्रपति हुए नहीं रह सकता। राष्ट्रपति के लिए, जितने भयभीत लोग हैं, सब दौड़ करते रहते हैं। डर गये हैं। भय है अकेले होने का। सुरक्षा चाहिए, इंतजाम चाहिए। जिनको हम बहुत बड़े—बड़े पदों पर देखते हैं, यह मत सोचना कि यह किसी निर्भयता के बल पर वहां पहुंच जाते हैं। वे निर्भयता के अभाव में ही पहुंचते हैं, भीतर भय है।

हिटलर के संबंध में मैंने सुना है कि हिटलर अपने कंधे पर हाथ किसी को भी नहीं छुआ सकता है। इसीलिए शादी भी नहीं की, कम से कम पत्नी को तो छुआना ही पड़ेगा। शादी से डरता रहा कि शादी की, तो पत्नी तो कम से कम कमरे में सोयेगी, लेकिन भरोसा क्या है कि पत्नी रात में गर्दन न दबा दे। हिटलर दिखता होगा, बहुत बहादुर आदमी।

ये बहादुर आदमी सब दिखते हैं। यह सब बहादुरी बिलकुल ऊपरी है, भीतर बहुत डरे हुए आदमी हैं।

हिटलर किसी से ज्यादा दोस्ती नहीं करता था, क्योंकि दोस्त के कारण जो सुरक्षा है, जो व्यवस्था है, वह टूट जाती है। दोस्तों के पास बीच के फासले टूट जाते हैं। हिटलर के कंधे पर कोई हाथ नहीं रख सकता था। हिमलर या गोयबल्स भी नहीं। कंधे पर हाथ कोई भी नहीं रख सकता है। एक फासला चाहिए, एक दूरी चाहिए। कंधे पर हाथ रखने वाला आदमी खतरनाक हो सकता है। गर्दन पास ही है, कंधे से बहुत दूर नहीं है।

एक औरत हिटलर को बहुत प्रेम करती रही। लेकिन भयभीत लोग कहीं प्रेम कर सकते हैं? हिटलर उसे टालता रहा, टालता रहा, टालता रहा। आप जानकर हैरान होंगे, मरने के दो दिन

पहले, जब मौत पकी हो गयी, जब बर्लिन पर बम गिरने लगे, तो हिटलर जिस तलघर में छिपा हुआ था, उसके सामने दुश्मन की गोलियां गिरने लगीं और दुश्मन के पैरों की आवाज बाहर सुनायी देने लगी, द्वार पर युद्ध होने लगा, और जब हिटलर को पका हो गया कि मौत निश्चित है, अब मरने से बचने का कोई उपाय नहीं है, तो उसने पहला काम यह किया है कि एक मित्र को भेजा और कहा कि जाओ आधी रात उस औरत को ले आओ। कहीं कोई पादरी सोया—जगा मिल जाये, उसे उठा लाओ। शादी कर लूं। मित्रों ने कहा, यह कोई समय है शादी करने का? हिटलर ने कहा, अब कोई भय नहीं है, अब कोई भी मेरे निकट हो सकता है, अब मौत बहुत निकट है। अब मौत ही करीब आ गयी है, तब किसी को भी निकट लिया जा सकता है।

दो घंटे पहले हिटलर ने शादी की तलघर में! सिर्फ मरने के दो घंटे पहले!

तो पुरोहित और सेक्रेटरी को बुलाया था। उनकी समझ के बाहर हो गया कि यह किसलिए शादी हो रही है?

इसका प्रयोजन क्या है? हिटलर होश में नहीं है। पुरोहित ने किसी तरह शादी करवा दी है। और दो घंटे? उन्होंने जहर खाकर सुहागरात मना ली है और गोली मार ली है—दोनो ने! यह आदमी मरते वक्त तक.. भी नहीं कर सका, क्योंकि दूसरे आदमी का साथ रहना, पास लेना खतरनाक हो सकता है।

दुनिया के जिन बड़े बहादुरों की कहानियां हम इतिहास में पढ़ते है, बडी झूठी हैं। अगर दुनिया के बहादुरों भीतरी मन में उतरा जा सके तो वहा भयभीत आदमी मिलेगा। चाहे नादिर हो, चाहे चंगेज हो, चाहे तैमूर हो, वहां भीतर भयभीत आदमी मिलेगा।

नादिर लौटता था आधी दूनिया जीतकर, और ठहरा है एक रेगिस्तान में। रात का वक्त है। रात को सो सकता था। कैसे सोता? डर सदा भीतर था। तंबू में सोया। चोर घुस गये है तंबू में। नादिर को मारने नही हैं। कुछ संपत्ति मिल जाये, लेने को घुस गये हैं। नादिर घबड़ाकर बाहर निकला है। भागा है डरकर, तंबूकी खूंटी में पैर फंसकर गिर पड़ा है और मर गया है।

वे जो बड़े पदों की खोज में, बड़े धन की खोज में, बड़े यश की खोज मे—लोग लगे है, वे सिर्फ सुरक्षा रहे हैं। भीतर एक भय है। इतंजाम कर लेना चाहते हैं। भीतर एक दीवाल बना लेना चाहते हैं, कोई डर नहीं है कल बीमारी आये, गरीबी आये, भिखमंगी आये, मृत्यु आये कोई डर नहीं है। सब इतंजाम किये लेते हैं। और लोग ऐसा इंतजाम करते हैं, कुछ लोग भीतरी इंतजाम करते हैं!

रोज भगवान की प्रार्थना कर रहे है—कि कुछ भी हो जाये। इतने दिन तक जो चिल्लाये है, वह वक्त पर पड़ेगा। इतने नारियल चढ़ाये, इतनी रिश्वत दी, वक्त पर धोखा दे गये हो?

भय में आदमी भगवान को भी रिश्वत देता रहा है!

और जिन देशो मे भगवान को इतनी रिश्वत दी गयी हो, उन देशों में मिनिस्टर रूपी भगवानों को रिश्वत दी लगी हो तो कोई मुश्किल है, कोई हैरानी है? और जब इतना बड़ा भगवान रिश्वत ले लेता हो तो छोटे—' मिनिस्टर ले लेते हों तो नाराजगी क्या है? भय है, भय की सुरक्षा के लिए हम सब उपाय कर रहे है। क्या ऐसे कोई आदमी अभय हो सकता है? क भी नहीं। अभय होने का क्या रास्ता है? सुरक्षा की व्यवस्था अभय होने का रास्ता नहीं है।

असुरक्षा की स्वीकृति अभय होने का रास्ता है, 'ए टोटल एक्सेऐंस आफ इनसिक्योरिटी, जीवन असुरक्षित' इसकी परिपूर्ण स्वीकृति मनुष्य को अभय कर जाती है।

मृत्यु है, उससे बचने का कोई उपाय नहीं है, उससे भागने का कोई उपाय नहीं है वह है। वह जीवन का एक तथ्य है। वह जीवन का ही एक हिस्सा है। वह जन्म के साथ ही जुड़ा है।

जैसे एक डंडे में एक ही छोर नहीं होता, दूसरा छोर भी होता है। और वह आदमी पागल है, जो एक छोर स्वीकारे और दूसरे को इनकार कर लेता है। सिक्के में एक ही पहलू नहीं होता है, दूसरा भी होता है। और वह पागल है, जो एक को खीसे में रखना चाहे और दूसरे से छुटकारा पाना चाहे। यह कैसे हो सकेगा?

जन्म के साथ मृत्यु का पहलू जुडा है। मृत्यु है, बीमारी है,असुरक्षा है; कुछ भी निश्चित नहीं है, सब अनसर्टेन है।

जिंदगी ही एक अनसर्टेनटी है, जिंदगी ही एक अनिश्चित है।

सिर्फ मौत एक निश्चित है। मरे हुए को कोई डर नहीं रह जाता। जिंदा में सब असुरक्षा है। कदम—कदम पर असुरक्षा है।

जो क्षण भर पहले मित्र था, क्षण भर बाद मित्र होगा, यह तय नहीं है। इसे जानना ही होगा, मानना ही होगा। क्षण भर पहले जो मित्र था, वह क्षण भर बाद मित्र होगा, यह तय नहीं है। क्षण भर पहले जो प्रेम कर रहा था, वह क्षण भर बाद फिर प्रेम करेगा, यह निश्चित नहीं है। क्षण भर पहले जो व्यवस्था थी, वह क्षण भर बाद नहीं खो जायेगी, यह निश्चित नहीं है। सब खो सकता है, सब जा सकता है, सब विदा हो सकता है। जो पत्ता अभी हरा है, वह थोड़ी देर

बाद सूखेगा और गिरेगा। जो नदी वर्षा में भरी रहती है, थोड़ी देर बाद सूखेगी और रेत ही रह जायेगी।

जीवन जैसा है उसे जान लेना, और जीवन में जो अनिश्चित है, उसका परिपूर्ण बोध और स्वीकृति मनुष्य को अभय कर देती है। फिर कोई भय नहीं रह जाता।

मैं भावनगर से आया। एक चित्रकार को उसके मां—बाप मेरे पास ले आए। योग्य, प्रतिभाशाली चित्रकार है, लेकिन एक अजीब भय से सारी प्रतिभा कुंठित हो गयी है। एक भय पकड़ गया है, जो जान लिये ले रहा है। अमरीका भी गया था वह, वहां भी चिकित्सा चली। मनोवैज्ञानिकों ने मनोविश्लेषण किये, साइकोएनलिसिस की। कोई फल नहीं हुआ सब समझाया जा चुका है, कोई फल नहीं हुआ। मेरे पास लाये हैं,कहा कि हम मुश्किल में पड़ गये हैं। कोई फल होता नहीं है। सब समझा चुके हैं, सब हो चुका है। इसे क्या हो गया है, यह एकदम भयभीत है।

मैंने पूछा, किस बात से भयभीत है? तो उन्होंने कहा कि रास्ते पर कोई लंगड़ा आदमी दिख जाये, तो यह इसको भय हो जाता है कि कहीं मैं लंगड़ा न हो जाऊं। अब बड़ी मुश्किल है। अंधा आदमी मिल जाये, तो घर आकर रोने लगता है कि कहीं मैं अंधा न हो जाऊं। हम समझाते हैं कि तू अंधा क्यों होगा, तू बिलकुल स्वस्थ है, तुझे कोई बीमारी नहीं है। कोई आदमी मरता है रास्ते पर, बस यह बैठ जाता है। यह कहता है कहीं मैं मर न जाऊं। हम समझाते हैं, समझाते—समझाते हार गये। डाक्टरों ने समझाया, चिकित्सकों ने समझाया, इसकी समझ में नहीं पड़ता है।

मैंने कहा, तुम समझाते ही गलत हो। वह जो कहता है, ठीक ही कहता है। गलत कहां कहता है? जो आदमी आज अंधा है, कल उसके पास भी आंख थी। और जो आदमी आज लंगड़ा है, हो सकता है कि उसके पास भी पैर हों। और आज उसके पास पैर हैं, कल वह लंगड़ा हो सकता है। और आज जिसके पास आंख है, कल वह अंधा हो सकता है। इसमें यह युवक गलत नहीं कह रहा है। गलत तुम समझा रहे हो। और तुम्हारे समझाने से इसका भय बढ़ता जा रहा है। तुम कितना ही समझाओ कि तू अंधा नहीं हो सकता है। गारंटी कराओ। कौन कह सकता है कि मैं अंधा नहीं हो सकता। सारी दूनिया कहे तो भी निश्चित नहीं है कि मैं अंधा नहीं हो सकता। अंधा मैं हो सकता हूं क्योंकि आंखें अंधी हो सकती हैं। मेरी आंखों ने कोई ठेका लिया है कि अंधी नहीं हों! पैर लंगड़े हुए हैं। मेरा पैर लंगड़ा हो सकता है। आदमी पागल हुए हैं। मैं पागल हो सकता हूं। जो किसी आदमी के साथ कभी भी घटा है—वह मेरे साथ भी घट सकता हूएए, क्योंकि सारी संभावना सदा है।

मैंने कहा, इस युवक को तुम गलत समझा रहे हो। तुम्हारे गलत समझाने से —यह कितनी ही कोशिश करे कि मैं अंधा नहीं हो सकता, लेकिन इसे दिखायी पड़ता है कि अंधे होने की संभावना—तुम कितना ही कहो कि नहीं हो सकता है—मिटती नहीं।

उस युवक ने कहा, यही मेरी तकलीफ है। यह जितना समझाते हैं, उतना मैं भयभीत हुए चला जा रहा हूं। मैंने उससे कहा कि यह बिलकुल ही गलत समझाते हैं। मैं तुमसे कहता हूं तुम अंधे हो सकते हो, तुम लंगड़े हो सकते हो, तुम कल सुबह मर सकते हो, तुम्हारी पत्नी तुम्हें कल छोड़ सकती है, मां तुम्हारी दुश्मन हो सकती है, मकान गिर सकता है, गांव नष्ट हो सकता है, सब हो सकता है। इसमें कुछ इनकार करने जैसा जरा भी नहीं है। इसे स्वीकार करो। मैंने कहा, तुम जाओ, इसे स्वीकार करो। सुबह मेरे पास आना।

यह युवक गया है—तभी मैंने जाना है कि वह कुछ और ही होकर जा रहा है। अब कोई लड़ाई नहीं है। जो हो सकता है, और जिससे बचाव का कोई उपाय नहीं है, और जिसके बचाव का कोई अर्थ नहीं है और जिसके लड़ने की मानसिक तैयारी बेमानी है। वह हलका होकर गया है।

वह सुबह आया है और उसने कहा कि तीन साल में मैं पहली दफे सोया हूं। आश्चर्य, कि यह बात स्वीकार कर लेने से हल हो जाती है कि मैं अंधा हो सकता हूं। ठीक है, हो सकता हूं।

मैंने कहा, तुम डरते क्यों हो अंधे होने से? उसने कहा कि डरता इसलिए हूं कि फिर चित्र न बना पाऊंगा। तो मैंने कहा, जब तक अंधे नहीं हो, चित्र बनाओ, व्यर्थ में समय क्यों खोते हो। जब अंधे हो जाओगे, नहीं बना पाओगे, पका है। इसलिए बना लो, जब तक आंख—हाथ है, बना लो। जब आंख विदा हो जाये, तब कुछ और करना।

लेकिन आंख विदा हो सकती है। सारा जीवन ही विदा होगा एक दिन, सब विदा हो सकता है। किसी की सब चीजें इकट्ठी विदा होती हैं, किसी की फुटकर—फुटकर विदा होती हैं, इसमें झंझट क्या है? एक आदमी होलसेल चला जाता है, एक आदमी पार्ट—पार्ट में जाता है, टुकड़े—टुकड़े में जाता है। किसी की आंख चली गयी तो कुछ और, फिर कुछ और गया। कोई आदमी इकट्ठे ही चला गया।

इकट्ठे जाने वाले समझते हैं कि जिनके थोड़े— थोड़े हिस्से जा रहे हैं, वे अभागे हैं। बड़ी मुश्किल बात है। इतना ही क्या कम सौभाग्य है कि सिर्फ आंख गयी है। अभी पैर नहीं गया, अभी पूरा नहीं गया। इतना ही क्या कम सौभाग्य है कि सिर्फ पैर गये हैं, अभी पूरा आदमी नहीं गया है।

बुद्‌ध का एक शिष्य था.. उस युवक से मैंने यह कहानी कही थी, वह मैं आपको अभी कहता हूं। उस युवक से मैंने कहा कि अब तू भय के बाहर हो गया है।

इनसिक्योरिटी को जिसने स्वीकार कर लिया है, वह भय के बाहर हो जाता है, वह अभय हो जाता है।

बुद्‌ध का एक शिष्य है पूर्ण। और बुद्‌ध ने उसकी शिक्षा पूरी कर दी है और उससे कहा है, अब तू जा और खबर पहुंचा लोगों तक। पूर्ण ने कहा, मैं जाना चाहता हूं सूखा नाम के एक इलाके में।

बुद्‌ध ने कहा, वहां मत जाना, वहां के लोग बहुत बुरे हैं। मैंने सुना है, वहां कोई भिक्षु कभी भी गया तो अपमानित होकर लौटा है, भाग आया है डरकर। बड़े दुष्ट लोग है, वहां मत जाना।

उस पूर्ण ने कहा, लेकिन वहां कोई नहीं जायेगा, तो उन दुष्टों का क्या होगा? बड़े भले लोग हैं, सिर्फ गालियां ही देते हैं, अपमानित ही करते हैं, मारते नहीं। मार भी सकते थे, कितने भले लोग हैं, कितने सज्जन हैं?

बुद्‌ध ने कहा, समझा। यह भी हो सकता है कि वे तुझे मारें भी, पीटें भी। पीड़ा भी पहुंचाये, काटे भी छेदें, पत्थर मारें, फिर क्या होगा?

तो पूर्ण ने कहा, यही होगा भगवान, कि कितने भले लोग हैं कि सिर्फ मारते हैं, मार ही नहीं डालते हैं। मार डाल सकते थे।

बुद्‌ध ने कहा, आखिरी सवाल। वे तुझे मार भी डाल सकते हैं, तो मरते क्षण में तुझे क्या होगा?

पूर्ण ने कहा, अन्तिम क्षण में धन्यवाद देते विदा हो जाऊंगा कि कितने अच्छे लोग हैं कि इस जीवन से मुक्ति दी, जिसमें भूल—चूक हो सकती थी।

बुद्‌ध ने कहा, अब तू जा। अब तू अभय हो गया। अब तुझे कोई भय न रहा। तूने जीवन की सारी असुरक्षा सारे भय को स्वीकार कर लिया। तूने निर्भय बनने की कोशिश ही छोड़ दी।

ध्यान रहे, भयभीत आदमी निर्भय बनने की कोशिश करता है। उस कोशिश से भय कभी नहीं मिटता है। उसको उपलब्ध होता है—जो भय है, ऐसी जीवन की स्थिति है—इसे जानता है,

स्वीकार कर लेता है। भय के बाहर हो जाता है। और युवा चित्त उसके भीतर पैदा होता है, जो भय के बाहर हो जाता है।

एक सूत्र युवा चित्त के जन्म के लिए, भय के बाहर हो जाने के लिए अभय है।

और दूसरा सूत्र.?? पहला सूत्र है, बूढ़े चित्त का मतलब है 'क्रिपल्ड विद फियर', भय से पुंज।

और दूसरा सूत्र है... बूढ़े चित्त का अर्थ है, 'बर्डन विद नालेज', ज्ञान से बोझिल।

जितना बूढ़ा चित्त होगा उतना ज्ञान से बोझिल होगा। उतने पांडित्य का भारी पत्थर उसके सिर पर होगा। जितना युवा चित्त होगा, उतना ज्ञान से मुक्त होगा।

उसने स्वयं ही जो जाना है, जानते ही उसके बाहर हो जायेगा और आगे बढ़ जायेगा। 'ए कास्टेंट अवेयरनेस आफ नाट नोन'। एक सतत भाव उसके मन में रहेगा, नहीं जानता हूं। कितना ही जान ले, उस जानने को किनारे हुआ, न जानने के भाव को सदा जिंदा रखेगा। वह अतीत में भी क्षमता रखेगा। रोज सब सीख सकेगा, पल सीख सकेगा। कोई ऐसा क्षण नहीं होगा, जिस दिन वह कहेगा कि मैं पहले से ही जानता हूं इसलिए सिखने की अब कोई जरूरत नहीं है। जिस आदमी ने ऐसा कहा, वह बूढ़ा हो गया।

युवा चित्त का अर्थ है : सीखने की अनंत क्षमता।

बूढ़े चित्त का अर्थ है : सीखने की क्षमता का अंत।

और जिसको यह खयाल हो गया, मैंने जान लिया है, उसकी सीखने की क्षमता का अंत हो जाता है।

और हम सब भी जान से बोझिल हो जाते हैं। हम ज्ञान इसीलिए इकट्ठा करते हैं कि बोझिल हो जायें। ज्ञान हम सिर पर लेकर चलते हैं। जान हमारा पंख नहीं बनता है, ज्ञान हमारा पत्थर बन जाता है।

ज्ञान बनना चाहिए पंख। ज्ञान बनता है पत्थर।

और ज्ञान किनका पंख बनता है, जो निरंतर और—और—और जानने के लिए खुले हैं मुक्त हैं, द्वार जिनके बंद नहीं है।

एक गांव में एक फकीर था। उस गांव के राजा को शिकायत की गयी कि वह फकीर लोगों को भ्रष्ट कर रहा है। असल में अच्छे फकीरों ने दूनिया को सदा भ्रष्ट किया ही है। वे करेंगे ही, क्योंकि दुनिया भ्रष्ट है। और इसको बदलने के लिए भ्रष्ट करना पड़ता है। दो भ्रष्टताएं मिलकर सुधार शुरू होता है। दूनिया भ्रष्ट है। इस दुनिया को ऐसा ही स्वीकार कर लेने के लिए कोई संन्यासी, कोई फकीर कभी राजी नहीं हुआ है।

गांव के लोगों ने खबर की, पंडितों ने खबर की कि यह आदमी भ्रष्ट कर रहा है। ऐसी बातें सिखा रहा है, जो किताबों में नहीं हैं। और ऐसी बातें कह रहा है कि लोगों का संदेह जग जाये। और लोगों को ऐसे तर्क दे रहा है कि लोग भ्रमित हो जायें, संदिग्ध हो जायें।

राजा ने फकीर को बुलाया दरबार में, और कहा कि मेरे दरबार के पंडित कहते हैं कि तुम नास्तिक हो। तुम लोगों को भ्रष्ट कर रहे हो। तुम गलत रास्ता दे रहे हो। तुम लोगों में संदेह पैदा कर रहे हो।

उस फकीर ने कहा, मैं तो सिर्फ एक काम कर रहा हूं कि लोगों को युवक बनाने की कोशिश कर रहा हूं। लेकिन अगर तुम्हारे पंडित ऐसा कहते हैं तो मैं तुम्हारे पंडितों से कुछ पूछना चाहूंगा।

राजा के बड़े सात पंडित बैठ गये। उन्होंने सोचा वे तैयार हो गये!

पंडित वैसे भी एवररेडी, हमेशा तैयार रहता है, क्योंकि रेडिमेड उत्तर से पंडित बनता है। पंडित के पास कोई बोध नहीं होता है। जिसके पास बोध हो, वह पंडित बनने को राजी नहीं हो सकता है। पंडित के पास तैयार उत्तर होते हैं।

वे तैयार होकर बैठ गए हैं। उनकी रीढें सीधी हो गयीं—जैसे छोटे बच्चे स्कूल में परीक्षाएं देने को तैयार हो जाते हैं। छोटे बच्चों में, बड़े पंडितों में बहुत फर्क नहीं। परीक्षाओं में फर्क हो सकता है। तैयार हो गया पंडितों का वर्ग। उन्होंनें कहा, पूछो। सोचा की शायद पूछेगा, ब्रह्म क्या है? मोक्ष क्या है? आत्मा क्या है? कठिन सवाल पूछेगा। तो सब उत्तर तैयार थे। उन्होंने मन में दुहरा लिए जल्दी से कि क्या उत्तर देने हैं।

जिस आदमी के पास उत्तर नहीं होता है, उसके पास बहुत उत्तर होते हैं! और जिसके पास उत्तर होता है, उसके पास तैयार कोई उत्तर नहीं होता है! प्रश्न आता है तो उत्तर पैदा होता है। उनके पास प्रश्न पहले से तैयार होते हैं, जिनके पास बोध नहीं होता है! क्योंकि बोध न हो तो प्रश्न तैयार, प्रश्न का उत्तर तैयार होना चाहिए, नहीं तो वक्त पर मुश्किल हो जायेगा।

उन पंडितों ने जल्दी से अपने सारे ज्ञान की खोजबीन कर ली होगी। उसने चार—पांच कागज के टुकड़े उन पंडितों के हाथ में पक्का दिये, एक—एक टुकडा। और कहा कि एक छोटा—सा सवाल पूछता हूं व्हाट इज ब्रेड? रोटी क्या है?

पंडित मुश्किल में पड़ गए, क्यौंकि किसी किताब में नहीं लिखा हुआ है, किसी उपनिषद में नहीं, किसी वेद में नहीं, किसी पुराण में नहीं। व्हाट इज ब्रेड, रोटी क्या है? कहा कि कैसा नासमझ आदमी है! कैसा सरल सवाल पूछता है।

लेकिन वह फकीर समझदार रहा होगा। उसने कहा, आप लिख दें एक—एक कागज पर। और ध्यान रहे एक दूसरे के कागज को मत देखना, क्योंकि पंडित सदा चोर होते हैं। वह सदा दूसरों के उत्तर सीख लेते हैं। आसपास मत देखना। जरा दूर—दूर हटकर बैठ जाओ। अपना—अपना उत्तर लिख दो।

राजा भी बहुत हैरान हुआ। राजा ने कहा, क्या पूछते हो तुम? उसने कहा, इतना उत्तर दे दें तो गनीमत है। पंडितों से ज्यादा आशा नहीं करनी चाहिए। बड़ा सवाल बाद में पूछूंगा, अगर छोटे सवाल का उत्तर आ जाये।

पहले आदमी ने बहुत सोचा, रोटी, यानी क्या? फिर उसने लिखा कि रोटी एक प्रकार का भोजन है। और क्या करता? दूसरे आदमी ने बहुत सोचा रोटी यानी क्या? तो उसने लिखा, रोटी आटा, पानी और आग का जोड़ है। और क्या करता? तीसरे आदमी ने बहुत सोचा, रोटी यानी क्या? उसे उत्तर नहीं मिलता। तो उसने लिखा, रोटी भगवान का एक वरदान है। पांचवें ने लिखा कि रोटी एक रहस्य है, एक पहेली है, क्योंकि रोटी खून कैसे बन जाती है, यह भी पता नहीं। रोटी एक बड़ा रहस्य है, रोटी एक मिस्ट्री है। छठे ने लिखा, रोटी क्या है? यह सवाल ही गलत है। यह सवाल इसलिए गलत है कि इसका उत्तर ही पहले से कहीं लिखा हुआ नहीं है। गलत सवाल पूछता है यह आदमी। सवाल वह पूछने चाहिए, जिनके उत्तर लिखें हो। सातवें आदमी ने कहा कि मैं उत्तर देने से इनकार करता हूं क्योंकि उत्तर तब दिया जा सकता है, जब मुझे पता चल जाये कि पूछने वाले ने किस दृष्टि से पूछा है? तो रोटी यानी क्या? हजार दृष्टिकोण हो सकते हैं, हजार उत्तर हो सकते हैं। समाजदवादी रहा होगा। कहा कि, यह भी हो सकता है, वह भी हो सकता है।

सातों उत्तर लेकर राजा के हाथ में फकीर ने दे दिये और उससे कहा कि ये आपके पंडित हैं। इन्हें यह पता नहीं कि रोटी क्या है? और इनको यह पता है कि नास्तिक क्या है, आस्तिक क्या है! लोग किससे भ्रष्ट होंगे, किससे बनेंगे, यह इनको पता हो सकता है!

राजा ने कहा पंडितों, एकदम दरवाजे के बाहर हो जाओ। पंडित बाहर हो गए। उसने फकीर से पूछा कि तुमने ख. मुश्किल में डाल दिया है।

फकीर ने कहा, जिनकी खोपडी पर भी जान का बोझ है, उन्हें सरल—सा सवाल मुश्किल में डाल सकता है। ज्यादा बोझ, उतनी समझ कम हो जाती है। क्योंकि यह खयाल पैदा हो जाता है बोझ से कि समझ तो है। और समझ ऐसी चीज है कि कास्टेंटली क्रिएट करनी पड़ती है, है नहीं। कोई ऐसी चीज नहीं है कि आपके भीतर छ है समझ। उसे आप रोज पैदा करिये तो वह पैदा होती है, और बंद कर दीजिये तो बंद हो जाती है।

समझ साइकिल चलाने जैसी है। जैसे एक आदमी साइकिल चला रहा है। अब साइकिल चल पडी है। अब वह कहता है, साइकिल तो चल पड़ी है, अब पैडल रोक लें। अब पैडल रोक लें, साइकिल चलेगी? चार—छह—कदम के बाद गिरेगा। हाथ—पैर तोड़ देगा। साइकिल का चलाना निरंतर चलने के ऊपर निर्भर है।

प्रतिभा भी निरंतर गति है। जीनियस कोई 'डैड स्टेटिक एन्टाइटी' नहीं है। प्रतिभा कोई ऐसी चीज नहीं है कि कहीं रखी है भीतर, कि आपके पास कितनी प्रतिभा है, सेर भर और किसी के पास दो सेर! ऐसी कोई चीज नहीं प्रतिभा।

प्रतिभा मूवमेंट है, गति है, निरंतर गति है।

इसलिए निरंतर जो सृजन करता है, उसके भीतर, मस्तिष्क, बुद्धि और प्रतिभा, प्रज्ञा पैदा होती है। जो सृजन बंद कर देता है उसके भीतर जंग लग जाती है और सब खत्म हो जाती है।

रोज चलिए। और चलेगा कौन? जिसको यह खयाल नहीं है कि मैं पहुंच गया। जिसको यह खयाल हो गया कि पहुंच गया, वह चलेगा क्यों? वह विश्राम करेगा, वह लेट जाएगा। जान का बोध पहुंच जाने का खयाल पैदा करवा देता है कि हम पहुंच गये, पा लिया, जान लिया, अब क्या है? रुक गये।

ज्ञान कितना ही आये, और ज्ञान आने की क्षमता निरंतर शेष रहनी चाहिए। वह तभी रह सकती है, जब ज्ञान बोझ न बने। जान को हटाते चलें। रोज सीखें। और रोज जो सीख जायें, राख की तरह झाड़ू दें। और कचरे कि तरह—जैसे सुबह फेंक दिया था घर के बाहर कचरा, ऐसे रोज सांझ, जो जाना, जो सीखा, उसे फेंक दें। ताकि कल आप फिर ताजे सुबह उठें, और फिर जान सकें, फिर सीख सकें, सीखना जारी रहे।

ध्यान रहे, क्या हम सीखते हैं, यह मूल्यवान नहीं है। कितना हम सीखते हैं—उस सीखने की प्रक्रिया से गुजरने वाली आला निरंतर जवान होती चली जाती है।

सुकरात जितना जवानी में रहा होगा मरते वक्त, उससे ज्यादा जवान है। क्योंकि मरते वक्त भी सीखने को तैयार है। मर रहा है, जहर दिया जा रहा है, जहर बाहर बांटा जा रहा है। सारे मित्र रो रहे हैं, और सुकरात उठ—उठकर बाहर जाता है, और जहर घोंटने वाले से पूछता है बड़ी देर लगाते हो! समय तो हो गया, सूरज अब डूबा जाता है। वह जहर घोंटने वाला कहने लगा, पागल हो गये हो सुकरात! मैं तुम्हारी वजह से धीरे— धीरे घोंटता हूं कि तुम थोड़ी देर और जिंदा रह लो। ताकि इतने अच्छे आदमी का पृथ्वी पर और थोड़ी देर रहना हो जाये। तुम पागल हो, तुम खुद ही इतनी जल्दी मचा रहे हो, तुम्हें जल्दी क्या है? उसके मित्र पूछते हैं,इतना जल्दी क्या है? क्यों इतनी मरने की आतुरता है?

सुकरात कहता है, मरने की आतुरता नहीं; जीवन को जाना, मौत भी जानने का बडा मन हो रहा है कि क्या है मौत! क्या है मौत? मरने के क्षण पर खड़ा हुआ आदमी जानना चाहता है कि क्या है मौत! यह आदमी जवान है, इसको मार सकते हो? इसका मारना बहुत मुश्किल है। इसको मौत भी नहीं मार सकती है। यह मौत को भी जान लेगा और पार हो जायेगा।

जो जान लेता है, वह पार हो जाता है। जिसे हम जान लेते हैं, उससे पार हो जाते हैं।

लेकिन हम मरने के पहले ही जानना बंद कर देते हैं। आमतौर से बीस साल के, इक्कीस साल के करीब आदमी की बुद्धि ठप हो जाती है। उसके बाद बुद्धि विकसित नहीं होती, सिर्फ संग्रह बढ़ता चला जाता है—सिर्फ संयत। दस पत्थर की जगह पन्द्रह पत्थर हो जाते हैं, बीस पत्थर हो जाते हैं। दस किताबों की जगह पचास किताबें हो जाती हैं, लेकिन क्षमता जानने की फिर आगे नहीं बढ़ती। बस इक्कीस साल में आदमी बुद्धि के हिसाब से मर जाता है! बूढ़ा हो जाता है।

कुछ लोग और जल्दी मरना चाहते हैं—और जल्दी! और जो जितना जल्दी मर जाता है, समाज उसको आदमी ही आदर देता है। तो जितना देर जिंदा रहेगा, उससे उतनी तकलीफ होती है समाज को। क्योंकि जिंदा आदमी सोचने वाला आदमी, खोजने वाला आदमी नए पहलू देखता है, नये आयाम देखता है, 'डिस्टर्बिंग ' होता है। बहुत—सी जगह चीजों को तोड़ता—मरोड़ता मालूम होता है। हम सब जान के बोझ से दब गये है।

मैंने सुना है, एक आदमी घोड़े पर सवार जा रहा है, एक गांव को। गांव के लोगों ने उसे घेर लिया और कहा कि तुम बहुत अदभुत आदमी हो। वह आदमी अदभुत रहा होगा। वह अपना पेटी बिस्तर सिर पर रखे था और घोड़े के ऊपर बैठा हुआ था। गांव के लोगों ने पूछा, यह

तुम क्या कर रहे हो? घोड़े पर पेटी बिस्तर सा। लो। उसने कहा, घोड़े पर बहुत ज्यादा वजन हो जायेगा,इसलिए मैं अपने सिर पर रखे हुए हूं!

उस आदमी ने सोचा कि घोड़े पर पेटी बिस्तर रखने से बहुत वजन हो जायेगा, कुछ हिस्सा बंटा लें। खुद घोड़े पर बैठे हुए है और पेटी बिस्तर अपने सिर पर रखे हुए है, ताकि अपने पर कुछ वजन पड़े और घोड़े पर वजन कम हो जाये।

ज्ञान को अपने सिर पर मत रखिये। जिंदगी काफी समर्थ है। आप छोड़ दीजिए, आपकी जिंदगी की धारा उसे. संभाल लेगी। उसे सिर पर रखने की जरूरत नहीं। और सिर पर रखने से कोई फायदा नहीं। आप तो छोड़िए। जो भी उसमें एसेंशियल है, जो भी सारभूत है, वह आपकी चेतना का हिस्सा होता चला जायेगा।

उसे सिर पर मत रखिए। किताबों को सिर पर मत रखिए, रेडीमेड उत्तर सिर पर मत रखिए। बंधे हुए उत्तर से बचिये, बंधे हुए ज्ञान से बचिए और भीतर एक युवा चित्त पैदा हो जायेगा। जो व्यक्ति ज्ञान के बोझ से मुक्त हो जाता है, जो व्यक्ति भय से मुक्त हो जाता है, वह व्यक्ति युवा हो जाता है।

और जो व्यक्ति का होने की कोशिश में लगा है, अपने ही हाथों से, क्योंकि ध्यान रहे, मैं कहता हूं कि बुढ़ापा अर्जित है। बुढ़ापा है नहीं। हमारा अचीवमेंट है, हमारी चेष्टा से पाया हुआ फल है।

जवानी स्वाभाविक है, युवा चित्त होना स्वभाव है। वृद्धावस्था हमारा अर्जन है। अगर हम समझ जायें, चित्त से कैसे वृद्ध होता है, तो हम तत्क्षण जवान हो जायेंगे।

बूढ़ा चित्त बोझ से भरा चित्त है, जवान चित्त निर्बोझ है। बोझिल है बूढा चित्त।

जवान चित्त निर्बोझ है, वेटलेस है। जवान चित्त ताजा है। जैसे सुबह अंकुर खिला हो, निकला हो नये बीज से, ऐसा ताजा है। जैसे नया बच्चा पैंदा हुआ हो, जैसे नया फूल खिला हो, जैसी नयी ओस की बूंद गिरी हो, नयी किरण उठी हो, नया तारा जगा हो, वैसा ताजा है।

बूढ़ा चित्त जैसे अंगारा बुझ गया, राख हो गया हो। पत्ता सड़ गया, गिर गया, मर गया। जैसे दुर्गंध इकट्ठी हो गयी हो, सड़ गयी हो लाश। इकट्ठी कर ली हैं लाशें, तो घर में रख दी हैं, तो बास फैल गयी हो। ऐसा है बूढ़ा चित्त।

नया चित्त, ताजा चित्त, 'यंग माइंड' नदी की धारा की तरह तेज, पत्थरों को काटता, जमीन को तोड़ता, सतर की तरफ भागता है। अनंत, अज्ञात की यात्रा पर।

और बूढ़ा चित्त? तालाब की तरह बंद। न कहीं जाता, न कहीं यात्रा करता है; न कोई सागर है आगे, न कोई पथ है, न कोई जमीन काटता, न पत्थर तोड़ता, न पहाड़ पार करता—कहीं जाता ही नहीं। बूढ़ा चित्त बंद, अपने में घूमता, सड़ता, गंदा होता। सूरज की धूप में पानी उड़ता और सूखता और कीचड़ होता चला जाता है। इसलिए जवान चित्त जीवन है, बूढा चित्त मृत्यु है।

और अगर जीवन को जानना हो, परम जीवन को, जिसका नाम परमात्मा है, उस परम जीवन को, तो युवा चित्त चाहिए, यंग माइंड चाहिए।

और हमारे हाथ में है कि हम अपने को बूढ़ा करें या जवान। हमारे हाथ में है कि हम वृद्ध हो जायें, सड़ जायें या युवा हों, ताजे और नये। नये बीज की तरह हमारे भीतर कुछ फूटे या पुराने रिकार्ड की तरह कुछ बार—बार रिपीट होता रहे। हमारे हाथ में है सब।

आदमी के हाथ में है कि वह प्रभु के लिए द्वार बन जाये। तो युवा है भीतर, प्रभु के लिये द्वार बन गया।

और जो बूढ़ा हो गया उसकी दीवाल बंद है, द्वार बन्द है। वह अपने में मरेगा, गलेगा, सड़ेगा। कब्र अतिरिक्त उसका कहीं और पहुंचना नहीं होता।

लेकिन अब तक जो समाज निर्मित हुआ है, वह बूढ़े चित्त को पैदा करने वाला समाज है।

एक नया समाज चाहिए, जो नये चित्त को जन्म देता हो। एक नयी शिक्षा चाहिए, जो बूढे चित्त को पैदा करती हो और नये चित्त को पैदा करती हो। एक नयी हवा, नया प्रशिक्षण, नयी दीक्षा, नया जीवन, एक वातावरण चाहिए, जहां अधिकतम लोग जवान हो सकें। बूढ़ा आदमी अपवाद हो जाये, वृद्ध चित्त अपवाद जाये, जहां युवा चित्त हो।

अभी उलटी बात है। युवा चित्त अपवाद है। कभी कोई बुद्ध, कभी कोई कृष्ण, कभी कोई क्राइस्ट युवा है और परमात्मा की सुगंध और गीत और नृत्य से भर जाता है। हजारों साल तक उसकी सुगंध खबर लाती है। इतनी ताजगी पैदा कर जाता है कि हजारों साल तक उसकी सुगंध आती है। उसके प्राणों से उठी हुई पुकार गूंजती रहती है। कभी ये मनुष्यता के लंबे इतिहास में दो—चार लोग युवा होते हैं। हम सब के ही पैदा होते हैं बूढ़े ही मर जाते हैं!

लेकिन, हमारे अतिरिक्त और कोई जिम्मेदार नहीं है। यह मैने दो बातें निवेदन कीं। इन पर सोचना। मेरी ' मान मत लेना। जो मानता है, वह बूढ़ा होना शुरू हो जाता है। सोचना, गलत हो सकता हो, सब गलत हो सकता है। जो मैंने कहा, एक भी ठीक न हो। सोचना, खोजना, शायद कुछ ठीक हो तो वह आपके जीवन को युवा करने में मित्र बन सकता है।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे अनुग्रहीत हूं और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा प्रणाम करता हूं।

मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

अहमदाबाद,
20 अगस्त 1969, रात्रि

संभोग से समाधि की

संभोग से समाधि की ओर—45

Posted on सितम्बर 19, 2013by sw anand prashad

नारी और क्रांति—प्रवचन तैरहवां

मेरे प्रिय आत्मन

व्यक्तियों में ही, मनुष्य में ही सी और पुरुष नहीं होते हैं—पशुओं में भी पक्षियों में भी। लेकिन एक और भी नयी बात आपसे कहना चाहता हू : देशों में भी सी और पुरुष देश होते हैं।

भारत एक सी देश है और सी देश रहा है। भारत की पूरी मनःस्थित्त स्त्रैण है। ठीक उसके उलटे जर्मनी और अमेरिका जैसे देशों को पुरुष देश कहा जाता है। भारत की पूरी आत्मा नारी है। इसलिए ही भारत कभी? आक्रामक नहीं हो पाया। पूरे इतिहास में आक्रामक नहीं हो पाया!

इसलिए भारत में हिंसा का कोई प्रभाव पैदा नहीं हो सका। भारत की पूरे विचार की कथा अहिंसा की कथा है। भारत के पूरे इतिहास को देखने से एक? आश्र्र्यजनक घटना मालूम पड़ती है। दुनिया का कोई भी देश उस अर्थों में स्त्रैण नहीं है, जिस अर्थों में भारत। यही भारत का दुर्भाग्य भी सिद्ध हुआ। सारा जगत पुरुषों का, सारा जगत पुरुष—वृत्तियों का, सारा आक्रामक, सारा जगत हिंसात्मक भारत अकेला आक्रामक नहीं, हिंसात्मक नहीं!

भारत के पिछले तीन हजार वर्ष का इतिहास दुख, परेशानी और कष्ट ० इतिहास रहा है। लेकिन यही तथ्य आने वाले भविष्य में सौभाग्य का कारण भी बन सकता है। क्योंकि जिन देशों ने पुरुष के प्रभाव में विकास किया, अपनी मरण घड़ी के निकट पहुँच गये।

पुरुष का चित्त आक्रमण का चित्त है, एग्रेशन का। पुरुष का चित्त हिंसा का चित्त है, वायलेंस का। पश्चिम के जिन देशों ने उस चित्त के अनुकूल विकास किया, वे सारे देश धीरे—धीरे युद्धों से गुजरकर अंतिम युद्ध, टोटल वार के करीब पहुंच गये। अब कोई परिणति नहीं मालूम होती—सिवाय कि ये टकराये और टूट जायें, नष्ट हो जायें। उनके साथ पुरुषों ने जो सभ्यता खड़ी की है आज तक, वह सारी की सारी नष्ट हो जाये।

या दूसरा उपाय यह है कि इतिहास का चक्र घूमे और पुरुष की सभ्यता की कथा बंद हो, और एक नया अध्याय शुरू हो, जो अध्याय सी चित्त की सभ्यता का अध्याय होगा।

इसे थोड़ा समझ लेना जरूरी है। इसे हम समझें तो हम मनुष्य चेतना के भीतर चलने वाले सबसे बड़े ऊहापोह से परिचित हो सकेंगे।

नीत्शे जैसा व्यक्ति भारत में हम लाख कोशिश करें तो पैदा नहीं हो सकता। नीत्शे जर्मनी में ही पैदा हो सकता है! और जर्मनी लाख उपाय करे तो भी गांधी और बुद्ध जैसे आदमी को पैदा करना जर्मनी के लिए असंभव है। गांधी और बुद्ध जैसे व्यक्ति भारत में ही पैदा हो सकते हैं। यह पैदा हो जाना आकस्मिक नहीं है, यह एक्सीडेन्टल नहीं है। कोई व्यक्ति पैदा होता है, कोई विचारधारा पैदा होती है, यह पूरे देश के प्राणों के हजारों वर्षों के मंथन का परिणाम होता है।

यह आश्चर्यजनक है कि भारत का आज तक का पूरा इतिहास भूलकर भी पुरुष का इतिहास नहीं रहा है। और इसीलिए भारत में विज्ञान का जन्म भी नहीं हो सका। विज्ञान एक पुरुष कर्म है। विज्ञान का अर्थ है : प्रकृति पर विजय। विज्ञान का अर्थ है, जो चारों तरफ फैला हुआ जगत है, उसको जीतना। पुरुष का मन जीतने में बहुत आतुर है।

भारत ने प्रकृति को जीतने की कोई कोशिश नहीं की। असल में भारत ने कभी भी किसी को जीतने की कोई कोशिश नहीं की। जीतने की धारणा ही भारत के चित्त में बहुत गहरे नहीं जा सकी। कभी किन्हीं ने छोटे—छोटे प्रयास किये तो भारत की आत्मा उनके साथ खड़ी नहीं हो सकी।

स्वभावत: इस दुनिया में सारे लोग जीतने में आतुर हों, उसमें भारत पिछड़ता चला गया। यह भी दिखाई पड़ेगा कि इस पिछड़ जाने में अब तक तो दुर्भाग्य रहा। लेकिन आगे सौभाग्य हो

सकता है। क्योंकि वे जो जीत की दौड़ में आगे गये थे, वे अपनी जीत के ही अंतिम परिणाम में वहां पहुंच गये हैं, जहां आत्मघात के सिवा और कुछ भी नहीं हो सकता।

बुद्ध ने कहा था, बैर को बैर से नहीं जीता जा सकता, हिंसा से हिंसा भी नहीं जीती जा सकती। लेकिन यह किसी ने भी सुना नहीं। सुना भी नहीं जा सकता था, समय भी नहीं था परिपक्व सुनने के लिए। आज यह बात सुनी जा सकती है। आज यह समझ में आना शुरू हो गया कि आज तो हिंसा का अर्थ है : सार्वजनिक विनाश। पिछले महायुद्ध में हिरोशिमा और नागासाकी पर जो एटम गिराया गया था, उस समय विचारशील लोगों ने सोचा था, इससे खतरनाक अस्त्र अब पैदा नहीं हो सकेगा। लेकिन 20 ही वर्षों में विचारशीलों को पता चला कि आज हिरोशिमा और नागासाकी पर गिराये गये एटम बम बच्चों के खिलौने मालूम पड़ते हैं। इतने 20 वर्षों में हमने बड़े अस्त्र पैदा कर लिए!

एक उदजन बम चालीस हजार वर्गमील में किसी तरह के जीवन को नहीं बचने देगा। और पृथ्वी पर पचास हजार उदजन बम तैयार हैं। ये पचास हजार उदजन बम जरूरत से ज्यादा हैं, सरप्लस हैं। अगर हम पूरी पृथ्वी को नष्ट करना चाहें तो थोड़े से बम से काम हो जायेगा। इतने की कोई जरूरत नहीं पड़ेगी।

लेकिन राजनैतिक बहुत होशियार हैं। वे सोचते हैं कि भूल—चूक न हो जाये, इसलिए पूरा—और जरूरत से ज्यादा—इंतजाम करना उचित है। पचास हजार उदजन बम इस तरह की सात पृथ्वियों को नष्ट करने के लिप्त काफी हैं। यह पृथ्वी बहुत छोटी है। या हम ऐसा समझ सकते हैं कि अब मनुष्य—जाति की कुल संख्या साढ़े तीन अरब है, पच्चीस अरब लोगों को मारने के लिए हमने इंतजाम कर लिया। या हम ऐसा भी समझ सकते हैं कि एक आदमी को सात—सात बार मरना पड़े तो हमारे पास सुविधा और व्यवस्था है। हालांकि आदमी एक ही बार में मा जाता है। दुबारा मारने की जरूरत नहीं पड़ती। लेकिन भूल—चूक न हो जाये, इसलिए इंतजाम कर लेना ठीक से उचित और जरूरी है।

एक—एक आदमी को सात—सात बार मारने के इंतजाम का अर्थ क्या है? प्रयोजन क्या है? यह क्या है? पागल दौड़ है! क्या मनुष्य जाति का मन विक्षिप्त हो गया है? मनुष्य जाति का मन निश्चित विक्षिप्त हो गया है। क्योंकि मनुष्य जाति का पूरा का पूरा अब तक का विकास अकेले पुरुष का विकास है। पुरुष आधा है—पुरूष जाति का। आधी सी जाति का उस विकास में कोई भी हाथ नहीं! इसलिए संतुलन खो गया। बैलेंस खो गया।

यह दुनिया करीब—करीब ऐसी है, जैसे एक देश में स्रियां बिलकुल न हों। सिर्फ पुरुष ही पुरुष रह जाये, तो वह देश पागल हो जाएगा। ठीक इससे उलटा भी हो जायेगा। अगर किसी देश में स्त्रियां ही स्त्रियां हों और पुरूष न हों तो वह देश पागल हो जायेगा। स्त्री और पुरुष परिपूरक

हैं। वे दोनों साथ हैं, तभी पूरे हैं। लेकिन सभ्यता के मामले में जो सभ्यता आज तक निर्मित हुई है, वह अकेले पुरुष की सभ्यता है, उसमें स्त्री का कोई योगदान नहीं है! स्त्री से कोई मांग भी नहीं की गई। स्त्री ने आगे बढ़कर कोई योगदान किया भी नहीं। यह पुरुष की सभ्यता पागल होने के करीब आ गई।

एक छोटी—सी कहानी से मैं समझाने की कोशिश करूं, जो मुझे बहुत प्रीतिकर रही है।

एक झूठी कहानी है। मैंने सुनार है कि ईश्वर दूसरे महायुद्ध के बाद बहुत परेशान हो गया। ईश्वर तो तभी से परेशान है, जब से उसने आदमी को बनाया। जब तक आदमी नहीं था, बड़ी शांति थी दुनिया में। जब से आदमी को बनाया, तब से ईश्वर बहुत परेशान है। सुना तो मैंने यह है कि तबसे वह ठीक से सो नहीं सका बिना नींद की दवा लिए। सो भी नहीं सकता। आदमी सोने दे तब न! आदमी खुद न सोता है, न किसी और को सोने देता दे। और इतने आदमी है कि ईश्वर को सोने कैसे देंगे! इसलिए आदमी को बनाने के बाद ईश्वर ने फिर और कुछ नहीं बनाया। बनाने का काम ही बंद कर दिया। इतना घबड़ा गया होगा कि बस अब क्षमा चाहते हैं, अब आगे बनाना भी ठीक नहीं। दूसरे महायुद्ध के बाद वह घबड़ा गया होगा।

ऐसे तो इतने युद्ध हुए कि ईश्वर की छाती पर कितने घाव पड़े होंगे कि कहना मुश्किल है। सबसे मजा तो यह है कि हर घाव पहुंचाने वाला ईश्वर की प्रार्थना करके ही घाव पहुंचाता है। और मजा तो यह है कि हर युद्ध करने वाला ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हमें विजेता बनाना। चर्चों में घंटियां बजाई जाती हैं, मंदिरों में प्रार्थनायें की जाती हैं, युद्धों में जीतने के लिए! पोप आशीर्वाद देते हैं, युद्धों में जीतने, के लिए! ईश्वर की छाती पर जो घाव लगते होंगे, उन घावों का हिसाब लगाना मुश्किल है।

तीन हजार साल के इतिहास में पंद्रह हजार युद्ध और आगे का पीछे का इतिहास तो पता नहीं है। हम यह मान नहीं सकते कि उसके पहले आदमी नहीं लड़ता रहा होगा। लड़ता ही रहा होगा। जब तीन हजार वर्षों में पंद्रह हजार युद्ध करता है आदमी, प्रति वर्ष पांच युद्ध करता है तो ऐसा मानना बहुत मुश्किल है कि वह शांत रहा होगा। इतना ही है कि उसके पहले का इतिहास हमें शात नहीं। दूसरे महायुद्ध के बाद ईश्वर घबड़ा गया। क्योंकि पहले महायुद्ध में साढ़े तीन करोड़ लोगों की हत्या हुई! दूसरे महायुद्ध में हत्या की संख्या साढ़े सात करोड़ पहुंच गई। क्या हो गया आदमी को?

उसने दूनिया के तीन बड़े प्रतिनिधियों को अपने पास बुलाया। रूस को, अमेरिका को, ब्रिटेन को और उनसे पूछा कि मैं तुम्हें वरदान देना चाहता हूं! तुम एक—एक वरदान मांग लो, ताकि यह दुनिया की पागल होड़ बंद हो जाये। युद्ध बंद हो जायें। आदमी बच सके। और फिर तो यह ठीक भी है। अगर आदमी यह तय करता हो कि हमको मरना है तो मर जाये, लेकिन

अपने साथ सारे जीवन को नष्ट करने का तो कोई हक मनुष्य को नहीं। मैं तुमसे प्रार्थना करता हूं!

ईश्वर से हमेशा प्रार्थना की गई थी, लेकिन समय बदल गया! कभी नाव नदी पर होती है, कभी नदी नाव पर हो जाती है!

ईश्वर ने हाथ जोड़कर घुटने टेक दिये, उन तीनों के सामने! हम प्रार्थना करते हैं कि एक—एक वरदान मांग लो। तुम जो भी चाहते हो, मैं पूरा कर दूं। अमेरिका के प्रतिनिधि ने कहा, 'हे महाप्रभु, एक ही इच्छा है हमारी, वह पूरी हो जाये फिर तो दूनिया में कभी युद्‌ध नहीं होगा। रूस जमीन पर न बचे। इसका कोई निशान न रह जाये। इतना हम चाहते हैं और हमारी कोई आकांक्षा नहीं। '

ईश्वर ने घबराकर रूस की तरफ देखा। जब अमेरिका यह कहता हो— धार्मिक देश! तो रूस क्या कहेगा? रूस ने कहा महाशय! यह हो सकता है, कहा हो कामरेड! क्षमा करें। पहले तो मैं विश्वास नहीं करता कि आप हैं। कैपिटल पढ़ी है कार्ल मार्क्स की? कम्यूनिस्ट मैनिफेस्टो पढ़ा है—एंजल्स और कार्ल मार्क्स का? कितने जमाना पहले उन्होंने खबर कर दी कि भगवान नहीं है। और 1917 से रूस के ग़रिजों से आपको निकाल बाहर किया। आप अब नहीं हैं। मुझे शक होता है, मैं वोडका शराब ज्यादा पी गया हूं। इसलिए आप दिखाई पड़ रहे हैं। और या यह भी हो सकता है कि मैं कोई सपना देख रहा हूं। लेकिन बड़ा आश्र्यर्यजनक है कि सोवियत भूमि पर ऐसा धार्मिक सपना कैसे संभव हो पाता? अगर सरकार को पता लग गया कि ऐसे धार्मिक सपने आदमी देखते हैं, तो सपने देखने पर भी पाबंदी हो जायेगी। सपने देखने की स्वतंत्रता नहीं दी जा सकती आदमी को। गलत सपने देखने की स्वतंत्रता दी जाये? रूस में नहीं दी जा सकती। चीन में नहीं दी जा सकती।

फिर भी मैं आपसे यह कहता हूं कि हो सकता है कि आप हों। एक सबूत दें होने का तो हम आपकी पूजा फिर से शुरू कर दें। दीये जलेंगे, धूप जलेगी, मंदिरों में पूजा होगी, घंटियां बजेगी—एक इच्छा पूरी कर दें। एक ही इच्छा है हमारी—दूनिया का नक्शा हो, लेकिन अमेरिका के लिए कोई रंगरेखा उस नक्शे पर हम नहीं चाहते।

और घबरायें मत! क्योंकि ईश्वर घबड़ा गया होगा। घबड़ाये मत, अगर आप न कर सकें तो फिकर मत करें, अगर खुद यह काम करने का पूरा इंतजाम कर लिया है। हम खुद भी कर लेंगे। हम आपके भरोसे पर नहीं कर यह इंतजाम। यह इंतजाम अपने पैरों पर किया है और हमें इसकी भी कोई चिन्ता नहीं है कि अमेरिका को मिटाने में हम मिट जायेंगे। हम मिट जायें, उसकी फिकर नहीं, लेकिन अमेरिका नहीं रहना चाहिए। यह हमारा कष्ट है।

ईश्वर ने बहुत घबड़ाकर ब्रिटेन की तरफ देखा। ब्रिटेन ने जो कहा, वह ध्यान से सुन लेना। ब्रिटेन ने कहा, हे परम पिता, चरणों पर सिर रख दिया, अब हमारी कोई आकांक्षा नहीं, 'इन दोनों की आकांक्षाएं एक साथ पूरी कर दी जायें, हमारी आकांक्षा पूरी हो जायेगी।'

यह हमें हंसने जैसा मालूम होता है, लेकिन किस पर हंसते हैं आप? ब्रिटेन पर, अमेरिका पर, रूस पर, भगवान पर—किस पर हंसते हैं आप? या तो अपने पर, या कि मनुष्य पर, या कि मनुष्यता पर? मनुष्य को क्या हुआ है? कौन—सा रोग है उसके मन में? उसके प्राणों को कौन—सी चीज खा रही है कि मिटाना, मिटाना, यही इसके प्राणों की पुकार बन गई है—मृत्यु और मृत्यु! पुरुष जीतना चाहता है और जीत उसको एक ही तरह सूझती है। मारने से, मृत्यु से, मिटाने से। पुरुष को सूझता ही नहीं कि मिटाने के अलावा कोई जीत होती है? उसे यह पता ही नहीं है कि यह मिटाकर कभी कोई जीता ही नहीं है।

एक और जीत भी होती है, जो मिटाने से नहीं आती। उसे यह पता भी नहीं है, एक और जीत भी होती है, जो हार जाने से आती है। यह पुरुष को पता ही नहीं!

एक ऐसी जीत भी हो सकती है, जो उसको मिलती है जो हार जाता है, जो लड़ता ही नहीं। इसका पुरुष को कोई भी पता नहीं।

उसे पता हो भी नहीं सकता। उसके चित्त की पूरी की पूरी प्रकृति एग्रेसिव, आक्रामक है। उसका एक ही खयाल है : दबो या दबाओ, हारो या जीतो। और जीतने की दौड़ में चाहे कुछ भी हो जाये, खुद मिटो चाहे कोई मिट जाये, लेकिन जीतना जरूरी है। लेकिन जीतना किसलिए जरूरी है? जीतना जीने के लिए जरूरी है। और जीतने में मौत लानी पड़ती है और जीना मुश्किल हो जाता है। अजीब चक्र है। जीतना जीने के लिए जरूरी मालूम पड़ता है, और जीतने में मौत आती है और जीना मुश्किल हो जाता है।

लेकिन इसी विशियस सर्किल में, दुष्चक्र में, पिछले 3—4 हजार वर्ष का इतिहास आदमी का, घूमते—घूमते आखिरी इसी जगह, क्लाइमैक्स पर आ गया है, जहां कि विश्वयुद्ध की पूरी संभावना खड़ी हो गयी है। या तो विश्वयुद्ध होगा और सारी मनुष्यता समाप्त होगी। और या फिर अब तक मनुष्य—जाति के दूसरे हिस्से ने कोई भी कंट्रीब्यूशन मनुष्य की सभ्यता का निर्माण करने में, मनुष्य को जीने में, सहयोग देने में, जो आधी दुनिया अब तक चुपचाप खड़ी रही है, उसे कुछ करना पड़ेगा। और एक नयी सभ्यता को, जो पुरुष प्रधान न हो, नयी सभ्यता को, जो ही के हृदय और स्त्री के गुणों पर खड़ी होती हो, उसको जन्म देना पड़ेगा।

नीत्शे ने बहुत क्रोध से यह बात लिखी है कि मैं बुद्ध को और क्राइस्ट को स्त्रैण मानता हूं बूमिनिस्ट मानता हूं। यह उसने गाली दी है बुद्ध को और क्राइस्ट को। अगर वह गांधी को

जानता होता तो गांधी के' बाबत भी यही कहता कि तीनों के तीनों आदमी ठीक अर्थों में पुरुष नहीं है। उसने यह सोचा होगा कि किसी पुरुष को स्त्री कह देने से और कोई बड़ी गाली क्या हो सकती है?

लेकिन पुरुष होना ही आज—वह जो पुरुष की आज तक की प्रगति रही है, उसमें होना आज—संकट, क्राइसिस पैदा कर दिया है। आज खोजबीन करनी जरूरी है कि स्त्री के चित्त से क्या सभ्यता का आधार, मूल आधार रखा जा सकता है? क्या यह हो सकता है? क्या हम दूसरी तरफ भी देखें? और ध्यान करें कि क्या उस तरफ से भी जीवन की नयी दिशा में विकास के नये स्रोत, मनुष्यता का एक नया इतिहास रखा जा सकता है?

मुझे लगता है कि रखा जा सकता है। और अगर नहीं रखा जा सकता है तो फिर पुरुष के हाथ में अब आगे कोई भविष्य नहीं है, वह अपने अंतिम क्षण पर आ गया है।

लेकिन स्रियों को कोई खयाल नहीं है! या तो स्त्रियां गुलाम हैं पुरुष की या स्त्रियां नंबर 2 के पुरुष बनने की कोशिश में संलगन हैं! दोनों ही हालतें बुरी हैं। गुलामी की, स्लेवरी की हैं। भारत जैसे मुल्कों में स्त्रियों की कोई आवाज नहीं। अपनी कोई आत्मा भी नहीं। भारत में स्त्री का अपना कोई व्यक्तित्व नहीं। उसकी कोई पुकार नहीं। उसका कोई होना नहीं। वह न होने के बराबर है।

हालांकि पूरे देश का विचार कभी भी पुरुष चित्त के अनुकूल नहीं रहा, क्योंकि भारत को जिन लोगों ने प्रभावित किया, उन्होंने जीवन के बहुत कोमल गुणों—पर जोर दिया। बुद्ध ने करुणा पर, महावीर ने अहिंसा पर। उन्होंने जोर दिया जीवन के प्रेम तत्व पर। लेकिन उनकी आवाज गज कर खोती रही। यह किसी को खयाल नहीं आया कि यह आवाज अगर स्रियां पकड़ लेंगी तो ही सफल हो सकती हैं, अन्यथा यह आवाज सफल नहीं हो सकती। अगर पुरुष प्रेम की बात भी करेगा तो अहिंसा से आगे नहीं जा सकता। और इसे थोड़ा समझ लेना। अहिंसा का मतलब होता है, हम हिंसा नही करेंगे। यह निगेटिव बात है। हम किसी को चोट नहीं पहुचायेंगे। अहिंसा से आगे पुरुष का जाना मुश्किल है। वह या तो हिंसा कर सकता है या अहिंसा कर सकता है। लेकिन प्रेम का उसे सूझता ही नहीं! प्रेम पाजिटिव बात है। अहिंसा का मतलब है, हम दूसरे को दुख नहीं पहुचायेंगे। एक बात है कि हम दूसरे को दुख नहीं पहुचायेंगे, यही हमारे जीवन का सूत्र होगा। चाहे एक दूसरे को कितना ही दुख पहुंचे, हम अपना सुख पायेंगे। यही जीवन की आधार—शिला होगी। एक सूत्र तो यह है पुरुष का।

फिर पुरुष अगर बहुत ही सोच—समझ और विचार का उपयोग करता है, तो इससे उलट सूत्र पर पहुंचता है। वह कहता है, हम दूसरे को दुख नहीं पहुंचायेंगे।

लेकिन स्त्री का चित्त अहिंसा से राजी नहीं हो सकता। स्त्री का चित्त कहता है प्रेम। प्रेम का अर्थ है : हम दूसरे को सुख पहुंचायेंगे।

इसलिए अहिंसा ठीक अर्थों में हिंसा का विरोध नहीं है। सिर्फ हिंसा का अभाव है। हिंसा का ठीक विरोध प्रेम है। क्योंकि हिंसा कहती है, हम दूसरे को दुख पहुंचायेंगे, यही हमारे सुख का मार्ग है। प्रेम कहता है, हम दूसरे को सुख पहुचायेंगे, यही हमारे सुख का मार्ग है।

अहिंसा बीच में है, और अहिंसा कहती है, हम दूसरे को दुख नहीं पहुचायेंगे। अहिंसा बहुत इम्पोटेंट हैं। अहिंसा बीच में अटक जाती है, बहुत आगे नहीं जाती, वह पुरुष को हिंसा करने से रोक लेती है। लेकिन प्रेम करने तक नहीं पहुंचाती। हिन्दुस्तान ने अहिंसा की तो बात की। लेकिन... क्योंकि पुरुषों ने बात की थी, वह भी बहुत ठीक। वे अहिंसा तक की बात कर सके। पश्चिम के पुरुषों से उन्होंने एक कदम बहुत आगे उठाया। स्त्री के हृदय की तरफ एक कदम आगे बढ़ाया। लेकिन आखिर पुरुष कितने दूर जा सकते हैं? वह बात अहिंसा पर आकर अटक गयी।

और मैंने ऐसा अनुभव किया है, अगर पुरुष अहिंसा की भी बात करे तो बहुत जल्दी उसकी अहिंसा में भी हिंसा शुरू हो जाती है। अगर पुरुष सत्याग्रह भी करेगा, अगर पुरुष अनशन भी करेगा तो वह अनशन भी दूसरे की गर्दन दबाने के उपाय की तरह करेगा। वह भी प्रेशर, वह भी दबाव होगा। वह भी जबर्दस्ती होगी। अगर दस आदमी अनशन करेंगे किसी काम के लिए, तो वे धमकी दे रहे हैं कि हम मर जायेंगे, हमारी बात मानो। यह धमकी बहुत हिंसापूर्ण है। यह धमकी अहिंसक नहीं है। यह बहुत हिंसापूर्ण है। अहिंसा का भी हिंसक उपयोग है यह।

मैंने सुना है, एक युवक, एक युवती को प्रेम करता था। उसने जाकर उसके घर के सामने अहिंसक अनशन कर दिया, कहा कि मुझसे विवाह करो, अन्यथा मैं भूखा मर जाऊंगा। घर के लोग घबड़ा गये। क्योंकि अगर वह छुरा लेकर आता तो पुलिस में खबर कर देते। वह छुरा लेकर नहीं आया। वह धमकी लेकर आया था कि मैं मर जाऊंगा। वह बोरिया—बिस्तर लगाकर द्वार के सामने बैठ गया। गांव में उसका प्रचार करने वाले लोग मिल गये।

बेवकूफों का प्रचार करने वालों की कोई कमी नहीं है। उन्होंने जाकर गांव भर में खबर कर दी, कि एक अहिंसक आंदोलन हो रहा है। एक युवक ने अपने प्राण बाजी पर लगा दिये है। सारे गांव की सहानुभूति उस युवक के साथ होने लगी। जो भी मरता हो, उसके साथ सहानुभूति स्वाभाविक है। घर के लोग बहुत घबड़ा गये उन्होंने कहा हम क्या करें? बड़ी मुसीबत हो गई?

घर के लोगों को किसी परिचित ने सलाह दी कि गांव में एक और भी अहिंसक सत्याग्रह करने वाला अनुभवी व्यक्ति है। तुम उससे जाकर पूछो। उन्होंने जाकर सलाह ली। उसने कहा घबराओ मत हर चीज का उपाय है। अहिंसात्मक धमकी का उपाय अहिंसात्मक ढंग से दिया जा सकता है। मैं रात आ जाऊंगा। घबराओ मत।

वह रात एक बूढ़ी औरत को लेकर पहुंच गया। उस बूढ़ी औरत ने जाकर अपना बिस्तर लगा दिया और उस युवक से कहा कि मेरे हृदय में तेरे लिए भारी प्रेम का उदय हुआ है। मैं मर जाऊंगी, अगर तुमने मुझ से विवाद नहीं किया। मैं अनशन शुरू करती हूं। यह आमरण अनशन है। उस युवक ने सुना और अपना पेटी—बिस्तर लेकर वह रात में भण गया! स्वाभाविक है।

इस देश में यह हो रहा है। अहिंसा के नाम यही हो रहा है। हर आदमी अहिंसा के नाम पर हिंसा की धमकी देता है! आध को अलग करो नहीं तो आमरण अनशन करके मर जायेंगे। पंजाब को अलग करो नहीं तो यत हो जायेगा। कोई भी आदमी धमकी दे रहा है।

यह बड़ी हैरानी की बात है कि गांधी ने अहिंसा की बात की और अहिंसा का कुल उपयोग हिंसात्मक ढंग रो कर रहे हैं!

किसी की कल्पना भी नहीं हो सकती कि पुरुष का मन ऐसा है कि उसके हाथ में जो भी हथियार आ जायेगा—चाहे तलवार और चाहे सत्याग्रह—दोनों का उपयोग हिंसात्मक ढंग से करना।

पुरुष के चित्त की बनावट आक्रामक है, हिंसात्मक है। और अब तक चूंकि सारी संस्कृति उसके आधार पर निर्मित हुई है। इसलिए सारी संस्कृति हिंसात्मक है।

क्या यह नहीं हो सकता कि सी के हृदय की आवाज को भी इस संस्कृति के निर्माण में पत्थर बनाया जाये?

लेकिन स्त्री तो चुप! या तो वह गुलाम है, जैसा मैंने कहा या वह पुरुष होने की दौड़ में है।

पूरब की स्त्री गुलाम है। उसने कभी यह घोषणा ही नहीं की कि मेरे पास भी आत्मा है। वह चुपचाप पुरूष के पीछे चल पड़ती है।

अगर राम को सीता को फेंक देना है तो सीता की कोई आवाज नहीं। अगर राम कहते हैं कि मुझे शक है तेरे चरित्र पर तो उसे अण में डाला जा सकता है। यह बडे मजे की बात है। यह

किसी के खयाल में कभी नहीं आती कि सीता लंका में बंद थी, अकेली, तो राम को उसके चरित्र पर शक होता है। लेकिन सीता को राम के चरित्र पर शक नहीं होता! उतने दिन वह अकेले रहे! अग्नि से गुजरना ही है तो राम को आगे और सीता को पीछे गुजरना चाहिए। जैसा कि हमेशा शादी विवाह में राम आगे रहे, सीता पीछे रही, चक्कर लगाती रही। फिर आग में घुसते वक्त सीता आगे अकेली आगे चली। राम बाहर खड़े निरीक्षण करते रहे! बड़ी धोखे की बात मालूम पड़ती हैं!

तीन—चार हजार वर्ष हो गए रामायण को लिखे गए और मैं यह बात पहली दफे कह रहा हूं। यह बात कभी नहीं उठाई गई कि राम की अग्नि परीक्षा क्यों नहीं होती? नहीं, पुरुष का तो सवाल ही नहीं! यह सब सवाल स्त्री के लिए है!

स्त्री की कोई आत्मा नहीं, उसकी कोई आवाज नहीं। फिर यह अग्नि परीक्षा से गुजरी हुई स्त्री एक दिन मक्खी की तरह फेंक दी गई तो भी कोई आवाज नहीं! कोई आवाज नहीं है! और हिन्दुस्तान भर को स्रियां राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहे चली जायेंगी! मंदिर में जाकर दीया घुमाती रहेंगी और पूजा—प्रार्थना करती रहेंगी! राम की पूजा स्रियां करती रहेंगी!

स्त्री के पास कोई आत्मा नहीं। कोई सोच—विचार नहीं। सारे हिन्दुस्तान की स्त्रियों को कहना था कि बहिष्कार हो जाये राम का, कितने ही अच्छे आदमी रहे हणै। लेकिन बात खत्म हो गई। स्रियों के साथ भारी अपमान हो गया। भारी असम्मान हो गया।

लेकिन राम को स्रियां ही जिन्दा रखे हैं। राम बहुत प्यारे आदमी हैं। बहुत अदभुत आदमी हैं। लेकिन राम को यह खयाल पैदा नहीं होता कि वह स्त्री के साथ क्या कर रहे हैं! वह हमारा कल्पना नहीं है, वह हमारे खयाल में नहीं है।

युधिष्ठिर जैसा अदभुत आदमी द्रौपदी को जुए में दांव पर लगा देता है! फिर भी कोई यह नहीं कहता कि हम कभी युधिष्ठिर को धर्मराज नहीं कहेंगे। नहीं, कोई यह नहीं कहता! बल्कि कोई कहेगा तो हम कहेंगे कि अधार्मिक आदमी है। नास्तिक आदमी है, इसक़ी बात मत सुनो!

स्त्री को जुए पर, दांव पर लगाया जा सकता है, क्योंकि भारत में स्त्री सम्पदा है, सम्पत्ति है। हम हमेशा से कहते रहें हैं, स्त्री सम्पत्ति है और इसीलिए तो पति को स्वामी कहते हैं। स्वामी का मतलब आप समझते हैं, क्या होता है?

अगर हिन्दुस्तान की स्त्री में थोड़ी भी अक्ल होती तो एक—एक शब्द से उसे 'स्वामी' निकाल बाहर कर देना चाहिए। कोई पुरुष कोई स्त्री का स्वामी नहीं हो सकता। स्वामी का क्या मतलब होता है?

स्त्री दस्तखत कर देती है अपनी चिट्ठी में "आपकी दासी' ' और पति देव बहुत प्रसन्न होकर पढ़ते हैं। बड़े आनन्दित होते हैं कि बड़ी प्रेम की बात लिखी है।

लेकिन इसका पता है कि स्वामी और दास में कभी प्रेम नहीं हो सकता। प्रेम की संभावना समान तल पर हो सकती है। स्वामी और दास में क्या प्रेम हो सकता है?

इसलिए हिंदुस्तान में प्रेम की संभावना ही समाप्त हो गई। हिंदुस्तान में स्त्री—पुरुष साथ रह रहे हैं और साथ रहने को प्रेम समझ रहे हैं! वह प्रेम नहीं है।

हिंदुस्तान में प्रेम का सरासर धोखा है। साथ रहना भर प्रेम नहीं है। किसी तरह कलह करके 24 घंटे गुजार देना, प्रेम नहीं है। जिंदगी गुजार देनी प्रेम नहीं है।

प्रेम की पुलक और है। प्रेम की प्रार्थना और है। प्रेम की सुगंध और है। प्रेम का संगीत और है।

लेकिन वह कहीं भी नहीं! असल में गुलाम और दास में, मालिक में और स्वामी में, कोई प्रेम नहीं हो सकता। लेकिन हमारे खयाल में नहीं है यह बात कि पूरब की स्त्री नेहु विशेषकर भारत की स्त्री ने अपनी आत्मा का अधिकार ही स्वीकार नहीं किया है। आत्मा की आवाज भी नहीं दी है। उसने हिम्मत भी नहीं जुटाई कि वह कह सके कि 'मैं भी हूं!

आज स्त्री को शादी करके ले जाते हैं एक सज्जन। अगर उनका नाम कृष्णचन्द्र मेहता है तो उनकी पत्नी मिसेज कृष्णचन्द्र मेहता हो जाती है। लेकिन कभी उससे उलटा देखा कि इन्दुमती मेहता को एक सज्जन प्रेम करके, ब्याह कर लाये हों और उनका नाम मि. इन्दुमती मेहता हो जाये? वह नहीं हो सकता है। लेकिन क्यों नहीं हो सकता? नहीं, वह नहीं हो सकता, क्योंकि हमारी यह सिर्फ व्यवहार की बात नहीं है, उसके पीछे पूरा हमारे जीवन को देखने का ढंग छिपा हुआ है।

स्त्री पुरुष के पीछे आकर पुरुष का अंग हो जाती है। वह मिसेज हो जाती है। लेकिन पुरुष स्त्री का अंग नहीं होता! स्त्री पुरुष का आधा अंग है। लेकिन पुरुष स्त्री का अंग नहीं है! इसलिए पुरुष मरता है तो स्त्री को सती होना चाहिए। आग में जल जाना चाहिए। वह उसका अंग है। उसको बचने का हक कहां है?

हिंदुस्तान में हजारों वर्षों में कितनी लाखों स्रियों को आग में जलाया, उसका हिसाब लगाना बहुत मुश्किल है। बहुत मुश्किल है। और किस पीड़ा से उन स्रियों को गुजरना पड़ा है, इसका हिसाब लगाना मुश्किल है। फिर भी बड़ी कृपा थी, जो आग में जल गईं उन स्त्रियों के लिए।

लेकिन जब से आग में जलना बंद हो गया है तो करोड़ों विधवाओं को हम रोके हुए हैं। उनका जीवन आग में जलने से बदतर है। सती की प्रथा विधवा की प्रथा से ज्यादा बेहतर थी। आदमी एक बार में मर जाता है। खत्म हो जाता है। आखिर एक बार में मरना, फिर भी बहुत दयापूर्ण है। बजाय 40—50 साल धीरे—धीरे मरने के, अपमानित होने के।

जिंदगी में जहां प्रेम की कोई संभावना न रह जाये, उस जीवन को जीवित कहने का क्या अर्थ है?

और यह ध्यान रहे कि पुरुष के लिए प्रेम 24 घंटे में आधी घड़ी, घड़ी भर की बात है। उसके लिए और बहुत काम हैं। प्रेम भी एक काम है। प्रेम से भी निपटकर दूसरे कामों में वह लग जाता है। स्त्री के लिए प्रेम ही एकमात्र काम है। और सारे काम उसी प्रेम से निकलते हैं और पैदा होते हैं।

तो अगर पुरुष को विधुर रखा जाये तो उतना टार्चर नहीं है, जितना स्त्री को विधवा रखना अत्याचार है। उसे 24 घंटे प्रेम की जंजीर है। प्रेम गया—उस जंजीर के सिवाय कुछ नहीं रह गया। और दूसरे प्रेम की संभावना समाज छोड़ता नहीं। लेकिन हजारों साल तक हम उसे जलाते रहे और कभी किसी ने न सोचा!

अगर कोई पूछता था कि स्रियों को क्यों जलना चाहिए आग में? तो पुरुष कहते, उसका प्रेम है, वही जी नहीं सकती पुरुष के बिना। लेकिन किसी पुरुष को प्रेम नहीं था इस मुल्क में कि वह किसी स्त्री के लिए सती हो जाते? वह सवाल ही नहीं है। वह सवाल ही नहीं उठाना चाहिए। क्योंकि सारे धर्म—ग्रंथ पुरुष लिखते हैं, अपने हिसाब से लिखते हैं, अपने स्वार्थ से लिखते हैं। स्त्रियों का लिखा हुआ न ग्रंथ है, न स्त्रियों का मनु है, न स्रियों का याज्ञवल्ल है! स्त्रियों का कोई स्मृतिकार नहीं, स्रियों का कोई धर्म—ग्रंथ नहीं! स्रियों का कोई सूत्र नहीं! उनकी कोई आवाज नहीं! पूरब की स्त्री तो एक गुलाम छाया है, जो पति के आगे पीछे घूमती रहती है।

पश्चिम की स्त्री ने विद्रोह किया है। और मैं कहता हूं कि अगर छाया की तरह रहना है तो उससे बेहतर है वह विद्रोह। लेकिन वह विद्रोह बिलकुल गलत रास्ते पर चला गया। वह गलत रास्ता यह है कि पश्चिम की स्त्री ने विद्रोह का मतलब यह लिया है कि ठीक पुरुष जैसी वह भी खड़ी हो जाये! पुरुष जैसी वह हो जाये!

पश्चिम की स्त्री पुरुष होने की दौड़ में पड़ गयी। वह पुरुष जैसे वस्त्र पहनेगी, पुरुष जैसा बाल कटायेगी, पुरुष जैसा सिगरेट पीना चाहेगी, पुरुष जैसा सड्कों पर चलना चाहेगी, पुरुष जैसा अभद्र शब्दों का उपयोग करना चाहेगी। वह पुरुष के मुकाबले खड़ा हो जाना चाहती है।

एक लिहाज से फिर भी अच्छी बात है। कम से कम बगावत तो है। कम से कम हजारों साल की गुलामी को तोड़ने का तो खयाल है। लेकिन गुलामी ही नहीं तोड़नी है। क्योंकि गुलामी तोड़कर भी कोई कुएं में से खाई में गिर सकता है।

पश्चिम की स्त्री इसी हालत में खड़ी हो गई। वह जितना अपने को पुरुष जैसा बनाती जा रही है, उतना ही उसका व्यक्तित्व फिर खोता चला जा रहा है। भारत में वह छाया बनकर खतम हो गई। पश्चिम में वह नंबर 2 का पुरुष बनकर खतम होती जा रही है। उनका अपना व्यक्तित्व वहां भी नहीं रह जायेगा!

यह ध्यान रहे, स्त्री के पास एक अपने तरह का एक व्यक्तित्व है। जो पुरुष से बहुत भिन्न है, बहुत विरोधी, बहुत अलग, बहुत दूसरा है। उसका सारा आकर्षण, उसकी जीवन की सारी सुगंध, उसके अपने होने में है, उसके निज होने में है। अगर वह अपनी निजता के बिंदु से छूत होती है और पुरुष जैसे होने की दौड़ में लग जाती है तो यह बात इतनी बेहूदी होगी, जैसे कोई पुरुष स्रियों के कपड़े पहनकर दाढ़ी मूंछ घुटाकर स्त्रियों जैसा बनकर घूमने लगता है तो वह बेहूदा हो जाता है। यह बात इतनी ही बेहूदी है।

लेकिन पुरुष इसकी निंदा नहीं करेगा। क्योंकि स्रियां पुरुष जैसी हो रही हैं, पुरुष को क्या चिंता है? आपने हमेशा सुना होगा, अगर कोई पुरुष स्रियों जैसे ढंग से रहे तो हम लोग कहेंगे नामर्द। उसकी निंदा होगी। लेकिन अगर कोई स्त्री पुरुषों जैसी रहे तो कहेंगे, 'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी। ' इज्जत देंगे उसको। स्रियां अगर पुरुषों जैसे ढंग अख्तियार करें तो उनको इज्जत मिलेगी और पुरुष अगर स्रियों जैसे ढंग अख्तियार करें तो उनका अपमान होगा! पुरुष को भी उससे मजा आता है कि स्त्रीयां पुरुष जैसे होने की कोशिश कर रही है। इसका अर्थ है कि उसने हमारी श्रेष्ठता फिर स्वीकार कर ली।

कल तक वह पति के रूप में श्रेष्ठता स्वीकार करती थी, तब भी हम सुपीरियर, मालिक थे। अब भी हम सुपीरियर हैं। क्योंकि हमारे जैसे होने की कोशिश कर रही है। और ध्यान रहे, स्त्री कितने ही पुरुष जैसी हो जाये, कार्बन कापी से ज्यादा नहीं हो सकती। कैसे हो सकती है! कैसे हो सकती है स्त्री पुरुष जैसी? और कार्बन कापी फिर छाया रह जायेगी।

यह बड़े मजे की बात है कि हिंदुस्तान में पुरुष ने जबर्दस्ती स्त्री को छाया बना दिया। पश्चिम की स्त्री अपने हाथ से मेहनत करके छाया बनी जा रही है! क्या कोई तीसरा रास्ता नहीं है? ये दोनों बातें स्त्री जाति के लिए खतरनाक हैं। ये दोनों बातें प्रतिक्रियावादी हैं, रिएक्शनरी हैं। स्त्री की जिंदगी में क्रांति चाहिए। पश्चिम में क्रांति भटक गई उगे' विद्रोह हो गई है। विद्रोह क्रांति नहीं है। बगावत क्रांति नहीं है।

क्रांति का मतलब है एक नये व्यक्तित्व का उदघाटन।

बगावत का मतलब है. पुराने व्यक्तित्व को तोड़ देना है, इसकी बिना फिक्र किए कि नया व्यक्तित्व कुछ बनता है कि नहीं बनता है।

बगावत क्रोध है, क्रांति विचार है।

बगावत कर देना बहुत आसान है। क्रांति करना बहुत सोच—विचार और चिंतन की बात है।

भारत की स्त्री को भी पश्चिम की स्त्री की दौड़ पक्केगी, क्योंकि भारत के पुरुष को पश्चिम के पुरुष की दौड़ पकड़ेगी। उसी के पीछे स्त्री भी जायेगी, आज नहीं कल। वह उसने होना शुरू कर दिया है। वह पुरुष के साथ पुरुष जैसा होने की दौड़ में शामिल हो गयी है! आज नहीं कल भारत में भी वही होगा, जो पश्चिम में हो रहा है। पश्चिम में जो हो गया है, वह इतना दुखद है कि अब भारत में उसको फिर दोहरा लेना, एक बहुत बढ़िया मौका खो देना है। एक परिवर्तन का, एक ट्रांजिशन का मौका खो देना है। एक बदलाहट का वक्त आया है और फिर बदलाहट में हम वही गलती कर ले रहे हैं। वही गलती, जिसमें कुछ फर्क नहीं पडेगा। वही भूल फिर हो जायेगी।

सी. एम. जोड ने कहीं लिखा है, जब मैं पैदा हुआ था, होम्स थे, मेरे देश में। घर थे। अब सिर्फ हाउसेज हैं। अब सिर्फ मकान हैं। स्वभावत: अगर स्त्री पुरुष जैसी हो जाती है, तब होम जैसी चीज समाप्त हो जायेगी। घर जैसी चीज समाप्त हो जायेगी। मकान रह जायेंगे। मकान रह जायेंगे, क्योंकि मकान घर बनता था, एक व्यक्तित्व से स्त्री के। वह खो गया। अब ठीक वह पुरुष जैसी कलह करती है! पुरुष जैसी झगड़ती है! पुरुष जैसी बा त करती है! विवाद करती है! वह सब ठीक पुरुष जैसा कर रही है!

लेकिन उसे पता नहीं है कि उसकी आत्मा कभी भी यह करके तृप्त नहीं हो सकती। क्योंकि आत्मा तृप्त होती है वही होकर, जो होने को आदमी पैदा हुआ है। एक गुलाब, गुलाब बन जाता है तो तृप्ति आती है। एक चमेली, चमेली बन जाती है तो तृप्ति आती है। वह तृप्ति फ्लॉवरिंग की है। हमारे भीतर छिपा है—वह खिल जाये, पूरा खिल जाये तो आनंद उपलब्ध होता है।

स्त्री आज तक कभी आनंदित नहीं रही, न पूरब के मुल्कों में, न पश्चिम के मुल्कों में। पूरब के मुल्कों में वप्र गुलाम थी, इसलिए आनंदित नहीं हो सकी; क्योंकि आनंद बिना स्वतंत्रता के कभी उपलब्ध नहीं होता है।

सारे आनंद के फूल स्वतंत्रता के आकाश में खिलते हैं।

ध्यान रहे, अगर स्त्री आनंदित नहीं है तो पुरुष कभी आनंदित नहीं हो सकता है। वह लाख सिर पटके। क्योंकि समाज का आधा हिस्सा दुखी है। घर का केंद्र दुखी है। वह दुखी केंद्र अपने चारों तरफ दुख की किरणें फेंकता रहता है। और दुख के केंद्र की किरणों में सारा व्यक्तित्व समाज का, दुखी हो जाता है।

और मैं आपसे कहना चाहता हूं जितना दुख होता है, उतनी चिंता शुरू हो जाती है। क्यों? क्योंकि दुखी आदमी दूसरे को दुखी करने में आतुर होता है। क्योंकि दुखी आदमी फिर किसी को सुखी देखना नहीं चाहता। दुखी आदमी चाहता है, दूसरे को दुख हो दुखी आदमी का एक ही सुख होता है, दूसरे को दुख दे देने का सुख।

स्त्री के दुख ने सारे समाज के जीवन को दुख की छाया से भर दिया है। स्त्री आनंदित हो सकती है मुक्त होकर, लेकिन पुरुष होकर नहीं। मुक्त हो जाये और फिर पुरुष जैसे होने लगे, फिर दुखी हो जायेगी। आज पश्चिम की स्त्री कोई सुखी नहीं है। वह फिर उसने नये दुख खोज लिए हैं। फिर नये दुखों से अपने व्यक्तित्व को कस लिया है। फिर समाज वहां एक नये तनाव में भरता चला जायेगा। क्या किया जा सकता है? कौन—सी क्रांति?

मैं एक तीसरा सुझाव देना चाहता हूं। और वह यह.. वक्त है, इस वक्त मुल्क के सामने बदलाहट होगी। बदलाहट का समय है। अभी स्त्री की गुलामी ज्यादा दिन नहीं चलेगी। हालांकि स्त्री की अभी भी कोई इच्छा नहीं है बहुत, कि गुलामी टूट जाये। वह पुरुष तो चाहेगा। लेकिन सारी दुनिया की हवायें धक्के दे रही हैं और गुलामी टूट रही है। भारत की स्त्रियां यह न सोचें कि उनके कुछ करने से गुलामी टूट रही है।

भारत बहुत अजीब देश है। सारी दूनिया की हवायें बदलीं। 1947 में हम आजाद हो गये। हमने समझा कि हमने आजादी ले ली! वह हमने आजादी ली नहीं। वह दुनिया की हवाएं बदलीं, दुनिया का पूरा मौसम बदला। दुनिया में परिवर्तन का एक वक्त आया। आजादी हमें मिली। हिन्दुस्तान के किसी नेता को पता भी नहीं था कि आजादी सन 1947 में मिल सकती है। कल्पना भी नहीं की। आंदोलन तो हमारा सन 1942 में खत्म हो गया था! और बड़ा भारी आंदोलन था! सात दिन में खत्म हो गया था! ऐसी महान क्रांति दुनिया में कभी नहीं हुई! वह सात दिन में खल हो गई थी! उसके बाद हम ठंडे पड़ चुके थे।

अब 20 साल तक कोई दुबारा जाने को जेल में राजी भी नहीं हो सकता था। अचानक आजादी आ गयी, तो हमने कहा, हमने आजादी ले ली। ठीक वैसी ही भारत की स्त्री की आजादी भी आ रही है। यह भूल में मत पड़ना कि वह आजादी ले रही है।

और ध्यान रहे जो आजादी आती है, उस आजादी में और जो आजादी ली जाती है, उस आजादी में, जमीन आसमान का फर्क होता है। जो आजादी मिलती है, वह मुर्दा होती है। वह कभी जिंदा नहीं हो सकती। भीख होती है। और आजादी भी भीख में मिल सकती है। इसलिए इस मुल्क में जो आजादी मिली, वह मुर्दा आजादी, बिलकुल डैड—उसमें कोई जिंदगी नहीं। पड़ी हुई लाशों वाली आजादी।

इसलिए 20 साल से हम सड़ रहे हैं। उस आजादी से कोई पुलक नहीं आयी जीवन में। न कोई नृत्य आया, न कोई खुशी आयी, न कोई उत्साह आया, न कुछ ऐसा हुआ कि हम बदल दें जिंदगी को। हजारों साल के सिलसिले को तोड़ दें। नया मुल्क बनायें। नया आदमी पैदा करें। कुछ भी पैदा नहीं हुआ! बस, इतना बस हुआ कि हमने झंडा बदल दिया। दूसरा झंडा फहरा दिया और नेता बदल दिये। हालांकि शरीर बदला नेताओं का। उनकी बुद्धि वही रही, जो पिछले नेताओं की थी, जो पिछले हुकूमत करने वालों की थी। बुद्धि वही की वही रही! कपड़े बदल गये। वह शेरवानी पहनकर खड़े हो गये। उनको लगा कि हम सब भारतीय हो गये।

ठीक वैसी ही आजादी स्रियों के मामले में घटित हो रही है। नहीं, यह ठीक नहीं हो रहा है। हिन्दुस्तान की नारी को, हिन्दुस्तान की स्त्री को आजादी लेनी है। क्योंकि मूल्य आजादी मिलने का नहीं है। वह जो लेने की प्रक्रिया है, उसी में आला पैदा होती है। इसको ठीक से समझ लेना चाहिए। वह जो लेने की प्रक्रिया है, वह जो जद्दोजहद है। वह जो संघर्ष है, वह जो स्ट्रगल है, उस स्ट्रगल में, लेने की प्रक्रिया में आत्मा पैदा होती है।

आजादी मिलने से आत्मा पैदा नहीं होती। आजादी लेने की प्रक्रिया में से गुजरना ही आजाद आत्मा का पैदा हो जाना है। आजादी उसका परिणाम है। आजादी आती है।

लेकिन भारतीय स्त्री के साथ वही हो रहा है। आजादी उस पर आ रही है। थोपी जा रही है। वह बेमन से उसको स्वीकार करती चली जा रही है। और धीरे— धीरे पश्चिम की हवायें उसको पछिम की तरफ ले जायेंगी और एक मौका चूक जायेगा। इस मौके को मैं बहुत क्रांति का अवसर कहता हूं।

भारत की स्त्री को करना यह है कि पहले तो उसे स्पष्ट रूप से यह समझ लेना है कि पुरुष के व्यक्तित्व की शोध और खोज खत्म हो गई। पुरुष ने जो मार्ग पकड़ा था पांच—छः हजार वर्षों में, वह डैड एण्ड पर आ गया, अब उसके आगे कोई रास्ता नहीं है।

स्त्री को पहली दफा यह सोचना है, क्या स्त्री भी एक नई संस्कृति को जन्म देने के आधार रख सकती है? कोई संस्कृति जहां युद्ध और हिंसा न हो। कोई संस्कृति जहां प्रेम, सहानुभूइत और दया हो। कोई संस्कृति जो विजय के लिए बहुत आतुर न हो। जीने के लिए आतुर हो।

जीने की आतुरता हो। जीवन को जीने की कला और जीवन को शांति से जीने की आस्था और निष्ठा पर खडी किसी संस्कृति को स्त्री जन्म दे सकती है? स्त्री जरूर जन्म दे सकती है।

आज तक चाहे युद्ध में कोई कितना ही मरा हो, स्त्री का मन निरंतर—प्राण उसके दुख से भरे रहे। उसका भाई मरता है, उसका बेटा मरता है, उसका बाप मरता है, पति मरता है, प्रेमी मरता है। स्त्री का कोई न कोई युद्ध में जाकर मरता है।

अगर सारी दुनिया की स्रियां एक बार तय कर लें कि भाड़ में जाने दें रूस को, अमरीका को। सारी दुनिया की स्रियां एक बार तय कर लें युद्ध नहीं होगा। दूनिया का कोई राजनैतिक युद्ध में कभी किसी को नहीं घसीट सकता। सिर्फ स्रियां तय कर लें, युद्ध अभी नहीं होगा, तो नहीं हो सकता है। क्योंकि कौन जायेगा युद्ध पर? कोई बेटा जाता है, कोई पति जाता है, कोई बाप जाता है। स्रियां एक बार तय कर लें।

लेकिन स्त्रियां पागल हैं। युद्ध होता है तो टीका करती हैं कि जाओ युद्ध पर! पाकिस्तानी मां पाकिस्तानी बेटे के माथे पर टीका करती है कि जाओ युद्ध पर! हिंदुस्तानी मां हिंदुस्तानी बेटे के माथे पर टीका करती है कि जाओ बेटे युद्ध पर जाओ।

पता चलता है कि स्त्री को कुछ पता नहीं कि क्या हो रहा है। वह पुरुष के पूरे जाल में सिर्फ एक खिलौना, हर जगह एक खिलौना बन जाती है। चाहे पाकिस्तानी बेटा मरता हो और चाहे हिंदुस्तानी किसी मां का बेटा मरता है। यह स्त्री को समझना होगा। और चाहे रूस का पति मरता हो चाहे अमेरिका का। स्त्री को समझना होगा उसका पति मरता है।

और अगर सारी दुनिया की स्रियों को एक खयाल पैदा हो जाये कि अब हमें अपने पति को, अपने बेटे को, अपने बाप को युद्ध पर नहीं भेजना है, तो फिर पुरुष की लाख कोशिश और राजनैतिकों की हर चेष्टा व्यर्थ हो सकती है। युद्ध नहीं हो सकता है।

यह स्त्री की इतनी बड़ी शक्ति है, लेकिन उसने उसका कोई उपयोग नहीं किया। उसने कभी कोई आवाज नहीं की, उसने कोई फिक्र नहीं की। वह आदमी ने, पुरुष ने जो रेखायें खींचीं हैं राष्ट्रों की, उनको वह भी मान लेती है! प्रेम कोई रेखायें नहीं मान सकता, हिंसा रेखायें मानती है।

हम कहते हैं भारत माता! भारत माता जैसी कोई चीज दूनिया में नहीं है। अगर है भी कोई तो पृथ्वी माता जैसी कोई चीज हो सकती है? भारत माता पुरुष की ईजाद है। अपने हाथ से उसने कीलें ठोंक कर झंडे गाड़ दिये हैं! और कहा कि यह भारत अलग!

लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि स्त्री के मन में आज भी और हमेशा से कभी भी सीमा नहीं रही है, उन अर्थों में जिन अर्थों में पुरुष के मन में सीमा है। क्योंकि जहां भी प्रेम है, वहां सीमा नहीं होती। सारी दूनिया की स्त्रियों को एक तो बुनियादी यह खयाल जाग जाना चाहिए कि हम एक नई संस्कृति को, एक नये समाज को, एक नई सभ्यता को जन्म दे सकती हैं—जो पुरुष का आधार है, उसके ठीक विपरीत आधार रखकर।

भारत में यह बहुत सुविधा से हो सकता है। भारत में यह रूपांतरण बहुत आसानी से हो सकता है। तो पहली तो बात यह है कि दूनिया की स्त्रियों की एक शक्ति और एक आवाज, एक आत्मा निर्मित होनी चाहिए। और वह दो तरह की बगावत करे। पुरुष की सारी संस्कृति को कहे कि गलत है। और वह गलत है। अधूरी है और खतरनाक है।

दूसरी बात, स्त्री के मन में जो प्रेम है, उस प्रेम का भी पूरा विकास नहीं हो सका है। पुरुष ने उस पर भी दीवालें बांधी हैं। उस पर भी उसने कारागृह खड़ा किया है कि प्रेम की इतनी सीमा है कि इससे आगे मत जाने देना। प्रेम से पुरुष बहुत भयभीत है। वह प्रेम पर पच्चीस रुकावटें डालता है। कारागृह बनाता है। उस कारागृह ने दूनिया में स्त्री के प्रेम को विकसित नहीं होने दिया। फैलने नहीं दिया। उस सुगंध से दूनिया को भरने नहीं दिया। स्त्री को इस तरफ भी बगावत करनी जरूरी है कि वह कहे कि प्रेम पर सीमाएं हम तोड़ेंगे।

प्रेम की कोई सीमा नहीं है और प्रेम की अपनी पवित्रता है।

सारी सीमाएं उस पवित्रता को नष्ट करती हैं और गंदा करती हैं। उस सीमा को फैलाना है। उसकी सीमा बढ़नी चाहिए, फैलनी चाहिए। अगर वह फैलती है तो जैसे पॉजेसिव पुरुष की एक प्रवृत्ति है—पॉजेस करने की.?.। कभी आपने खयाल किया, पुरुष की सारी प्रवृत्ति है, इकट्ठा करो। मालिक बन जाओ। स्त्री की सारी प्रवृत्ति है, दे दो। मालकियत छोड़ दो। किसी को दे दो। स्त्री का सारा आनंद दे देने में है और पुरुष का सारा आनंद कब्जा कर लेने में है। यह कब्जा करने वाला पुरुष ही दूनिया में युद्ध का कारण बना है।

अगर दुनिया में कभी भी हमें गैर—युद्ध वाली दूनिया बनानी हो तो ध्यान रखना पड़ेगा, इकट्ठा कर लेना, पॉजेस कर लेना, मालिक बन जाना, इस प्रवृत्ति को जगह न दे देने की हिम्मत जुटानी पड़ेगी। नहीं तो.?

मैंने सुना है एक छोटा—सा गीत, रवीन्द्रनाथ ने लिखा है। और मुझे बहुत प्रीतिकर लगी वह कहानी, जो गीत में उन्होंने गायी है। गाया है कि एक भिखारी एक दिन सुबह अपने घर के बाहर निकला। त्यौहार का दिन है। आज गांव में बहुत भिक्षा मिलने की संभावना है। वह अपनी झोली में थोड़े से दाने डालकर चावल के, बाहर आया। चावल के दाने उसने डाल दिये

हैं अपने झोली में। क्योंकि झोली अगर भरी दिखाई पड़े तो देने वाले को आसानी होती है। उसे लगता है किसी और ने भी दिया है। सब भिखारी अपने हाथ में पैसे लेकर अपने घर से निकलते हैं, ताकि देने वाले को संकोच मालूम पड़े कि नहीं दिया तो अपमानित हो जाऊंगा— और लोग दे चुके हैं।

आपकी दया— आपकी दया काम नहीं करती भिखारी को देने में। आपका अहंकार काम करता है— और लते दे चुके हैं, और मैं कैसे न दूं।

वह डालकर निकला है थोडे से दाने। थोड़े से दाने उसने डाल रखे हैं चावल के। बाहर निकला है। सुरज निकलने के करीब है। रास्ता सोया है। अभी लोग जाग रहे हैं। देखा है उसने, राजा का रथ आ रहा है। स्वर्ण रथ—सूरज की रोशनी में चमकता हुआ।

उसने कहा, धन्य भाग्य मेरे! भगवान को धन्यवाद। आज तक कभी राजा से भिक्षा नहीं मांग पाया, क्योंकि द्वारपाल बाहर से ही लौटा देते। आज तो रास्ता रोककर खड़ा हो जाऊंगा! आज तो झोली फैला दूंगा। और कहूंगा, महाराज! पहली दफा भिक्षा मांगता हूं। फिर सम्राट तो भिक्षा देंगे। तो कोई ऐसी भिक्षा तो न होगी। जन्म—जन्म के लिए मेरे दुख पूएर हो जायेंगे। वह कल्पनाओं में खोकर खड़ा हो गया।

रथ आ गया। वह भिखारी अपनी झोली खोले, इससे पहले ही राजा नीचे उतर आया। राजा को देखकर भिखारी तो घबड़ा गया और राजा ने अपनी झोली अपना वस्त्र भिखारी के सामने कर दिया। तब तो वह बहुत घबड़ा गया। उसने कहा आप! और झोली फैलाते हैं?

राजा ने कहा, ज्योतिषियों ने कहा है कि देश पर हमले का डर है। और अगर मैं जाकर आज राह पर भीख मांग लूं तो देश बच सकता है। वह पहला आदमी जो मुझे मिले, उसी से भीख मांगनी है। तुम्हीं पहले आदमी हो। कृपा करो। कुछ दान दो। राष्ट्र बच जाये।

उस भिखारी के तो प्राण निकल गए। उसने हमेशा मांगा था। दिया तो कभी भी नहीं था। देने की उसे कहीं कल्पना ही नहीं थी। कैसे दिया जाता है, इसका कोई अनुभव नहीं था। सब मांगता था। बस मांगता था। और देने की बात आ गई, तो उसके प्राण तो रुक ही गये! मिलने का तो सपना गिर ही गया। और देने की उलटी बात! उसने झोली में हाथ डाला। मुट्ठी भर दाने हैं वहां। भरता है मुट्ठी, छोड़ देता है। हिम्मत नहीं होती कि दे दें। राजा ने कहा, कुछ तो दे दो। देश का खयाल करो। ऐसा मत करना कि मना कर दो। अन्यथा बहुत हेरान हो जायेगी। बहुत मुश्किल से बहुत कठिनाई से एक दाना भर उसने निकाला और राजा के वस्त्र में डाल दिया! राजा रथ पर बैठा। रथ चला गया। धूल उड़ती रह गई।

और साथ में दुख रह गया कि एक दाना अपने हाथ से आज देना पडा। भिखारी का मन देने का नहीं होता। दिन भर भीख मांगी। बहुत भीख मिली। लेकिन चित्त में दुख बना रहा एक दाने का, जो दिया था।

कितना ही मिल जाये आदमी को, जो मिल जाता है, उसका धन्यवाद नहीं होता; जो नहीं मिल पाया, जो छूट गया, जो नहीं है पास, उसकी पीड़ा होती है।

लौटा सांझ दुखी, इतना कभी नहीं मिला था! झोला लाकर पटका। पत्नी नाचने लगी। कहा, इतनी मिल गयी भीख! नाच मत पागल! तुझे पता नहीं, एक दाना कम है, जो अपने पास हो सकता था।

फिर झोली खोली। सारे दाने गिर पड़े। फिर वह भिखारी छाती पीटकर रोने लगा, अब तक तो सिर्फ उदास था। रोने लगा। देखता कि दानों की उस कतार में, उस भीड़ में एक दाना सोने का हो गया! तो वह चिल्ला—चिल्लाकर रोने लगा कि मैं अवसर चूक गया। बड़ी भूल हो गयी। मैं सब दाने दे देता, सब सोने के हो जाते। लेकिन कहां खोजूं उस राजा को? कहां जाऊं? कहा वह रथ मिलेगा? कहां राजा द्वार पर हाथ फैलायेगा? बडी मुश्किल हो गयी। क्या होगा? अब क्या होगा? वह तड़पने लगा।

उसकी पत्नी ने कहा, तुझे पता नहीं, शायद जो हम देते हैं, वह स्वर्ण का हो जाता है। जो हम कब्जा कर लेते हैं, वह सदा मिट्टी का हो जाता है।

जो जानते हैं, वे गवाही देंगे इस बात की; जो दिया है, वही स्वर्ण का हो गया।

मृत्यु के क्षण में आदमी को पता चलता है, जो रोक लिया था, वह पत्थर की तरह छाती पर बैठ गया है। जो दिया था, जो बांट दिया था, वह हलका कर गया। वह पंख बन गया। वह स्वर्ण हो गया। वह दूर की यात्रा पर मार्ग बन गया।

लेकिन स्त्री का पूरा व्यक्तित्व, देने वाला व्यक्तित्व है।

और अब तक हमने जो दुनिया बनायी है, वह लेने वाले व्यक्तित्व की है। लेने वाले व्यक्तित्व के कारण पूंजीवाद है। लेने वाले व्यक्तित्व के कारण साम्राज्यशाही है। लेने वाले व्यक्तित्व के कारण युद्ध है, हिंसा है।

क्या हम देने वाले व्यक्तित्व के आधार पर कोई समाज का निर्माण कर सकते हैं? यह हो सकता है। लेकिन यह पुरुष नहीं कर सकेगा। यह स्त्री कर सकती है। और स्त्री सजग हो,

कांशस हो, जागे तो कोई भी कठिनाई नहीं। एक क्रांति, बडी से बड़ी क्रांति दुनिया में स्त्री को लानी है। वह यह, एक प्रेम पर आधारित—देने वाली संस्कृति; जो मलती नहीं, इकट्ठा नहीं करती, देती है। ऐसी एक संस्कृति निर्मित करनी है। ऐसी संस्कृति के निर्माण के लिए जो भी किया जा सके, वह सब.? उस सबसे बड़ा धर्म स्त्री के सामने आज कोई और नहीं।

यह थोड़ी—सी बात मैंने कही। पुरुष के संसार को बदल देना है आमूल। स्त्री के ह्रदय में जो छिपा है, उसकी छाया को फैलाना है। उस वृक्ष को बड़ा करना है, तो शायद एक अच्छी मनुष्यता का जन्म हो सकता है। स्त्री के जीवन में चेतना की क्रांति सारी मनुष्यता के लिए क्रांति बन सकती है।

कौन करेगा लेकिन यह? स्रियां न सोचतीं, न विचारती। स्रियां न इकट्ठा हैं, न कोई सामूहिक आवाज है, न उसकी कोई आका है! शायद पुरानी पीढी नहीं कर सकेगी। लेकिन नई पीढ़ी की लड़कियां कुछ अगर हिम्मत जुटायेगी और फिर पुरुष होने की नकल और बेवकूफी में नहीं पड़ेगी तो यह क्रांति निश्चित हो सकती है। उनकी तरफ बहुत आशा से भरकर देखा जा सकता है।

मेरी ये सब बातें इतने प्रेम और शांति से सुनीं, इससे बहुत अनुगृहीत हूँ।

और अंत में सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं।

मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

'नारी और क्रांति'

संभोग से समाधि की ओर—46

Posted on सितम्बर 19, 2013by sw anand prashad

नारी एक और आयाम—प्रवचन चौदहवां

स्त्री और पुरुष के इतिहास में भेद की, भिन्नता की, लम्बी कहानी जुड़ी हुई है। बहुत प्रकार के वर्ग हमने निर्मित किये हैं। गरीब का, अमीर का; धन के आधार पर, पद के आधार पर। और सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि हमने स्त्री पुरुष के बीच भी वर्गोंका निर्माण किया है! शायद हमारे और सारे वर्ग जल्दी मिट जायेंगे, स्त्री पुरुष के बीच खड़ी की गयी दीवाल को मिटाने में बहुत समय लग सकता है। बहुत कारण हैं।

स्त्री और पुरुष भिन्न हैं, यह तो निशित है, लेकिन असमान नहीं।

भिन्नता और असमानता दो अलग बातें हैं। भिन्न होना एक बात है। सच में एक आदमी दूसरे आदमी से भिन्न है ही। कोई आदमी समान नहीं है।। कोई पुरुष भी समान नहीं है। स्त्री और पुरुष भी भिन्न हैं। लेकिन भिन्नता तो वर्ग बनाना, ऊंचा—नीचा बनाना, मनुष्य का पुराना षड्यंत्र और शैतानी रही है।
हजारों वर्षों का अतीत का इतिहास स्त्री के शोषण का इतिहास भी है। पुरुष ने ही चूंकि सारे कानून निर्मित किये हैं, और पुरुष चूंकि शक्तिशाली था। उसने स्त्री पर जो भी थोपना चाहा, थोप दिया।

जब तक स्त्री के ऊपर से गुलामी नहीं उठती, तब तक दुनिया से गुलामी का बिलकुल अंत नहीं हो सकता।

राष्ट्र स्वतंत्र हो जायेंगे। आज नहीं कल, गरीब और अमीर के बीच के फासले भी कम हो जायेंगे, लेकिन स्त्री और पुरुष के बीच शोषण का जाल सबसे गहरा है। स्त्री और पुरुष के बीच फासले की कहानी इतनी लंबी गयी है कि करीब—करीब भूल गयी है! स्वयं स्रियों को भी भूल गयी है,

पुरुषों को भी भूल गयी है!

इस संबंध में थोड़ी बातें विचार करना उपयोगी होगा। इसलिए कि आने वाली जिंदगी को जिसे आप बनाने में लगेंगे— हो सकता है स्त्री और पुरुष के बीच समानता का, स्वतंत्रता का, एक समाज और एक परिवार निर्मित कर सकें। अगर खयाल ही न हो तो हम पुराने ढांचों में ही फिर घूमकर जीने लगते हैं। हमें पता भी नहीं चलता कि हमने कब पुरानी लीकों पर चलना शुरू कर दिया है!

आदमी सबसे ज्यादा सुगम इसे ही पाता है कि जो हो रहा था, वैसा ही होता चला जाये, लीस्ट रेसिस्टेंस वहीं है। इसलिए पुराने ढंग का परिवार चलता चला जाता है। पुरानी समाज व्यवस्था चली जाती है। पुराने ढंग से सोचने के ढंग चलते चले जाते हैं। तोड़ने में कठिनाई मालूम पड़ती है, बदलने में मुश्किल मालूम पड़ती है—दो कारणों से। एक तो पुराने की आदत और दूसरा नये को निर्माण करने की मुश्किल।

सिर्फ वे ही पीढ़ियां पुराने को तोड़ती हैं, जो नये को सृजन देने की क्षमता रखती है। विश्वास रखती हैं स्वयं पर। और स्वयं का विश्वास न हो तो हम पुरानी पीढ़ी के पीछे चलते चले जाते हैं। वह पुरानी पीढ़ी भी अपने से पुरानी पीढ़ी के पीछे चल रही है! कुछ छोटी—सी

स्मरणीय बातें पहले हम खयाल कर लें—स्त्री और पुरुष के बीच फासले, असमानता किस—किस रूप में खड़ी हुई है।

भिन्नता शुनिश्रित है और भिन्नता होनी ही चाहिए।

भिन्नता ही स्त्री को व्यक्तित्व देती है और पुरुष को व्यक्तित्व देती है।

लेकिन हमने भिन्नता को ही असमानता में बदल दिया। इसलिए सारी दूनिया में स्त्रियां भिन्नता को तोड़ने की कोशिश कर रही हैं, ताकि वे ठीक पुरुष जैसी मालूम पड़ने लगें। उन्हें शायद खयाल है कि इस भांति असमानता भी टूट जायेगी।

मैंने सुना है, एक सिनेमा गृह के सामने अमरीका के किसी नगर में बड़ी भीड़ है। क्यू लगा हुआ है। लंबी कतार है। लोग टिकट लेने को खड़े हैं। एक बूढ़े आदमी ने अपने सामने खड़े हुए व्यक्ति से पूछा, आप देखते हैं, वह सामने जो लड़का खड़ा हुआ है, उसने किस तरह लड़कियों जैसे बाल बढ़ा रखे हैं। उस सामने वाले व्यक्ति ने कहा, माफ करिये, वह लड़का नहीं है, वह मेरी लड़की है। उस बूढ़े ने कहा, क्षमा करिये, मुझे क्या पता था कि आपकी लड़की है। तो आप उसके पिता हैं? उसने कहा कि नहीं, मै उसकी मां हूं!

कपडों का फासला कम किया जा रहा है। धीरे—धीरे कपड़े करीब एक जैसे होते जा रहे हैं। हो सकता है, सौ वर्ष बाद कपड़ों के आधार पर फर्क करना मुश्किल हो जाये। लेकिन, कपड़ों के फासले कम हो जाने से भिन्नता नहीं मिट जायेगी। भिन्नता गहरी, बायोलाजिकल, जैविक और शारीरिक है। भिन्नता साइकोलाजिकल भी है बहुत गहरे में। कपड़ों से कुछ फर्क नहीं पड़ जाने वाला है। एक

पुरुषों ने भी भिन्नता मिटाने के बहुत प्रयोग किये हैं। हमें खयाल में नहीं है। क्योंकि हम आदी हो जाते हैं। राम, कृष्ण, बुद्‌ध और महावीर की मूर्तियां और चित्र आपने देखे होंगे। और अगर सोचते होंगे थोड़ा—बहुत तो यह खयाल आया होगा कि इन लोगों के चेहरे पर दाढ़ी मूंछ क्यों दिखायी नहीं पड़ते? असंभव है यह बात। एकाध के साथ हो भी सकता है कि किसी एक राम, कृष्ण, महावीर, किसी एक को दाढ़ी मूंछ न रही हो। यह संभव है। कभी हजार में एक पुरुष को नहीं भी होती है। लेकिन चौबीस जैनियों के तीर्थंकर, हिन्दुओं के सब अवतार, बुद्‌धों की सारी कल्पना, किसी को दाढ़ी मूंछ नहीं है! कुछ कारण है। पुरुष को ऐसा लगा है कि स्त्री सुन्दर है, तो स्त्री जैसे होने से जैसे पुरुष भी सुन्दर हो जायेगा। फिर राम और कृष्ण को तो हमने मान लिया कि उनको दाढ़ी मूंछ होती ही नहीं। फिर हम क्या करें? तो सारी जमीन पर पुरुष दाढ़ी मूंछ को काटने की कोशिश में लगा है। स्त्री जैसा चेहरा बनाने की चेष्टा चल रही है। उससे भी कोई भेद मिट जाने वाले नहीं हैं।

न कपड़े बदलने से कोई फर्क पड़ने वाला है। न सपनों पर ऊपरी फर्क कर लेने से कुछ फर्क पड़ने वाला है। भेद गहरा है और अगर भेद मिटाने कि कोशिश से हम चाहते हों कि असमानता मिटे तो असमानता कभी नहीं मिटेगी। असमानता हमारी थोपी हुई है। भेद में असमानता नहीं है। दो भिन्न व्यक्ति बिलकुल समान हो सकते हैं। समान प्रतिष्ठा दी जा सकती है।

पहली भूल मनुष्य ने यह की कि भिन्नता को असमानता समझा। डिफरेंस को इनइक्यालिटी समझा। और अब उसी भूल पर दूसरी भूल चल रही है कि हम भिन्नता को कम कर लें। जो काम पुरुष करते हैं, वे ही स्रियां करें! जो कपड़े वे पहनते हैं, वे हम भी पहनें! जिस भाषा का वे उपयोग करते हैं, स्त्रियां भी वैसी ही करें! अमरीका में जिन शब्दों का उपयोग स्त्रियों ने कभी भी नहीं किया था मनुष्य के इतिहास में, कुछ गालियां सिर्फ पुरुष ही देते हैं, वह उनका गौरव है। अमरीका की लड़कियां उन्हीं गालियों को देने के लिए भी चेष्टा में संलगन हैं! उन गालियों का भी उपयोग कर रही हैं! क्योंकि पुरुष के साथ समान खड़े हो जाने की बात है।

और समानता का खयाल ऐसा है कि हम शायद भेद, भिन्नता को किसी तरह से लीप—पोत कर एक—सा कर दें, तो शायद समानता उपलब्ध हो जाय। नहीं, समानता उससे उपलब्ध नहीं होगी, क्योंकि असमानता का भी मूल आधार वह नहीं है। असमानता किन्हीं और कारणों से निर्मित हुई है। और जैसे हम कहानी सुनते हैं कि सत्यवान मर गया है, सावित्री उसे दूर से जाकर लौटा लायी है। लेकिन कभी कोई कहानी ऐसी सुनी कि पत्नी मर गयी हो और पति दूर से जाकर लौटा लाया हो। नहीं सुनी है हमने।

स्रियां लाखों वर्ष तक इस देश में पुरुषों के ऊपर बर्बाद होती रही हैं। मरकर सती होती रही है। कभी ऐसा सुना, कि कोई पुरुष भी किसी स्त्री के लिए सती हो गया हो? क्योंकि सारा नियम, सारी व्यवस्था, सारा अनुशासन पुरुष ने पैदा किया है। वह स्त्री पर थोपा हुआ है। सारी कहानियां उसने गढ़ी है। वह कहानियां गढ़ता है, जिसमें पुरुष को स्त्री बचाकर लौट आती है। और ऐसी कहानी नहीं गढ़ता, जिसमें पुरुष स्त्री को बचाकर लौटता हो।

स्त्री गयी कि पुरुष दूसरी स्त्री की खोज में लग जाता है, उसको बचाने का सवाल नहीं है। पुरुष ने अपनी शुविधा के लिये सारा इलजाम कर लिया है। असल में जिसके पास थोड़ी—सी भी शक्ति हो, किसी भांति की, वे जो थोड़े भी निर्बल हों किसी भी भांति से, उनके ऊपर सवार हो ही जाते हैं। मालिक बन ही जाते हैं। गुलामी पैदा हो जाती है।

पुरुष थोड़ा शक्तिशाली है शरीर की दृष्टि से। ऐसे यह शक्तिशाली होना किन्हीं और कारणों से पुरुष को पीछे भी डाल देता है। पुरुष के पास स्ट्रैंग्थ और शक्ति ज्यादा है। लेकिन रेसिस्टेंस उतनी ज्यादा नहीं है, जितनी स्त्री के पास है। और अगर पुरुष और स्त्री दोनों को

किसी पीड़ा में सफरिंग में से गुजरना पड़े तो पुरुष जल्दी टूट जाता है। स्त्री ज्यादा देर तक टिकती है। रेसिस्टेंस उसकी ज्यादा है। प्रतिरोधक शक्ति उसकी ज्यादा है। लेकिन सामान्य शक्ति कम है। शायद प्रकृति के लिए यह जरूरी है कि दोनों में यह भेद हो, क्योंकि स्त्री कुछ पीड़ाएं झेलती है।

जो पुरुष अगर एक बार भी झेले, तो फिर सारी पुरुष जाति कभी झेलने को राजी, नहीं होगी। नौ महीने तक एक बच्चे को पेट में रखना और फिर उसे जन्म देने की पीडा और फिर उसे बड़ा करने की पीड़ा, वह कोई पुरुष कभी राजी नहीं होगा। अगर एक रात भी एक छोटे बच्चे के साथ पति को छोड़ दिया जाय तो या तो वह उसकी गर्दन दबाने की सोचेगा या अपनी गर्दन दबाने की सोचेगा।

मैंने सुना है, एक दिन सुबह मास्को की सड़क पर एक आदमी छोटी—सी बच्चों की गाड़ी को धक्का देता हुआ चला जा रहा है। सुबह है लोग घूमने निकले हैं। फूल खिले हैं, पक्षी खिले हैं। वह आदमी रास्ते में चलते—चलते बार—बार यह कहता है अब्राहम शांत रह— अब्राहम उसका नाम होगा। पता नहीं, वह किससे कह रहा है। वह बार—बार कहता है, अब्राहम शांत रह। अब्राहम धीरज रख। बच्चा रो रहा है। वह गाड़ी को धक्के दे रहा है। एक बूढ़ी औरत उसके पास आती है। वह कहती है, क्या बच्चे का नाम अब्राहम है?

वह आदमी कहता है, क्षमा करना, अब्राहम मेरा नाम है। मैं अपने को समझा रहा हूं। शान्त रह, धीरज रख, अभी घर आया चला जाता है। इस बच्चे को तो समझाने का सवाल नहीं है। अपने को समझा रहा हूं कि किसी तरह दोनों सही सलामत घर पहुंच जायें।

स्त्री के पास एक प्रतिरोधक शक्ति है, जो प्रकृति ने उसे दी है। एक रेसिस्टेंस की ताकत है। बहुत बड़ी ताकत है। कितनी ही पीड़ा और कितने ही दुख और कितने ही दमन के बीच वह जिंदा रहती है और मुस्करा भी सकती है। पुरुषों ने जितना दबाया है स्त्री को, अगर स्त्रियों ने उस दमन को, उस पीड़ा को कष्ट से लिया होता तो शायद वे कभी की टूट गयी होतीं। लेकिन वे नहीं टूटी हैं। उनकी मुस्कराहट भी नहीं टूटी है। इतनी लम्बी परतंत्रता के बाद भी उसके चेहरे पर कम तनाव है पुरुष की बजाय।

रेसिस्टेंस की, झेलने की, सहने की, टालरेंस की, सहिष्णुता की बड़ी शक्ति उसके पास है। लेकिन मस्कुलर, बड़े पत्थर उठाने की, और बड़ी कुल्हाड़ी चलाने की शक्ति पुरुष के पास है। शायद जरूरी है कि पुरुष के पास वैसी शक्ति ज्यादा हो। उसे कुछ काम करने हैं जिंदगी में, वह वैसी शक्ति की मांग करते हैं। स्त्री को जो काम करने हैं, वह वैसी शक्ति की मांग करते हैं। और प्रकृति या अगर हम कहें परमात्मा इतनी व्यवस्था देता है जीवन को कि सब तरफ से जो जरूरी है जिसके लिए, वह उसको मिल जाता है।

कभी हमने खयाल भी नहीं किया। जमीन पर, इतनी बड़ी पृथ्वी पर कोई तीन—साढ़े तीन अरब लोग हैं स्रियां पुरुष सब मिलाकर। किसी घर में लड़के ही लड़के पैदा हो जाते हैं। किसी घर में लड़कियां भी हो जाती हैं। लेकिन अगर पूरी पृथ्वी का हम हिसाब रखें तो लड़के और लड़कियां करीब—करीब बराबर पैदा होते हैं। पैदा होते वक्त बराबर नहीं होते। लेकिन पांच छः साल में बराबर हो जाते हैं; पैदा होते वक्त 125 लड़के पैदा होते हैं सौ लड़कियों पर। क्योंकि लड़कों का रेसिस्टेंस कम है। पच्चीस लड़के तो जवान होते—होते मर जाने वाले हैं। लड़के ज्यादा पैदा होते हैं। लड़कियां कम पैदा होती हैं, लेकिन जवान होते—होते लड़के और लडकियों की संख्या दुनिया में करीब—करीब बराबर हो जाती है।

कोई बहुत गहरी व्यवस्था भीतर से काम करती है। नहीं तो कभी ऐसा भी हो सकता है, इसमें कोई दुर्घटना तो नहीं कि जमीन पर स्रियां हो जायें एकबार। या पुरुष ही पुरुष हो जायें। यह संभावना है, अगर बिलकुल अंधेरे में व्यवस्था चल रही हो। लेकिन भीतर कोई नियम काम करता है। और नियम के पीछे बायोलाजिकल व्यवस्था दे। जितने अणु होते हैं, वीर्याणु होते हैं; उनमें आधे स्रियों को पैदा करने में समर्थ हैं, आधे पुरुषों को इसलिए कितना ही एक घर में भेद पड़े, लम्बे विस्तार पर भेद बराबर हो जाता है।

स्त्री को वह शक्तियां मिली हुई हैं, जो उसे अपने काम को—और स्त्री का बड़े से बड़ा काम उसका मां होना है। उससे बड़ा काम संभव नहीं है। और शायद मां होने से बडी कोई संभावना पुरुष के लिए तो है ही नहीं। स्त्री कं लिए भी नहीं है। मां होने की संभावना हम सामान्य रूप से महण कर लेते हैं।

कभी आपने नहीं सोचा होगा, इतने पेन्टर हुए, इतने मूर्तिकार हुए, इतने चित्रकार, इतने कवि, इतने आर्किटेक्ट, लेकिन स्त्री कोई एक बड़ी चित्रकार नहीं हुई! कोई एक स्त्री बडी आर्किटेक्ट, वास्तुकला में अग्रणी नहीं हुई! कोई।]क स्त्री ने बहुत बड़े संगीत को जन्म नहीं दिया! कोई एक स्त्री ने कोई बहुत अदभुत मूर्ति नहीं काटी! सृजन न,। सारा काम पुरुष ने किया है। और कई बार पुरुष को ऐसा खयाल आता है कि क्रिएटिव, सृजनात्मक शक्ति हमीर पास है। स्त्री के पास कोई सृजनात्मक शक्ति नहीं है।

लेकिन बात उलटी है। स्त्री पुरुष को पैदा करने मैं इतना बड़ा श्रम कर लेती है कि और कोई सृजन करने कि जरूरत नहीं रह जाती। स्त्री के पास अपना एक क्रिएटिव एक्ट है। एक सृजनात्मक कृत्य है, जो इतना बड़ा कि न, पत्थर की मूर्ति बनाना और एक जीवित व्यक्ति को बड़ा करना.. लेकिन स्त्री के काम को हमने सहज स्वीकार कर लिया है। और इसीलिए स्त्री की सारी सृजनात्मक शक्ति उसके मां बनने में लग जाती है। उसके पास और कोई सृजन की न सुविधा बचती है, न शक्ति बचती है। न कोई आयाम, कोई डायमेंशन बचता है। न सोचने का सवाल है।

एक छोटे से घर को सुंदर बनाने में—लेकिन हम कहेंगे, छोटे से घर को सुंदर बनाना, कोई माइकल एंजलो तो पैदा नहीं हो सकता, कोई वानगाग तो पैदा नहीं हो जायेगा। कोई इजरा पाउंड तो पैदा नहीं होगा। कोई कालिदास तो पैदा नहीं होगा। एक छोटे से घर को... लेकिन मैं कुछ घरों में जाकर ठहरता रहा हूं।

एक घर में ठहरता था, मैं हैरान हो गया। गरीब घर है। बहुत सम्पन्न नहीं है। लेकिन इतना साफ सुथरा, इतना स्वच्छ मैंने कोई घर नहीं देखा। लेकिन उस घर की प्रशंसा करने कोई कभी नहीं जायेगा। घर की गृहणी उस घर को ऐसा पवित्र बना रही है कि कोई मंदिर भी उतना स्वच्छ और पवित्र नहीं मालूम पड़ता है। लेकिन उसकी कौन फिक्र करेगा? कौन माइकेल एंजलो,कालिदास और वानगाग में उसकी गिनती करेगा? वह खो जायेगी। या : एक ऐसा काम कर रही है, जिसके लिए कोई प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी। क्यों नहीं मिलेगी? नहीं मिलेगी यह, यह दुनियां पुरुषों की दुनिया है।

स्त्री के विकास, स्त्री की संभावनाओं, स्त्रियों की जो पोटेशियलिटीज हैं, उनके जो आयाम, ऊंचाइयां हैं, उनको हमने गिनती में ही नहीं लिया है। अगर एक आदमी गणित में कोई नयी खोज कर ले तो नोबल प्राइज मिल सकता है। लेकिन स्रियां निरंतर सृजन के बहुत नये—नये आयाम खोजती हैं। कोई नोबल प्राइज उनके लिए नहीं है! या : स्रियों की दुनिया नहीं हैं। स्रियों को सोचने के लिए, स्रियों को दिशा देने के लिए, उनके जीवन में जो हो, उसे भी मूल्य देने का हमारे पास कोई आधार नहीं है।

हम सिर्फ पुरुषों को आधार देते हैं! इसलिए अगर हम इतिहास उठाकर देखें तो उसमें चोर, डकैत, हल।, बड़े—बड़े आदमी मिल जायेंगे। उसमें चंगेज खां, तैमूर लंग और हिटलर और स्टैलिन और माओ सबका स्थान है। लेकिन उसमें हमें ऐसी स्त्रियां खोजने में बड़ी मुश्किल पड़ जायेगी। उनका कोई उल्लेख ही नहीं है जिन्होंने सुन्दर घर बनाया हो। जिन्होंने एक बेटा पैदा किया हो और जिसके साथ, जिसे बड़ा करने में सारी मां की ताकत, सारी प्रार्थना, सारा प्रेम लगा दिया हो। इसका कोई हिसाब नहीं मिलेगा।

पुरुष की एक तरफा अधूरी दूनिया अब तक चली है। और जो पूरा इतिहास है, वह पुरुष का ही इतिहास है, इसलिये युद्धों का, हिंसाओं का इतिहास है।

जिस दिन स्त्री भी स्वीकृत होगी और विराट मनुष्यता में उतना ही समान स्थान पा लेगी, जितना पुरुष का है, तो इतिहास भी ठीक दूसरी दिशा लेना शुरू करेगा।

मेरी दृष्टि में जिस दिन स्त्री बिलकुल समान हो जाती है, शायद युद्ध असंभव हो जाएं। क्योंकि युद्ध में कोई भी मरे, वह किसी का बेटा होता है। किसी का भाई होता है। किसी का पति होता है।

लेकिन पुरुषों को मरने, मारने की ऐसी लम्बी बीमारी है, क्योंकि बिना मरे मारे, वह अपने पुरुषत्व को ही सिद्ध नहीं कर पाते हैं। वे यह बता ही नहीं पाते हैं कि मैं भी कुछ हूं। तो मरने मारने का एक लम्बा जाल और फिर जो मर जाए ऐसे जाल में उसको आदर देना।

उन्होंने स्त्रियों को भी राजी कर लिया है कि जब तुम्हारे बेटे युद्ध पर जाएं तो तुम टीका करना! रो रही है मां, आंसू टपक रहे है, और वह टीका कर रही है! आशीर्वाद दे रही है! यह पुरुष ने जबर्दस्ती तैयार करवाया हुआ है। अगर दूनिया भर की स्त्रियां तय कर लें, तो युद्ध असंभव हो जायें।

लेकिन सब व्यवस्था, सब सोचना, सारी संस्कृति, सारी सभ्यता पुरुष के गुणों पर खड़ी है। इसलिए पूरी मनुष्यता इतिहास की युद्धों का इतिहास है।

अगर हम तीन हजार वर्ष की कहानी उठाकर देखें तो मुश्किल पड़ती है, कि आदमी कभी ऐसा रहा हो, जब युद्ध न किया हो! युद्ध चल ही रहा है! आज इस कोने में आग लगी है जमीन के। कल दूसरे कोने में। परसों दूसरे कोने में। आग लगी ही है। आदमी जल ही रहा है। आदमी मारा ही जा रहा है। और अब? अब हम उस जगह पहुंच गये हैं जहां हमने बड़ा इंतजाम किया है। अब हम आगे आदमी को बचने नहीं देगे।

अगर पुरुष सफल हो जाता है अपने अंतिम उपाय में, तीसरे महायुद्ध में तो शायद मनुष्यता नहीं बचेगी।

इतना इंतजाम करवा लिया है कि हम पूरी पृथ्वी को नष्ट कर दें। पूरी तरह से नष्ट कर दें। यह पुरुष के इतिहास की आखिरी क्लाइमेक्स हो सकती थी चरम, वहां हम पहुंच गये हैं। यह हम क्यों पहुंच गये हैं?

क्योंकि पुरुष गणित में सोचता है, प्रेम उसकी सोचने की भाषा नहीं है।

ध्यान रहे, विज्ञान विकसित हुआ है। धर्म विकसित नहीं हो सका।

और धर्म तब तक विकसित नहीं होगा जब तक स्त्री समान संस्कृति और जीवन में दान नहीं करती है। और उसे दान का मौका नहीं मिलता है।

गणित से जो चीज विकसित होगी, वह विज्ञान है। गणित परमात्मा तक ले जाने वाला नहीं है। चाहे दो और दो कितने ही बार जोड़ो तो भी बराबर परमात्मा होने वाला नहीं है। गणित कितना ही बढ़ता चला जाये वह पदार्थ से ऊपर जाने वाला नहीं है।

प्रेम परमात्मा तक पहुंच सकता है। लेकिन हमारी सारी खोज गणित की है। तर्क की है। वह विज्ञान लेकर खड़ा हो गया है। उसके आगे नहीं जाता।

प्रेम की हमारी कोई खोज नहीं है! शायद प्रेम की बात करना भी हम स्त्रियों के लिए छोड़ देते हैं। या कवियों के लिए जिनको हम करीब—करीब स्त्रियों जैसा गिनती करते हैं। उनकी गिनती हम कोई पुरुषों में नहीं करते।

नीत्शे ने तो एक अदभुत बात लिखी है जो बहुत खतरनाक है। किसी को बुरी भी लग सकती है। नीत्शे ने कई बातें लिखी हैं; मैं मानता हूं सच हैं। उसने तो पोज में लिखी है और गाली देने के इरादे से लिखी है, लेकिन बात सच है। नीत्शे ने लिखा है कि बुद्ध और क्राइस्ट को मै बूमनिस्ट मानता हूं! स्रैण मानता हूं! बुद्ध और क्राइस्ट को मैं स्रैण मानता हूं। मैं पुरुष नहीं मानता। क्योंकि जो लड़ने की बात नहीं करते,और जो लड़ने से बचने की बात करते हैं वह पुरुष कैसे हो सकते हैं? पुरुषत्व तो लड़ने में ही है।

नीत्शे ने कहा, मैंने सुन्दरतम जो दृश्य देखा है जीवन में, वह तब देखा, जब सूरज की उगती रोशनी में सिपाहियों की चमकती हुई तलवारें और उनके चमकते हुए बूटों की आवाजें, उनका एक पंक्तिबद्ध, रास्ते से गुजरना, सूरज की रोशनी का गिरना, और पंक्तिबद्ध उनके पैरों की आवाज और उनकी चमकती हुई संगीनें—मैंने उससे सुन्दर दृश्य जीवन में दूसरा नहीं देखा।

अगर यह आदमी, और यह मानता है कि ऐसा दृश्य सुंदर है, तो फूल स्रैण हो जायेंगे। निश्चित ही, जब चमकती हुई सगीने सुन्दर हैं तो फूल कहां टिकेंगे? फूलों को बाहर कर देना होगा सौन्दर्य के।

और जब नीत्शे कहता है, जो लड़ते हैं, और लड़ सकते हैं, और लड़ते रहते हैं, युद्ध ही जिनका जीवन है, मै ही पुरुष हैं तो ठीक है। बुद्ध और क्राइस्ट और महावीर को अलग कर देना होगा। उनकी स्त्रियों में ही गिनती करनी पड़ेगी।

लेकिन दुनिया में जो भी प्रेम के रास्ते से गया हो, उसमें किसी न किसी अर्थों मे नीत्शे का कहना ठीक है कि वह स्रैण है। यह अपमानजनक नहीं है। अगर पुरुष ने भी प्रेम किया हो तो, वह जो पुरुष की आम धारणाए हैं युद्ध की, संघर्ष की, हिंसा की, वायलेंस की, वे गिर जाती हैं। और नयी धारणाएं पैदा होती हैं—सहयोग की, क्षमा की, प्रेम की।

एक बौद्ध भिक्षु था। उस भिक्षु का नाम था पूर्ण। उसकी शिक्षा पूरी हो गयी। शिक्षा पूरी हो जाने पर बुद्ध। उससे कहा कि पूर्ण, अब तू जा और मेरे प्रेम की खबर लोगों तक पहुंचा दे। तू उन जगहों में जा जहां कोई नहीं गया हो। तू मेरी खबर ले जा प्रेम की। हिंसा की खबरें बहुत पहुंचायी गयी हैं। कोई प्रेम की खबर भी पहुंचाये। न गया

पूर्ण ने बुद्ध के पैर छुये और कहा कि मुझे आज्ञा दें कि मैं सूखा नाम का छोटा—सा बिहार का एक हिंसा। है, वहां जाऊं और आपका संदेश ले जाऊं।

बुद्ध ने कहा, वहां तू मत जा, तो बड़ी कृपा हो। वहां के लोग अच्छे नहीं हैं। वहां के लोग बहुत बुरे हैं। पूर्ण ने कहा, तब मेरी वहां जरूरत ही जरूरत है। जहां लोग बुरे हैं और अच्छे नहीं हैं, वहीं तो प्रेम का संदेश ले जाना पड़ेगा।

बुद्ध ने कहा, फिर मैं तुझसे दो तीन प्रश्न पूछता हूं। उत्तर दे दे। तब जा। सब से पहले पूछता हूं अगर भा:। के लोगों ने तेरा अपमान किया, गालियां दीं तो तुझे क्या होगा? पूर्ण ने कहा क्या होगा? मैं सोचूंगा, लोग कितने अच्छे हैं, सिर्फ गालियां देते हैं, अपमान करते हैं, मारते नहीं हैं। मार भी सकते थे।

बुद्ध ने कहा, यहां तक भी ठीक है। लेकिन अगर वे मारने लगे, वे लोग बुरे हैं, मार भी सकते हैं। अगर उन्होंने मारा, और तेरे प्रेम के संदेश पर पत्थर फेंके और लकड़ियां तेरे सिर पर बरसीं तो तुझे क्या होगा?

पूर्ण ने कहा, क्या होगा, मुझे यही होगा कि लोग अच्छे हैं। सिर्फ मारते हैं, मार ही नहीं डालते।

बुद्ध ने कहा, मैं तीसरी बात और पूछता हूं। अगर उन्होंने तुझे मार ही डाला तो मरते क्षण में तेरे मन को क्या होगा?

पूर्ण ने कहा, मेरे मन को होगा, कितने भले लोग हैं, मुझे उस जीवन से मुक्त कर दिया, जिसमें भूलचूक हो सकती थी। जिसमें मैं भटक भी सकता था। जिसमें मैं मारने को तैयार हो सकता था। उससे मुक्त कर दिया है।

बुद्ध ने कहा, अब तू जा। तेरा प्रेम पूरा हो गया है। और जिसका प्रेम पूरा हो गया है वही युद्ध के विपरीत, हिंसा के विपरीत खबर और हवा ले जा सकता है। तू जा।

स्रियां जिस दिन मनुष्य की संस्कृति में समान पुरुष के साथ खड़ी हो सकेंगी और मनुष्य की संस्कृति में आधा दान उनका होगा,उस दिन गणित अकेली चीज नहीं होगी। उस दिन प्रेम भी एक चीज होगी।

प्रेम गणित से बिलकुल उलटा है। धर्म वितान से बिलकुल उलटा है। गणित की और ही दुनिया है।

मिलट्री में हम आदमियों के नाम हटा देते हैं। अगर आप भर्ती हो गये हैं या मैं भर्ती हो गया हूं तो 11, 12, 15 ऐसे नंबर हो जायेंगे। जब एक आदमी मरेगा तो मिलट्री के बाहर नोटिस लग जायेगा, 12 नंबर गिर गया। आदमी नहीं मरता मिलट्री में। सिर्फ नंबर मरते हैं! आदमी के ऊपर भी हम नंबर लगा देते हैं, तो फर्क बहुत ज्यादा है।

अगर पता चले कि फलां आदमी मर गया, जिसकी पत्नी है, जिसके दो बेटे हैं, जिसकी बूढ़ी मां है, वे सब असहाय हो गये। फलां आदमी मर गया तो एक आदमी की तस्वीर उठती है। लेकिन 12 नंबर की न कोई पत्नी होती है, न कोई बेटे होते हैं। नंबर की कहीं पत्नियां और बेटे हुए हैं? नंबर बिलकुल नंबर है। जब 12 नंबर गिरने का बोर्ड पर नोटिस लगता है तो लोग पढ़कर निकल जाते हैं।

गणित का एक सवाल जैसा होता है कि इतने नंबर गिर गये। इतने नंबर खत्म हो गये। दूसरे नंबर उनकी जगह खड़े हो जायेंगे। 12 नंबर दूसरे आदमी का लग जायेगा। दूसरा आदमी बारह नंबर की जगह खड़ा हो जायेगा। गणित में रिप्लेसमेंट संभव है। जिंदगी में तो नहीं। एक आदमी मरा, उसको अब दूनिया में कोई दूसरा आदमी उसकी जगह रिप्लेस नहीं हो सकता। लेकिन गणित में कोई कठिनाई नहीं है। गणित में हो सकता है। इसलिए तो मिलट्री में तकलीफ नहीं है। नंबर ही गिरते हैं, नंबर ही मरते हैं। और हमने पूरी व्यवस्था की है, गणित से सोचने वाला आदमी जो व्यवस्था करता है, वह इतनी ही कठोर यांत्रिक, मेकेनिकल और इतनी ही जड़ होती है।

मैंने सुना है कि जिस आदमी ने सबसे पहले एवरेज का नियम खोजा—जब कोई आदमी कोई नया नियम खोज लेता है तो बड़ी उत्सुकता से भर जाता है। हम तो जानते हैं, आर्कमिडीज तो नंगा ही बाहर निकल आया अपने टब के, और चिल्लाने लगा युरेका, युरेका मिल गया, मिल गया। और भूल गया कि वह कपड़े नहीं पहने है, इतनी खुशी से भर गया।

जिस आदमी ने एवरेज का सिद्धांत खोजा, वह भी इतनी ही खुशी से भर गया होगा। जिस दिन उसने सिद्धात खोजा, अपनी पली अपने बच्चों को लेकर खुशी में पिकनिक पर गया।

एवरेज का मतलब.. एवरेज का मतलब है कि हिन्दुस्तान में एवरेज आदमी की कितनी आमदनी है। और मजा यह है कि एवरेज आदमी होता ही नहीं। एवरेज आदमी बिलकुल झूठी बात है। एवरेज आदमी कहीं नहीं मिलेगा। एवरेज आदमी एक रुपया है तो आप ऐसा आदमी नहीं खोज सकते कि जो एवरेज आदमी हो। सोलत्न आने वाला मिलेगा, सत्रह आने वाला मिलेगा, पौने सोलह आने वाला मिलेगा, पैसे वाला मिलेगा, भूखा मिलेगा। ठीक एवरेज आदमी पूरे हिन्दुस्तान में खोजने से नहीं मिलेगा। क्योंकि एवरेज गणित से निकली हुई बात है, आदमी की जिंदगी से नहीं। हम यहां इतने लोग बैठे हैं। हम सब की एवरेज उम्र निकाली जा सकती है। सब की उम्र जोड़ दी और सब आदमियों की गणना का भाग दे दिया। आ गया पंद्रह साल या सात साल या कुछ भी।

वह आदमी अपनी पत्नी और बच्चों के साथ जा रहा था। रास्ते में एक छोटा—सा नाला पड़ा। उसकी पत्नी —ने कहा नाले को जरा ठीक से देख लो, क्योंकि छोटे बच्चे हैं। पांच साल के बच्चे हैं। कोई डूब न जाये।

उसने कहा, ठहर, मैं बच्चों की एवरेज ऊंचाई नाप लेता हूं और नाले की एवरेज गहराई। अगर एवरेज गहराई से एवरेज बच्चा ऊंचा है तो बेफिक्र होकर पार हो सकते हैं। उसने अपना फुट निकाला। फुट साथ रखा हुआ था। नाप लिया—बच्चे नाप लिए। एवरेज बच्चा, एवरेज गहराई से ऊंचा था। कोई बच्चा बिलकुल छोटा था, को? बच्चा बड़ा था और कहीं नाला बिलकुल उथला था, और कहीं गहरा था। लेकिन वह एवरेज में नहीं आती बातें। गणित में नहीं आती। उसने कहा, बेफिक्र रह, मैंने हिसाब बिलकुल ठीक कर लिया है। रेत पर हिसाब लगा लिया। आगे गणितज्ञ हो गया। बीच में उसके बच्चे हैं, पीछे पत्नी है। पत्नी थोड़ी डरी हुई है।

स्त्रियों का गणित पर कभी भरोसा नहीं रहा है। थोड़ा भय और नीचे भी कुछ गड़बड़ हुई जा रही है, क्योंकि नाले में कई जगह हरापन दिखायी पड़ता है। नाला कई जगह गहरा मालूम पड़ता है। उसने देखा कि उसका पति खुद कहीं बिलकुल डूब गया है, और साथ एक छोटा बच्चा भी है।

वह सचेत है, लेकिन पति अकड़कर आगे चला जा रहा है। एक बच्चा डूबने लगा। उसकी पत्नी ने चिल्लाकर कहा, देखिये बच्चा डूब रहा है! आप समझते हैं?

उस आदमी ने क्या किया, पुरुष ने क्या किया? उसने कहा, यह हो ही नहीं सकता। क्योंकि गणित गलत कैसे हो सकता है? बच्चे को बचाने की बजाय वह भाग कर नदी के उस तरफ गया, जहां उसने रेत पर गणित किया था! पहले उसने गणित देखा, कि गणित कहीं गलत तो नहीं है। वह वहीं से चिल्लाया कि यह हो नहीं सकता गणित बिलकुल ठीक है।

गणित की एक दिशा है, जहां जड़ नियम होते हैं। चीजें तौली, नापी जा सकती हैं।

अब तक पुरुष ने जो संस्कृति बनायी है, वह गणित की संस्कृति है। वहां नाप, जोख, तौल सब है। स्त्री का कोई हाथ इस संस्कृति में नहीं है। क्योंकि उसे समानता का कोई हक नहीं है। उसे कभी हमने पुकारा नहीं कि तुम आओ और तुम एक दूसरे आयाम से, प्रेम के आयाम से भी दान करो कि समाज कैसा हो।

स्त्री अगर सोचेगी तो और भाषा में सोचती है। और उसका सोचना भी हमसे बहुत भिन्न है। उसे हम सोचना भी नहीं कह सकते। भावना कह सकते है। पुरुष सोचता है, स्त्री भावना करती है। सोचना भी नहीं कह सकते, क्योंकि सोचना गणित की दुनिया का हिसाब है। और इसलिए पुरुष हमेशा हिसाब लगाता है। स्त्री हिसाब के आसपास चलती है। ठीक हिसाब नहीं लगा पाती। ठीक हिसाब नहीं है उसके पास।

लेकिन जिंदगी अकेला गणित नहीं है। जिंदगी बहुत बड़े अर्थों में प्रेम है जहां कोई हिसाब नहीं होता। कोई गणित नहीं होता। जिंदगी बहुत बेबूझ है और इस जिंदगी को अगर हमने गणित की सीधी साफ रेखाओं पर निर्मित किया तो हम सीधी साफ रेखाएं बना लेंगे। लेकिन आदमी पुंछता चला जायेगा, मिटता चला जायेगा। और यही हो रहा है। रोज यह हो रहा है कि आदमी की जड़ें नीचे से कट रही हैं। क्योंकि हम जो इंतजाम कर रहे हैं, वह ऐसा इंतजाम है, जिसके ढांचे में जिंदगी नहीं पल सकती।

जैसे कि अगर समझ लें, मुझे एक फूल बहुत प्यारा लगे तो मैं एक तिजोरी में उसे बंद कर लूं। गणित यही कहेगा कि तिजोरी में बंद कर लो। ताला लगा दो जोर से। मुझे सूरज की रोशनी बहुत अच्छी लगे, एक पेटी में बंद कर लूं। अपने घर रखूं बांधकर। लेकिन, जिंदगी पेटियों में बंद नहीं होती—न गणित की पेटियों में, न साइंस की पेटियों में। कहीं बंद नहीं होती। जिंदगी बाहर छूट जाती है, एकदम छूट जाती है। मुट्ठी बांधी... अगर यहां हवा है और मैं मुट्ठी जोर से बांधू और सोचूं कि हवा को हाथ के भीतर बंद कर लूं.. तो मुट्ठी जितने जोर से बंधेगी हवा, उतनी हाथ से बाहर हो जायेगी।

जिंदगी बंधना मानती नहीं। जिंदगी एक तरलता और एक बहाव है। लेकिन हमारी, पुरुष की चितना की सारी जो कैटेगरिज हैं, पुरुष के सोचने का जो ढंग है, वह सब चीजों को बांधता है। व्यवस्थित बांध लेता है, हिसाब में बांध लेता है। अगर उससे पूछो कि मां का क्या मतलब है? अगर ठीक पुरुष से पूछो कि मां का क्या मतलब है? तो वह कहेगा, बच्चे पैदा करने की एक मशीन है! और क्या हो सकता है?

मैं एक वैज्ञानिक की किताब पढ़ रहा था। उस वैज्ञानिक से किसी ने पूछा, मुर्गी क्या है? तो उस आदमी ने कहा, मुर्गी अंडे की तरकीब है, और अंडे पैदा करने के लिए। अंड़े की तरकीब, और अंडे पैदा करने के लिए! मुर्गी क्या है? अंडे की तरकीब। और अंडे पैदा करने के लिए— और क्या हो सकता है? गणित ऐसा सोचेगा—सोचेगा ही। गणित इससे भिन्न सोच भी नहीं सकता। वितान इससे भिन्न सोच भी नहीं सकता। विज्ञान आत्मा की गणना नहीं करता! जीवन की गणना नहीं करता! चीजों को काट लेता है। काटकर खोज कर लेता है। विश्लेषण कर लेता है। और विश्लेषण में जो जीवन था, वह एकदम खो जाता है।

पुरुष ने जो दूनिया बनायी है.. वह पुरुष अधूरा है, अधूरी दुनिया बन गयी है। पुरुष अधूरा है, यह ध्यान रहे। और स्त्री के साथ बिना उसकी संस्कृति अधूरी होगी।

तो एक—एक घर में पुरुष एक—एक स्त्री को लाया है। एक—एक घर में तो पुरुष अकेला रहने को राजी नहीं है। स्त्री भी अकेले रहने को राजी नहीं है। चाहे कितनी कलह हो, स्त्री और पुरुष साथ रह रहे हैं!

लेकिन संस्कृति और सभ्यता की जहां दूनिया है, वहां स्त्री का बिलकुल प्रवेश नहीं हुआ है। वहां पुरुष बिलकुल अकेला है। पुरुष के अकेले, अधूरेपन ने.. पुरुष बिलकुल अधूरा है, जैसे स्त्री अधूरी है। वे काम्पलीमेंटरी हैं, दोनों को मिलाकर एक पूर्ण व्यक्तित्व बनता है।

लेकिन मनुष्य की संस्कृति अधूरी सिद्ध हो रही है। क्योंकि वह आधे पुरुष ने ही निर्मित की है। स्त्री से उसने कभी मल नहीं की। स्त्री सब गड़बड़ कर देती है, अगर वह आये तो। अगर लेबोरेटरी में उसे ले जाओ तो बजाय इसके कि वह आपकी परखनली और आपके टैस्ट—ट्यूब में क्या हो रहा है यह देखे, हो सकता है टैस्ट—ट्यूब को रंग कर सुंदर बनाने की कोशिश करे। स्त्री को लेबोरेटरी में ले जाओ, गड़बड़ होनी शुरू हो जायेगी। या पुरुष को स्त्री की बगिया में ले जाओ तो भी गड़बड़ होनी शुरू हो जायेगी। इस गड़बड़ के डर से हमने कम्पार्टमेंट बांट लिए हैं।

पुरुष की एक दुनिया बना दी है। स्त्री की एक अलग दुनिया बना दी है। और दोनों के बीच एक बड़ी दीवाल खड़ी कर ली है। और दीवाल खड़ी करके पुरुष अकड़ गया है और कहता है, मुझसे तुम्हारा मुकाबला क्या? का कुछ कर ही नहीं सकती। इसलिए घर में बंद रहो। तुमसे कुछ हो नहीं सकता। हम पुरुष ही कुछ कर सकते है। हम पुरुष श्रेष्ठ हैं। स्त्रियो, तुम्हारा काम है कि तुम बर्तन मलो, खाना बनाओ, बस इतना! इससे ज्यादा तुम्हारा कोई काम नहीं है। बच्चों को बड़ा करो! यह सब पुरुष ने स्त्री को एक दीवाल बना करके वहां सौप दिया है और वह बाहर अकेला मालिक होकर बैठ गया है! सब तरफ पुरुष इकट्ठे हो गये हैं।

कल्चर की जहां दुनिया है, संस्कृति की, वहां पुरुष इकट्ठे हो गये हैं! स्रियां वर्जित हैं! स्त्रियां अस्पृश्य की, अनटचेबल की भांति बाहर कर दी गयी हैं!

मेरी दृष्टि में इसीलिए मनुष्य की सभ्यता अब तक सुख की और आनंद की सभ्यता नहीं बन सकी। अब तक मनुष्य की सभ्यता पूर्ण इंटीग्रेटेड नहीं बन सकी है। उसका आधा अंग बिलकुल ही काट दिया गया है। इस आ हो अंग को वापिस समान हक न मिले, इसे वापिस पूरा जीवन, पूरा अवसर, स्वतंत्रता न मिले तो मनुष्य का बहुत भविष्य नहीं माना जा सकता। मनुष्य का भविष्य एकदम अंधकारपूर्ण कहा जा सकता है।

स्त्री को लाना है। भेद हैं, भिन्नताएं है। भिन्नताएं आनंदपूर्ण हैं, भिन्नताएं दुख का कारण नहीं हैं। असमानता दुख का कारण है। और असमानता को हमने भिन्नता के आधार पर... असमानता को इतना मजबूत कर लिया है कि कल्पना के बाहर है, कि स्त्री और पुरुष मित्र हो सकते हैं। पुरुष को लगता ही नहीं कि स्त्री और पुरूष मित्र! नहीं हो सकती! पत्नी हो सकती है! पत्नी यानी दासी।

और जब वह चिट्ठी लिखती है कि आपकी चरणों की दासी तो पुरुष बड़ा प्रसन्न होता है पढ़कर। बहुत प्रसन्न होता है। ठीक पत्नी मिल गयी है। ऐसी ही पत्नी होनी चाहिए।

पुरुषों के ऋषि—मुनि समझाते हैं कि स्त्री परमात्मा माने पुरुष को! पुरुष खुद ही समझा रहा है कि मुझे परमात्मा मानो!

और स्त्रियों के दिमाग को वह तीन हजार साल से कंडीशंड कर रहा है। और उनके दिमाग में यह प्रचार कर रहा है कि मुझे यह मानो!

पुरुषों ने किताबें लिखी हैं, जिसमें उन्होंने लिखा है कि स्त्री अगर कल्पना भी कर ले दूसरे पुरुष की, तो पापिन है! और पुरुष अगर वेश्या के घर भी जाये तो पवित्र! स्त्री वही है, जो उसे कंधे पर बिठाकर वेश्या के घर पहुंचा दे।

मजेदार लोग हैं—बहुत मजेदार लोग हैं! और हम.. लेकिन यह स्वीकृत हो गया! इसमें स्रियों को भी एतराज नहीं है. यह स्वीकृत हो गया है!

स्रियों को.. इतने दिन से प्रोपेगण्डा किया गया है उनकी खोपड़ी पर, हेमरिंग की गयी है कि उन्होंने मान लिया है। बचपन से ही उन्हें नंबर दो की स्थिति स्वीकार करने के लिए मां—बाप तैयार करते हैं। वह नंबर एक नहीं हे। वह नंबर दो है। इसकी स्वीकृति बचपन से उनके मन पर थोपी चली जाती है!

पूरी संस्कृति, पूरी व्यवस्था.. कैसे यह छुटकारा हो, कैसे यह स्त्री पुरुष के सामान खड़ी हो सके, बहुत कठिन मामला मालूम पड़ता है।

लेकिन दो—तीन सूत्र सुझाना चाहता हूं। इनके बिना शायद स्त्री पुरुष के समान खड़ी नहीं हो सकती। और ध्यान रहे जब तक पूरी परिस्थिति नहीं बदलती है.. पुरुष कितना ही कहे कि तुमको भी तो समान हक है वोट करने का, तुम समान हो। सब बातें ठीक हैं। असमानता क्या है? इससे कुछ हल नहीं होगा। स्त्री के नीचे होने में, उसके जीवन की गुलामी में, उसकी असमानता में कुछ कारण हैं। जैसे जब तक स्त्रियों की अपनी कोई आर्थिक स्थिति नहीं है, जब तक उनकी अपनी इकॉनामिक, अर्थगत, सम्पत्तिगत अपनी कोई स्थिति नहीं है, तब तक स्त्रियों की समानता बातचीत की बात होगी। गरीब अमीर समान हैं। हम कहते हैं. हम कहते हैं, गरीब अमीर समान हैं, बराबर वोट का हक है। सब ठीक है। लेकिन गरीब अमीर समान कैसे हो सकता है? अमीरी और गरीबी इतनी . असमानता पैदा कर देती है।

और स्त्रियों से ज्यादा गरीब कोई भी नहीं है, क्योंकि हमने उनको बिलकुल अपंग कर दिया है कमाने से। पैदा से अपंग कर दिया है। वे कुछ पैदा नहीं करती। न वे कुछ कमाती हैं। न वे जिंदगी में आकर बाहर कुछ काम करती हैं। घर के भीतर बंद कर दिया। उनकी गुलामी का मूल—सूत्र यह है कि वे जब तक आर्थिक रूप से बंधी हैं, तब तक वे समान हक में हो भी नहीं सकतीं।

और बुरा है यह। एकदम बुरा है, क्योंकि स्त्रियां सब तरफ फैल जायें, सब कामों में तो पुरुष के सब तरफ कामों जो पुरुषपन आ गया है, सब शिथिल हो जाय। फर्क हम जानते हैं। फर्क बहुत स्पष्ट है। स्त्री के प्रवेश से ही एक और हवा हर दफ्तर में प्रविष्ट हो सकती है और हो ही जाती है।

एक क्लास, जहां लड़के ही लड़के पढ़ रहे हैं और पुरुष ही पढ़ा रहा है। एक और तरह की क्लास है। जहां लड़कियां भी आकर बैठ गयी हैं—क्लास की हवा में फर्क पड़ गया है, बुनियादी फर्क पड़ गया है। ज्यादा से ज्यादा सुगंध से भरी वह हवा हो गयी है। कम पुरुष, कम कठोर चीजें शिथिल हो गयी हैं और चीजें ज्यादा शिष्ट हो गयी हैं।

स्त्री को जीवन के सब पहलुओं पर फैला देने की जरूरत है। ऐसा कोई काम नहीं है, जो कि स्त्रियां न कर सकती हो।

रूस में स्त्रियों ने सब काम करके बता दिया है। हवाई जहाज के पायलट होने से, छोटे—छोटे काम तक। स्त्री अंतरिक्ष में उड़कर भी बताया है। वह इस बात की खबर है कि स्त्रियां करीब—करीब सब काम कर सकती हैं।

कुछ काम होंगे, जो एकदम मस्कुलर हैं। कुछ काम होंगे, अब तो नहीं रह गये। क्योंकि मस्त का सब काम ० करने लगी है। पुराना जमाना गया। कोई शेर—वेर से लड़ने जाना नहीं पड़ता और गामा वगैरह बनना अब सब बेवकूफी हो गयी है। वह समझ की बातें नहीं हैं।

अब तो, मस्ल का काम मशीन ने कर दिया है, इसलिए स्त्री को समान होने का पूरा मौका मिल गया है। मशीन बड़े से बड़ा काम कर देती है। बड़े से बड़ा पत्थर उठा देती है। बड़े से बड़े वजन को धका देती है। अब पुरुष को भी धकाना नहीं पड़ रहा है। अब कोई जरूरत नहीं है। अब स्त्री प्रत्येक काम में पुरुष के साथ खड़ी हो सकती

और जैसे ही स्त्री जीवन के सब पहलुओं में प्रविष्ट कर जायेगी, सभी पहलुओं के वातावरण में बुनियादी फर्क पड़ेगा। और कुछ काम तो ऐसे हैं... अब यह हैरानी की बात है, ऐसा शायद ही कोई काम अब बचा है पुरुष के पास, जो स्त्री नहीं कर सकती।

लेकिन कुछ काम ऐसे हैं, जो स्त्रियां ही कर सकती हैं और पुरुष नहीं कर सकते हैं। और उन कामों को भी पुरूष पकड़े हुए है। जैसे शिक्षक का काम है। शिक्षक के काम से पुरुष को हट जाना चाहिए। पुरुष शिक्षक हो ही नहीं सकता। उसका डिक्टेटोरियल माइंड इतना ज्यादा है कि वह शिक्षक नहीं हो सकता है।

वह थोपने की कोशिश करता है। और वह जो भी मानता है, उसे थोपने की कोशिश करता है। वह कहता है, जो मैं कहता हूं वह ठीक है। वह इल्डिंग नहीं है। वह झुक नहीं सकता। वह विनम्र नहीं हो सकता। खुमिलिर्टा नहीं है। हम्बलनेस नहीं है। शिक्षक अगर जरा भी थोपने वाला है तो दूसरी तरफ के मस्तिष्क को बुनियादी रू'। से नुकसान पहुंचाता है।

और नुकसान पहुंचता है सारी मनुष्य जाति को। क्योंकि शिक्षक कैसे व्यवहार कर रहा है। निशित ही सारी दुनिया में शिक्षा का करीब—करीब सारा काम—करीब—करीब कहता हूं सारा काम स्रियों के हाथ में चला ही जाना चाहिए। यह बिलकुल ही हितकर होगा। उचित होगा। महत्वपूर्ण होगा, क्योंकि शिक्षा तब एक रूखी सूखी बात नहीं रह जायेगी। उसके साथ एक रस और एक पारिवारिक वातावरण जुड़ जायेगा और संबंधित हो जायेगा।

बहुत काम ऐसे हो सकते हैं, जो कि स्रियों को पूरी तरह उपलब्ध हो जाने चाहिए। और बहुत काम जो स्रियां कर सकती हैं, उन्हें सब तरफ से निमंत्रण मिलने चाहिए और बहुत दिशाएं जो हमेशा से अधूरी पड़ी हुई हैं, जिनको कभी छुआ नहीं गया है, खोली जानी चाहिए। उन दिशाओं के दरवाजे तोड़े जाने चाहिए, ताकि एक और तरह की चितना—स्त्री की चितना, स्त्री की भावना, बिलकुल और तरह की है।

उसमें कुछ डायनामिकली अपोजिट है। कुछ बुनियादी रूप से उलटे तत्व हैं। वह ज्यादा इनटयूटिव है। इंटलेल्युअल नहीं है। वह बहुत बुद्धि और तर्क की नहीं है, ज्यादा अंतर अनुभूति की है। मनुष्य अंतर अनुभूति से शून्य हो गया है, बिलकुल शून्य है।

स्त्रियां अगर सब दिशाओं में फैल जायें और जीवन घरों में बंद न रह जाये, क्योंकि घरों का काम इतना उबाने वाला है, इतना बोरिंग है, इतना बोर्डम से भरा हुआ है कि उसे तो मशीन के हाथ में धीरे—धीरे छोड़ देना चाहिए। आदमी को करने की—न स्त्रियों को, न पुरुषों को—कोई जरूरत नहीं है। रोज सुबह वही काम, रोज दोपहर वही काम, रोज सांझ वही काम!

एक स्त्री चालीस पचास वर्ष तक एक मशीन की तरह सुबह से सांझ, यंत्र की तरह घूमती रहती है और वही काम करती रहती है। और इसका परिणाम क्या होता है? इसका परिणाम है कि मनुष्य के पूरे जीवन में विष घुल जाता है।

एक स्त्री जब चौबीस घंटे ऊब वाला काम करती है। रोज बर्तन मलती है—वही बर्तन, वही मलना; वहीं रोटी, वही खाना; वही उठना, वही कपड़े धोना, वही बिस्तर लगाना; रोज एक चक्कर में सारा काम चलता है। थोड़े दिन में वह इस सबसे ऊब जाती है। लेकिन करना पडता है।

और जिस काम से कोई ऊब गया हो और करना पड़े तो उसका बदला वह किसी न किसी से लेगी। इसलिए स्रियां हर पुरुष से हर तरह का बदला ले रही हैं। हर तरह का बदला,पुरुष घर आया कि स्त्री तैयार है टूटने के लिए। इसलिए पुरुष घर के बाहर—बाहर घूमते फिरते हैं। क्लब बनाते हैं। सिनेमा जाते हैं, पच्चीस उपाय सोचते 256

वह अपने को समझा रहे हैं कि स्त्री नर्क का द्वार है। सावधान! बचना! स्त्री की तरफ देखना भी मत। यह इन घबड़ाये हुए, भागे हुए एस्केपिस्ट, पलायनवादी लोगों ने स्त्री को समझने, स्त्री को आदृत होने, सम्मानित होने, साथ खड़े होने का मौका नहीं दिया।

अभी जब मैं बम्बई था कुछ दिन पहले, एक मित्र ने आकर मुझे खबर दी कि एक बहुत बड़े संन्यासी वहां प्रवचन कर रहे है। आपने उनके प्रवचन सुने होंगे, नाम तो काही होगा। वह प्रवचन कर रहे हैं। भगवान की कथा कर रहे हैं! या कुछ कर रहे हैं, स्त्री नहीं छू सकती हैं उन्हें! एक स्री अजनबी आयी होगी! उसने उनके पैर छू लिए! तो महाराज भारी कष्ट में पड़ गये हैं! अपवित्र हो गये है! उन्होने सात दिन का उपवास किया है शुद्ध के लिए! जहा दस पन्द्रह हजार स्रियां पहुंचती थीं, वहाँ सात दिन के उपवास के कारण एक लाख स्रियां इकट्ठी होने लगीं कि यह आदमी असली साधु है!

स्रियां भी यही सोचती है कि जो उनके छूने से अपवित्र हो जायेगा, असली साधु है! हमने उनको समझाया हुआ है। नहीं तो वहां एक स्त्री भी नहीं जानी थी फिर। क्योंकि स्त्री के लिए भारी अपमान की बात है।

लेकिन अपमान का खयाल ही मिट गया है। लम्बी गुलामी अपमान के खयाल मिटा देती है। लाख स्रियां वहां इकट्ठी हो गयी है! सारी बम्बई में यही चर्चा है कि यह आदमी है असली साधु! स्त्री के छूने से अपवित्र हो गया है! सात दिन का उपवास कर रहा है! उन महाराज को किसी को पूछना चाहिए, पैदा किस से हुए थे? हड्डी, मांस, मज्जा किसने बनाया था? वह सब स्त्री से लेकर आ गये हैं। और अब अपवित्र होते है स्त्री के छूने से। हद्द कमजोर साधुता है, जो स्त्री के छूने से अपवित्र हो जाती है! लेकिन इन्ही सारे लोगों की लम्बी परपरा ने स्त्री को दीन—हीन और नीचा बनाया है। और मजा यह है—मजा यह है, कि यह जो दीन—हीनता की लम्बी परपरा है, इस परंपरा को तो स्त्रियां ही पूरी तरह बल देने में अग्रणी है! कभी के मंदिर मिट जायें और कभी के गिरजे समाप्त हो जायें—स्रियां ही पालन पोषण कर रही है मंदिरो, गिरजों, साधु, संतो—महंतों का। चार स्रियां दिखायी पड़ेगी एक साधु के पास, तब कही एक पुरुष दिखायी पड़ेगा। वह पुरुष भी अपनी पत्नी के पीछे बेचारा चला आया हुआ होगा।

तीसरी बात मैं आप से यह कहना चाहता हू कि जब तक हम स्त्री—पुरुष के बीच के ये अपमानजनक फासले, ये अपमानजनक दूरियां—कि छूने से कोई अपवित्र हो जायेगा—नहीं तोड़ देते हैं, तब तक शायद हम स्त्री को समान हक भी नहीं दे सकते।

को—एजुकेशन शुरू हुई है। सैकड़ों विश्वविद्यालय, महाविद्यालय को—एजुकेशन दे रहे हैं। लड़कियां और लड़के साथ पढ़ रहे हैं। लेकिन बड़ी अजीब—सी हालत दिखायी पड़ती है। लड़के एक तरफ बैठे हुए है! लड़कियां दूसरी तरफ बैठी हुई हैं! बीच में पुलिस की तरह प्रोफेसर खड़ा हुआ है! यह कोई मतलब है? यह कितना अशोभन है, अनकल्वर्ड है। को—एजुकेशन का अब एक ही मतलब हो सकता है कि कालेज या विश्वविद्यालय स्त्री पुरुष में कोई फर्क नहीं करता। को—एजुकेशन का एक ही मतलब हो सकता है—कालेज की दृष्टि में सेक्स—डिफरेंसेस का कोई सवाल नहीं है।

आखिरी बात, और अपनी चर्चा मैं पूरी कर दूंगा। एक बात आखिरी।

और वह यह कि अगर एक बेहतर दुनिया बनानी हो तो स्त्री पुरुष के समस्त फासले गिरा देने हैं। भिन्नता बचेगी, लेकिन समान तल पर दोनों को खड़ा कर देना है और ऐसा इंतजाम करना है कि 'स्त्री को स्त्री होने की कांशसनेस' और 'पुरुष को पुरुष होने की कांशसनेस' चौबीस घंटे न घेरे रहे। यह पता भी नहीं चलना चाहिए। यह चौबीस घंटे ख्याल भी नहीं होना चाहिए। अभी तो हम इतने लोग यहां बैठे हैं, एक स्त्री आये तो सारे लोगों को खयाल

हो जाता है कि स्त्री आ गयी। स्त्री को भी पूरा खयाल है कि पुरुष यहाँ बैठे हुए है। यह अशिष्टता है, अनकल्वर्डनेस है, असंस्कृति है, असभ्यता है। यह बोध नहीं होना चाहिए। ये बोध गिरने चाहिए। अगर ये गिर सकें तो हम एक अच्छे समाज का निर्माण कर सकते हैं। मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहित हूं।

और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं।

मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

एम—एस. कालेज बड़ौदा
16 अगस्त 1969

संभोग से समाधि कीओर—47

Posted on सितम्बर 21, 2013by sw anand prashad

सिद्धन, शास्त्र और वाद से मुक्ति—पन्द्रंहवां प्रवचन

मेरे प्रिय आत्मन

अभी-अभी सूरज निकला। सूरज के दर्शन कर रहा था। देखा आकाश में दो पक्षी उड़े जा रहे हैं। आकाश में न तो कोई रास्ता है, न कोई सीमा है, न कोई दीवाल है, न उड़नेवाले पक्षियों के कोई चरण-चिन्ह बनते हैं। खुले आकाश में जिनकी कोई सीमाएं नहीं, उन पक्षियों को उड़ता देखकर मेरे मन में एक सवाल उठा : क्या आदमी की आत्मा भी इतने ही खुले आकाश में उड़ने की गण नहीं करती? क्या आदमी के प्राण भी नहीं तड़पते हैं सारी सीमाओं के ऊपर उठ जाने के लिये-सारे बंधन तोड़ देने के लिये? सारी दीवालों के पार-वहां, जहां कोई दीवाल नहीं; वहां, जहां कोई फासले नहीं; वहां, जहां कोई रास्ते नहीं; वहां, जहां कोई चरण-चिन्ह नहीं बनते-उस खुले आकाश में उठ जाने को मनुष्य की आत्मा की भी क्या प्यास नहीं है?

उस खुले आकाश का नाम है, परमात्मा। लेकिन अभी तो पैदा होते ही बंधनों में बंधने लगता है। चाहे पैदा कोई स्वतंत्र होता हो, लेकिन बहुत कम सौभाग्यशाली लोग हैं, जो स्वतंत्र जीते हैं; और बहुत कम सौभाग्यशाली लोग हैं, जो स्वतंत्र होकर मर पाते हैं। आदमी पैदा तो स्वतंत्र होता है, और फिर निरंतर परतंत्र होता चला जाता है। किसी आदमी की आत्मा परतंत्र न ही होना चाहती; फिर भी आदमी परतंत्र होता चला जाता है!
.. तो ऐसा प्रतीत होता है कि शायद हमने परतंत्रता की बेड़ियों को फूलो से सजा रखा है; शायद हमने परतंत्रता को स्वतंत्रता के नाम दे रखे हैं; शायद हमने कारागृहों को मंदिर समझ

रखा है। और इसलिये यह संभव हो सका है कि प्रत्येक आदमी के प्राण स्वतंत्र होना चाहते हैं, पर प्रत्येक आदमी परतंत्र ही जीता है और परतंत्र ही मरता है! बल्कि, ऐसा भी दिखायी पडता है कि हम अपनी परतंत्रता की रक्षा भी करते हैं! अगर परतंत्रता पर चोट हो, तो हमें तकलीफ भी होती है, पीड़ा भी होती है! अगर कोई परतंत्रता हमारी तोड़ देना चाहे, तो वह हमें दुश्मन भी मालूम होता है!

परतंत्रता से आदमी का ऐसा प्रेम क्या है?

...... नहीं परतंत्रता से किसी का भी प्रेम नहीं है। लेकिन परतंत्रता को हमने स्वतंत्रता के शब्द और वस्त्र ओढ़ा रखे हैं। एक आदमी अपने को हिंदू कहने में जरा भी ऐसा अनुभव नहीं करता कि मैं अपनी गुलामी की सूचना कर रहा हूं। एक आदमी अपने को मुसलमान कहने में जरा भी नहीं सोचता कि मुसलमान होना मनुष्यता के ऊपर दीवाल बनानी है। एक आदमी किसी बात में, किसी संप्रदाय में, किसी देश में अपने को बांधकर कभी ऐसा नहीं सोचता कि मैंने अपना कारागृह अपने हाथों से बना लिया है। बड़ी चालाकी, बड़ा धोखा आदमी अपने को देता रहा है। और सबसे बड़ा धोखा यह है कि हमने कारागृहों को सुंदर नाम दे दिये हैं, हमने बेड़ियों को फूलों से सजा दिया है; और जो हमें बांधे हुए हैं, उन्हें हम मुक्तिदायी समझ रहे हैं!

यह मैं पहली बात आज आपसे कहना चाहता हूं कि जो लोग भी अपने जीवन में क्रांति लाना चाहते हैं, सबसे पहले उन्हें यह समझ लेना होगा कि बंधा हुआ आदमी कभी भी जीवन की क्रांति से नहीं गुजर सकता। और हम सारे ही लोग बंधे हुए लोग है। यद्यपि हमारे हाथों में जंजीरें नहीं हैं, हमारे पैरों में बेड़ियां नहीं हैं; लेकिन हमारी आत्माओं पर बहुत जंजीरें हैं, बहुत बेड़ियां हैं। और पैरों में बेड़ियां पड़ी हों, तो दिखायी भी पड़ जाती है, पर आत्मा पर जंजीरें पड़ी हों, तो दिखायी भी नहीं पड़ती। अदृश्य बंधन इस बुरी तरह बांध लेते हैं कि उनका पता भी नहीं चलता। और जीवन हमारा एक कैद बन जाता है। और वे अदृश्य बंधन हैं-सिद्धांतों के, शास्त्रों के और शब्दों के।

एक गांव में एक दिन सुबह-सुबह बुद्ध का प्रवेश हुआ। गांव के द्वार पर ही एक व्यक्ति ने बुद्ध को पूछा, " आप ईश्वर को मानते हैं? मैं नास्तिक हूं। मैं ईश्वर को नहीं मानता हूं। आपकी क्या दृष्टि है?' बुद्ध ने कहा, 'ईश्वर? ईश्वर है। ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ भी सत्य नहीं है। "

बुद्ध गांव के भीतर पहुंचे तो एक दूसरे व्यक्ति ने बुद्ध को कहा, "मैं आस्तिक हूं। मैं ईश्वर को मानता हूं। क्या आप भी ईश्वर को मानते हैं?" बुद्ध ने कहा, "ईश्वर? ईश्वर है ही नहीं। मानने का कोई सवाल ही नहीं उठता। ईश्वर एक असत्य है! "

पहले आदमी ने पहला उत्तर सुना था, दूसरे आदमी ने दूसरा उत्तर सुना। लेकिन बुद्ध के साथ एक भिक्षु था, आनंद। उसने दोनों उत्तर सुने। वह बहुत हैरान हो गया कि सुबह बुद्ध ने कहा 'ईश्वर है' और दोपहर बुद्ध ने कहा, 'ईश्वर नहीं है! 'आनंद बहुत चिंतित हो गया कि बुद्ध का प्रयोजन क्या है? उसने सोचा, सांझ फुरसत होगी, रात सब लोग विदा हो जायेंगे, तब पूछ लेगा। लेकिन सांझ तो मुश्किल और बढ़ गयी। एक तीसरे आदमी ने आकर कहा, "मुझे कुछ भी पता नहीं है कि ईश्वर है या नहीं। मैं आपसे पूछता हूं आप क्या मानते हैं-ईश्वर है, या नहीं?" बुद्ध उसकी बात सुनकर चुप रह गये और उन्होंने कोई भी उत्तर नहीं दिया!

रात जब सारे लोग विदा हो गये, तो आनंद बुद्ध को पूछने लगा कि मैं बहुत मुश्किल में पड़ गया हूं। मुझे बहुत झंझट में डाल दिया है आपने। सुबह कहा, ऍ 'ईश्वर है; दोपहर कहा, नहीं है; सांझ चुप रह गये। मैं ' समझूं?

बुद्ध ने कहा, "उन तीनों में कोई उत्तर तेरे लिये नहीं दिया गया था। तूने वे उत्तर लिये क्यों? जिनके प्रश्न थे, उनको वे उत्तर दिये गये थे। तुझे तो कोई उत्तर दिया नहीं गया था। '

आनंद ने कहा, "क्या मैं अपने कान बंद रखता। मैंने तीनों बातें सुन ली हैं। यद्यपि उत्तर मुझे नहीं दिये गये लेकिन देने वाले तो आप एक हैं और आपने तीन दिये ।"

बुद्ध ने कहा, 'तू नहीं समझा। मैं उन तीनों की मान्यताएं तोड़ देना चाहता था। सुबह जो आदमी आया था वह नास्तिक था। जो नास्तिकता में बंध जाता है, उस आदमी की आत्मा भी परतंत्र हो जाती है। मैं चाहता था, वद अपनी जंजीर से मुक्त हो जाये। उसकी जंजीरें तोड़ देनी थीं। इसलिये उसे मैंने कहा-ईश्वर है। ईश्वर है, मैंने सिर्फ इसलिये कहा कि वह जो यह मानकर बैठा है कि ईश्वर नहीं है-वह अपनी जगह से हिल जाये, उसकी जड़ें उखड जायें, उसकी मान्यता गिर जाये, वह फिर से सोचने को मजबूर हो जाये। वह रुक गया है। उसने सोचा है कि यात्रा समाप्त हो गयी है। और जो भी ऐसा समझ लेता है कि यात्रा समाप्त हो गयी है, वह कारागृह में पहुंच जाता है।

जीवन है अनंत यात्रा। वह यात्रा कभी भी समाप्त नहीं होती। लेकिन हिंदू की यात्रा समाप्त हो जाती है, बौद्ध की यात्रा समाप्त हो जाती है, जैन की यात्रा समाप्त हो जाती है, गांधीवादी की यात्रा समाप्त हो जाती है, मार्क्सवादी की यात्रा समाप्त हो जाती है; जिसको भी वाद मिल जाता है,उसकी यात्रा समाप्त हो जाती है। वह समझने लगता है कि उसने सत्य को पा लिया है, कि वह सत्य को उपलब्ध हो गया है; अब आगे खोज की कोई जरूरत नहीं है।

सभी संप्रदायों की, सभी धर्मों की, सभी पकड़वालों की खोज समाप्त हो जाती है।

.... बुद्‌ध ने कहा, मैं उसे अलग कर देना चाहता था उसकी जंजीरों से, ताकि वह फिर से पूछे, वह फिर से खोजे वह आगे बढ़ जाये।

".. दोपहर जो आदमी आया था, वह आदमी आस्तिक था। वह यह मानकर बैठ गया था कि ईश्वर है। उसे मुझे कहना पड़ा कि ईश्वर नहीं है। ईश्वर है ही नहीं। ताकि उसकी जंजीरें भी ढीली हो जायें, उसके मत भी टूट जायें; क्योंकि सत्य को वे ही लोग उपलब्ध होते हैं, जिनका कोई भी मत नहीं होता।

"और सांझ जो आदमी आया था, उसका कोई मत नहीं था। उसने कहा, मुझे कुछ भी पता नहीं कि ईश्वर है या नहीं। इसलिये मैं भी चुप रह गया। मैंने उससे कहा कि तू चुप रह कर खोज, मत की तलाश मत कर, सिद्‌धात की तलाश मत कर। चुप हो। इतना चुप हो जा कि सारे मत खो जायें। तो शायद, जो है, उसका तुझे पता चल जाये। "बुद्‌ध के साथ आप भी रहे होते तो मुश्किल में पड़ गये होते। अगर एक उत्तर सुना होता तो शायद बहुत मुसीबत न होती। लेकिन अगर तीनों उत्तर सुने होते, तो बहुत मुसीबत हो जाती।

बुद्‌ध का प्रयोजन क्या है?.. बुद्‌ध चाहते क्या हैं?

.. बुद्‌ध आपको कोई सिद्‌धांत नहीं देना चाहते हैं; बुद्‌ध, आपके जो सिद्‌धात हैं, उनको भी छीन लेना चाहते हैं। बुद्‌ध आपके लिये कोई कारागृह नहीं बनाना चाहते; आपका जो बना कारागृह है, उसको भी गिरा देना चाहतें हैं-ताकि वह खुला आकाश जीवन का, खुली आंख उसे देखने की-उपलब्ध हो जाये।

इससे भी क्या होता है। बुद्‌ध लाख चिल्लाते रहें कि तोड़ दो सिद्‌धांत, लेकिन बुद्‌ध के पीछे लोग इकट्‌ठे हो जाते हैं और उनके सिद्‌धांत को. पकड़ लेते हैं।

दुनिया में जिन थोड़े-से लोगों ने मनुष्य को मुक्त करने की चेष्टा की है-मनुष्य अजीब पागल है-उन्हीं लोगों को उसने अपना बंधन बना लिया है! चाहे फिर वह बुद्‌ध हों, चाहे महावीर हों, चाहे मार्क्स हों और चाहे गांधी हों-कोई भी हो-जो भी मनुष्य को मुक्त करने की चेष्टा करता है, आदमी अजीब पागल है, वह उसी को अपना बंधन बना लेता है! उसी को अपनी जंजीर बना लेता है! और जिंदा आदमी तो कोशिश ही कर सकता है कि वह किसी के लिये उसकी जंजीर न बने, वह मुर्दा आदमी क्या करता है?

मरे हुए नेता, मरे हुए संत बहुत खतरनाक सिद्‌ध होते हैं-अपने कारण नहीं, आदमी की आदत के कारण। दुनिया के सभी महापुरुष, जो कि मनुष्य को मुक्त कर सकते थे, लेकिन नहीं कर पाये, क्योंकि मनुष्य उनको ही अपने बंधन में रूपांतरित कर लेता है। इसलिये मनुष्य के

इतिहास में एक अजीब घटना घटी है कि जो भी संदेश लेकर आता है मुक्ति का, हम उसको ही अपना एक नया काराणृह बना लेते हैं! इस भांति जितने भी मुक्ति के संदेश दुनिया में आये, उतने ही ढंग की जंजीरें दुनिया में निर्मित होती चली गयीं। आज तक यही हुआ है-क्या आगे भी यही होगा? और आगे भी यही हुआ, तो फिर मनुष्य के लिये कोई भविष्य दिखायी नहीं पड़ता।

लेकिन ऐसा मुझे नहीं लगता कि जो आज तक हुआ है, वह आगे भी होना जरूरी है। वह आगे होना जरूरी नहीं है। यह संभव हो सकता है कि जो आज तक हुआ है, वह आगे न हो- और न हो, तो मनुष्यता मुक्त हो सकती है। लेकिन मनुष्यता मुक्त हो या न हो, एक-एक मनुष्य को भी अगर मुक्त होना है तो उसे अपने चित्त पर, अपने मन पर, अपनी आत्मा पर पड़ी हुई सारी जंजीरों को तोड़ देने की हिम्मत जुटानी पड़ती है।

जंजीरें बहुत मधुर हैं, बहुत सुंदर हैं, सोने की हैं, इसलिये और भी कठिनाई हो जाती है। महापुरुषों से मुक्त होना बहुत कठिन मालूम पड़ता है, सिद्धांतों से मुक्त होना बहुत कठिन मालूम पड़ता है, शास्त्रों से मुक्त होना बहुत कठिन मालूम पड़ता है। और अगर कोई मुक्त होने के लिये कहे, तो वह आदमी दुश्मन मालूम पड़ता है; क्योंकि हम चीजों को मानकर निशित हो जाते हैं; खोजने की कोई जरूरत नहीं रह जाती। और अगर कोई आदमी कहता है- मुक्त हो जाओ, तो फिर खोजने की जरूरत शुरू हो जाती है; फिर मंजिल खो जाती है; फिर रास्ता काम में आ जाता है। और रास्ते पर चलने में तकलीफ मालूम पड़ती है; मंजिल पर पहुंचने के बाद फिर कोई यात्रा नहीं, कोई श्रम नहीं।

मनुष्य ने अपने आलस्य के कारण झूठी मंजिलें तय कर ली हैं। और हम सबने मंजिलें पकड़ रखी हैं। पहली बात, पहला सूत्र जीवन-क्रांति का मैं आपसे कहना चाहता हूं : और वह यह कि एक स्वतंत्र चित्त चाहिये। एक मुक्त चित्त चाहिये।

एक बंधा हुआ, केप्सूल के भीतर बंद, दीवालों के भीतर बंद, पक्षपातों के भीतर बंद, वाद और सिद्धांत और शब्दों के भीतर बंद चित्त कभी भी जीवन में क्रांति से नहीं गुजर सकता।

और अभागे हैं वे लोग, जिनका जीवन एक क्रांति नहीं बन पाता; क्योंकि वे वंचित ही रह जाते हैं, उस सत्य को जानने से कि जीवन में क्या छिपा है? क्या था राज, क्या था आनंद, क्या था सत्य, क्या था संगीत, क्या था सौंदर्य? उस सबसे ही वे वंचित रह जाते हैं!

.. मैंने सुना है, एक सम्राट ने अपनी सुरक्षा के लिये एक महल बनवाया था। उसने ऐसा इंतजाम किया था कि महल के भीतर कोई घुस न सके। उसने महल के सारे द्वार-दरवाजे बंद करवा दिये थे। सिर्फ एक ही दरवाजा महल में रहने दिया था और दरवाजे पर हजार

नंगी तलवारों का पहरा बैठा दिया था। एक छोटा छेद भी नहीं था मकान में। महल के सारे द्वार-दरवाजे बंद करवाकर वह बहुत निश्चिंत हो गया था। अब किसी खिड़की से, द्वार से, दरवाजे से; किसी डाकू के, किसी हत्यारे के, किसी दुश्मन के आने की कोई संभावना नहीं रह गई थी।

पड़ोस के राजा ने जब यह सब सुना, तो वह उसके महल को देखने आया पड़ोस का राजा भी उस महल को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ...।

आदमी ऐसा पागल है, कि बंद दरवाजों को देखकर बहुत प्रसन्न होता है। क्योंकि बंद दरवाजों को वह समझता है सुरक्षा, सिक्योरिटी,- सुविधा।

..... उस राजा ने भी महल देखकर कहा, “हम भी एक ऐसा महल बनायेंगे। यह महल तो बहुत सुरक्षित है। इस महल में तो निशित रहा जा सकता है। ”

जब पड़ोस का राजा विदा हो रहा था और महल की प्रशंसा कर रहा था, तब सड़क पर बैठा हुआ एक बूढ़ा भिखारी प्रशंसा सुनकर जोर से हंसने लगा। भिखारी को हंसता देख महल के सम्राट ने पूछा, ‘तू हंसता क्यों है ‘ कोई भूल तुझे दिखायी पड़ती है?

भिखारी ने कहा, ”एक भूल रह गयी है, महाराज! जब आप यह मकान तैयार करवाते थे, तभी मुझे लगता था कि एक भूल रह गयी है। ”

सम्राट ने कहा, ”कौन-सी भूल?’ उस भिखारी ने कहा, ”एक दरवाजा आपने रखा है, यही भूल रह गयी है। यह दरवाजा और बंद कर लें, और भीतर हो जायें, तो फिर आप बिलकुल सुरक्षित हो जायेंगे। फिर कोई भी किसी भी हालत में भीतर नहीं पहुंच सकेगा।’

सम्राट ने कहा, ”पागल, फिर तो यह मकान कब्र हो जायेगा। अगर मैं एक दरवाजा और बंद कर लूं तो मैं मर जाऊंगा भीतर। फिर तो यह महल मेरी मौत हो जायेगा। ”

भिखारी ने कहा, ”इतना आपको समझ में आता है कि एक दरवाजा और बंद कर लेने से आप मर जायेंगे, तो क्या आपको यह समझ में नहीं आता कि जिस मात्रा में दरवाजे आपने बंद किये है, उसी मात्रा में आप मर गये हैं? उसी मात्रा में जीवन से आपके संबंध टूट गये हैं। अब एक दरवाजा बचा है, तो थोड़ा सा संबंध बचा है। अब आप थोड़े-से जीवित हैं। इस दरवाजे को भी बंद कर देंगे, तो बिलकुल मर जायेंगे? अब यह मकान एक कब की तरह है, जिसमें एक दरवाजा है। यह दरवाजा और बंद हो जाये, तो कब्र पूरी हो जायेगी। और अगर आपके यह लगता है कि एक दरवाजा बंद करने से मौत हो जायेगी, तो जो दरवाजे आपने बंद करवा

दिये है, उन्हें खुलवा दें। और अगर मेरी बात समझें, सब दीवालें गिरवा दें, ताकि खुले सूरज के नीचे, खुले आकाश के नीचे जीवन का पूरा आनंद उपलब्ध हो सके।'

शरीर के लिये मकान जरूरी हैं, और शरीर के लिये दीवालें भी जरूरी हैं;' पर आला के लिये न तो मकान जरूरी है, न दीवालें जरूरी हैं। लेकिन जिनके पास शरीर को छिपाने के लिये मकान नहीं हैं, उन्होंने भी अपनी आत्मा को छिपाने के लिये दीवालें और मकान बना रखे हैं! जो खुले आकाश के नीचे सोते हैं, उनकी आत्माएं भी का आकाश में नहीं उड़ती! जिनके शरीर पर वस्त्र नहीं हैं, उन्होंने भी आत्मा को लोहे के वस्त्र पहना रखे हैं! और फिर आदमी पूछता है, हम दुखी क्यों हैं? फिर आदमी पूछता है, हम पीड़ित फिर क्यों हैं? फिर आदमी पूछता है, आनंद कहां मिलेगा?

कभी परतंत्र चित्त को आनंद मिला है? कभी परतंत्रता में कुछ जाना गया है? परतंत्र व्यक्ति कभी भी किसी भी स्थिति में सत्य को, सौंदर्य को उपलब्ध हुआ है....?

मैं एक घर में मेहमान था। एक बहुत प्यारी चिड़िया उस घर के लोगों ने पिंजड़े में कैद कर रखी थी। चिड़िया को बाहर का जगत दिखायी पड़ता होगा, लेकिन पिंजड़े की दीवालों के भीतर बंद चिड़िया को पता भी नहीं हो सकता कि बाहर एक खुला आकाश है, और बाहर खुले आकाश में उडने का भी एक आनंद है। शायद वह चिड़िया उडने का खयाल भी भूल गयी होगी। शायद, पंख किस लिये हैं, यह भी उसे पता नहीं रहा होगा। और अगर आज उसे पिंजड़े के बाहर भी कर दिया जाये, तो शायद वह बाहर आने से घबड़ायेगी और अपने सुरक्षित पिंजड़े में वापस आ जायेगी। शायद, पंख उसे अब निरर्थक लगते होंगे, बोझ लगते होंगे। और उसे यह भी पता नहीं होगा कि खुले आकाश में सूरज की तरफ बादलों के पार उड़ जाने का भी एक आनंद है, एक जीवन है। अब उसे कुछ भी पता नहीं होगा।

उस चिड़िया को तो कुछ भी पता नहीं होगा-क्या हमें पता है? हमने भी अपने चारों और दीवालें बना रखी हैं। उन दीवालों के पार, बियांड भी जहां कोई सीमा नहीं है। जहां आगे, और आगे अनंत विस्तार है। जहां कोई लोक है, सूरज है, जहां बादलों के पार आगे खुला आकाश है।

नहीं, हमें भी उनका कोई पता नहीं है। शायद हमें भी आत्मा एक बोझ मालूम पड़ती है। और हममें से बहुत-से लोग अपनी आत्मा को खो देने की हर चेष्टा करते हैं। शराब पीकर आआ को भुला देने की कोशिश करते हैं। संगीत सुनकर आत्मा को भुला देने की कोशिश करते हैं। किसी तरह आत्मा भूल जाये, इसकी चेष्टा करते हैं। हमें अपनी आत्मा भी एक बोझ मालूम पड़ती है, जैसे पिंजड़े में बंद एक चिड़िया को उसके पंख बोझ मालूम होते हैं। लेकिन हमें पता

नहीं है कि एक आकाश है, जहां आत्मा भी एक पंख बन जाती है। और आकाश की एक उड़ान है, जिस उड़ान की उपलब्धि का नाम है-प्रभु-परमात्मा।

धर्म मनुष्य को मुक्त करने की कला है।

अगर ठीक से कहूं तो धर्म मनुष्य के जीवन में क्रांति लाने की कला है। इसलिये कायर कभी धार्मिक नहीं हो सकते। डरे हुए लोग, भयभीत लोग कभी धार्मिक नहीं हो सकते। बल्कि भयभीत और डरे लोगों ने जो धर्म पैदा किया है, वह धर्म जरा भी नहीं है। वह धर्म के बिलकुल उलटी चीज है। वह अधर्म से भी बदतर है। अधार्मिक आदमी भी साहसी हो सकता है। और जो आदमी साहसी है, वह बहुत दिन तक अधार्मिक नहीं रह सकता। अधार्मिक आदमी भी विचारशील होता है। और जो आदमी विचारशील है, वह बहुत दिन तक अधार्मिक नहीं रह सकता। केशवचंद्र विवाद करने गये थे रामकृष्ण से। वे रामकृष्ण की बातों का खंडन करने गये थे, सारे कलकत्ते में खबर फैल गई थी कि चलें, केशवचंद्र की बातें सुनें, रामकृष्ण तो गांव के गंवार हैं, क्या उत्तर दे सकेंगे केशवचंद्र का? केशवचंद्र तो बड़ा पंडित है!

बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गयी थी। रामकृष्ण के शिष्य बहुत डरे हुए थे, कि केशव के सामने रामकृष्ण क्या बात कर सकेंगे! कहीं ऐसा न हो कि फजीहत हो जाये। सब मित्र तो डरे हुए थे, लेकिन रामकृष्ण बार-बार द्वार पर आकर पूछते थे कि 'केशव अभी तक आये नहीं'? एक भक्त ने कहा भी, 'आप पागल होकर प्रतीक्षा कर रहे हैं! क्या आपको पता नहीं कि आप दुश्मन की प्रतीक्षा कर रहे हैं? वे आकर आपकी बातों का खंडन करेंगे। वे बहुत बड़े तार्किक हैं।'

रामकृष्ण कहने लगे, 'वही देखने के लिये मैं आतुर हो रहा हूं; क्योंकि इतना तार्किक आदमी अधार्मिक कैसे रह सकता है, यही मुझे देखना है। इतना विचारशील आदमी कैसे धर्म के विरोध में रह सकता है, यही मुझे देखना है। यह असंभव है।

'केशव आये, और केशव ने विवाद शुरू किया। केशव ने सोचा था, रामकृष्ण उत्तर देंगे। लेकिन केशव एक-एक तर्क देते थे और रामकृष्ण उठ-उठ कर उन्हें गले लगा लेते थे; आकाश की तरफ हाथ जोड़कर किसी को धन्यवाद देने लगते थे।

थोड़ी देर में केशव बहुत मुश्किल में पड़ गये। उनके साथ आये लोग भी मुश्किल में पड़ गये। आखिर केशव ने पूछा, ' आप करते क्या हैं? क्या मेरी बातों का जवाब नहीं देंगे? और हाथ जोड़कर आकाश में धन्यवाद किसको देते हैं?'

रामकृष्ण ने कहा, "मैंने बहुत चमत्कार देखे, यह चमत्कार मैंने नहीं देखा। इतना बुद्धिमान आदमी, इतना विचारशील आदमी धर्म के विरोध में कैसे रह सकता है? जरूर इसमें कोई उसका चमत्कार है। इसलिए मैं आकाश में हाथ उठाकर 'उसे' धन्यवाद देता हूं। और तुमसे मैं कहता हूं तुम्हें मैं जवाब नहीं दूंगा, लेकिन जवाब तुम्हें मिल जायेंगे; क्योंकि जिसका चित्त इतना मुक्त होकर सोचता है, वह किसी तरह के बंधन में नहीं रह सकता। वह अधर्म के बंधन में भी नहीं रह सकता। झूठे धर्म के बंधन तुमने तोड़ डाले हैं, अब जल्दी, अधर्म के बंधन भी टूट जायेंगे। क्योंकि, विवेक अंततः सारे बंधन तोड़ देता है। और जहां सारे बंधन टूट जाते हैं, वहां जिसका अनुभव होता है, वही धर्म है, वही परमात्मा है। मैं कोई दलील नहीं दूंगा। तुम्हारे पास दलील देने वाला बहुत अद्भुत मस्तिष्क है। वह खुद ही दलील खोज लेगा। "

केशव सोचते हुए वापस लौटे। और उस रात उन्होंने अपनी डायरी में लिखा, 'आज मेरा एक धार्मिक आदमी से मिलना हो गया है। और शायद उस आदमी ने मेरा रूपांतरण भी शुरू कर दिया है। मैं पहली बार सोचता हुआ लौटा हूं कि उस आदमी ने मुझे कोई उत्तर भी नहीं दिया और मुझे विचार में भी डाल दिया है! "

मनुष्य के पास विवेक है, लेकिन बंधन में है! और जिसका विवेक बंधन में है, वह सत्य तक नहीं पहुंच सकता। हमें सोच लेना है-एक-एक व्यक्ति को सोच लेना है कि हमारा विवेक बंधन में तो नहीं है? अगर मन में कोई भी सम्प्रदाय है, तो विवेक बंधन में है। अगर मन में कोई भी शास्त्र है, तो विवेक बंधन में है।

अगर मन में कोई भी महात्मा है, तो विवेक बंधन में है। और जब मैं ऐसा कहता हूं तो लोग सोचते हैं, शायद मैं महात्माओं और महापुरुषों के विरोध में हूं। मैं किसी के विरोध में क्यों होने लगा? मैं किसी के भी विरोध में नहीं हूं। बल्कि सारे महापुरुषों का काम ही यही रहा है कि आप बंध न जायें। सारे महापुरुषों की आकांक्षा यही रही है कि आप बंध न जायें। और जिस दिन आपके बंधन गिर जायेंगे, तो आपको पता चलेगा कि आप भी वही हो जाते हैं, जो महापुरुष हो जाते हैं।

महापुरुष मुक्त हो जाता है, और हम अजीब पागल लोग हैं, हम उसी मुक्त महापुरुष से बंध जाते हैं!

समस्त वाद बांध लेते हैं। वाद से छूटे बिना जीवन में क्रांति नहीं हो सकती। लेकिन यह खयाल भी नहीं आता कि हम बंधे हुए लोग हैं।

अगर मैं अभी कहूं कि हिंदू धर्म व्यर्थ है, या मैं कहूं कि इस्लाम व्यर्थ है, या मैं कहूं कि गांधीवाद से छुटकारा जरूरी है, तो आपके मन को चोट लगेगी। और अगर चोट लगे, तो आप

समझ लेना कि आप बंधे हुए आदमी हैं। चोट किसको लगती है? चोट का कारण क्या है? चोट कहां लगती है हमारे भीतर......?

चोट वहीं लगती है, जहां हमारे बंधन हैं। जिस चित्त पर बंधन नहीं है, उसे कोई भी चोट नहीं लगती।

'इस्लाम खतरे में है' यह सुनकर वे जो इस्लाम के बंधन में बंधे है-खड़े हो जायेंगे युद्ध के लिए, संघर्ष के लिए! उनके छुरे बाहर निकल आयेंगे! 'हिन्दू- धर्म खतरे में है' -सुनकर, वे जो हिंदू- धर्म के गुलाम हैं, वे खड़े हो जायेंगे लड़ने के लिए! और अगर कोई मार्क्स को कुछ कह दे तो जो मार्क्स के गुलाम हैं वे खड़े हो जाएंगे, और अगर कोई गांधी को कह दे, तो जो गांधी के गुलाम हैं, वे खड़े हो जायेंगे! लेकिन वह और यह गुलामी किसी के साथ भी हो सकती है। मेरे साथ भी हो सकती है...।

अभी मुझे पता चला कि बंबई में किसी ने अखबार में मेरे संबंध में कुछ लिखा होगा। तो किन्हीं मेरे दो मित्रों ने उन मित्र को रास्ते में कहीं पकड़ लिया और कहा कि अब अगर आगे कुछ लिखा तो तुम्हारी गर्दन दबा देंगे। मुझे जिस मित्र ने यह बताया, तो मैंने उन्हें कहा कि जिन्होंने उनको पकड़ कर कहा कि गर्दन दबा देंगे-वे मेरे गुलाम हो गये। वे मुझसे बंध गये।

......मैं अपने से नहीं बांध लेना चाहता हूं किसी को। मैं चाहता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति किसी से बंधा हुआ न रह जाये। एक ऐसी चित्त की दशा हमारी हो कि हम किसी से बंधे हुए न हों। उसी हालत में क्रांति तत्काल होनी शुरू हो जाती है। एक एक्सप्लोजन, एक विस्फोट हो जाता है। जो आदमी किसी से भी बंधा हुआ नहीं है, उसकी आला पहली दफा अपने पंख खोल लेती है, और खुले आकाश में उड़ने के लिए तैयार हो जाती है।

हमारे पैर गड़े हैं जमीन में, और इस पर हम पूछते हैं कि चित्त दुखी है, अशांत है, परेशान है! आनंद कैसे मिले? परमात्मा कैसे मिले? सत्य कैसे मिले? मोक्ष कैसे मिले? निर्वाण कैसे मिले?

कहीं आकाश में नहीं है निर्वाण। कहीं दूर सात आसमानों के पार नहीं है मोक्ष। यहीं है, और अभी है। और उस आदमी को उपलब्ध हो जाता है, जो कहीं भी बंधा हुआ नहीं है। जिसकी कोई क्लिंगिंग नहीं है। जिसके हाथ, किसी दूसरे के हाथ को नहीं पक्के हुए है। वह अकेला है, और अकेला खड़ा है। और जिसने इतना साहस और इतनी हिम्मत जुटा ली है कि अब वह किसी का अनुयायी नहीं है, किसी के पीछे चलनेवाला नहीं है, किसी का अनुकरण करनेवाला नहीं है। अब: वह किसी का मानसिक गुलाम नहीं है, किसी का मेंटल स्लेव नहीं है।

..... लेकिन हम कहेंगे कि हम जैन हैं और कभी नहीं सोचेंगे कि हम महावीर के मानसिक गुलाम हो गये! हम कहेंगे कि हम कमुनिस्ट हैं और कभी नहीं सोचेंगे कि हम मार्क्स और लेनिन के मानसिक गुलाम हो गये! हम कहेंगे कि हम गांधीवादी हैं और कभी नहीं सोचेंगे कि हम गांधी के गुलाम हो गये!

दुनिया में गुलामों की कतारें लगी हैं। गुलामियों के नाम अलग-अलग हैं, लेकिन गुलामियां कायम हैं। मैं आपकी गुलामी नहीं बदलना चाहता कि एक आदमी से आपकी गुलामी छुड़ाकर दूसरे की गुलामी आपको पकड़ा दी जाये। उससे कोई- फर्क नहीं पड़ता। वह वैसे ही है, जैसे लोग मरघट लाश को ले जाते हैं कंधे पर रखकर तो जब एक आदमी का कंधा दुखने लगता है, तो दूसरा आदमी अपने कंधे पर रख लेता है। थोड़ी देर में दूसरे का कंधा दुखने लगता है, तो तीसरा अपने कंधे पर रख लेता है।

आदमी गुलामियों के कंधे बदल रहा है। अगर गांधी से छूटता है तो मार्क्स को पकड़ लेता है; महावीर से छूटता है तो मुहम्मद को पकड़ लेता है; एक वाद से छूटता तो फौरन दूसरे वाद को पकड़ने का इंतजाम कर लेता है।

.... लोग मेरे पास आते हैं। वे कहते हैं कि मैं कहता हूं यह गलत है, वह गलत है। वे पूछते है, आप हमें यह बताइये कि सही क्या है? वे असल में यह पूछना चाहते हैं कि फिर हम पकड़े क्या, वह हमें बताइये। जब तक हमारे पास पकड़ने को कुछ न हो, तब तक हम कुछ छोड़ेंगे नहीं!

और मैं आपसे कह रहा हूं पकड़ना गलत है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि आप क्या पकड़े, मैं आपसे कह रहा हूं कि पकड़ना ही गलत है। क्लिंगिंग एज सच। चाहे वह पकड़ गांधी से हो, या बुद्ध से हो, या मुझसे हो। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। पकड़ने वाले चित्त का स्वरूप एक ही है कि पकड़ने वाला चित्त खाली नहीं रहना चाहता। वह चाहता है कहीं न कहीं उसकी मुट्ठी बंधी रहे। उसे कोई सहारा होना चाहिए। और जब तक कोई आदमी किसी का सहारा खोजता है, तब तक उसकी आला के पंख खुलने की स्थिति में नहीं आते। जब आदमी बेसहारा हो जाता है, सारे सहारे छोड़ देता है, हैल्पलेस होकर खड़ा हो जाता है, और जानता है कि मैं बिलकुल अकेला हूं कहीं किसी के कोई चरण-चिन्ह नहीं हैं...।

...... कहा हैं महावीर के चरण-चिन्ह, जिन पर आप चल रहे हैं? कहां हैं कृष्ण के चरण-चिन्ह, जिन पर आप चल रहे हैं? जीवन खुले आकाश की भांति है, जिस पर किसी के चरण-चिन्ह नहीं बनते। किसको पकड़े हैं आप? कहां हैं कृष्ण के हाथ? कहां हैं गांधी के चरण, जिनको आप पकड़े है?

सिर्फ आंख बंद करके सपना देख रहे हैं। सपने देखने से कोई आदमी मुक्त नहीं होता। न गांधी के चरण आपके हाथ में हैं, न कृष्ण के, न राम के। किसी के चरण आपके हाथ में नहीं है। आप अकेले खड़े हैं। आंख बंद करके कल्पना कर रहे हैं कि मैं किसी को पकड़े हुए हूं। जितनी देर तक आप यह कल्पना किये हुए हैं, उतनी देर तक आपकी आत्मा के जागरण का अवसर पैदा नहीं होता। और तब तक आपके जीवन में वह क्रांति नहीं हो सकती, जो आपको सत्य के निकट ले आये। न जीवन में वह क्रांति हो सकती है कि जीवन के सारे पर्दे खुल जायें; उसका सारा रहस्य खुल जाये, उसकी मिस्ट्री खुल जाये और आप जीवन को जान सकें, और देख सकें।

बंधा हुआ आदमी आंखों पर चश्मा लगाये हुए जीता है। वह खिड़कियों में से, छेदों में से देखता है दुनिया को। जैसे कोई एक छेद कर ले दीवाल में और उसमें से देखे आकाश को, तो उसे जो भी दिखायी पड़ेगा, वह उस छेद की सीमा से बंधा होगा, वह आकाश नहीं होगा। जिसे आकाश देखना है, उसे दीवालों के बाहर आ जाना चाहिये। और कई बार कितनी छोटी चीजें बांध लेती हैं, हमें पता भी नहीं चलता!

रवींद्रनाथ एक रात अपने बजरे में एक छोटी-सी मोमबत्ती जला कर कोई किताब पढ़ते थे। आधी रात को जब पढ़ते-पढ़ते वे थक गये, तो मोमबत्ती को फूंक मार कर उन्होंने बुझा दिया और किताब बंद कर दी। उस रात आकाश में पूर्णिमा का चांद खिला था। जैसे ही मोमबत्ती बुझी कि रवींद्रनाथ हैरान हो गये यह देखकर कि बजरे की रंध-रंध से, छिद्र-छिद्र से, खिड़की से, द्वार से चंद्रमा के प्रकाश की किरणें भीतर आ गई हैं, और चारों ओर अदभुत प्रकाश फैल गया है। वे खड़े होकर नाचने लगे। उस छोटी-सी मोमबत्ती के कारण उन्हें पता ही नहीं चला कि बाहर पूर्णिमा का चांद खिला है और उसका प्रकाश भीतर आ रहा है। तब उन्हें खयाल आया कि छोटी-सी मोमबत्ती का प्रकाश किस भांति चांद के प्रकाश को रोक सकता है। उस रात उन्होंने एक गीत लिखा। उस गीत में उन्होंने लिखा कि मैं भी कैसा पागल था : छोटी-सी मोमबत्ती के मद्धिम, धीमे प्रकाश में बैठा रहा और बाहर चांद का प्रकाश बरसता था, उसका मुझे कुछ पता ही न चला! मैं अपनी मोमबत्ती से ही बंधा रहा। मोमबत्ती बुझी, तो मुझे पता चला कि बाहर, द्वार पर आलोक मेरी प्रतीक्षा कर रहा है।

जो आदमी भी मत की, सिद्धांत की, शास्त्र की मोमबत्तियों को जलाये बैठे रहते हैं, वे परमात्मा के अनंत प्रकाश से वंचित हो जाते हैं। मत बुझ जाये, तो सत्य प्रवेश कर जाता है। और जो आदमी सब पकड़ छोड़ देता है, उस पर परमात्मा की पकड़ शुरू हो जाती है। जो आदमी सब सहारे छोड़ देता है, उसे परमात्मा का सहारा उपलब्ध हो जाता है। बेसहारा हो जाना परमात्मा का सहारा पा लेने का रास्ता है। सब रास्ते छोड़ देना, उसके रास्ते पर खड़े हो

जाने की विधि है। सभी शब्दों, सभी सिद्धांतों से मुक्त हो जाना, उसकी वनी को सुनने का अवसर निर्मित करना है।

मैंने एक छोटी-सी कहानी सुनी है। मैंने सुना है, कृष्ण भोजन करने बैठे हैं और रुक्मणि उन्हें पंखा झल रही है। अचानक वे थाली छोड़कर उठ खड़े हुए और द्वार की तरफ भागे। रुक्मणि ने पूछा "क्या हुआ है? कहां भागे जा रहे हैं?" लेकिन, शायद उन्हें इतनी जल्दी थी कि वे उत्तर देने को भी नहीं रुके, द्वार तक गये भागते हुए। फिर द्वार पर जाकर रुक गये। थोड़ी देर में लौट आये और भोजन करनें वापस बैठ गये। रुक्मणि ने कहा, 'मुझे बहुत हैरानी में डाल दिया आपने। एक तो पलल की भांति उठकर भागे बीच भोजन में और मैंने पूछा तो उत्तर भी नहीं दिया। फिर द्वार तक जाकर वापस भी लौट आये! क्या था प्रयोजन?

कृष्ण ने कहा, 'बहुत जरूरत आ गयी थी। मेरा एक प्यारा एक राजधानी से गुजर रहा था। राजधानी के लोग उसे पत्थर मार रहे थे। उसके माथे से खून बह रहा था। उसका सारा शरीर लहू-लुहान हो गया था। उसके कपड़े उन्होंने फाड़ डाले थे। भीड़ उसे घेरकर पत्थरों से मारे डाल रही थी और वह खड़ा हुआ गीत गा रहा था। न वह गालियों के उत्तर दे रहा था, न वह पत्थरों के उत्तर दे रहा था। जरूरत पड़ गयी थी कि मैं जाऊं, क्योंकि वह कुछ भी नहीं कर रहा था। वह बिलकुल बेसहारा खड़ा था। मेरी एकदम जरूरत पड़ गयी।'

रुक्यणि ने पूछा, "लेकिन आप द्वार तक जाकर वापस लौट आये?'

'कृष्ण ने कहा कि "जब तक मैं द्वार तक पहुंचा, तब सब गड़बड़ हो गयी। वह आदमी बेसहारा न रहा। उसने पत्थर अपने हाथ में उठा लिये। अब वह खुद ही पत्थर का उत्तर दे रहा है। अब मेरी कोई जरूरत नहीं है। इसलिये मैं वापस लौट आया हूं। अब उस आदमी ने खुद ही अपना सहारा खोज लिया है। अब वह बेसहारा नहीं है।

"यह कहानी सच हो कि झूठ। इस कहानी के सच और झूठ होने से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है। लेकिन एक बात मैं अपने अनुभव से कहता हूं कि जिस दिन आदमी बेसहारा हो जाता है, उसी दिन परमात्मा के सारे सहारे उसे उपलब्ध हो जाते हैं। लेकिन हम इतने कमजोर हैं, हम इतने डरे हुए लोग हैं कि हम कोई न कोई सहारा पकड़े रहते हैं। और जब तक हम सहारा पकड़े रहते हैं, तब तक परमात्मा का सहारा उपलब्ध नहीं हो सकता है।

स्वतंत्र हुए बिना सत्य की उपलब्धि नहीं है। और सारी जंजीरों को तोड़े बिना कोई परमात्मा के द्वार पर अंगीकार नहीं होता है। लेकिन हम कहेंगे-महापुरुषों को कैसे छोड़ दें? गांधी इतने प्यारे हैं,उनको कैसे छोड़ दें.....।

‘कौन कहता है, गांधी प्यारे नहीं हैं? कौन कहता है, महावीर प्यारे नहीं हैं? कौन कहता है, कृष्ण प्यारे नहीं हैं? प्यारे हैं, यही तो मुश्किल है। इसलिए छोड़ना मुश्किल हो जाता है। लेकिन प्यारों को भी छोड़ देना पडता है, तभी वह जो परम प्यारा है, वह उपलब्ध होता है।

महात्मा, परमात्मा और मनुष्य की आत्मा के बीच में खड़े हैं। और ये महात्मा अपनी इच्छा से नहीं खड़े हूए हैं। हमने जिनको महात्मा समझ लिया है, उनको खड़ा कर लिया है, और वे हमारे लिये दीवाल बन गये हैं। व्यक्तियों से मुक्त होने की जरूरत है, ताकि वह जो अव्यक्ति है, वह जो महाव्यक्ति है, उसके और हमारे बीच कोई बाधा न रह जाए। शब्दों और सिद्धांतों से मुक्त होने की जरूरत है, ताकि सत्य जैसा है, वैसा उसे हम देख सकें। अभी हम सत्य को वैसा ही देखते हैं, जैसा हम देखना चाहते हैं, जैसी हमारी इच्छा काम करती है, जैसी हमारी मान्यता काम करती है, जैसे हमारे चश्मे काम करते हैं। अभी हम जो देखना चाहते हैं, वही देख लेते तै; जो है वह हमें दिखायी नहीं पड़ता और जो है, वही सत्य है।

कौन देख पायेगा उसे, जो है। उसे वही देख पाता है, जिसका अपना देखने का कोई आग्रह नहीं, कोई मत नहीं, कोई पंथ नहीं। जिसकी आंखों पर कोई चश्मा नहीं। जो सीधा नग्र, शून्य, निर्वस्र-बिना सिद्धातों के खड़ा है। उसे वही दिखायी पड़ता है, जो है।

और, वह जो है, मुक्तिदायी है। वह जो है, उसी का नाम जीवन है। वह जो है, उसी का नाम परमात्मा है।

यह पहला सूत्र ध्यान में रखना जरूरी है : अपने को बांधें मत, और जहां-जहां बंधें हों, कृपा करें, वहां से छूट जाएं। और यह मत पूछें कि छूटने के लिये क्या करना पड़ेगा। छूटने के लिये कुछ भी नहीं करना पड़ेगा। क्योंकि महापुरुष आपको नहीं बांधे हुए हैं कि आपको कुछ करना पड़े। आप ही उनको पकड़े हुए हैं। छोड़ दिया और वह गये। और कुछ भी नहीं करना है। अगर कोई दूसरा आपको बांधे हो, तो कुछ करना पड़ेगा। आप ही अगर पकड़ हों, तो जान लेना पर्याप्त है- और छूटना शुरू हो जाता है।

कोई गांधी गांधी वादियों को नहीं बांधे हुए हैं। गांधी तो जिंदगी भर कोशिश करते रहे कि गांधीवाद जैसी कोई चीज खड़ी न हो जाये। लेकिन गांधी वादी बिना गांधीवाद खड़ा किये कैसे रह सकते हैं! वाद चाहिये, जिससे बना जा सके। अब वे उससे बंध गये हैं। अब उनसे पूछो, तो वे कहेंगे-कैसे छूटें? अगर आप पूछते हैं कि कैसे छूटें, तो फिर आप समझे नहीं। कोई दूसरा आपको बांधे हुए नहीं है।

कृष्ण हिंदुओं को नहीं बांधे हुए हैं-और न मुहम्मद मुसलमानों को- और न महावीर जैनों को।

कोई किसी को बांधे हुए नहीं है। ये सारे तो ऐसे लोग हैं, जो छुटकारा चाहते हैं कि हर आदमी छूट जाये। लेकिन हम उनकी छायाओं को पकड़े हैं और बंधे हैं। हमें कोई बांधे हुए नहीं है, हम बंधे हुए हैं। और अगर हा। बंधे हुए हैं, तो बात साफ है : कि हम छूटना चाहें, तो एक क्षण भी छोड़ने में नहीं लगता। तो एक क्षण भी गया। की जरूरत नहीं है। आप इस भवन के भीतर बंधे हुए आये थे। इस भवन के बाहर मुक्त होकर जा सकते है।

मैं अभी ग्वालियर में था। एक-डेढ वर्ष पहले, ग्वालियर के एक मित्र ने मुझे फोन किया कि मैं अपनी बूढ़ी मां को भी अपनी सभा में लाना चाहता हूं लेकिन मैं डरता हूं। क्योंकि उनकी उम्र कोई नब्बे वर्ष है। चालीस वर्षों से वह दिन-रात माला फेरती रहती हैं। सोती हैं, तो भी रात उनके हाथ में माला 'होती है। और आपकी बातें कुछ ऐसी है कि कहीं उनको चोट न लग जाये। मेरी समझ में नहीं आता कि इस उम्र में उनको लाना उचित है या नहीं....?

मैंने उन मित्र को खबर दी कि आप जरूर ले आयें। क्योंकि इस उम्र में अगर न लाये, तो हो सकता है, जब दुबारा मैं आऊं तो आपकी मां से मेरा मिलना भी न हो पाये। इसलिये जरूर ले आयें। आप चाहे आयें या न आयें, मां को जरूर ले आयें.....।

वे मां को लेकर आये। दूसरे दिन मुझे उन्होंने खबर की कि बड़ी चमत्कार की बात हो गयी। जब मैं आया, तो आप माला के खिलाफ ही बोलने लगे। तो मुझे लगा कि यह आपको खबर करना तो ठीक नहीं हुआ। मैंने आपसे कहा कि मेरी मां माला फेरती है, तो मुझे लगा कि आप माला के खिलाफ ही बोलने लगे! तो मुझे लगा कि आप मेरी मां को ही ध्यान में रखकर बोल रहे हैं। उसको नाहक चोट लगेगी, नाहक दुख होगा। मैं डरा, पूरे रास्ते गाड़ी में मैंने मां से पूछा भी नहीं कि तेरे मन पर क्या असर हुआ?

घर जाकर मैंने पूछा कि कैसा लगा, तो मेरी मां ने कहा, "कैसा लगा? मैं माला वहीं मीटिंग में ही छोड़ आयी। चालीस साल का मेरा भी अनुभव कहता है कि माला से मुझे कुछ भी नहीं मिला। लेकिन इतनी हिम्मत नहीं जुटा पा रही थी कि उसे छोड़ दूं। वह बात मुझे खयाल आ गई, माला तो मुझे पकड़े हुए नहीं थी, मैं ही उसे पकड़े हुए थी। मैंने उसे छोड़ दिया तो वह छूट गयी! "

तो आप यह मत पूछना कि कैसे हम छोड़ दें। कोई आपको पकड़े हुए नहीं है, आप ही मुट्ठी बांधे हुए हैं। छोड़ दें और वह छूट जाता है। और छूटते ही आप पायेंगे कि चित्त हल्का हो गया, निर्भार हो गया-तैयार हो गया-एक यात्रा के लिये।

इन चार दिनों में उस यात्रा के और सूत्रों पर हम बात करेंगे, लेकिन पहला सूत्र है-नो क्लिंगिंग, कोई पकड़ नहीं। सब पकड़ छोड़ देनी है। पकड़ छोड़ते ही मन तैयार हो जाता है।

पकड़ छोड़ते ही मन पंख फैला देता है। पकड़ छोड़ते ही मन सत्य की यात्रा के लिये आकांक्षा करने लगता है।

और जो मत से बंधे हैं, वे डरते हैं सत्य को जानने से। मतवादी हमेशा सत्य को जानने से डरता है। क्योंकि जरूरी नहीं है कि सत्य उसके मत के पक्ष में हो। सत्य विपरीत भी पड़ सकता है। मतवादी अपने मत को नहीं छोडना चाहता, इसलिये सत्य को जानने से वह वंचित रह जाता है।

मैं निरंतर कहता हूं दो तरह के लोग हैं दुनिया में। एक वे लोग हैं, जो चाहते हैं, सत्य हमारे पीछे चले और दूसरे वे हैं, जो सत्य के पीछे खड़े हो जाते हैं। मतवादी सत्य को अपने पीछे चलाना चाहता है। वह कहता है कि मेरा मत सही है। और सत्यवादी कहता है, मैं सत्य के पीछे खड़ा हो जाऊंगा। मेरे मत का कोई मूल्य नहीं है। मूल्य है सत्य का।

जिसको सत्य के पीछे खड़ा होना है, उसे मत छोड़ देना पड़ेगा, क्योंकि सत्य को जानने में मत बाधा देगा, रोकेगा और अड़चन डालेगा।

अगर आप हिंदू हैं, तो आप धार्मिक नहीं हो सकते हैं। अगर आप ईसाई हैं, तो आप धार्मिक नहीं हो सकते है।

अगर धार्मिक होना है, तो ईसाई, हिंदू और मुसलमान होने से मुक्ति आवश्यक है।

अगर जीवन के सत्य को जानना है, तो जीवन के संबंध में जो भी मत पकड़ा है, उससे मुक्ति आवश्यक है।

.. वह बूढ़ी औरत अदभुत थी। छोड़ गयी माला। माला की कीमत चार आना तो रही ही होगी। आप जो सिद्धांत पकड़े हैं, उसकी कीमत चार आना भी नहीं है। उसको ऐसे ही छोड़ा जा सकता है, आंख मूंद कर। 'शो छोड़ कर आप नुकसान में नहीं पड़ जायेंगे। छोड़ते ही आप पायेंगे कि जो छूट गया है, वह सत्य की तरफ जाने में बाधा था। और पहली बार आंख खुलेगी कि मैं जीवन को वैसा देख सकूं,जैसा वह है।

यह पहला सूत्र है। इस संबंध में जो भी प्रश्न हों, वह आप लिखकर दे देंगे, तथा अन्य प्रश्न भी लिखकर दे देंगे, ताकि सुबह की चर्चाओं में आपके प्रश्नों की बात हो सके-और सांझ को मैं और सूत्रों की बात करूंगा।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना। उसके लिये बहुत अनुगृहीत हूं और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं।

मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

'जीवन क्रांति के सूत्र'
बड़ौदा

13 फरवरी 1966, प्रात :

संभोग से समाधि की ओर–48

Posted on सितम्बर 21, 2013by sw anand prashad

भीड़ से, समाज से-दूसरों से मुक्ति—सोलहवां प्रवचन
मेरे प्रिय आत्मन,

मनुष्य का जीवन जैसा हो सकता है, मनुष्य जीवन में जो पा सकता है। मनुष्य जिसे पाने के लिये पैदा होता है-वही उससे छूट जाता है। वह उसे नही मिल पाता है कभी किसी एक मनुष्य के जीवन मे-किसी कृष्ण, किसी राम, किसी बुद्ध, किसी गांधी के जीवन में सौदर्य के फूल खिलते है। और सत्य की सुगंध फैलती है। लेकिन, शेष सारी मनुष्यता ऐसे ही मुरझा जाती है और नष्ट हो जाती है।

कौन-सा दुर्भाग्य है मनुष्य के ऊपर...कौन-सी कठिनाई है? करोड़ो बीजों में से अगर एक बीज में अंकुर आये और शेष बीज, बीज ही रह कर सड़ जायें और समाप्त हो जायें, तो यह कोई सुखद स्थिति नहीं हो सकती। और अगर मनुष्य जाति के पूरे इतिहास को उठा कर देखें, तो अंगुलियों पर गिने जा सकें, ऐसे थोडे-से मनुष्य पैदा होते है, जिनकी कथा इतिहास में शेष है। शेष सारी मनुष्यता की कोई कथा इतिहास में शेष नहीं है! शेष सारे मनुष्य बिना किसी सत्य को जाने, बिना किसी सौदर्य को जाने ही मर जाते हैं! क्या ऐसे जीवन को हम जीवन कहें? एक फकीर का मुझे स्मरण आता है। कभी वह सम्राट था, लेकिन फिर वह फकीर हो गया था। वह पैदा तो सम्राट हुआ था, और जिस राजधानी में वह पैदा हुआ था, उसी राजधानी के बहार एक झोपड़े में रहने लगा था। लेकिन उसके झोपड़े पर अक्सर उपद्रव होते रहते थे। जो भी उसके झोपड़े पर आता, उसी से उसका झगड़ा हो जाता।

रास्ते पर था उसका झोपड़ा और गांव से कोई चार मील बाहर था-चौराहे पर था। आने-जाने वाले राहगीर उस से बस्ती का रास्ता पूछते, तो वह कहता, 'बस्ती ही जाना चाहते हो, तो बायी तरफ भूलकर भी मत जाना, दायीं तरफ के रास्ते से जाना, तो बस्ती पहुच जाओगे।'

राहगीर उसकी बात मानकर दायीं तरफ के रास्ते से जाते, और दो-चार मील चलकर मरघट पर पहुंच जाते-वहां, जहां बस्ती नही, सिर्फ कब्रें थीं। राहगीर क्रोध में वापस लौटते और आकर फकीर से झगडा करते कि तुम पागल तो नहीं हो? हमने पूछा था बस्ती का रास्ता, और तुमने हमें मरघट में भेज दिया?

तो वह फकीर हंसने लगता और कहता तुम्हें मेरी परिभाषा मालूम नहीं है। मैं तो मरघट को बस्ती ही कहता हूं। क्योंकि जिसे तुम से बस्ती कहते हो, उसमें तो कोई भी ज्यादा दिन बसता नही। कोई आज उजड़ जाता है और कोई कल। वहां तो मौत रोज आती है और किसी न किसी को उठा ले जाती है। वह, जिसे तुम बस्ती कहते हो, वह तो मरघट है। वहां तो मृत्यु की प्रतीक्षा करनेवाले लोग बसते हैं। वे प्रतीक्षा करते रहते है मृत्यु की। मैं तो उसी को बस्ती कहता हूं जिसे तुम मरघट कहते हो क्योंकि वहां जो एक बार बस गया, वह बस गया,फिर उसकी मौत नहीं होती। बस्ती मैं उसे कहता हूं जहां बस गये लोग फिर उजड़ते नहीं, वहां से हटते नहीं।

लगता है पागल रहा होगा वह फकीर। लेकिन क्या दुनिया के सारे समझदार लोग पागल रहे हैं? दुनिया के सारे ही समझदार लोग एक ही बात कहते रहे है कि जिसे हम जीवन समझते है, वह जीवन नहीं है। और चूंकि हम गलत जीवन को जीवन समझ लेते है, इसलिये जिसे हम मृत्यु समझते है, वह भी मृत्यु नहीं है। हमारा सब कुछ ही उलटा है। हमारा सब कुछ ही अंजान से भरा हुआ और अंधकार से पूर्ण है। फिर जीवन क्या है? और उस जीवन को जानने और समझने का द्वार और मार्ग क्या है?

बुद्ध के संघ में एक बूढा भिक्षु रहता था। बुद्ध ने एक दिन उस बूढे भिक्षु को पूछा कि 'मित्र तेरी उम्र क्या है? उस भिक्षु ने कहा, 'आप भली-भांति जानते है, फिर भी पूछते हैं? मेरी उम्र पाँच वर्ष है?

'बुद्ध बहुत हैरान हुए और कहने लगे,'कैसी मजाक कुरते हो?...सिर्फ पांच वर्ष! पचहत्तर वर्ष से कम तो तुम्हारी उम्र क्या होगी, पांच वर्ष कैसे कहते हो?'

बूढे भिक्षु ने कहा, हां, सत्तर वर्ष भी जिया हूं लेकिन उन्हे जीने के वर्ष नहीं कह सकता। उसे जीवन कैसे कहूं! पिछले पांच वर्षों से ही जीवन को जाना है, इसलिये पांच ही वर्ष की उम्र गिनता हूं। वे सत्तर वर्ष तो बीत गये-नींद में, बेहोशी में, मूर्छा में। उनकी गिनती कैसे करूं?

नहीं जानता था जीवन को, तो फिर उनकी भी गिनती कर लेता था। अब, जब से जीवन को जाना है, तब से उनकी गिनती करनी बहुत मुश्किल हो गयी है।'

यही मैं आप से भी कहना चाहता हूं कि जिसे हम अब तक जीवन जानते रहे है, वह जीवन नहीं है-वह एक निद्रा, एक मूर्छा है; एक दुःख की लबी कथा है; एक अर्थ हीन खाली पन, एक मीनिंगलेस एंपटिनेस है। जहां कुछ भी नहीं है हमारे हाथों में। जहां न हमने कुछ जाना है और न कुछ जिया है। फिर वह जीवन कहा है, जिस की हम बात करें। जीवन के उसी एकसूत्र पर सुबह मैंने बात की है, दूसरे सूत्र पर अभी बात करेंगे।

दूसरे सूत्र को समझने के लिये एक बात समझ लेनी जरूरी है कि मनुष्य का जीवन भीतर से बाहर की तरफ आता है-बाहर से भीतर की तरफ नहीं। एक बीज में जब अंकुर आता है, तो वह भीतर से आता है। अंकुर बड़ा होता है तो उसमें पत्ते और फूल लगते हैं, फल लगते हैं। उस छोटे से बीज से एक बड़ा वृक्ष निकलता है, जिसके नीचे हजारों लोग विश्राम करते हैं। एक छोटे से बीज में इतना बड़ा वृक्ष छिपा होता है। लेकिन, वह न वृक्ष बाहर से नहीं आता है-यह अंधा भी कह सकता है। यह वृक्ष भीतर से आता है, उस छोटे-से बीज से आता है।

जीवन भी छोटे से बीज से ही भीतर से बाहर की तरफ फैलता है। और हम सारे लोग जीवन को खोजते हैं बाहर! जीवन आता है भीतर से-फैलता है बाहर की तरफ। बाहर जीवन का विस्तार है, जीवन का केंद्र नहीं। जीवन की मूल ऊर्जा, जीवन का मूल स्रोत भीतर है और जीवन की शाखाएं बाहर हैं। और हम सब जीवन ' और खोजते हैं बाहर, इसलिये जीवन से वंचित रह जाते हैं, जीवन को नहीं जान पाते हैं! पत्तों को जान लेते है, पर।। को पहचान लेते हैं, लेकिन पत्ते?., पत्ते जड़ें नहीं हैं।

माओत्से-तुंग ने अपने बचपन की एक छोटी सी घटना लिखी है। लिखा है कि मेरी मां का एक बगीचा था। उस बगीचे में ऐसे सुंदर फूल खिलते थे कि दूर-दूर से लोग उन्हें देखने आते थे। एक बार मेरी बूढ़ी बिमार पड़ गयी। वह बहुत चिंतित थी-अपनी बीमारी के लिये नहीं, बगीचे में खिले फूलों के लिये-कि बगीचे में खिले फूल कुम्हला न जाएं। वह इतनी बीमार थी कि बिस्तर से बाहर नहीं निकल सकती थी।

मैंने मां से कहा, तुम घबड़ाओ मत, मैं फिक्र कर लूंगा फूलों की। और मैंने पंद्रह दिन तक फूलों की बहुत फ्रिक की। एक-एक पत्ते की धूल झाड़ी, एक-एक पत्ते को पोंछा और साफ किया। एक–एक पत्ते को संभाला, एक-एक फूल की फिक्र की, लेकिन न मालूम क्यों फूल मुरझाते गये, पत्ते सूखते गये और सारा बगीचा सूखता गया!

पंद्रह दिन बाद बूढ़ी मां बाहर आयी और बाहर आकर उसने देखा कि उसकी सारी बगिया उजड़ गयी है। बेहोश होकर गिर पड़े हैं, फूल कुम्हला गये हैं, कलियां-कलियां ही रह गयी हैं, फूल नहीं बनी हैं।

मां पूछने लगी, "तू क्या करता था पंद्रह दिन तक? सुबह से रात तक सोता भी नहीं था! यह क्या हुआ?'

मेरी आंखों में आंसू आ गये। मैंने कहा, "मैंने बहुत फिक्र की। मैंने एक-एक पत्ते की धूल झाड़ी। मैंने एक-एक फूल पर पानी छिड़का। मैंने एक-एक पौधे को गले लगाकर प्रेम किया, लेकिन न-मालूम कैसे पागल पौधे हैं, सब कुम्हला गये हैं, सब सूख गये हैं।

यूं तो मां की आंखों में बगिया को देखकर आंसू थे, लेकिन मेरी हालत देखकर वह हंसने लगी और उसने कहा, "पागल, फूलों के प्राण फूलों में नहीं होते, उनकी जड़ों में होते हैं, जो दिखाई नहीं पड़ती हैं और जमींन के नीचे होती हैं। पानी फूलों को नहीं देना पड़ता है, जड़ों को देना पडता है। फिक्र पत्तों की नहीं करनी पड़ती,? जड़ो की करनी पड़ती है। पत्तों की लाख फिक्र करें तो भी जड़े कुम्हला जायेंगी और पत्ते भी सूख जायेंगे। और जड़ों की थोड़ी सी फिक्र करें और पत्तों की, फूलों की कोई भी फिक्र न करें, तो भी पत्ते फलते रहेंगे, फूल खिलते रहेंगे। सुगंध उड़ती रहेगी।

मैंने पूछा, "लेकिन जड़ कहां है? वह तो दिखायी नहीं पड़ती है!'

...... हम सब भी यही पूछते हैं-जीवन कहां है? वह तो दिखायी नहीं पड़ता है। वह बाहर नहीं छिपा है, वह अपने ही भीतर है-अपनी ही जड़ों में। बाहर जहां दिखाई पड़ता है सब कुछ, वहां पत्ते हैं, शाखाएं हे। भीतर जहां दिखाई नहीं पडता, जहां घोर अंधकार है, वहां जड़ें हैं।

दूसरा सूत्र समझ लेना जरूरी है और वह यह कि जीवन बाहर नहीं, भीतर है। विस्तार बाहर है, प्राण भीतर हैं। फूल बाहर खिलते हैं, जड़ें भीतर हैं। और जड़ों के संबंध में हम सब भूल गये हैं। माओ पर हम हंसेंगे कि नादान था वह लड़का बहुत, लेकिन हम अपने पर नहीं हंसते हैं कि हम जीवन के बगीचे में उतने ही नादान हैं।

... और, अगर आदमी के चेहरे से मुस्कुराहट चली गयी है-और आदमी की आंखों से शांति खो गई है... और आदमी के हृदय में फूल नहीं लगते हैं... और आदमी की जिंदगी में संगीत नहीं बजता है... और आदमी की जिंदगी एक बे-रौनक उदासी हो गयी है, तो फिर हम पूछते हैं कि कितना तो हम सम्हालते हैं, कितने अच्छे मकान बनाते हैं, कितने अच्छे रास्ते बनाते हैं, कितने अच्छे कपड़े निर्मित करते हैं, कितनी अच्छी शिक्षा देते हैं-सब तो हम करते हैं, लेकिन

आदमी फिर भी कुम्हलाता क्यों चला जाता है? यह हम वही पूछते हैं, जो उस लड़के ने पूछा था कि मैंने एक-एक पत्ते को सम्हाला, लेकिन फूल?.. फूल क्यों कुम्हला गये? पौधे क्यों कुम्हला गये?

आदमी कुम्हला गया है, क्योंकि वह बाहर सम्हालता रहा है। और ध्यान रहे कि जिसको हम भौतिकवादी कहते हैं, वे ही केवल बाहर नहीं देखते-जिनको हम अध्यात्मवादी कहते हैं, दुर्भाग्य है कि वे भी बाहर ही देखते हैं और बाहर ही सम्हालते हैं! भौतिकवादी तो बाहर सम्हालेगा, क्योंकि भौतिकवादी मानता है कि "भीतर-जैसी" कोई चीज ही नहीं है। भीतर है ही नहीं। भौतिकवादी कहता है, "भीतर" कोरा शब्द है। भीतर कुछ भी नहीं है।

हालांकि यह बड़ी अजीब बात मालूम पड़ती है, क्योंकि जिसका भी बाहर होता है, उसका भीतर अनिवार्य रूप से होता है। यह असंभव है कि बाहर ही बाहर हो और भीतर न हो। अगर भीतर न हो, तो बाहर नहीं हो सकता। अगर एक मकान की बाहर की दीवाल है, तो उसका भीतर भी होगा। अगर एक पत्थर की बाहर की रूप-रेखा है, तो भीतर भी कुछ होगा। बाहर की जो रूप-रेखा है, वह भीतर को ही घेरने वाली रूप-रेखा होती है। बाहर का अर्थ है, भीतर को घेरने वाला। और अगर भीतर न हो तो बाहर कुछ भी नहीं हो सकता।

लेकिन भौतिकवादी कहता है कि भीतर कुछ भी नहीं, इसलिये भौतिकवादी को तो क्षमा भी किया जा सकता है। लेकिन अध्यात्मवादी भी सारी चेष्टा बाहर की करता है, वह भी कहता है कि ब्रह्मचर्य साधो, वह भी कहता है, अहिंसा साधो; वह भी कहता है, सत्य साधो; वह भी गुणों को साधने की कोशिश करता है! अहिंसा, ब्रह्मचर्य, प्रेम, करुणा, दया-यें सब फूल हैं, जड़ इनमें से कोई भी नहीं है।

जड़ समझ में आ जाये, तो अहिंसा अपने-आप पैदा हो जाती है। और अगर जड़ समझ में न आये, तो अहिंसा को हम जिंदगी भर सम्हाले, फिर भी अहिंसा पैदा नहीं होती। बल्कि, अहिंसा के पीछे निरंतर हिंसा खड़ी रहती है। और वे हिंसक बेहतर हैं, जो बाहर भी हिंसक है; लेकिन वे अहिंसक बहुत खतरनाक हैं, जो बाहर तो अहिंसक, लेकिन भीतर हिंसक हैं।

जिन मुल्कों ने अध्यात्म की बहुत बात की है, उन्होंने बाहर से एक थोथा अध्यात्म पैदा कर लिया है। वैसा जो थोथा अध्यात्म है, वह बाहर के गुणों पर जोर देता है, अंतस पर नहीं। वह कहता है-सेक्स छोड़ो, ब्रह्मचर्य साधो! वह कहता है-झूठ को छोड़ो, सत्य को साधो! वह कहता है-कांटे हटा लो और फूल पैदा करो! लेकिन इसकी बिलकुल फिक्र नहीं करता है कि फूल जो जड़ों से पैदा होते हैं, वे जड़ें कहां हैं। और अगर जड़ें न सम्हाली जायें, तो फूल पैदा होनेवाले नहीं हैं। हां, कोई चाहे तो बाजार से कागज के फूल लाकर ऊपर चिपका ले सकता है।

और दुनिया में अध्यात्म के नाम से कागज के फूल चिपकाए हुए लोगों की भीड़ खड़ी हो गयी है। और ऐसे लोगों के कारण ही भौतिकवाद को दुनिया में नहीं हराया जा पा रहा है; क्योंकि भौतिकवाद कहता है, यही है तुम्हारा अध्यात्म? ये कागज के फूल? और इन कागज के फूलों को देखकर भौतिकवादी को लगता है कि नहीं है कुछ भीतर, सब ऊपर की बातें हैं।

अध्यात्म के नाम से बाहर का आरोपण चल रहा है। कल्टिवेशन और इंपोजीशन चल रहा है। आदमी, भीतर जो सोया हुआ है, उसे जगाने की चिंता में नहीं है, बाहर से अच्छे वस्त्र पहन लेने की चिंता में है! इससे एक अदभुत धोखा पैदा हो गया है। दुनिया में या तो भौतिकवादी हैं और या फिर झूठे अध्यात्मवादी हैं। दुनिया में कमा आदमी खोजना मुश्किल होता चला गया है। हां, कभी कोई एकाध सच्चा आदमी पैदा होता है, लेकिन उस आदमी को भी हम नहीं समझ पाते हैं, क्योंकि उसको भी हम बाहर से देखते हैं कि वह क्या करता है, कैसे चलता,, का पहनता है, क्या खाता है? और इसी आधार पर हम निर्णय लेते हैं कि वह भीतर से क्या होगा!

नहीं, फूल के आधार पर जड़ों का पता नहीं चलता है। फूल के रंग देख कर जड़ो का कुछ पता नहीं चलता है; पत्तों से जड़ों का कुछ भी पता नहीं चलता है। जड़ें कुछ बात ही और है। वह आयाम ही दूसरा है; वह डायमेन्शन ही दूसरा है। लेकिन सब बाहर से सम्हालने की, वस्रों को सम्हालने की लंबी कथा चल रही है। और हमने एक झूठा आदमी पैदा कर लिया है। इस झूठे आदमी का कोई भी जीवन नहीं होता, इसलिये इस झूठे-आदमी को हम थोड़ा समझ लें; क्योंकि यह झूठा आदमी कोई और नहीं है, हम सभी झूठे आदमी हैं।

मैंने सुना है, एक किसान ने एक खेत में एक झूठा आदमी बनाकर खड़ा कर दिया था। किसान खेतों में झूठा आदमी बनाकर खड़ा कर देते हैं। कुरता पहना देते हैं, हंडिया लटका देते हैं, मुंह बना देते हैं। जंगली जानवर उस झूठे आदमी को देखकर डर जाते हैं, भाग जाते हैं। पक्षी-पक्षी खेत में आने से डरते हैं।

एक दार्शनिक उस झूठे आदमी के पास से निकलता था। तो उस दार्शनिक ने उस झूठे आदमी को पूछा कि दोस्त! सदा यही खड़े रहते हो? धूप आती है, वर्षा आती है, सर्दियां आती हैं रात आती है, अंधेरा हो जाता है-तुम यही खड़े रह जाते हो? ऊबते नहीं, घबराते नहीं, परेशान नहीं होते?

वह झूठा आदमी दार्शनिक की बातें सुनकर बहुत हंसने लगा। उसने कहा, परेशान! परेशान मैं कभी नहीं होता, दूसरों को डराने में इतना मजा आता है कि वर्षा भी गुजार देता हूं धूप गुजार देता हूं। रातें भी गुजार देता हूं। दूसरों को डराने में बहुत मजा आता है; दूसरों को प्रभावित देखकर, भयभीत देखकर बहुत मजा आता है। 'दूसरों की आंखों में सच्चा दिखायी पड़ता हूं, -

बस बात खत्म हो जाती है। पक्षी डरते हैं कि मैं सच्चा आदमी हूं। जंगली जानवर भय खाते हैं कि मैं सच्चा आदमी हूं। उनकी आंखों में देखकर कि मैं सच्चा हूं बहुत आनंद आता है!

उस झूठे आदमी की बातें सुनकर दार्शनिक ने कहा, ”बड़े आश्चर्य की बात है। तुम जैसा कहते हो, वैसी हालत मेरी भी है। मैं भी दूसरों की आंखों में देखता हूं कि मैं क्या हूं और उसी से आनंद लेता चला जाता हूं!

तो वह झूठा आदमी हंसने लगा और उसने कहा, ”तब फिर मैं समझ गया कि तुम भी एक झूठे आदमी हो। झूठे आदमी की एक पहचान है : वह हमेशा दूसरों की आंखों में देखता है कि कैसा दिखायी पड़ता है। इससे मतलब नहीं कि वह क्या है। उसकी सारी चिंता, उसकी सारी चेष्टा यही होती है कि वह दूसरी को कैसा दिखायी पड़ता है; वे जो चारों तरफ देखने वाले लोग हैं, वे उसके बारे में क्या कह रहे हैं।

यह जो बाहर का थोथा अध्यात्म है, यह लोगों की चिंता से पैदा हुआ है। लोग क्या कहते हैं। और जो आदमी यह सोचता है कि लने क्या कहते है, वह आदमी कभी भी जीवन के अनुभव को उपलब्ध नहीं हो सकता है। जो आदमी यह फिक्र करता है कि भीड़ क्या कहती है, और जो भीड़ के हिसाब से अपने व्यक्तित्व को निर्मित करता है, वह आदमी भीतर जो सोये हुए प्राण हैं, उसको कभी नहीं जगा पायेगा। वह बाहर से ही वस्त्र ओढ़ लेगा। वह लोगों की आंखों में भला दिखायी पड़ने लगेगा और बात समाप्त हो जायेगी।

हम वैसे दिखायी पड़ रहे हैं, जैसे हम नहीं हैं!

हम वैसे दिखायी पड़ रहे हैं, जैसे हम कभी भी नहीं थे।

हम वैसे दिखायी पड़ रहे हैं, जैसा दिखायी पडना सुखद मालूम पड़ता है! लेकिन वैसे हम नहीं है।

मैंने सुना है, लंदन के एक फोटोग्राफर ने अपनी दुकान के सामने एक बड़ी तख्ती लगा रखी थी। और उस तख्ती पर लिख रखा था कि तीन तरह के फोटो यहां उतारे जाते हैं। पहले तरह के फोटो का दाम सिर्फ पांच रुपया है। और वह फोटो ऐसा होगा, जैसे आप हैं। दूसरी तरह के फोटो का दाम दस रुपया है। और वह ऐसा होगा, जैसे आप दिखायी पड़ते हैं। तीसरी तरह के फोटो का दाम पंद्रह रुपया है। और वह ऐसा होगा, जैसे आप दिखायी पड़ना चाहते हैं।

‘गांव का एक आदमी आया था फोटो निकलवाने, तो वह बड़ी मुश्किल में पड़ गया। वह पूछने लगा, तीन-तीन तरह के फोटो एक आदमी के कैसे हो सकते हैं! फोटो तो एक ही तरह का

होता है। एक ही आदमी के तीन तरह के फोटो कैसे हो सकते हैं? और वह ग्रामीण पूछने लगा कि जब पांच रुपये में फोटो उतर सकता है, तो पंद्रह रुपये में कौन उतरवाता होगा।

फोटोग्राफर बोला, 'नासमझ, नादान, तू पहला आदमी आया है, जो पहली तरह का फोटो उतरवाने का विचार कर रहा है। अब तक पहली तरह का फोटो उतरवानेवाला कोई आदमी नहीं आया। जिसके पास पैसे की कमी होती है, तो वह दूसरी तरह का फोटो उतरवाता है। नहीं तो तीसरी तरह के ही लोग फोटो उतरवाते हैं। पहली तरह का तो कोई उतरवाता ही नहीं। कोई आदमी नहीं चाहता कि वह वैसा दिखायी पड़े, जैसा कि वह है-दूसरों को भी वैसा दिखायी न पड़े, और खुद को भी वैसा दिखायी न पड़े, जैसा कि वह है।

तो फिर भीतर की यात्रा नहीं हो सकती है। क्योंकि भीतर तो सत्य की सीढ़ियों पर चढ़कर ही यात्रा शुरू होती है, असत्य की सीढ़ियों पर चढ़कर नहीं। और ध्यान रहे, अगर बाहर की यात्रा करनी हो, तो असत्य की सीढ़ियों के बिना बाहर कोई यात्रा नहीं हो सकती। अगर दिल्ली पहुंचना हो तो असत्य की सीढ़ियों पर चढ़े बिना कोई यात्रा नहीं हो सकती है। और भीतर जाना हो, तो सत्य की सीढ़ियों पर चढ़े बिना कोई यात्रा नहीं हो सकती है। अगर बहुत धन के अंबार लगाने हों, तो असत्य की यात्रा के सिवाय कोई यात्रा नहीं है। अगर बहुत यश पाना हो, प्रतिष्ठा पानी हो, मित्रता पानी हो, तो असत्य के सिवाय कोई रास्ता नहीं है।

बाहर की सारी यात्रा की सीढ़ियां असत्य की ईंटों से निर्मित है। और भीतर की यात्रा सत्य की सीढ़ियां चढ़कर करनी पड़ती है।

और इस बात को जानना बहुत कठिन पड़ता है कि 'मैं सच में क्या हूं?' हम सदा उसे दबाते हैं, जो हम नहीं हैं! हम शरीर को तो बहुत देखते हैं आइने को सामने रखकर, लेकिन वह जो भीतर है, उसके सामने कभी आइना नहीं रखते। और अगर कोई आइना सामने ले आये, तो हम बहुत नाराज हो जाते हैं। किसी के आइना दिखाने पर हम आइना भी तोड़ देते हैं और उस आदमी का सिर भी तोड़ देते हैं।

कोई आदमी भीतर के आदमी को देखने के लिये तैयार नहीं है। इसलिये दुनिया में जिन लोगों ने भी हमारे, भीतर के असली आदमी को दिखाने की कोशिश की है, उनके साथ हमने वह व्यवहार किया है, जो हम दुश्मन के साथ करते हैं। जीसस को हम सूली पर लटका देते हैं, सुकरात को हम जहर पिला देते हैं। जो भी हमारी असलियत को दिखाने की कोशिश करता है, उससे हम बहुत नाराज हो जाते हैं; क्योंकि वह हमारी नग्रता को उघाड़कर हमारे सामने रख देता है। और हम-हम धीरे- धीरे भूल ही गये हैं कि वस्त्रों के भीतर हम नग्न ही है! हम धीरे- धीरे समझने लगे हैं कि हम वस्त्र ही हैं। भीतर एक नंगा आदमी भी है, उसे हम धीरे- धीरे भूल गय हैं-बिलकुल भूल गये हैं! उसकी हमें कोई याद नहीं है, और वही हमारी

असलियत है। उस असलियत '। ' पैर रखे बिना- और जो भी गहरी असलियतें हैं भीतर, उन तक पहुंचा नहीं जा सकता है।

इसलिये दूसरा सूत्र है. 'मैं जैसा हूं उसका साक्षात्कार।

लेकिन वह हम नहीं करते हैं! हम तो दबा-दबाकर अपनी एक झूठी तसवीर, एक फाल्स इमेज खड़ी करने की कोशिश करते हैं!

भीतर हिंसा भरी है और आदमी पानी छानकर पियेगा- और कहेगा कि मैं अहिंसक हूं! भीतर हिंसा की आग जल रही है, भीतर सारी दुनिया को मिटा देने का पागलपन है, भीतर विध्वंस है, भीतर वायलेंस है और एक आदमी रात खाना नहीं खायेगा- और सोचेगा कि मैं अहिंसक हूं!

हम सस्ती तरकीब में पहुंच गये हैं कुछ हो जाने की। इतना सस्ता मामला नहीं है। आप क्या खाते हैं, क्या पाते हैं-इससे आप अहिंसक नहीं होते। हां, आप अहिंसक हो जायेंगे तो आपका खाना-पीना जरूर बदल जायेगा। लेकिन खाना-पीना बदल लेने से आप अहिंसक नहीं हो जाते। यह बात जरूर सच है कि आपके भीतर प्रेम आयेगा, तो आपका बाहर का व्यक्तित्व बदल जायेगा। लेकिन बाहर का व्यक्तित्व बदल लेने से भीतर से प्रेम नहीं आता है।

उलटा सच नहीं है। अगर प्रेम आ जाये, तो मैं किसी को गले से लगा सकता हूं; लेकिन गले से लगा लेने पर यह मत सोचना कि प्रेम आ जायेगा। वैसे गले लगा लेने से कवायद तो हो जाती हैं-प्रेम-वेम नहीं उगता, लेकिन लोग सोचते हैं, गले लगाने से प्रेम आ जाता है! तो गले लगाने की तरकीब सीख लो, बात खत्म हो जाती है। तो एक आदमी गले से लगाने की तरकीब सीख लेता है और सोचता है कि प्रेम आ गया।

गले लगाने से प्रेम के आने का क्या संबंध हो सकता है.... कोई भी संबंध नहीं हो सकता।

श्रद्धा भीतर हो, आदर भीतर हो, तो आदमी झुक जाता है, लेकिन झुकने से श्रद्धा का जन्म नहीं हो जाता – कि आप झुक गये तो श्रद्धा आ गयी। आपका शरीर तो झुक जायेगा, पर आप पीछे अकड़े हुए खड़े रहेंगे। देख लेना खयाल से-जब मंदिर में मूर्ति के सामने झुकें-तब देख लेना कि आप पीछे खड़े हैं और सिर्फ शरीर झुक रहा है। आप खड़े ही हुए हैं। आप खड़े होकर चारों तरफ देख रहे हैं मंदिर में कि लोग मुझे देख रहे हैं, या नहीं! शरीर के झुकने से क्या अर्थ है?

लेकिन, हम जो हैं, उसे छिपाने की हमने अच्छी तरकीबें खोज ली हैं। एक आदमी पाप करता है और कौन आदमी पाप नहीं करता-और फिर गंगा जाकर सान कर आता है! और निश्चित हो जाता है कि गंगा सान से पाप मिट गये!

रामकृष्ण के पास जाकर एक आदमी ने कहा, "मैं गंगा सान को जा रहा हूं आशीर्वाद दे दें!

रामकृष्ण ने पूछा, "किसलिये कष्ट कर रहा है? किसलिये गंगा को तकलीफ देने जा रहा है? मामला क्या है? गंगा भी घबड़ा गयी होगी। आखिर कितना जमाना हो गया उसे, पापियों के पाप धोते- धोते।

वह आदमी कहने लगा, हां, उसी के लिये जा रहा हूं कि पापों से छुटकारा हो जाए। आशीर्वाद दे दें। रामकृष्ण ने कहा, "तुझे पता है, गंगा के किनारे जो बड़े-बड़े झाड़ू हैं, वे जानते हो किसलिए हैँ?"

उस आदमी ने कहा, 'किसलिये हैं, मुझे पता नहीं।

" रामकृष्ण ने कहा, "पागल, तू गंगा में स्नान करेगा और पाप बाहर निकल कर झाड़ी पर बैठ जाएंगे। फिर तू सान करके निकलेगा तो वे झाड़ों पर बैठे तेरा रास्ता देखते होंगे कि आ गये बेटे, अब हम तुम पर फिर सवार होते हैं। वे झाड़ू इसीलिये हैं गंगा के किनारे।

"बेकार मेहनत मत कर। तुझे भी तकलीफ होगी-गंगा को भी, पापों को भी, वृक्षों को भी। इस सस्ती तरकीब से कुछ हल नहीं होगा। "

लेकिन हम सब सस्ती तरकीबें ही खोज रहे हैं कि गंगा सान कर लेंगे। और गंगा-सान जैसे ही मामले हैं हमारे सारे। बाहर से व्यक्तित्व खड़ा करने की हम कोशिश करते हैं-उसे झुठलाने के लिये, जो हम भीतर हैं।

टाल्स्टाय एक दिन सुबह-सुबह चर्च गया। रास्ते पर कोहरा पड़ रहा था। पांच ही बजे होंगे। जल्दी गया था कि अकेले में कुछ प्रार्थना कर लूंगा। चर्च में जाकर देखा कि उससे पहले भी कोई आया हुआ है। अंधेरे में, चर्च के द्वार पर हाथ जोड़े हुए एक आदमी खड़ा था। और वह आदमी कह रहा था कि 'हे परमात्मा, मुझसे ज्यादा पापी कोई भी नहीं है। मैंने बहुत पाप किये हैं; मैंने बहुत बुराइयां की हैं; मैंने बड़े अपराध किये हैं; मैं हत्यारा हूं। मुझे क्षमा करना। '

टाल्स्टाय ने देखा कि कौन आदमी है, जो अपने मुंह से कहता है कि मैंने बहुत पाप किये हैं, और मैं हत्यारा हूं। कोई आदमी ऐसा नहीं कहता कि मैं हत्यारा हूं बल्कि किसी हत्यारे से

यह कहो कि तुम हत्यारे हो, तो वह तलवार निकाल लेता है कि कौन कहता है, मैं हत्यारा हूं! हत्या करने को तैयार हो जाते हैं, लेकिन यह मानने को राजी नहीं होता कि मैं हत्यारा हूं।.. यह कौन आदमी आ गया है?

टाल्स्टाय धीरे से उसके पास गया। आवाज पहचानी हुई मालूम पड़ी। 'यह तो नगर का सबसे बड़ा धनपति है! 'उसकी सारी बातें टाल्स्टाय खड़े होकर सुनता रहा।

जब वह आदमी प्रार्थना कर पीछे मुड़ा, तो टाल्स्टाय को पास खड़ा देखकर उसने पूछा, "क्या तुमने मेरी सारी बातें सुन ली हैं?"

टाल्स्टाय ने कहा, "मैं धन्य हो गया तुम्हारी बातें सुनकर। तुम कितने पवित्र आदमी हो कि अपने सब पापों को तुमने इस तरह खोलकर रख दिया! "

तो उस धनपति ने कहा, " ध्यान रहे, यह बात किसी से कहना मत! यह बात मेरे और परमात्मा के बीच हुई है। मुझे पता भी नहीं था कि तुम यहां खड़े हुए हो। अगर किसी दूसरे तक यह बात पहुंची, तो तुम पर मानहानि का मुकदमा दायर कर दूंगा। "

टाल्स्टाय ने कहा, "अरे, अभी तो तुम कह रहे थे कि.......

".......वह सब अलग बात है। वह तुमसे मैंने नहीं कहा। वह दुनिया में कहने के लिये नहीं हैं। वह मेरे और परमात्मा के बीच की बात है.....! "

चूंकि परमात्मा कहीं भी नहीं है, इसलिये उसके सामने हम नंगे खड़े हो सकते हैं। लेकिन जो आदमी जगत के सामने सच्चा होने को राजी नहीं है, वह परमात्मा के सामने भी कभी सच्चा नहीं हो सकता है। हम अपने ही सामने सच्चे होने को राजी नहीं हैं!'

लेकिन यह डर क्यों है इतना? यह चारों तरफ के लोगों का इतना भय क्यों है? चारों तरफ से लोगों की आंखें एक-एक आदमी को भयभीत क्यों किये हैं? हम सब मिलकर एक-एक आदमी को क्यों भयभीत किये हुए हैं? आदमी इतना भयभीत क्यों है? आदमी किस बात की चिंता में है?

आदमी बाहर से फूल सजा लेने की चिंता में है। बस लोगों की आंखों में दिखायी पड़ने लगे कि मैं अजा आदमी हूं बात समाप्त हो गयी। लेकिन लोगों की आंखों में अच्छा दिखायी पड़ने से मेरे जीवन का सत्य और मेरे जीवन का संगीत प्रगट नहीं होगा। और न लोगों की आंखों में अच्छा दिखायी पड़ने से मैं जीवन की मूल-धारा से संबंधित हो सकूंगा। और न लोगों की

आंखों में अच्छा दिखायी पड़ने से मेरे जीवन की जड़ों तक मेरी पहूंच हो पायेगी। बल्कि, जितना मैं लोगों की फिक्र करूंगा, उतना ही मैं शाखाओं और पत्तों की फिक्र में पड़ जाऊंगा क्योंकि लोगों तक सिर्फ पत्ते पहुंचते हैं, जड़ें नहीं।

जड़ें तो मेरे भीतर हैं। वे जो रूट्स हैं, वे मेरे भीतर हैं। उनसे लोगों का कोई भी संबंध नहीं है। वहां मैं अकेला हूं। टोटली अलोन। वहां कोई कभी नहीं पहुंचता। वहां सिर्फ मैं हूं। वहां मेरे अतिरिक्त कोई भी नहीं है। वहां किसी दूसरे की फिक्र नहीं करनी है।

अगर जीवन को मैं जानना चाहता हूं; और चाहता हूं कि जीवन मेरा बदल जाये, रूपांतरित हो जाये; और अगर मैं चाहता हूं कि जीवन का परिपूर्ण सत्य प्रगट हो जाये; चाहता हूं कि जीवन के मंदिर में प्रवेश हो जाएं; मैं पहुंच सकूं, उस लोक तक, जहां सत्य का आवास है-तो फिर मुझे लोगों की फिक्र छोड़ देनी पड़ेगी। वह जो क्राउड है, वह जो भीड़ मुझे घेरे हुए है, उसकी फिक्र मुझे छोड़ देनी पड़ती। क्योंकि जो आदमी भीड़ की बहुत चिंता करता है, वह आदमी कभी जीवन की दिशा में गतिमान नहीं हो पाता। क्योंकि भीड़ की चिंता, बाहर की चिंता है।

इसका यह मतलब नहीं है कि भीड़ से मैं अपने सारे संबंध तोड़ लूं जीवन व्यवस्था से अपने सारे संबंध तोड़ लूं। इसका यह मतलब नहीं है। इसका कुल मतलब यह है कि मेरी आंखें भीड़ पर न रह जायें, मेरी आंखे अपने पर हों। इसका कुल मतलब यह है कि दूसरे की आंख में झांककर मैं यह न देखूं कि मेरी तसवीर क्या है। बल्कि मैं अपने ही भीतर झांककर देखूं कि मेरी तस्वीर क्या है! अगर मेरी सच्ची तस्वीर का मुझे पता लगाता है तो मेरी ही आंखों के भीतर झांकना पड़ेगा।

तो दूसरों की आंखों में मेरा जो अपीयरेंस है-मेरी असली तस्वीर नहीं है वहां। और उसी तस्वीर को देंखने मैं खुश हो लूंगा, उसी तस्वीर को देखकर प्रसन्न हो लूंगा। वह तस्वीर गिर जायेगी, तो दुखी हो जाऊंगा। लगा।- चार आदमी बुरा कहने लगेंगे, तो दुखी हो जाऊंगा। चार आदमी अच्छा कहने लगेंगे, तो सुखी हो जाऊंगा। बस इतना ही मेरा होना है? तो मैं हवा के झोंकों पर जी रहा हूं। हवा पूरब की ओर उड़ने लगेगी, तो मुझे पूरब उड़ना पड़ेगा; हवा पश्चिम की ओर उड़ेगी, तो पश्चिम की ओर उड़ना पड़ेगा। लेकिन मैं खुद कुछ भी नहीं हूं। मेरी कोई आथेंटिक एंग्जिस्टेंस नहीं हैं। मेरी कोई अपनी आत्मा नहीं है। मैं हवा का एक झोंका हूं। मैं एक सूखा पत्ता हूं कि हवाएं जहां ले जाये बस, मैं वहीं चला जाऊं; कि पानी की लहरें मुझे जिस ओर बहाने लगें, मैं उस ओर बहने लगू। दुनिया की आंखें मुझ से जो कहें, वही मेरे लिये सत्य हो जाये।

तो फिर मेरा होना क्या है? फिर मेरी आत्मा क्या है? फिर मेरा अस्तित्व क्या है? फिर मेरा जीवन क्या है? फिर मैं एक झूठ हूं। एक बड़े नाटक का हिस्सा हूं।

और बड़े मजे की बात यह है कि जिस भीड़ से मैं डर रहा हूं; वह भी मेरे जैसे दूसरों की भीड़ है। बडी अजीब बात है कि वे सब भी मुझ से डर रहे हैं, जिनसे कि मैं डर रहा हूं।

हम सब एक-दूसरे से डर रहे हैं। और इस डर में हमने एक तस्वीर बना ली है और भीतर जाने में डरते हैं कि कहीं यह तस्वीर मिट न जाये। एक सप्रेशन, एक दमन चल रहा है। आदमी जो भीतर है, उसे दबा रहा है; और जो नहीं है, उसे थोप रहा है, उसका आरोपण कर रहा है। एक द्‌वंद्‌व, एक कानफ्लिक्ट खड़ी हो गयी है। एक-एक आदमी अनेक-अनेक आदमियों मे बंट गया है, मल्टी साइकिक हो गया है। एक-एक आदमी एक-एक आदमी नहीं है। एक ही चौबीस घंटे में हजार बार बदल जाता है! नया आदमी सामने आता है, तो नयी तस्वीर बन जाती है उसकी आंख में और वह बदल जाता है!

आप जरा खयाल करना कि अपनी पत्नी के सामने आप दूसरे आदमी होते हैं, अपने बेटे के सामने तीसरे, अपने बाप के सामने चौथे, अपने नौकर के सामने पांचवें, अपने मालिक के सामने छठवें। दिन भर आप अलग-अलग आदमी होते हैं। सामने का आदमी बदला कि आपको बदलना पड़ता है। नौकर के सामने आप शानदार आदमी हो जाते हैं। और मालिक के सामने-वह जो हालत आपके नौकर की आपके सामने होती है, वही-मालिक के सामने आप की हो जाती है!

आप कुछ हों या नहीं, पर हर दर्पण आपको बनाता है! जो सामने आ जाता है, वही आपको बना देता है! बहुत अजीब बात है। हम हैं?

हम हैं ही नहीं। हम-एक अभिनय हैं, एक ऐक्टंग हैं। सुबह से शाम तक अभिनय चल रहा है। सुबह कुछ है, दोपहर कुछ है, शाम कुछ है। हमारे खीसे में पैसे हों, तो हम वही आदमी नहीं रह जाते हैं, बिलकुल दूसरे आदमी हो जाते हैं। जब पैसे नहीं होते हैं खीसे में, तब बिलकुल दूसरे आदमी हो जाते हैं।

किसी मिनिस्टर को देखें, जब वह पद पर हो- और फिर जब वह मिनिस्टर न रह जाये, तब उसको देखें। जैसे कि कपड़े की क्रीज निकल गयी हो, ऐसा वह हो जाता है। सब खअ। आदमी गया। आदमी था ही नहीं जैसे।

मैंने सुना है, जापान के एक गांव में एक सुंदर युवा फकीर रहता था। सारा गांव उसे श्रद्‌धा और आदर देता था। लेकिन एक दिन सारी बात बदल गयी। गांव में अफवाह उड़ी कि उस फकीर से किसी लड़की को एक बच्चा पैदा हो गया है। उस सी ने अपने बाप को कह दिया है कि यह उसी फकीर का बच्चा है, जो गांव के बाहर रहता है। वही फकीर इसका बाप है।

सारा गांव टूट पड़ा उस फकीर पर। जाकर उसकी झोपड़ी में आग लगा दी। सुबह सर्दी के दिन थे, वह – बैठा था। उसने पूछा कि “मित्रों, यह क्या कर रहे हो? क्या बात है?”

तो उन्होंने उस नवजात बच्चे को उसकी गोद में पटक दिया और कहा, हमसे पूछते हो, क्या बात है न यह बच्चा तुम्हारा है।”

उस फकीर ने कहा, “इज इट सो? क्या ऐसी बात है? अगर तुम कहते हो, ठीक ही कहते होओगे। क्योंकि भीड़ तो कुछ गलत कहती ही नहीं भीड़ तो हमेशा सत्य ही कहती है। अब तुम कहते हो, तो ठीक ही कहते होओगे। ”

वह बच्चा रोने लगा, तो वह फकीर उसे थपथपाने लगा। गांव भर के लोग गालियां देकर वापस लौट आये और उस बच्चे को उसके पास छोड़ आये।

फिर दोपहर को जब फकीर भीख मांगने निकला, तो उस बच्चे को लेकर भीख मांगने निकला गांव मैं। कौन उसे भीख देगा? आप भीख देते? कोई उसे भीख नहीं देगा। जिस दरवाजे पर वह गया, दरवाजे बंद हो गये। उस रोते हुए छोटे बच्चे को लेकर उस फकीर का उस गांव से गुजरना....। बडी अजीब सी हालत हो गयी उसकी। लोगों की भीड़ उसके पीछे चलने लगी, उसे गालियां देती हुई।

फिर वह उस दरवाजे के सामने पहुंचा, जिसकी बेटी को यह बच्चा हुआ था। और उसने उस दरवाजे के सामने आवाज लगायी कि कसूर मेरा होगा इसका बाप होने में, लेकिन इसका मेरा बेटा होने में क्या कसूर हो सकता है। बाप होने में मेरी गलती होगी, लेकिन बेटा होने में इसकी तो कोई गलती नहीं हो सकती। कम से कम इसे तो दूध मिल जाये।

उस बच्चे को जन्म देनेवाली लड़की द्वार पर ही खड़ी थी। उसके प्राण कंप गये, फकीर को भीड़ में घिरा हुआ पत्थर खाते हुए देखकर छिपाना मुश्किल हो गया। उसने बाप के पैर पकड़ लिये, कहा, मुझे क्षमा करें, इस फकीर को तो मैं पहचानती भी नहीं। सिर्फ इसके असली बाप को बचाने के लिये मैंने इस फकीर का झूठा नाम ले दिया था! ”बाप आकर फकीर के पैरों पर गिर पड़ा और बच्चे को फकीर से छीन लिया। और फकीर से क्षमा मांगने लगा।

फकीर ने पूछा, “लेकिन बात क्या है? बच्चे को क्यों छीन लिया तुमने? उसके बाप ने कहा, लड़की के बाप ने, ”आप कैसे नासमझ हैं। आपने ही क्यों न बताया कि यह बच्चा आपका नहीं है? ”उस फकीर ने कता, ”इज इट सो, क्या ऐसा है? मेरा बेटा नहीं है? तुम्हीं तो सुबह कहते थे कि तुम्हारा है, और भीड़ तो कभी झूठ बोलती नहीं है। अगर तुम बोलते हो नहीं है मेरा, तो नहीं होगा। ”

लोग कहने लगे कि "तुम कैसे पागल हो! तुमने सुबह कहा क्यों नहीं कि बच्चा तुम्हारा नहीं है। तुम इत.।। निंदा और अपमान झेलने को राजी क्यों हुए?"

उस फकीर ने कहा, मैंने तुम्हारी कभी चिंता नहीं की, कि तुम क्या सोचते हो। तुम आदर देते हो कि अनादर तुम श्रद्धा देते हो कि निंदा। मैंने तुम्हारी आंखों की तरफ देखना बंद कर दिया है। मैं अपनी तरफ देखूं कि तुम्हारी आंखों की तरफ देखूं। जब तक मैं तुम्हारी आंखों में देखता रहा, तब तक अपने को मैं नहीं देख पाया। और तुम्हारी आंख तो प्रतिपल बदल रही है। और हर आदमी की आंख अलग है। हजार-हजार दर्पण हैं, मैं किस-किस में देखूं। अब मैंने अपने में ही झांकना शुरू कर दिया है। अब मुझे फिक्र नहीं है कि तुम क्या कहते हो? अगर तुम कहते हो कि बच्चा मेरा है, तो ठीक ही कहते हो। मेरा ही होगा। आखिर किसी का तो होगा ही? मेरा ही सही। तुम कहते हो कि मेरा नहीं है, तो तुम्हारी मर्जी। नहीं होगा। लेकिन मैंने तुम्हारी आंखों में देखना बंद कर दिया है।

....और वह फकीर कहने लगा कि मैं तुमसे भी कहता हूं कि कब वह दिन आयेगा कि तुम दूसरों की आंखों में देखना बंद करणें, और अपनी तरफ देखना शुरू करोगे....?

यह दूसरा सूत्र आपसे कहना चाहता हूं जीवन क्रांति का कि मत देखो दूसरों की आंखों में कि आप क्या हैं।

वहां जो भी तसवीर बन गयी है, वह आपके वस्त्रों की तसवीर है, वह आपकी दिखावट है, वह आपका नाटक है, वह आपकी एक्टिंग है-वह आप नहीं हैं, क्योंकि आप कभी प्रगट ही न हो सके, जो आप हैं, तो उसकी तसवीर कैसे बनेगी! वहां तो आपने जो दिखाना चाहा है, वह दिख रहा है।

भीड़ से बचना धार्मिक आदमी का पहला कर्तव्य है, लेकिन भीड़ से बचने का मतलब यह नहीं है कि आप जंगल में भाग जायें। भीड़ से बचने का मतलब क्या है?

समाज से मुक्त होना धार्मिक आदमी का पहला लक्षण है, लेकिन समाज से मुक्त होने का क्या मतलब है? समाज से मुक्त होने का मतलब यह नहीं है कि आदमी भाग जाये जंगल में। वह समाज से मुक्त होना नहीं है। वह समाज की ही धारणा है संन्यासी के लिये कि जो आदमी समाज छोड़कर भाग जाता है, वह उसको ही आदर देता है। यह समाज से भागना नहीं है। यह तो समाज की ही धारणा को मानना है। यह तो समाज के ही दर्पण में अपना चेहरा देखना है।

गेरुए वस्र पहन कर खड़े हो जाना संन्यासी हो जाना नहीं है। वह तो समाज की आंखों में, समाज के दर्पण में अपना प्रतिबिंब देखना है। क्योंकि अगर समाज गेरुए वस्त्र को आदर देना बंद कर दे, तो मैं गेरुआ वस्त्र नहीं पहनूंगा।

अगर समाज आदर देता है एक आदमी को-पत्नी और बच्चों को छोड्कर भाग जाने को-तो आदमी भाग जाता है। यहां भी वह समाज की आंखों में देख रहा है। .....नहीं, यह समाज को छोड़ना नहीं है।

समाज को छोड़ने का अर्थ है-समाज की आंखों में अपने प्रतिबिंब को देखना बंद कर दें।

अगर जीवन में कोई भी क्रांति चाहिये, तो लोगों की आंखों में देखना बंद कर दें। भीड़ के दर्पण में देखना बंद कर दें।

धोखे के क्षण में वहां वस्त्र दिखायी पड़ते हैं। लेकिन दुनिया में वस्रों की ही कीमत है। और अगर बाहर की यात्रा करनी है, तो फिर मेरी बात कभी मत मानना। नहीं तो बाहर की यात्रा बहुत मुश्किल हो जायेगी। इस दुनिया में वस्त्रों की ही कीमत है, आत्माओं की कीमत नहीं है। मैंने सुना है, कवि गालिब को एक दफा बहादुरशाह ने भोजन का निमंत्रण दिया था। गालिब था गरीब आदमी।

और अब तक ऐसी दुनिया नहीं बन सकी है कि कवि के पास भी खाने-पीने को पैसा हो सके। अब तक ऐसा ' हो सका है। अच्छे आदमी को रोजी जुटानी अभी भी बहुत मुश्किल है।

गालिब तो गरीब आदमी था। कविताएं लिखी थीं, ऊँची कविताएं लिखने से क्या होता है? कपड़े उसके फटे-पुराने थे। मित्रों ने कहा, बादशाह के यहां जा रहे हो तो इन कपड़ों से नहीं चलेगा। क्योंकि बादशाहों के महल में तो कपड़े पहचाने जाते हैं। गरीब के घर में तो बिना कपड़ों के भी चल जाये, लेकिन बादशाहों के महल मैं तो कपड़े ही पहचाने जाते हैं। मित्रों ने कहा, हम उधार कपड़े ला देते हैं, तुम उन्हें पहनकर चले जाओ। जरा आदमी तो मालूम पड़ोगे।

गालिब ने कहा, "उधार कपड़े! यह तो बडी बुरी बात होगी कि मैं किसी और के कपड़े पहनकर जाऊं। मे जैसा हूं, हूं। किसी और के कपड़े पहनने से क्या फर्क पड़ जायेगा? मैं तो वही रहूंगा।"

मित्रों ने कहा, "छोड़ो भी यह फिलासफी की बातें। इन सब बातों से वहां नहीं चलेगा। हो सकता है, पहरेदार वापस लौटा दें! इन कपड़ो में तो भिखमंगों जैसा मालूम पड़ते हो। '?'

गालिब ने कहा, मैं तो जैसा हूं हूं। गालिब को बुलाया है कपड़ों को तो नहीं बुलाया? तो गालिब जायेगा।

..... नासमझ था-कहना चाहिए, नादान, नहीं माना गालिब, और चला गया।

दरवाजे पर द्वारपाल ने बंदूक आड़ी कर दी। पूछा कि, कहां भीतर जा रहे हो? "

गालिब ने कहा, 'मैं महाकवि गालिब हूं। सुना है नाम कभी? सम्राट ने बुलाया है-सम्राट का मित्र हूं, भोजन पर बुलाया है।

द्वारपाल ने कहा- "हटो रास्ते से। दिन भर में जो भी आता है, अपने को सम्राट का मित्र बताता है! हटो।। मै। से, नहीं तो उठाकर बंद करवा दूंगा। "

गालिब ने कहा, 'क्या कहते हो, मुझे पहचानते नहीं?

''द्वारपाल ने कहा, 'तुम्हारे कपड़े बता रहे है तुम कौन हो! फटे जूते बता रहे हैं कि तुम कौन हो! शक्ल देखी है कभी आइने में कि तुम कौन है?'

गालिब दुखी होकर वापस लौट आया। मित्रों से उसने कहा, "तुम ठीक ही कहते थे, वहां कपड़े पहचान जाते हैं। ले आओ उधार कपड़े। " मित्रों ने कपड़े लाकर दिये। उधार कपड़े पहनकर गालिब फिर पहुंच गया। वहीं द्वारपाल झुक-झुक कर नमस्कार करने लगा। गालिब बहुत हैरान हुआ कि 'कैसी दुनिया है?

'भीतर गया तो बादशाह ने कहा, बडी देर से प्रतीक्षा कर रहा हूं।

गालिब हंसने लगा, कुछ बोला नहीं। जब भोजन लगा दिया गया तो सम्राट खुद भोजन के लिए सामने बैठा- भोजन कराने के लिए। गालिब ने भोजन का कौर बनाया और अपने कोट को खिलाने लगा कि, "ए कोट खा ! 'पगड़ी को खिलाने लगा कि 'ले पगड़ी खा! '

सम्राट ने कहा, "आपके भोजन करने की बड़ी अजीब तरकीबें मालूम पड़ती हैं। यह कौन-सी आदत है ' यह आप क्या कर रहे हैं?"

गालिब ने कहा, "जब मैं आया था तो द्वार से ही लौटा दिया गया था। अब कपड़े आये हैं उधार। तो जो आए हैं, उन्हीं को भोजन भी करना चाहिए! "

बाहर की दुनिया में कपड़े चलते हैं।.... बाहर की दुनिया में कपड़े ही चलते हैं। वहां आत्माओं का चलना बहुत मुश्किल है; क्योंकि बाहर जो भीड़ इकट्ठी है, वह कपड़े वालों की भीड़ है। वहां आत्मा को चलाने की तपश्चर्या हो जाती है।

लेकिन बाहर की दुनिया में जीवन नहीं मिलता। वहां हाथ में कपड़ों की लाश रह जाती है, अकेली। वह।

जिंदगी नहीं मिलती है। वहां आखिर में जिंदगी की कुल सम्पदा राख होती है-जली हुई। मरते वक्त अखबार की कटिंग रख लेनी है साथ में, तो बात अलग है। अखबार में क्या-क्या छपा था, उसको साथ रख ले कोई, तो बात अलग है।

जीवन की ओर वही मुड़ सकते हैं, जो दूसरों की आंखों में देखने की कमजोरी छोड़ देते हैं और अपनी आंखों के भीतर झांकने का साहस जुटाते हैं।

इसलिए दूसरा सूत्र है, ' भीड़ से सावधान। ' बीवेअर ऑफ द क्राउड।

चारों ओर से आदमी की भीड़ घेरे हुए है। और जिंदा लोगों की भीड़ ही नहीं घेरे हुए हैं, मुर्दा लोगों की भीड़ भी घेरे हुए है। करोड़ों-करोड़ों वर्षों से जो भीड़ इकट्ठी होती चली गयी है दुनिया में, उसका दबाव है चारों तरफ और एक-एक आदमी की छाती पर वह सवार है, और एक-एक आदमी उसकी आंखों में देखकर अपने को बना रहा है, सजा रहा है। वह भीड़ जैसा कहती है, वैसा होता चला जाता है। इसलिए आदमी को अपनी आंख का कभी खयाल ही पैदा नहीं हो पाता। उसके जीवन के बीज में कभी अंकुर ही नहीं आ पाता। क्योंकि वह कभी अपने बीज की तरफ ध्यान ही नहीं देता। बीज की तरफ उसकी आंख ही नहीं उठ पाती। उसके प्राणों की धारा कभी प्रवाहित ही नहीं होती बीज की तरफ।

जिन्हें भी भीतर की तरफ जाना है, उन्हें पहले बाहर की चिंता छोड़ देनी पड़ती है। कौन क्या कहता है, कौन क्या सोचता है-इसकी चिन्ता छोड़ देनी पड़ती है।

नहीं, सवाल यह नहीं है कि कौन क्या सोचता है। सवाल यह है कि 'मैं क्या हूं? और मैं क्या जानता हूं? अगर जीवन में क्रांति लानी है तो सवाल यह है कि 'मैं क्या हूं?' मैं क्या पहचानता हूं अपने को?' और स्मरण रहे, जो आदमी अपने भीतर पहचानना शुरू करता है, उसके भीतर बदलाहट उसी क्षण शुरू हो जाती है। क्योंकि भीतर जो गलत है, उसे पहचानकर बर्दाश्त करना मुश्किल है, असंभव है। अगर पैर में कांटा गड़ा है, तो वह तभी तक गड़ा रहा सकता है, जब तक उसका मुझे पता नहीं है। जैसे ही मुझे पता चलता है, पैर से कांटे को निकालना मजबूरी हो जाती है।

एक बच्चा स्कूल में मैदान में खेल रहा है-हाकी खेल रहा है। पैर में चोट लग गयी है, खून बह रहा है। उसे पता भी नहीं चला, क्योंकि वह हाकी खेलने में संलग्न है, आक्युपाइड है। उसकी सारी अटेंशन, उसका सारा ध्यान, हाकी खेलने में लगा है वह जो गोल करना है, उस पर अटका हुआ है। वह जो चारों तरफ खिलाड़ी हैं, उनसे अटका हुआ है; वह जो प्रतियोगिता चल रही है, उसमें उलझा हुआ है। उसे पता भी नहीं है कि उसके पैर से खून बह रहा है।

वह दौड रहा है, दौड़ रहा है। फिर खेल बंद हो गया है और अचानक उसे खयाल आया है कि पैर से खून बह रहा है। यह खून बहुत देर से बह रहा है, लेकिन अब तक उसे पता नहीं चला। अब वह मलहम-पट्टी की चिंता में पड़ गया है। लेकिन इतनी देर तक उसे पता नहीं चला! क्योंकि जब तक वह खेल में व्यस्त था, तब तक पता चलने का सवाल ही नहीं था।

हम बाहर देख रहे हैं। गोल करना है, वह देख रहे हैं। प्रतियोगिता चल रही है, वह देख रहे हैं। लोगों की आंखों में देख रहे हैं। हमें पता ही नहीं चलता कि भीतर कितने कांटे हैं और कितने घाव हैं। भीतर पता ही नहीं चलता, कितना अंधकार है! भीतर पता ही नहीं चलता, कितनी बीमारियां हैं! उलझे रहेंगे और उलझे रहेंगे। जिंदगी बीत जायेगी और पता नहीं चलेगा।

एक बार हटायें आंख बाहर से और भीतर के घावों को देखें! और मैं आपसे कहता हूं उन्हें देखना उनके बदलने का पहला सूत्र है। एक बार दिखायी पड़ा कि फिर आप उन्हें बर्दाश्त नहीं कर सकते। फिर आपको बदलना ही पड़ेगा।

और बदलना कठिन नहीं है। जो दुख दे रहा है, उसे बदलना कभी भी कठिन नहीं होता, सिर्फ भुलाये रखना आसान होता है। बदलना कठिन नहीं है, लेकिन भुलाये रखना बहुत आसान है। और जब तक भूला रहेगा, तब तक जीवन में कोई क्रांति नहीं होगी।

जीवन क्रांति का दूसरा सूत्र है, 'मैं दूसरों की आंखों में न देखूं। '

अपनी आंख में, अपने भीतर, अपनी तरफ, मै जहां हूं-वहां देखूं-यही असली सवाल है, यही असली समस्या है व्यक्ति के सामने कि 'मैं क्या हूं? जैसा भी मैं है उसको ही देखना और साक्षात्कार करना है।

लेकिन हम? कोई हमसे पूछेगा- आप कौन हैं? तो हम कहेंगे- 'फलां आदमी का बेटा हूं फलां मोहल्ले में रहता हूं फलां गांव में रहता हूं, -यही परिचय है हमारा। यह लेबल जो हम ऊपर से चिपकाये हुए दें, यत। हमारी पहचान है, यही हमारी जिंदगी का सबूत है-हमारी जिंदगी का प्रमाण है! यही हमारी जानकारी है अपने बाबत। हमें पता ही नहीं है कि भीतर हम कौन हैं! अभी तक हम बाहर से कागज चिपकाये हुए हैं। और वे भी दूसरों के चिपकाये हुए हैं। किसी

ने एक नाम चिपका दिया है। उसी नाम को जिंदगी भर लिए हम घूम रहे है। उस नाम को कोई गाली दे दे, तो लड़ने को तैयार हो जाते हैं।

स्वामी राम अमेरिका गये थे। वहां के लोग बड़ी मुश्किल में पड़ गये। एक बार राम को कुछ लोगों ने गालियां देने लगे, तो राम ने मित्रों को आकर कहा कि आज बड़ा मजा हो गया। बाजार में कुछ लोग मिल गये और राम अच्छी गालियां देने लगे। हम भी खड़े सुनते रहे।

लोगों ने कहा, 'क्या आप पागल हो गये हैं। लोग राम को गालियां देते थे? कौन राम?

स्वामी राम ने कहा, 'यह राम जिसको लोग राम कहते हैं। कुछ लोगों ने इस राम को घेर लिया और लेगे बहुत गालियां देने लगे। हम खड़े होकर देखते रहे कि आज राम को अच्छी गालियां पड़ रही हैं।

लेकिन हम राम होकर झगड़े में पड़े हैं। पर हम राम नहीं हैं। हम तो जो हैं, उसका नाम तो राम नहीं है। यह नाम तो किसी का दिया हुआ है। यह तो समाज का दिया हुआ है। हम तो कुछ और हैं। जब नाम नहीं था, तब भी हम थे। जब नाम नहीं रह जायेगा, तब भी हम होंगे।

अभी भी रात सो जाते हैं, तो नाम मिट जाता है-समाज भी मिट जाता है, फिर भी हम सोते हैं।

आप मिट जाते हैं रात, न पत्नी रह जाती है आपकी, न बेटा रह जाता है आपका-न धन-दौलत रह जाती है-न पद प्रतिष्ठा रह जाती है, फिर भी आप रह जाते हैं, जब कि सब मिट जाता है। वह जो सोसायटी देती है, वह बाहर ही छूट जाता है, वह भीतर जाता ही नहीं। वह मरने के वक्त भी भीतर नहीं आता- और ध्यान वक्त भीतर नहीं जाता। वह जो समाप्त होता है, वह बाहर है, और बाहर ही रह जाता है। लेकिन उसको हम अपना व्यक्तित्व समझे हुए हैं! इस भूल से मुक्त हो जाना चाहिए। अन्यथा कोई व्यक्ति जीवन की यात्रा पर एक कदम आगे नहीं बढ़ सकता है।

सुबह मैंने एक सूत्र कहा है कि 'सिद्धात्तों से मुक्त हो जायें', क्योंकि जो सिद्धान्तों से बंधा है, वह जीवन क्रांति के रास्ते पर नहीं जा पायेगा।

दूसरा सूत्र कहता हूं ' भीड़ से मुक्त हो जाना है', क्योंकि जो भीड़ का गुलाम है, वह कभी भी जीवन क्रांति के रास्ते से नहीं गुजर सकता।

आने वाले दिनों में कुछ और सूत्र भी कहूंगा, लेकिन उन सूत्रों को सुनने भर से कुछ होने वाला नहीं है। थोड़ा-सा भी प्रयोग करेंगे, तो द्वार खुलेगा; कुछ दिखायी पड़ना शुरू होगा।

धर्म एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। धर्म एक जीवित वितान है।

जो प्रयोग करता है, वह रूपांतरित हो जाता है और उपलब्ध होता है वह सब, जिसे पाये बिना हम व्यर्थ जीते हैं और व्यर्थ मर जाते हैं; और जिसे पा लेने पर जीवन एक धन्यता हो जाती है; और जिसे पा लेने पर जीवन कृतार्थ हो जाता है; और जिसे पा लेने पर सारा जगत परमात्मा में रूपांतरित हो जाता है।

लेकिन जिस दिन भीतर दिखायी पड़ता है कि भीतर परमात्मा है, उसी दिन यह श्रम भी मिट जाता है कि बाहर कोई और है। बस, फिर तो सिर्फ 'वही' रह जाता है। जो भीतर दिखायी पडता है, वही बाहर भी प्रमाणित हो जाता है। और जगत के मूल सत्य को जान लेना, जीवन को अनुभव कर लेना है। और जीवन को अनुभव कर लेना, मृत्यु के ऊपर उठ जाना है। फिर कोई मृत्यु नहीं है। जीवन की कोई मृत्यु नहीं है।

जो मरता है, वह समाज के द्वारा दिया गया झूठा व्यक्तित्व है। जो मरता है, वह प्रकृति के द्वारा दिया गया झूठा शरीर है। जो नहीं मरता है, वह जीवन है। लेकिन उसका हमें कोई पता नहीं है! पहले समाज से हटें-समाज के झूठे व्यक्तित्व से हटें।

फिर प्रकृति के दिये गये व्यक्तित्व से हटें। उसकी कल मैं बात करूंगा कि प्रकृति के दिये गये शरीर से कैसे हटें; और फिर हम वहां पहुंच सकते हैं, जहां जीवन है। मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं।

मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

'जीवन-क्रांति के सूत्र',
बड़ौदा,

13 फरवरी 1969 संध्या

संभोग से समाधि की ओर—49

Posted on सितम्बर 22, 2013by sw anand prashad

दमन से मुक्ति—सत्तहरवां प्रवचन
मेरे प्रिय आत्मन

'जीवन क्रांति के सूत्र' -इस परिचर्चा के तीसरे सूत्र पर आज चर्चा करनी है।

पहला सूत्र था : सिद्धांत शाख और वाद से मुक्ति।

दूसरा सूत्र था भीड़ से, समाज से-दूसरों से मुक्ति।

और आज तीसरे सूत्र पर चर्चा करनी है। इस तीसरे सूत्र को समझने वो लिए मन का एक अद्‌भुत राज समझ लेना आवश्यक है। मन की वह बड़ी अद्‌भुत प्रक्रिया है, जो साधारणत: पहचान में नहीं आती।

और वह प्रक्रिया यह है कि मन को जिस ओर से बचाने की कोशिश की जाये, मन उसी ओर जाना शुरू हो जाता है; जहां से मन को हटाया जाये, मन वहीं पहुंच जाता है; जिस तरफ से पीठ की जाये, मन उसी ओर उपस्थित हो जाता है।

'निषेध' मन के लिए निमंत्रण है, 'विरोध' मन के लिए बुलावा है। और मनुष्य जाति इस मन को बिना समझे आज तक जीने की कोशिश करती रही है!

फ्रायड ने अपनी जीवन कथा में एक छोटा-सा उल्लेख किया है। उसने लिखा है कि एक बार वह बगीचे में अपनी पली और छोटे बच्चे के साथ घूमने गया। देर तक वह पत्नी से बातचीत करता रहा, टहलता रहा। फिर जब सांझ होने लगी और बगीचे के द्‌वार बंद होने का समय करीब हुआ, तो फ्रायड की पत्नी को खयाल आया कि 'उसका बेटा न-मालूम कहां छूट गया है? इतने बड़े बगीचे में वह पता नहीं कहां होगा? द्‌वार बंद होने के करीब हैं, उसे कहां खोजूं?' फ्रायड की पत्नी चिंतित हो गयी, घबड़ा गयी।

फ्रायड ने कहा, "घबड़ाओ मत! एक प्रश्न मैं पूछता है तुमने उसे कहीं जाने से मना तो नहीं किया? अगर मना किया है तो सौ में निन्यानबे मौके तुम्हारे बेटे के उसी जगह होने के हैं, जहां जाने से तुमने उसे मना किया है।

"उसकी पत्नी ने कहा, "मना तो किया था कि फव्वारे पर मत पहुंच जाना।'

फ्रायड ने कहा, " अगर तुम्हारे बेटे में थोड़ी भी बुद्‌धि है, तो वह फव्वारे पर ही मिलेगा। वह वहीं होगा। क्योंकि कई बेटे ऐसे भी होते हैं, जिनमें बुद्‌धि नहीं होती। उनका हिसाब रखना

फिजूल है। ”फ्रायड की पत्नी बहुत हैरान हो गयी। वे गये दोनों भागे हुए फव्वारे की ओर। उनका बेटा फव्वारे पर पानी में पैर लटकाए बैठा पानी से खिलवाड़ कर रहा था।

फ्रायड की पत्नी ने कहा, “बड़ा आश्चर्य! तुमने कैसा पता लगा लिया कि हमारा बेटा यहां होगा? फ्रायड ने कहा, ”आश्र्र्य इसमें कुछ भी नहीं है। मन को जहां जाने से रोका जाये, मन वहीं जाने के लिए आकर्षित होता है। जहां के लिए कहा जाये, मत जाना वहां, एक छिपा हुआ रहस्य शुरू हो जाता है कि मन वहीं जाने को तत्पर हो जाता है।

”फ्रायड ने कहा, यह तो आश्चर्य नहीं है कि मैंने तुम्हारे बेटे का पता लगा लिया, आश्चर्य यह है कि मनुष्य-जाति इस छोटे-से सूत्र का पता अब तक नहीं लगा पायी। और इस छोटे-से सूत्र को बिना जाने जीवन का कोई रहस्य कभी उदघाटित नहीं हो पाता। इस छोटे-से सूत्र का पता न होने के कारण मनुष्य-जाति ने अपना सारा धर्म; सारी नीति, सारे समाज की व्यवस्था सप्रेशन पर, दमन पर खड़ी की हुई है।

मनुष्य का जो व्यक्तित्व हमने खड़ा किया है, वह दमन पर खड़ा है, दमन उसकी नींव है। और दमन पर खड़ा हुआ आदमी लाख उपाय करे, जीवन की ऊर्जा का साक्षात्कार उसे कभी नहीं हो सकता है। क्योंकि जिस-जिस का उसने दमन किया है, मन में वह उसी से उलझा-उलझा नष्ट हो जाता है। थोड़ा सा प्रयोग करें और पता चल जायेगा। किसी बात से मन को हटाने की कोशिश करें और पायेंगे मन उसी बात के आसपास घूमने लगा है। किसी बात को भूलने की कोशिश करें, तो भूलने की वही कोशिश उस बात को स्मरण करने का आधार बन जाती है। किसी बात को, किसी विचार को, किसी स्मृति को, किसी इमेज को, किसी प्रतिमा को मन से निकालने की कोशिश करें, और मन उसी को पकड़ लेता है।

भीतर, मन में लड़े और आप पायेंगे कि जिससे आप लड़ेगें, उसी से हार खायेंगे; जिससे भागेंगे, वही पीछा करेगा। जैसे छाया पीछा कर रही है। जितनी तेजी से भागते हैं, छाया उतनी ही तेजी से पीछा करती है।

मन को हमने जहां-जहां से भगाया है, मन वहीं-वहीं हमें ले गया है; जहां-जहां जाने से हमने उसे इंकार किया है, जहां-जहां जाने से हमने द्वार बंद किये हैं, मन वहीं-वहीं हमें ले गया है।

क्रोध से लड़े-और मन क्रोध के पास ही खड़ा हो जायेगा; हिंसा से लड़े-और मन हिंसक हो जायेगा। मोह से लड़े-और मन मोह मस्त हो जायेगा। लोभ से लड़े- और मन लोभ में गिर जायेगा। धन से लड़े-और मन धन के प्रति ही पागल हो उठेगा। काम से लड़ने वाला मन, सेक्स से लड़ने वाला मन, सेक्स में चला जायेगा। जिससे लड़ेंगे मन वही हो जायेगा। यह बड़ी

अदभुत बात है। जिसको दुश्मन बनायेंगे, मन पर उस दुश्मन की ही प्रतिच्छवि अंकित हो जायेगी।

मित्रों को मन भूल जाता है, शत्रुओं को मन कभी नहीं भूल पाता।

लेकिन यह तथ्य है कि जिससे हम लड़े, मन उसके साथ ढल जाये, लेकिन उसकी शक्ल बदल ले, नाम बदल ले।

मैंने सुना है, एक गांव में एक बहुत क्रोधी आदमी रहता था। वह इतना क्रोधी था कि एक बार उसने अपनी पत्नी को धक्का देकर कुएं में गिरा दिया था। जब उसकी पत्नी मर गयी और उसकी लाश कुएं से निकाली गयी तो वह क्रोधी आदमी जैसे नींद से जग गया। उसे लगा कि उसने जिंदगी में सिवाय क्रोध के और कुछ भी नहीं किया। इस दुर्घटना से वह एकदम सचेत हो गया। उसे बहुत पश्चाताप हुआ।

उस गांव में एक मुनि आये हुए थे। वह उनके दर्शन को गया और उनके चरणों में सिर रखकर बहुत रोया और उसने कहा, "मैं इस क्रोध से कैसे छुटकारा पाऊं? क्या रास्ता है? मैं कैसे इस क्रोध से बचूं?'

मुनि ने कहा, "तुम संन्यासी हो जाओ। छोड़ दो वह क्रोध, जिसे कल तक पकड़े थे.....।"

लेकिन, मजा यह है कि जिसे छोड़ो, वह और भी मजबूती से पकड़ लेता है। लेकिन यह थोड़ी गहरी बात है, एकदम से समझ में नहीं आती....।

"क्रोध को छोड़ दो; संन्यासी हो जाओ; शान्त हो जाओ! अब तो इस क्रोध को छोड़ो! '

वह आदमी संन्यासी हो गया। उसने अपने बस फेंक दिये और नंग हो गया! और उसने कहा, 'मुझे दिक्षा दें, मैं शिष्य हुआ। "

मुनि बहुत हैरान हुए। बहुत लोग उन्होंने देखे थे, पर ऐसा संकल्पवान आदमी नहीं देखा था, जो इतनी शीध्रता से संन्यासी हो जाये। उन्होंने कहा, "तू तो अदभुत है तेरा संकल्प महान है। तू इतना तीव्रता से संन्यासी होने को तैयार हो गया है, सब छोड्कर! "

लेकिन, उन्हें भी पता नहीं कि यह भी क्रोध का ही दूसरा रूप है। वह आदमी, जो कि अपनी पत्नी को क्रोध में आकर एक क्षण में कुएं में धक्का दे सकता है, वह क्रोध में आकर एक क्षण

में नंगा भी खड़ा हो सकता है? संन्यासी भी हो सकता है। इन दोनों बातों में विरोध नहीं है। यह एक ही क्रोध के दो रूप हैं।

तो वे मुनि बहुत प्रभावित हुए उससे। उन्होंने उसे दीक्षा दे दी और उसका नाम रखा दिया- मुनि शांतिनाथ। अब वह मुनि शांतिनाथ हो गया। और भी शिष्य थे मुनि के, लेकिन उस शांतिनाथ का मुकाबला करना बहुत मुश्किल था, क्योंकि उतने क्रोध में उनमें से कोई भी नहीं था। दूसरे शिष्य दिन में अगर एक बार भोजन करते तो शांतिनाथ दो दिन तक भोजन ही नहीं करते थे....। क्रोधी आदमी कुछ भी कर सकता है!

दूसरे अगर सीधे रास्ते से चलते, तो मुनि शांतिनाथ उलटे रास्ते, कांटों से भरे रास्ते पर चलते! दूसरे शिष्य अगर छाया में बैठते, तो मुनि शांतिनाथ धूप में ही खड़े रहते! थोड़े ही दिनों में मुनि शांतिनाथ का शरीर सुख गया, कृश हो गया, काला पड़ गया, पैर में घाव पड़ गये; लेकिन उनकी कीर्ति फैलनी शुरू हो गयी चारों ओर, कि मुनि शान्तिनाथ महान तपस्वी हैं....।

वह सब क्रोध ही था, जो स्वयं पर लौट आया था। वह क्रोध, जो दूसरों पर प्रगट होता रहा था, अब वह उत '। पर ही प्रगट हो रहा था।

सौ में से निन्यानबे तपस्वी स्वयं पर लौटे हुए क्रोध का परिणाम होते हैं। दूसरों को सताने की चेष्टा रूपांतरित होकर खुद को सताने की चेष्टा भी बन सकती है। दूसरों को भी सताया जा सकता है और खुद को भी सताया जा सकता है। सताने में अगर रस हो, तो स्वयं को भी सताया जा सकता है।

.,.. अब उसने दूसरों को सताना बन्द कर दिया था, अब वह अपने को ही सता रहा था। और पहली बार एक नयी घटना घटी थी : कि दूसरों को सताने पर लोग उसका अपमान करते थे और अब खुद को सताने से लोग उसका सम्मान करने लगे थे! अब लोग उसे महातपस्वी कहने लगे थे!

मुनि की कीर्ति सब ओर फैलती गयी। जितनी उसकी कीर्ति फैलती गयी, वह अपने को उतना ही सताने लगा, अपने साथ दुष्टता करने लगा। जितनी उसने स्वयं से दुष्टता की, उतना ही उसका सम्मान बढ़ता चला गया। दो-चार वर्षों में गुरु से ज्यादा उसकी प्रतिष्ठा हो गयी।

फिर वह देश की राजधानी में आया..। मुनियों को राजधानी में जाना बहुत जरूरी होता है। अगर आप मुनियों को देखना चाहते हो, तो हिमालय पर जाने की कोई जरूरत नहीं है, देश की राजधानी में चले जाइए और वहां सब मुनि और सब संन्यासी अड्डा जमाये हुए मिल जायेंगे।

..... वे मुनि भी राजधानी की तरफ चले। राजधानी में पुराना एक मित्र रहता था। उसे खबर मिली तो वह बहुत हैरान हुआ कि जो आदमी इतना क्रोधी था, वह शांतिनाथ हो गया! बड़ा समझदार है, जाऊं दर्शन कर आऊं।

वह मित्र दर्शन करने आया। मुनि अपने तख्त पर सवार थे। उन्होंने मित्र को देख लिया, मित्र को पहचान भी गये-लेकिन जो लोग तख्त पर सवार हो जाते हैं, वे कभी किसी को आसानी से नहीं पहचानते; क्योंकि पुराने दिनों के साथी को पहचानना ठीक भी नहीं होता। क्योंकि वह भी कभी वैसे ही रहे हैं, इसका पता चल जाता है।

देख लिया, पहचाना नहीं। मित्र भी समझ गया कि पहचान तो लिया है, लेकिन फिर भी पहचानने में गड़बड़ है। आदमी ऊपर चढ़ता ही इसलिए है कि जो पीछे छूट जाये, उनको पहचाने न। और जब बहुत से लोग उसको पहचानने लगते हैं, तो वह सबको पहचानना बंद कर देता है। पद के शिखर पर चढ़ने का रस ही यही है कि उसे सब पहचानें, लेकिन वह किसी को नहीं पहचाने।

मित्र पास सरक आया और उसने पूछा कि "मुनि जी क्या मैं पूछ सकता हूं- आपका नाम क्या है?" मुनि जी को क्रोध आ गया। "क्या अखबार नहीं पढ़ते हो, रेडियो नहीं सुनते हो, मेरा नाम पूछते हो? मेरा नाम जग-जाहिर है, मेरा नाम मुनि शांतिनाथ है। "

उनके बताने के ढंग से मित्र समझ गया, कि कोई बदलाहट नहीं हुई है। आदमी तो वही का वही है, सिर्फ नंगा खड़ा हो गया है।

दो मिनट दूसरी बात चलती रही। मित्र ने फिर पूछा- "महाराज, मैं भूल गया-आपका नाम क्या है?" मुनि की आंखों से तो आग बरसने लगी। उन्होंने कहा- "छू! नासमझ! इतनी जल्दी भूल गया। अभी मैंने तुझसे कहा था, मेरा नाम मुनि शांतिनाथ है।... मेरा नाम है-मुनि शांतिनाथ। "

दो मिनट तक फिर दूसरी बातें चलती रहीं। फिर उसने पूछा कि "महाराज, मैं भूल गया, आपका नाम क्या है?" मुनि ने डंडा उठा लिया और कहा, "चुप नासमझ! तुझे मेरा नाम समझ में नहीं आता? मेरा नाम है मुनि शांतिनाथ। "

उस मित्र ने कहा, " अब सब समझ गया हूं। सिर्फ वही समझ में नहीं आया, जो मैं पूछता हूं। अच्छा नमस्कार! आप वही के वही है, कोई फर्क नहीं पड़ा।

दमन से कभी कोई फर्क नहीं आता है, लेकिन दमन से चीजें स्वप्न बन जाती हैं। और स्वप्न बन जाना बहुत खतरनाक है, क्योंकि बदली हुई शक्ल में उनको पहचानना भी मुश्किल हो जाता है। आदमी के भीतर सेक्स है, काम-वासना है, उसे पहचानना सरल है; और अगर आदमी ब्रह्मचर्य साधने की जबर्दस्ती कोशिश में लग जाये, तो उस ब्रह्मचर्य के पीछे भी सेक्यूअलिटी होगी, कामुकता होगी। लेकिन,उसको पहचानना बहुत मुश्किल हो जायेगा, क्योंकि वह अब वस्त्र बदल कर आ जायेगी। ब्रह्मचर्य तो वह है, जो चित्त के परिवर्तन से उपलब्ध होता है, जो जीवन के अनुभव से उपलब्ध होता है।

एक शांति वह है, जो जीवन की अनुभूति से छाया की तरह आती है और एक शांति वह है, जो क्रोध दबाकर ऊपर से थोप ली जाती है।

जो भीतर वासना को दबाकर, उसकी गर्दन को पकड कर खड़ा हो जाता है, ऐसा ब्रह्मचर्य कामुकता से भी बदतर है; क्योंकि कामुकता तो पहचान में भी आती है, पर ऐसा ब्रह्मचर्य पहचान में भी नहीं आता।

दुश्मन पहचान में आता हो तो उसके साथ बहुत कुछ किया भी जा सकता है, और यदि दुश्मन ही पहचान में न आ पाये, तब बहुत कठिनाई हो जाती है।

मैं एक साध्वी के पास समुद्र के किनारे बैठा हुआ था। वह साध्वी मुझसे परमात्मा की और आआ की बातें कर रही थी....।

हम सभी बातें आत्मा-परमात्मा की करते हैं, जिससे हमारा कोई भी संबंध नहीं है। और जिन बातों से हमारा संबंध है, उनकी हम कोई बात नहीं करते। क्योंकि वे छोटी-छोटी और क्षुद्र बातें है। हम आकाश की बातें करते हैं, पृथ्वी की बातें नहीं करते। जिस पृथ्वी पर चलना पडता है-और जिस पृथ्वी पर जीना पड़ता है- और जिस पृथ्वी पर जन्म होता है- और जिस पृथ्वी पर लाश गिरती है अंत में, उसे पृथ्वी की हम बात नहीं करते! हम बात आकाश की करते है, जहां न हम जी रहे हैं, न रह रहे है! हम दोनों आत्मा-परमात्मा की बात कर रहे थे....।

आत्मा-परमात्मा की बात आकाश की बात है।

..... कि हवा का एक झोंका आया और मेरी चादर उड़ी और साध्वी को छू गयी, तो वह एकदम घबड़ा गयी। मैंने पूछा, "क्या हुआ?"

उसने कहा, "पुरुष की चादर! पुरुष की चादर छूने का निषेध है।"

मैं तो बहुत हैरान हुआ। मैंने कहा, "क्या चादर भी पुरुष और सी हो सकती है? तब तो यह चमत्कार है! कि चादर भी सी और पुरुष हो सकती है..?.। "

लेकिन ब्रह्मचर्य के साधकों ने चादर को भी स्री-पुरुष में परिवर्तित कर दिया है। यह सेक्सुअलिटी की अति हो गयी, कामुकता की अति हो गयी।

.. मैंने कहा, " अभी तो तुम आत्मा की बातें करती थीं, और अभी तुम शरीर हो गयीं! अभी तुम चादर छू जाने से चादर हो गयीं? अभी, थोड़े समय पहले तो तुम आत्मा थीं, अब तुम शरीर हो गयी चादर हो गयीं "! अब यह चादर भी सेक्स-सिम्बल बन गयी, अब यह भी काम की प्रतीक बन गयी। हवाओं को क्या पता कि चादर भी पुरुष होती है, अन्यथा हवाएं भी चादरों के नियमों का ध्यान रखतीं। यह तो गलती हो गयी चादर के प्रति हवाओं से।

वे कहने लगीं, "प्रायश्चित करना होगा, उपवास करना होगा। "

मैंने उसे कहा, "करो उपवास जितना करना हो, लेकिन चादर के स्पर्श से जिसको सी और पुरुष का भाव पैदा हो जाता हो, उसका चित्त ब्रह्मचर्य को कभी उपलब्ध नहीं हो सकता..। "

लेकिन नहीं, हम इसी तरह के ब्रह्मचर्य को पकड़े रहेंगे; इसी तरह की झूठी बातों को; इसी तरह की नैतिकता को। इस तरह का धर्म सब झूठा है। दमन जहां है, वहां सब झूठा है। भीतर कुछ और हो रहा है, बाहर कुछ और हो रहा है।

... अब इस साध्वी को दिखायी ही नहीं पड़ सकता कि यह अति कामुकता है। यह रुग्ण कामुकता हो गयी; यह बीमार स्थिति हो गयी कि चादर भी सी और पुरुष होती है! जिस ब्रह्मचर्य में पुरुष और सी न मिट गये हों, वह ब्रह्मचर्य नहीं है।

कुछ युवा एक रात्रि एक वेश्या को साथ लेकर सागर तट पर आये। उस वेश्या के वस छीनकर उसे नंगा कर दिया और शराब पीकर वे नाचने-गाने लगे। उन्हें शराब के नशे में डूबा देखकर वह वेश्या भाग निकली। रात जब उन युवकों को होश आया, तो वे उसे खोजने निकले। वेश्या तो उन्हें नहीं मिली, लेकिन एक झाड़ी के नीचे बुद्ध बैठे हुए उन्हें मिले। वे उनसे पूछने लगे "महाशय, यहां से एक नंगी सी को, एक वेश्या को भागते तो नहीं देखा? रास्ता तो यही है। यहीं से ही गुजरी होगी। आप यहां कब से बैठे हुए हैं?"

बुद्ध ने कहा, "यहां से कोई गुजरा जरूर है, लेकिन वह सी थी या पुरुष, यह मुझे पता नहीं है। जब मेरे भीतर का पुरुष जागा हुआ था, तब मुझे सी दिखायी पड़ती थी। न भी देखूं तो भी दिखायी पड़ती थी। बचना भी चाहूं तो भी दिखायी पड़ती थी। आंखें किसी भी जगह और

कहीं भी कर लूं तो भी ये आंखें सी को ही देखती थीं। लेकिन जब से मेरे भीतर का पुरुष विदा हो गया है, तबसे बहुत खयाल करूं तो ही पता चलता है कि कौन सी है, कौन पुरुष है। वह कौन था, जो यहां से गुजरा है, यह कहना मुश्किल है। तुम पहले क्यों नहीं आये? पहले कह गये होते कि यहां से कोई निकले तो ध्यान रखना, तो मैं ध्यान रख सकता था।

और यह बताना तो और भी मुश्किल है कि जो निकला है, वह नंगा था या वस्त्र पहने हुए था। क्योंकि, जब तक अपने नंगेपन को छिपाने की इच्छा थी, तब तक दूसरे के नंगेपन को देखने की भी बड़ी इच्छा थी। लेकिन, अब कुछ देखने की इच्छा नहीं रह गयी है। इसलिए, खयाल में नहीं आता कि कौन क्या पहने हुए है....। "दूसरे में हमें वही दिखायी देता है, जो हममें होता है। दूसरे में हमें वही दिखायी देता है, जो हममें है। और दूसरा आदमी एक दर्पण की तरह काम करता है, उसमें हम ही दिखायी पड़ते हैं।

बुद्ध कहने लगे, "अब तो मुझे याद नहीं आता, क्योंकि किसी को नंगा देखने की कोई कामना नहीं है। मुझे पता नहीं कि वह कपड़े पहने थी या नहीं पहने थी। "वे युवक कहने लगे, "हम उसे लाये थे अपने आनंद के लिए। लेकिन, वह अचानक भाग गयी है। हम उसे खोज रहे हैं। "

बुद्ध ने कहा, "तुम जाओ और उसे खोजो। भगवान करे, किसी दिन तुम्हें यह खयाल आ जाये, कि इतनी खूबसूरत और शांत रात में अगर तुम किसी और को न खोज कर अपने को खोजते, तो तुम्हें वास्तविक आनंद का पता चलता। लेकिन, तुम जाओ और खोजो दूसरों को। मैंने भी बहुत दिन तक दूसरों को खोजा, लेकिन दूसरों को खोजकर मैंने कुछ भी नहीं पाया। और जब से अपने को खोजा, तब से वह सब पा लिया है, जिसे पाकर कोई भी कामना पाने की शेष नहीं रहती। "यह बुद्ध ब्रह्मचर्य में रहे होंगे। लेकिन, चादर पुरुष हो जाये तो ब्रह्मचर्य नहीं है।

और यह दुर्भाग्य है कि दमन के कारण सारे देश का व्यक्तित्व कुरूप, विकृत, परवटेंड हो गया है। एक-एक आदमी भीतर उलटा है, बाहर उल्टा है। भीतर आत्मा शीर्षासन कर रही है। भीतर हम सब सिर के बल खड़े हुए है। जो नहीं है भीतर, वह हम बाहर दिखला रहे हैं। और दूसरे धोखे में आ जायें, इससे कोई बहुत हर्जा नहीं है; स्वयं ही धोखा खा जाते हैं। लम्बे अर्से में हम यह भूल ही जाते हैं कि हम यह क्या कर रहे हैं।

दमन, मनुष्य की आत्मा की असलियत को छिपा देता है और झूठा आवरण पैदा कर लेता है। और, फिर इस दमन में हम, जिंदगी भर जिसे दमन किया है, उससे ही लड़कर गुजारते हैं।

ब्रह्मचर्य की साधना करने वाला आदमी चौबीस घंटे सेक्स सेंटर में ही जिंदगी व्यतीत करता है। उपवास करने वाला चौबीस घंटे भोजन करता है। आपने कभी उपवास किया हो तो आपको पता होगा।

उपवास करें और चौबीस घंटे भोजन करना पड़ेगा। हां, भोजन मानसिक होगा, शारीरिक नहीं। लेकिन, शारीरिक भोजन का कुछ फायदा भी हो सकता है, मानसिक भोजन का सिवाय नुकसान के और कोई भी फायदा नहीं है। जिसने दिन भर खाना नहीं खाया है, वह दिन भर खाने की इच्छा से भरा हो, यह स्वाभाविक है।

नहीं, उपवास का यह अर्थ नहीं है कि आदमी खाना न खाये। उपवास का अर्थ अनाहार नहीं है। अनाहार करने वाला दिन भर आहार करता है। उपवास का अर्थ दूसरा है। दमन नहीं है उपवास का अर्थ; लेकिन दमन ही उसका अर्थ बन गया है। उपवास का अर्थ भोजन 'न-करना' नहीं है।

उपवास का अर्थ है: आत्मा के निकट आवास।

और, आत्मा के निकट कोई इतना पहुंच जाये कि उसे भोजन का खयाल ही न आये, तो वह बात ही दूसरी है; कोई इतने भीतर उतर जाये कि बाहर का पता भी न चले कि शरीर भूखा है, वह बात दूसरी है; कोई इतने गहरे में चला जाये कि शरीर को प्यास लगी है कि भूख लगी है, भीतर इसकी खबर ही न पहुंचती हो, तो यह बात दूसरी है। लेकिन कोई- भोजन नहीं छुऊंगा-ऐसा संकल्प करके बैठ जाये, तो दिन भर उसको भोजन करना पड़ता है; वह उपवास में नहीं होता।

दमन, धोखा पैदा करता है।

दमन, वह जो असलियत है-उपलब्धि की, अनुभूति की; वह जो सत्य है, उसकी तरफ बिना ले जाये बाहर परिधि पर ही सब नष्ट करके जबर्दस्ती कुछ पैदा करने की कोशिश करता है। और यह कोशिश बहुत महंगी पड़ जाती है।

हिन्दुस्तान में ब्रह्मचर्य की बात चल रही है तीन-चार हजार वर्ष से। और इस बात को कहने में मुझे जरा भी अतिशयोक्ति नहीं मालूम पड़ती किं आज इस पृथ्वी पर हमसे ज्यादा कामुक कोई समाज नहीं है। चौबीस घंटे हम काम से लड़ रहे हैं। छोटे बच्चे से लेकर मरते हुए बूढ़े तक की सेक्स से लड़ाई चल रही है। और जिससे हम लड़ते हैं, वही हमारे भीतर घाव की तरह हो जाता है।

कोरिया में दो फकीर हुए हैं, मैंने उनके जीवन के बारे में पढ़ा था। दो भिक्षु एक दिन शाम अपने आश्रम वापस रहे हैं। उनमें एक बूढ़ा भिक्षु है, एक युवा भिक्षु है। आश्रम के पहले ही एक छोटी-सी पहाड़ी नदी पड़ती है। सांझ हो गयी है, सूरज ढल रहा है। एक युवती खड़ी है उसी नदी के किनारे। उसे भी नदी पार होना है। लेकिन डरती है, क्योंकि नदी अनजान है, परिचित नहीं है; पता नहीं, कितनी गहरी हो? इसलिए भयभीत है।

वह बूढ़ा भिक्षु आगे-आगे आ रहा है। उसको भी समझ में पड़ गया है कि वह सी पार होने के लिए, शायद किसी का सहारा चाहती है। बूढ़े भिक्षु का मन हुआ है कि हाथ से सहारा देकर उसे नदी पार करवा दे। लेकिन थ का सहारा देने का खयाल भर ही उसे आया है कि भीतर वर्षों की दबी हुई वासना एकदम खड़ी हो गयी है। युवती के हाथ को छूने की कल्पना से उसके भीतर, जैसे उसकी नस-नस में, रग-रग में बिजली दौड गयी है। तीस वर्ष से सी को नहीं छुआ है उसने। और अभी तो सिर्फ छूने का खयाल ही आया है उसे, कि युवती को हाथ का सहारा 'दे दे, लेकिन सारे प्राण कंप गये हैं उसके। एक तरह के बुखार ने उसके सारे व्यक्तित्व को घेर लिया है। वह अपने मन को समझाया उसने कि, "यह कैसी गंदी बात सोची, कैसे पाप की बात सोची! मुझे क्या मतलब है? कोई नदी पार हो या न हो, मुझे क्या प्रयोजन है? मैं अपना जीवन क्यों बिगाडू अपनी साधना क्यों बिगाडूं? इतनी कीमती साधना, तीस वर्ष की साधना, इस लड़की पर लगा दूं..,। "

बड़ी बहुमूल्य साधना चल रही थी; और ऐसी ही बहुमूल्य साधना के सहारे लोग मोक्ष तक पहुंचना चाहते हैं! 'ही कीमती और मजबूत साधना के पुण्य पर चढ़कर लोग परमात्मा की यात्रा करना चाहते हैं!

.... आंख बंद कर लीं थी उसने, लेकिन वह सी तो आंख बंद करने पर भी दिखायी पड़ने लगी; बहुत जोर से दिखाई पड़ने लगी। क्योंकि मन जाग गया था; सोयी हुई वासना जाग गयी थी। आंख बंद करके ही वह नदी में उतरा...।

अब यह आपको पता होगा कि जिस चीज से आंख बंद कर ली जाये, वह उतनी सुंदर कभी नहीं होती, जितनी आंख बंद होने पर होती है। आंख बंद करने से वह ज्यादा सुंदर प्रतीत होती है।

आंख बंद की उसने और वह सी अप्सरा हो गयी.?.!

अप्सराएं इसी तरह पैदा होती हैं। बंद आंख से वे पैदा हो जाती है।

दुनिया में सिर्फ स्त्रियां हैं, आंख बंद करो कि वे ही अप्सराएं हो जाती है।

अप्सराएं कहीं भी नहीं हैं; लेकिन आंख बंद होते ही सी अप्सरा हो जाती है! मन में एकदम से कामुकता पैदा हो जाती है; फूल खिल जाते हैं; चांदनी फैल जाती है। एक ऐसी सुगंध फैल जाती है मन में, जो सी में कहीं भी नहीं है; जो सिर्फ आदमी की काम-वासना के सपने में होती है। आंखें बंद करते ही सपना शुरू हो जाता है।

.... अब वह भिक्षु उस सी को ही देख रहा है। अब एक ड्रीम, एक सपना शुरू हो गया है। अब वह सी उसे बुला रही है। उसका मन कभी कहता है कि यह तो बड़ी बुरी बात है कि किसी असहाय सी को सहारा न दो। फिर तत्काल उसका दूसरा मन कहता है कि यह सब बेईमानी है, अपने को धोखा देने की तरकीब कर रहे हो। यह सेवा वगैरह नहीं है, तुम सी को छूना चाहते हो...।

बड़ी मुश्किल है स्त्री। साधुओं की बड़ी मुश्किल होती है। काम है भीतर, तनाव है भीतर। सारा प्राण पीछे लौट जाना चाहता है, और वह दमन करने वाला मन आगे चले आना चाहता है।

नदी के छोटे-से घाट पर वह आदमी भीतर दो हिस्सों में बंट गया है; एक हिस्सा आगे जा रहा है, एक हिस्सा पीछे जा रहा है। उसकी अशांति, उसका टेंशन, उसकी तकलीफ, भारी हो गयी है। आधा हिस्सा इस तरफ जा रहा है, आधा हिस्सा उस तरफ जा रहा है। किसी तरह खींच-तान कर वह पार हुआ है। आंख खोलकर देखना चाहता है, लेकिन बहुत डरा हुआ है। भगवान का नाम लेता है, जोर-जोर से भगवान का नाम लेता है-नमो: बुद्धाय, नमो: बुद्धाय...! भगवान का नाम आदमी जब भी जोर-जोर से ले, तब समझ लेना कि भीतर कुछ गड़बड़ है। भीतर की गड़बड़ को दबाने के लिए आदमी जोर-जोर से भगवान का नाम लेता है।

आदमी को ठंड लग रही है, नदी में नहाते वक्त, तो 'सीता-राम, सीता-राम ' का जाप करने लगता है। बेचारे सीता-राम को क्यों तकलीफ दे रहे हो! पर वह ठंड जो लग रही है। सीता-राम उस ठंड को भुलाने की तरकीब है। अंधेरी गली में आदमी जाता है और कहता है, ' अल्लाह ईश्वर तेरे नाम'! वह अंधेरे की घबड़ाहट से बचने की कोशिश है।

जो आदमी परमात्मा के निकट जाता है, वह चिल्ल-पों नहीं करता है भगवान के नाम की; वह चुप हो जाता है। जितने भी चिल्ल-पों और शोर गुल मचाने वाले लोग हैं, समझ लेना कि उनके भीतर कुछ और चल रहा है; भीतर काम चल रहा है, और ऊपर राम का नाम चल रहा है।

... भीतर उसे औरत खींच रही है और वह किसी तरह भगवान का सहारा लेकर आगे बढ़ा जा रहा है-कि कहीं ऐसा न हो कि औरत मजबूत हो जाये और नीचे खींच ले।

और उस बेचारी को पता भी नहीं कि साधु किस मुसीबत में पड़ गया है। वह अपने रास्ते पर खड़ी है। तभी उस साधु को खयाल आया कि पीछे उसका जवान साधु कहां है। लौटकर उसने देखा, कि उसको सचेत कर दे, कि वह कहीं उस पर दया करने की भूल में न पड जाये। लेकिन लौटकर उसने देखा तो भूल हो चुकी थी। वह जवान भिक्षु उस औरत को कंधे पर लिए नदी पार कर रहा था। वह देखकर आग लग गयी उस बूढ़े साधु को। न-मालूम कैसा-कैसा मन होने लगा उसका। कई बार उसके मन में होने लगा कि कितना अच्छा होता, अगर मैं भी उसे कंधा लगाये होता! फिर उसने स्वयं को झिड़का, 'यह क्या पागलपन की बात, मैं और उस औरत को कंधे पर ले सकता हूं? तीस साल की साधना नष्ट करूंगा? गंदगी का ढेर है औरत का शरीर, तो उसको कंधे पर लूंगा?

नर्क का द्वार है सी, और उसको कंधे पर लिया है?'

लेकिन वह दूसरा भिक्षु लिए आ रहा है। आग लग गयी उसे! आज जाकर गुरु को कहूंगा कि यह युवक, भ्रष्ट हो गया, पतित हो गया; इसे निकालो आश्रम के बाहर। ' उस भिक्षु ने उस युवती को किनारे पर छोड़ दिया और अपने रास्ते चल पड़ा। फिर वे दोनों चलते रहे, लेकिन बूढ़े ने कोई बात न की। जब वे आश्रम के द्वार की ओर बढ़ रहे थे तो उस बूढे भिक्षु ने सीढ़ियों पर खड़े होकर कहा, "याद रखो, मैं चलकर गुरु को कहूंगा कि तुम पतित हो चुके हो। तुमने उस स्त्री को कंधे पर क्यों उठाया न: " वह भिक्षु एकदम से चौंका। उसने कहा, "स्त्री! उसे मैने उठाया था और नदी पार छोड़ भी दिया। लेकिन ऐसा मालूम होता है कि आप उसे अभी भी कंधे पर लिए हुए हैं!"' 'यु आर स्टिल कैरिग हर आन योर शोल्डर। आप अभी भी ढो रहे हैं उसे कंधे पर! मैं तो उसे उतार भी आया। और आपने तो उसे कंधे पर कभी लिया भी नहीं था; आप अभी तक ढो रहे हैं? मैं तो घंटे भर से सोचता था कि आप किसी ध्यान में लीन हैं। मुझे यह खबर भी न थी कि आप ध्यान कर रहे हैं उस युवती का-कि उस स्त्री को नदी के पार करा रहे है, अब तक! "

यह तो मैंने कहानी सुनी थी। ठीक ऐसी ही कहानी अभी मेरे साथ हो गयी है दिल्ली में, वह आप लोगों को बताऊं।

एक महिला आयी और मुझसे उसने पूछा, "मैं यहां ठहर जाऊं आपके पास?" मैंने कहा, "बिलकुल ठहर जाओ।

मुझे पता नहीं था कि मनु भाई पटेल को बड़ी तकलीफ हो जायेगी इस बात से। अगर मुझे पता होता तो संसद-सदस्य को मैं तकलीफ नहीं देता। मैं किसी को तकलीफ नहीं देना चाहता। कहता, "देवी, तुम्हारे ठहरने से मुझे तकलीफ नहीं हैं, लेकिन मनु भाई पटेल को, बड़ौदा

वालों को तकलीफ हो जायेगी। और किसी को तकलीफ देना अच्छा नहीं है। तो तुम्हें ठहरना है तो जाओ, मनु भाई के कमरे में ठहर जाओ; यहां मेरे पास किस लिए ठहरती हो। ”

लेकिन मुझे पता ही नहीं था। पता होता तो यह भूल न होती। यह भूल हो गयी अज्ञान में। वह आकर सो गई मेरे कमरे में, लेकिन दूसरे दिन बड़ी तकलीफ हो गयी। मुझे पता चला कि मनु भाई को और उनके मित्रों को बहुत कष्ट हो गया है इस बात से कि मेरे कमरे में वह सो गयी। मैं तो हैरान हुआ कि वह मेरे कमरे में सोयी, तकलीफ उनको हो गयी!

लेकिन आदमी कंधे पर उन चीजों को ढोने लगता है, जिनको लेकर उसके भीतर कोई लड़ाई जारी रहती है। पता नहीं चलता, खयाल में नहीं आता कि यह सब भीतर क्या हो रहा है। तो मैंने सोचा कि वह मनु भाई मुझे मिलें तो उनसे कहूं कि 'सर, यू आर स्टिल कैरिग हर आन योर शोल्डर?' अभी भी ढो रहे हैं उस औरत को अपने कंधों पर? मैने उनको वहीं दिल्ली में कहा कि मनु भाई, पीछे तकलीफ होगी। पीछे यह बात चलेगी, मिटने वाली नहीं है। तो यह बात अभी कर लें सबके सामने। तो उन्होंने कहा, "क्या बात करनी है; कुछ हर्जा नहीं; जो हो गया, हो गया।"

लेकिन मैं जानता था, बात तो उठेगी; बात तो करनी ही पड़ेगी। फिर वे संसद-सदस्य हैं। संसद-सदस्य को मुझ जैसे फकीरों के आचरण का ध्यान रखना चाहिए, नहीं तो मुल्क का आचरण बिगाड़ देंगे।

और फिर ऐसे संसद-सदस्य हैं, इसलिए तो मुल्क का आचरण इतना अच्छा है, नहीं तो कभी भी बिगड़ जाता! धन्य भाग है, हमारे मुल्क का आचरण कितना अच्छा है, अच्छे संसद-सदस्यों के कारण! जो पता लगाते हैं कि किसके कमरे में कौन सो रहा है! इसका हिसाब रखते हैं! ये लोक-सेवक हैं! लोक-सेवक ऐसा ही होना चाहिए। मुझे तो जैसे खबर मिली, मैंने सोचा कि इस बार इलेक्ट्रान के वक्त अगर मुझे वक्त मिला तो जाऊंगा बड़ौदा में, लोगों से कहूंगा कि मनु भाई को ही वोट देना, इस तरह के लोगों की वजह से देश का चरित्र ऊंचा है। लेकिन, यह जो दिमाग है, यह दिमाग कहां से पैदा होता है? यह दिमाग कहां से आता है? यह भीतर क्या छिपा हुआ है...?

यह भीतर है, दमन की लम्बी परम्परा। यह एक आदमी का सवाल नहीं है। यह हमारे पूरे जातीय संस्कार का सवाल है; यह मनु भाई का सवाल नहीं है। वह तो प्रतिनिधि हैं-हमारे और आपके; हमारी सब बीमारियों के-वह जो हमारे भीतर छिपा है, उसके। हमारे भीतर क्या छिपा है...?

हमने एक अजीब सप्रेशन की धारा में अपने को जोड़ रखा है! दबा रहे हैं, सब! वह दबाया हुआ घाव हो जाता है। वह घाव पीड़ा देता है। उस घाव की वजह से हमें बाहर वही-वही दिखायी पड़ने लगता है, जो-जो हमारे भीतर है। सारा जगत एक दर्पण बन जाता है।

यह सप्रेशन की लम्बी धारा, यह दमन की लम्बी यात्रा व्यक्तित्व को नष्ट करती है। इसने जीवन के स्रोतों को पॉयजन से भर दिया है, जहर से भर दिया है। जीवन के सारे स्रोत विकृत और कुरूप हो गये हैं। इसलिए यh तीसरा सूत्र आपसे कहना चाहता हूं कि दमन से बचना।

अगर जीवन को और सत्य को जानना हो, और कभी प्रभु के, परमात्मा के द्वार पर दस्तक देनी हो, तो दमन से बचना।

क्योंकि दमन करने वाला चित्त परमात्मा तक कभी नहीं पहुंचता। वह वहीं रुक जाता है, जहां दमन करता है। उसको वहीं ठहरना पड़ता है, क्योंकि जरा-सा भी हटा कि दमन उखड़ जायेगा और जिसको दबाया है, वह प्रकट होना शुरू हो जायेगा।

अगर आप एक आदमी की छाती पर सवार हो गये हैं तो फिर आप उसको छोड़कर नहीं जा सकते, क्योंकि छोड़कर आप जैसे ही गये कि वह आपके ऊपर हमला कर देगा। अगर किसी आदमी की छाती पर आप सवार हो गये तो आप समझना कि जितना आपने उसे दबा रखा है, उससे भी ज्यादा आप उससे दब गये हैं! क्योंकि आप छोड़कर उससे नहीं हट सकते।

मनुष्य जिन चीजों को दबा लेता है, उन्हीं के साथ बंध जाता है। वह उनको छोड़कर हट नहीं सकता और कहीं भी नहीं जा सकता। इसलिए दमन से अक्सर साधक को सावधान रहना चाहिए।

दमन, पैदा करेगा-पागलपन विक्षिप्तताएं इन्फिरिअरिटी।

जितने मनस-चिकित्सक हैं, उनसे पूछिए, वे क्या कहते हैं। वे कहते हैं, सारी दुनिया पागल हुई जा रही ३ दमन के कारण। पागलखाने में सौ आदमी बंद हैं, उनमें अट्ठानबे आदमी दमन के कारण बंद हैं जिन्होंने बहुत जोर से दबा लिया है। एक विस्फोट की आग को भीतर रख लिया है। वह विस्फोट फूटना चाहता है, वह सारक व्यक्तित्व को किसी दिन तोड़ देता है; किसी दिन खंड-खंड बिखेर देता है सारे मकान को। एक दिन आदमी बिखर कर, टूट कर खड़ा हो जाता है।

इसलिए, जितना आदमी सभ्य होता चला जा रहा है, उतना ही पागल होता जा रहा है, क्योंकि सभ्यता का सूत्र दमन है।

नहीं, स्वभाव को अगर जानना है, तो दमन से वह नहीं जाना जा सकता।

लेकिन, तब आप पूछेंगे कि जब क्रोध आये तो क्रोध करना चाहिए? वासना आये तो वासना भोगनी चाहिए क्या आप लोगों को वासना में डूब जाने के लिए कहते हैं..?

बिलकुल नहीं, जरा भी नहीं कहता हूं। दमन से बचने को कह रहा हूं अभी भोग करने को नहीं कह रहा हूं।

अभी एक सूत्र समझ लें, कल दूसरे सूत्र की बात करेंगे।

दमन से बचने का अर्थ : भोग में कूद जाना नहीं है। अनिवार्यरूपेण वही एक आल्टरनेटिव नहीं है। और विकल्प भी है। उस विकल्प पर हम कल बात करेंगे। इसलिए जल्दी से नतीजा लेकर घर मत लौट जाना। मेरी बातों से जल्दी नतीजा नहीं लेना चाहिए, नहीं तो बड़ी मुश्किल हो जाती है।

दमन नहीं, खुद के व्यक्तित्व से संघर्ष नहीं, खुद के व्यक्तित्व से द्वंद्व नहीं-क्योंकि खुद के व्यक्तित्व से द्वंद्व का अर्थ है, जैसे मैं अपने दोनों हाथों को आपस में लड़ाने लग। कौन जीते, कौन हारे, दोनों हाथ मेरे हैं! दोनों हाथों के पीछे लड़ने वाली शक्ति मेरी है! दोनों हाथों के पीछे मैं हूं। कौन जीतेगा...?

कोई नहीं जीत सकता। मेरे ही दोनों हाथों की लड़ाई में कोई नहीं जीत सकता; क्योंकि जीतने वाले दो है ही नहीं। लेकिन, एक अदभुत घटना घट जायेगी। जीतेगा तो कोई नहीं-न बायां, न दायां, लेकिन मैं हार जाऊंगा दोनों की लड़ाई में; क्योंकि मेरी शक्ति दोनों के साथ नष्ट होगी।

और, मैं हार जाऊं या शक्ति को क्षीण होने दूं-जों भी दमन कर रहा है, वह किसका दमन कर रहा है...? अपना ही; अपने ही चित्त के खंडों को दबा रहा है। किससे दबा रहा है...? चित्त के दूसरे खंडों से दबा रहा है। चित्त के एक खंड से चित्त के दूसरे खंड को दबा रहा है। खुद को ही, खुद से दबा रहा है!

ऐसा आदमी अगर पागल हो जाये अंततः, तो आश्चर्य ही क्या है। वह तो आदमी पागल नहीं हो पाता, क्योंकि दमन सिखाने वालों की बात पूरी तरह से कोई भी नहीं मानता है। नहीं तो सारी मनुष्यता पागल हो जाती। वह दमन सिखाने वालों की बात पूरी तरह से कोई नहीं मानता है। और न मानने की वजह से थोड़ा-सा रास्ता बचा रहता है कि आदमी बच जाता है।

और न मानने की वजह से, ऊपर से दिखलाता है कि मानता हूं; भीतर से पूरा मानता नहीं, ऊपर से दिखलाता है कि मानता हूं; इसलिए पाखंड और हिपॉक्रिसी पैदा होती है। हिपॉक्रिसी दमन की सगी बहन है। वह जो पाखंड है, वह दमन का चचेरा भाई है। दमन चलेगा, तो पाखंड पैदा होगा। अगर पाखंड पैदा न होगा, तो पागलपन पैदा होगा। पागलपन से बचना हो तो पाखण्डी हो जाना पड़ेगा। दुनिया को दिखाना पड़ेगा। दुनिया को दिखाना पड़ेगा ब्रह्मचर्य और पीछे से वासना के रास्ते खोजने पड़ेंगे। दुनिया को दिखाना पड़ेगा कि मेरे लिए तो धन मिट्टी है और भीतर गुप्त मार्गों से तिजोरियां बंद करनी पड़ेगी। वह भीतर से चलेगा।

लेकिन, यह पाखंड बचा रहा है आदमी को, नहीं तो आदमी पागल हो जाये। अगर सीधा-सादा आदमी दमन के चक्कर में पड जाये तो पागल हो जाए।

ये साधु-संन्यासी बहुत बड़े अंश में पागल होते देखे जाते हैं, इसका कारण आपको मालूम है?

लोग समझते हैं, भगवान का उन्माद छा गया है। भगवान का कोई उन्माद नहीं होता; सब उन्माद भीतर के दमन से पैदा होते है। भीतर दमन बहुत हो तो रोग पैदा हो जाता है, उन्माद पैदा हो जाता है, पागलपन पैदा हो जाता लेकिन उसको हम कहते है-हर्षोन्माद, एक्सटेसी! वह एक्सटेसी वगैरह नहीं है, मैडनेस है।

या तो आदमी पूरा दमन करे तो पागल होता है, या फिर पाखंड का रास्ता निकाल ले तो बच जाता है।

और पाखंडी होना, पागल होने से अच्छा नहीं है। पागल में फिर भी एक सिन्सेरिटि है, पागल की फिर भी एक निष्ठा है; पाखंडी की तो कोई निष्ठा नहीं होती; कोई नैतिकता, कोई ईमानदारी नहीं होती। अपने से नहीं लड़ना है। आप अपने से लड़े कि आप गलत रास्ते पर गये। अपने से लड़ना अधार्मिक है।

दमन, 'मात्र अधार्मिक' है। दमन मात्र ने मनुष्य को जितना नुकसान पहुंचाया है, उतना दुनिया में और किसी शत्रु ने कभी नहीं पहुंचाया। उस दिन ही मनुष्य पूरी तरह स्वस्थ होता है, जिस दिन सारे दमन से मुक्त हो जाता है; जिस दिन उसके भीतर कोई कान्पिलक्ट, कोई द्वंद्व नहीं होता। जिस दिन भीतर द्वंद्व नहीं होता है, उस दिन एक दर्शन होता है, जो भीतर है।

अगर ठीक से समझें, तो दमन मनुष्य को विभक्त करता है; डिव्हाइड करता है। दमन जिस व्यक्ति के भीतर होगा, वह इनडिवीजुअल नहीं रह जायेगा, वह व्यक्ति नहीं रह जायेगा; वह विभक्त हो जायेगा, उसके कई टुकड़े हो जायेंगे; वह स्कीजोफ्रेनिक हो जायेगा। दमन न हो व्यक्ति में तो योग की स्थिति उपलब्ध होती है।

योग का अर्थ है-जोड़; योग का अर्थ है-इन्टिग्रेट योग का अर्थ है- अखण्डता, एक।

लेकिन एक कौन हो सकता है? एक व्यक्तित्व किसका हो सकता है..?

उसका, जो लड़ नहीं रहा है; उसका जो अपने को खंड-खंड नहीं तोड़ रहा है; जो अपने भीतर नहीं कह रहा है-यह बुरा है, यह अच्छा है; इसको बचाऊंगा, उसको छोडूंगा। जिसने भी अपने भीतर बुरे -अच्छे का भेद किया, वह दमन में पड़ जायेगा।

दमन से बचने का सूत्र है; अपने भीतर जो भी है, उसकी पूर्ण स्वीकृति, टोटल एक्सऐबिलिटी।

जो भी है; सेक्स है, लोभ है, क्रोध है, मान है-जो भी है भीतर, उसकी सर्वांगीण स्वीकृति प्राथमिक बात है। तो व्यक्ति आत्मज्ञान की तरफ विकसित होगा।

अगर उसने अस्वीकार किया-कि मैं अस्वीकार करता हूं -उसने कहा कि मैं लोभ को फेंक दूंगा -उसने कहा कि मैं क्रोध को फेंक दूंगा -तो फिर वह कभी भी शान्त नहीं हो पायेगा; इस फेंकने में ही अशान्त हो जायेगा।

और, इसलिए तो संन्यासी जितने क्रोधी और अहंकारी देखे जाते हैं, उतने साधारण लोग क्रोधी नहीं होते! संन्यासी का क्रोध और अहंकार बहुत अदभुत है। दुर्वासा की कथाएं तो हम जानते हैं।

संन्यासी में इतना अहंकार कि दो संन्यासी एक दूसरे को मिल नहीं सकते; क्योंकि कौन किसको पहले नमस्कार करेगा! दो संन्यासी एक साथ बैठ नहीं सकते; क्योंकि किसका तख्त ऊंचा होगा और किसका नीचा होगा! ये संन्यासी नहीं, पागल हैं। जो तख्त की ऊंचाई नापने में लगे हुए हैं, उन्हें परमात्मा की ऊंचाई का पता भी क्या होगा।

मैं कलकत्ते में एक सर्व-धर्म सम्मेलन में बोलने गया था। वहां कई तरह के संन्यासी, कई धर्मो के उन्होंने आमंत्रित किये थे। उन संयोजकों को क्या पता बेचारों को कि सब संन्यासी एक मंच पर नहीं बैठेंगे। कोई उसमे शंकराचार्य हो सकते हैं, वे अपने सिंहासन पर बैठेंगे। और शंकराचार्य सिंहासन पर बैठे तो दूसरा आदमी कैसे नीचे बैठ सकता है! संयोजकों ने मुझे आकर कहा कि सबकी खबरें आ रही हैं कि हमारे बैठने का इंतजाम क्या हे? बच्चों-जैसी बात मालूम पड़ती है। जैसे, छोटे-छोटे बच्चे कुर्सी पर खड़े हो जाते है और अपने बाप से कहते हैं, 'तुम मुझसे नीचे हो। 'बच्चों से ज्यादा बुद्धि इनकी नहीं मालूम पड़ती है। तख्त ऊंचा-नीचा रखने से ज्यादा उनकी बुद्धि नहीं है, कि तख्त नीचा हो जायेगा तो हम नीचे हो जायेंगे। हद हो गयी, इस भांति से ऊंचा होना बहुत आसान हो गया!

लेकिन दबा रहे हैं अहंकार को। तो अहंकार दूसरे रास्ते खोज रहा है निकलने के लिए। अहंकार को दबा रहे हैं, इधर कह रहे हैं, 'मैं कुछ भी नहीं हूं! हे परमात्मा, मैं तो तेरी शरण में हूं। 'उधर अहंकार कह रहा है-अच्छा ठीक है बेटे, उधर तुम शरण में जाओ, इधर हम दूसरा रास्ता खोजते है। हम कहते हैं कि सोने का सिंहासन चाहिए क्योंकि हमसे ज्यादा भगवान की शरण में और कोई भी नहीं गया है!

तो इनको सोने का सिंहासन चाहिए। इधर- 'मैं कुछ भी नहीं हूं; आदमी तो कुछ भी नहीं है, सब संसार माया है! और उधर? -उधर, अगर जगतगुरु न लिखें उनके नाम के आगे तो वे नाराज हो जाते हैं कि मुझे जगतगुरु नहीं लिखा! '

..... और मजा यह है कि जगत से पूछे बिना ही गुरु हो गये हैं? जगत से भी तो पूछ लिया होता, यह जगत बहुत बड़ा है...!

एक गांव में मैं गया था। वहां भी एक जगतगुरु थे!

.. जगतगुरुओं की कोई कमी है! जिसको भी खयाल पैदा हो जाय, वह जगतगुरु हो सकता है! इस वक्त सबसे सस्ता काम यही है...!

गांव में जगतगुरु थे। मैंने पूछा, "इतना छोटा-सा गांव, जगतगुरु कहां से आये?" उन्होंने कहा, "वे यहां ही रहते हैं सदा से। " मैंने कहा, "जगत से पूछ लिया है उन्होंने?" उन्होंने कहा, "जगत से नहीं पूछा। लेकिन वे बहुत होशियार आदमी हैं। उनका एक शिष्य है। " मैंने कहा, " और कितने हैं?" उन्होंने कहा "बस, एक ही है। लेकिन उसका नाम उन्होंने जगत रख लिया है। तो वे जगतगुरु हो गये है। "

बिलकुल ठीक बात है। अब और कोई कमी नहीं रह गई है। अदालत में मुकादम नहीं चला सकते हैं इस आदमी पर। यह जगतगुरु है। सारे जगतगुरु इसी तरह के है। किसी का एक शिष्य होगा, किसी के दस होंगे लेकिन इससे क्या फर्क पड़ता है। इधर वे कहते हैं, 'मैं तो कुछ भी नहीं, आदमी तो माया है; असली तो ब्रहम है-एक ही ब्रहम है-और उधर जगतगुरु होने का लोभ सवार हो जाता है! वह अहंकार, इधर से बचाओ, उधर से रास्ता खोजता है।

आदमी जिस-जिस को दबायेगा, वही-वही नये-नये मार्गों से प्रकट होगा।

दमन करके कभी कोई किसी चीज को नही समझ सका। इसलिए दमन से बचना है, दमन से सावधान रहना है। दमन ही मनुष्य को तोड़ता है। और,अगर जुड़ना है, और एक हो जाना है, तो दमन से बच जाना चाहिए।

चौथे सूत्र पर मैं आपसे कल बात करूंगा कि जब हम दमन से बचेंगे तो फिर भोग एकदम से निमंत्रण देगा कि आओ; अब तो क्रोध से बचना नहीं है, इसलिए आओ, क्रोध करो; अब तो सेक्स से बचना नहीं है, इसलिए आओ और सेक्स में डूबो; अब तो लोभ से बचना नहीं है, इसलिए दौडो और रुपये इकट्ठे करो। जैसे ही हम इस दमन से बचेंगे, वैसे ही भतो निमंत्रण देगा कि आ जाओ।

उस भोग से बचने के लिए भी क्या करना है, उसकी कल के सूत्र में आपसे बात करूंगा।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना, उससे बहुत-बहुत अनुग्रहीत हूं और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं।

मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

'जीवन-क्रांति के सूत्र',
बड़ौदा

14 फरवरी 1969

संभोग से समाधि की ओर—50

Posted on सितम्बर 22, 2013by sw anand prashad

न भोग, न दमन—वरण जागरण—अठहरवां प्रवचन

मेरे प्रिय आत्मन,

तीन सूत्रों पर हमने बात की है।

जीवन क्रांति की दिशा में पहला सूत्र था- 'सिद्धांतों से, शास्त्रों से मुक्ति।'

जो व्यक्ति किसी भी तरह के मानसिक कारागृह में बंद है, वह जीवन ' की सत्य की, खोज नहीं कर सकता है। और वे लोग, जिनके हाथों में जंजीरें है उतने बड़े गुलाम नहीं हैं, जितने वे लोग, जिनकी आस्था पर विचारों की जंजीरें हैं; वादों, सिद्धांतों, संप्रदायों की जंजीरें हैं। आदमी की गुलामी मानसिक है।

दूसरा सूत्र था: ' भीड़ से मुक्ति। '

भीड़ की आंखों में अपने प्रतिबिंब से बचिये, पब्लिक ओपीनियन से बचिये। वह दूसरी जंजीर है।

आदमी जीवन भर यही देखता रहता है कि दूसरे मेरे संबंध में क्या सोच रहे हैं! और, दूसरे मेरे संबंध में ठीक सोचें, इस भांति का अभिनय करता राहता है! ऐसा व्यक्ति अभिनेता ही रह जाता है। ऐसे व्यक्ति के जीवन में चरित्र जैसी कोई बात नहीं होती। ऐसा व्यक्ति बाहर से अभिमानी हो जाता है, भीतर की आत्मा से उसका कभी संबंध नहीं होता।
और, तीसरा सूत्र था, 'दमन से मुक्ति। '

वे, जो अपने चित्त को दबाते हैं, वे अपने ही जीवन को नष्ट कर ले तै हैं। जिस बात को दबाते हैं, उसी बात से बंधे रह जाते हैं।

अगर धन से छूटने की कोशिश करते हैं, लोभ को दबाते हैं, तो वे फौरन लोभी हो जाते हैं। अगर काम को, सेक्स को दबाते हैं, तो कामुक हो जाते हैं। आदमी जिसको दबाता है, वही हो जाता है; यह कल के सूत्र पर बात हुई थी। आज चौथे सूत्र पर बात करनी है। इसके पहले कि हम चौथे सूत्र को समझें, दमन के संबंध में कुछ और बातें समझ लेनी आवश्यक हैं। मनुष्य को पता ही नहीं चलता, कि जन्म के साथ ही दमन शुरू हो जाता है!

हमारी सारी शिक्षा, सारी संस्कृति, सारी सभ्यता दमन लाती है। जगह-जगह मनुष्य पर रोक है! समझाया जाता है, क्रोध मत करो! ' लेकिन, अगर क्रोध नहीं किया तो क्रोध भीतर सरक जायेगा। तब उसका क्या होगा? अगर क्रोध को पी गये, तो वह खून में मिल जायेगा, हड्डी तक में चिपक जायेगा; तब उस क्रोध का क्या होगा.,.? क्रोध को दबा लेने से क्रोध का अंत नहीं होता। दबा हुआ क्रोध भीतर प्राणों में लिप्त हो जाता है। निकला हुआ क्रोध तो थोड़ी देर का साथी होता है, लेकिन दबा हुआ क्रोध जीवन भर के लिए साथी हो जाता है। क्रोध को दबाया कि पूरा व्यक्तित्व क्रोध से भर जाता है। लेकिन, बच्चों को सिखाया जा रहा है- 'क्रोध मत करना! 'ऐसी ही सारी बातें सिखायी जाती हैं, लेकिन कोई भी क्रोध से मुक्त नहीं हो पाता।

एक पूर्णिमा की रात में एक छोटे-से गांव में, एक बड़ी अदभुत घटना घट गई। कुछ जवान लड़कों ने शराबखाने में जाकर शराब पी ली और जब वे शराब के नशे में मदमस्त हो गये और शराब-घर से बाहर निकले तो चांद की बरसती चांदनी में उन्हें यह खयाल आया कि नदी पर जायें और नौका-विहार करें।

रात बड़ी सुन्दर और नशे से भरी हुई थी। वे गीत गाते हुए नदी के किनारे पहुंच गये। नाव वहां बंधी थी। मछुए नाव बांधकर घर जा चुके थे। रात आधी हो गयी थी।

वे एक नाव में सवार हो गये। उन्होंने पतवार उठा ली और नाव खेना शुरू किया। फिर वे रात देर तक नाव खेते रहे। सुबह की ठण्ड़ी हवाओं ने उन्हें सचेत किया। जब उनका नशा कुछ कम हुआ तो उनमें से किसी ने पूछा, "कहां आ गये होंगे अब तक हम। आधी रात तक हमने यात्रा की, न-मालूम कितनी दूर तक निकल आये होंगे। नीचे उतर कर कोई देख ले कि किस दिशा में हम चल रहे हैं, कहां पहुंच रहे हैं?"

जो नीचे उतरा था, वह नीचे उतर कर हंसने लगा। उसने कहा, "दोस्तो! तुम भी उतर आओ। हम कहीं भी नहीं पहुंचे हैं। हम वहीं खड़े हैं, जहां रात नाव खडी थी। "

वे बहुत हैरान हुए। रात भर उन्होंने पतवार चलायी थी और पहुंचे कहीं भी नहीं थे! नीचे उतर कर उन्होंने देखा तो पता चला, नाव की जंजीरें किनारे से बंधी रह गयी थीं, उन्हें वे खोलना भूल गये थे!

जीवन भी, पूरे जीवन नाव खेने पर, पूरे जीवन पतवार खेने पर कहीं पहुंचता हुआ मालूम नहीं पड़ता। मरते समय आदमी वहीं पाता है स्वयं को, जहां वह जन्मा था! ठीक उसी किनारे पर, जहां आंख खोली थी- आंख बंद करते समय आदमी पाता है कि वहीं खड़ा है। और तब बड़ी हैरानी होती है कि इतनी जो दौड़- धूप की, उसका ०क़ हुआ? वह जो प्रण किया था कहीं पहुंचने का, वह जो यात्रा की थी कहीं पहुंचने के लिए, वह सब निष्फल गयी! मृत्यु के क्षण में आदमी वहीं पाता है अपने को, जहां वह जन्म के क्षण में था! तब सारा जीवन एक सपना मालुम पड़ने लगता है। नाव कहीं बंधी रह गयी किसी किनारे से।

हां, कुछ लोग-कुछ सौभाग्यशाली लोग, मरते क्षण वहां पहुंच जाते हैं, जहां जीवन का आकाश है, जहां जीवन का प्रवास है, जहां सत्य है, जहां परमात्मा का मंदिर है। लेकिन, वहां वे ही लोग पहुंचते हैं, जो किनारे से, खूंटे से जंजीर खोलने की याद रखते हैं।

इन चार दिनों में कुछ जंजीरों की मैंने बात की है। पहले दिन मैंने कहा, शास्त्रों और सिद्धांतों की जंजीरें बड़ी गहरी हैं। और जो शास्त्रों और सिद्धान्तों से बंधा रह जाता है, वह कभी जीवन के सागर में यात्रा नहीं कर पाता है।

जीवन का सागर है-अज्ञात; और, सिद्धांत और शाख सब हैं-शांत।

ज्ञात से अज्ञात की तरफ जाने का कोई भी मार्ग नहीं है, सिवाय ज्ञात को छोड़ने के। जो भी हम जानते हैं, वह शात है और जो जीवन है, वह अनजान है, अननोन है; वह परिचित नहीं है। तो जो हम जानते हैं, उसके द्वारा उसको नहीं पहचाना जा सकता है, जो हम नहीं जानते हैं।

जो शात है, जो नोन है, उससे अज्ञात को, अननोन को जानने का कोई द्वार नहीं है; सिवाय इसके कि शात को छोड़ दिया जाये। और ज्ञात को छोड़ते ही अज्ञात के द्वार खुल जाते है?

पहले दिन, पहले सूत्र में मैंने यही कहा : छोड़े शास्त्र को, छोडे शब्द को, क्योंकि सब शब्द उधार हैं; बारोड हैं; बासे हैं; मरे हुए हैं। और सब शाख पराये हैं। कोई कृष्ण का है, कोई राम का, कोई बुद्ध का, कोई जीसस का, और कोई मुहम्मद का! जो उन्होंने कहा है, वह उनके लिए सत्य रहा होगा। निश्चित ही, जो उन्होंने कहा है, उसे उन्होंने जाना होगा। लेकिन, उनका जान किसी और दूसरे का शान नहीं बनता है, और नहीं बन सकता है। कृष्ण जो जानते हैं, जानते हो। हमारे पास कृष्ण का शब्द ही आता है, कृष्ण का सत्य नहीं।

मैंने सुना है, एक कवि समुद्र की यात्रा पर गया है। जब वह सुबह समुद्र तट पर पहुंचा, तो बहुत सुंदर सुबह थी; बहुत सुंदर प्रभात था। पक्षी गीत गाते थे वृक्षों पर। सूरज की किरणें नाचती थीं लहरों पर। लहरें उछलती थीं सागर की छाती पर। हवाएं ठंडी थीं और फूलों से सुवास आती थी। वह नाचने लगा उस सुन्दर प्रभात में और फिर उसे याद आया कि उसकी प्रेयसी तो एक अस्पताल में बीमार पड़ी है। काश, वह भी आज यहां होती। वह तो बिस्तर से बंधी है। उसके तो उठने की कोई संभावना नहीं है।

तो उस कवि को खयाल आया कि ‘क्यों न मैं ऐसा करूं कि समुद्र की इन ताजी हवाओं को, सूरज की इन नाचती हुई किरणों को, लहरों के इस संगीत को, फूलों की इस सुवास को अपनी प्रेयसी के लिए एक पेटी में बंद करके ले जाऊं। और जाकर उसे कहूं कि देख, कितनी सुंदर सुबह का एक टुकड़ा मैं तेरे लिए लाया हूं। ‘

वह गांव गया और एक पेटी खरीद लाया। बहुत सुन्दर पेटी थी। उस पेटी को खोलकर उसने उसमें समुद्र की ठंडी हवाएं भर लीं, सूरज की नाचती किरणें भर लीं, फूलों की सुगंध भर ली। उस पेटी में सुबह का एक टुकड़ा बंद करके, उसे ताला लगा दिया कि कहीं से वह सुबह बाहर न निकल जाये। और उस पेटी को अपने एक पत्र के साथ उसने अपनी प्रेयसी के पास भेज दिया कि सुबह का एक सुंदर टुकड़ा, सागर के किनारे का एक जिंदा टुकड़ा तेरे पास भेजता हूं। नाच उठेगी तू, आनंद से भर जायेगी। ऐसी सुबह मैंने कभी नहीं देखी।

उस प्रेयसी के पास पत्र भी पहुंच गया और पेटी भी पहुंच गयी। पेटी उसने खोली, लेकिन पेटी के भीतर तो कुछ भी नहीं था। न सूरज की किरणें थी, न सागर की ठंडी हवाएं थीं; न कोई फूलों की सुवास थी। वह पेटी ते। बिलकुल खाली थी। उसके भीतर तो कुछ भी नहीं था। पेटी पहुंचायी जा सकती है, लेकिन जिस सौंदर्य को सागर किनारे जाना है, उसे नहीं पहुंचाया जा सकता।

जो लोग सत्य के जीवन में सागर के तट पर पहुंच जाते हैं, वे वहां क्या जानते हैं-कहना मुश्किल है; क्योंकि सूरज का प्रकाश, जिस प्रकाश को वे जानते हैं, उसके सामने अंधकार है। जिस सुवास को वे जानते हैं, किसी फूल में वह सुवास नहीं है। वे जिस आनंद को जानते हैं, हमारे सुखों में उस आनंद की एक किरण नहीं है। वे जिस जीवन को जानते हैं, उस जीवन का हमें कुछ भी पता नहीं हैं। बस पेटियों में भर कर वे जो हैं-गीता में, कुरान में, बाइबिल में-वह हमारे पास आ जाता है। शब्द आ जाते हैं; लेकिन जो उन्होंने था, वह पीछे छूट जाता है। वह हमारे पास नहीं आता। फिर हम उन पेटियों को सिर पर ढोये हुए घूमते रहते। कोई गीता को लेकर घूमता है, कोई कुरान को, कोई बाइबिल को। और चिल्लाता रहता है कि सत्य मेरे पास सत्य मेरी किताब में है।

सत्य किसी भी किताब में न है, न हो सकता है। सत्य किसी शब्द में न है, न हो सकता है। सत्य तो वहां है, 'सब शब्द क्षीण हो जाते हैं, और गिर जाते हैं। जहां चित्त मौन हो जाता है, निर्विचार हो जाता है, वहां है सत्य।

न जहां कोई शाख जाता है, न कोई सिद्धांत। इसलिए जो सिद्धांत और शाखों की खूंटियों से बंधे हैं, वे कभी के सागर के तट पर नहीं जा सकेंगे। यह मैंने पहले सूत्र में कहा।

दूसरे सूत्र में मैंने कहा कि जो लोग भीड़ से बंधे हैं और भीड़ की आंखों में देखते रहते हैं-'कि लोग क्या हैं?' वे लोग असत्य हो जाते हैं, क्योंकि भीड़ असत्य है। भीड़ से ज्यादा असत्य इस पृथ्वी पर और कुछ नहीं है।

सत्य जब भी अवतरित होता है, तब व्यक्ति के प्राण पर अवतरित होता है। सत्य भीड़ के ऊपर अवतरित नहीं होता।

सत्य को पकड़ने के लिए व्यक्ति का प्राण ही वीणा बनता है। सत्य वहीं से झंकृत होता है। भीड़ के पास कोई 'नहीं है। भीड़ के पास उधार बातें हैं जो कि असत्य हो गयी हैं। भीड़ के पास किताबें हैं जो कि मर चुकी हैं। के पास महात्माओं, तीर्थंकरों और अवतारों के नाम हैं-जो सिर्फ नाम हैं। उनके पीछे कुछ भी नहीं बचा, राख हो गया है।

भीड़ के पास परंपराएं हैं; भीड़ के पास याददाश्तें हैं; भीड़ के पास हजार-हजार साल की आदतें हैं; लेकिन भीड़ पास वह चित्त नहीं, जो मुक्त होकर सत्य को जान लेता है। जब भी कोई उस चित्त को उपलब्ध करता है तो , व्यक्ति की तरह, उस चित्त को उपलब्ध करना पड़ता है।

इसलिए, जहां-जहां भीड़ है, जहां-जहां भीड़ का आग्रह है-हिन्दुओं की भीड़, मुसलमानों की भीड़, ईसाइयों भीड़, जैनियों की भीड़, बौद्धों की भीड़-वहां सब असत्य है। हिन्दू भी, मुसलमान भी; ईसाई भी, जैन- और कोई भी नाम हो- भीड़ का कोई भी संबंध सत्य से नहीं है।

लेकिन, हम भीड़ को देखकर ही जीते हैं। हम देखते हैं- 'भीड़ क्या कह रही है, भीड़ क्या मान रही है?'

जो आदमी भीड़ को देखकर जीता है, वह अपने बाहर ही भटकता रह जाता है; क्योंकि भीड़ बाहर है। जिस 'को भीतर जाना होता है, उसे भीड़ से आंखें हटा लेनी पड़ती हैं। और अपनी तरफ, जहां वह अकेला है तरफ, आंखें ले जानी पड़ती हैं। लेकिन हम सब? हम सब भीड़ से बंधे हैं; भीड़ की खूंटी से बंधे हैं।

मैंने सुना है, एक सम्राट था। उस सम्राट के दरबार में एक आदमी आया और उस आदमी ने आकर कहा कि "महाराज, आपने सारी पृथ्वी जीत ली, लेकिन एक चीज की कमी है आपके पास।"

उस सम्राट ने कहा, "कमी? कौन सी है कमी? जल्दी बताओ; क्योंकि मैं तो बेचैन हुआ जाता हूं। मैं तो सोचता था, सब मैंने जीत लिया। "

उस आदमी ने कहा, "आपके पास देवताओं के वस्त्र नहीं हैं। मैं देवताओं के वस्त्र आपके लिए ला सकता हूं।

सम्राट ने कहा, "देवताओं के वस्त्र तो न कभी देखे, न सुने! कैसे लाओगे?"

उस आदमी ने कहा, "लाना ऐसे तो बहुत मुश्किल है, क्योंकि देवता आजकल पहले की तरह सरल नहीं रहे। जब से हिंदुस्तान के सब राजनीतिज्ञ मरकर स्वर्गीय होने लगे हैं, तब से वहां बड़ी बेईमानी और करप्शन सब तरह की शुरू हो गयी है। हिंदुस्तान के राजनीतिज्ञ सब मर कर स्वर्गीय हो जाते हैं! नर्क तो उनमें कोई जाता ही नहीं। हालांकि कोई भी राजनीतिज्ञ स्वर्ग में नहीं जा सकता; क्योंकि राजनीतिज्ञ जिस दिन स्वर्ग में जाने लगेंगे, उस दिन स्वर्ग भले आदमियों के रहने योग्य जगह न रह जायेगी। लेकिन वैसे तो सभी स्वर्ग में हैं।

.. तो उसने कहा, "जब से वे सब पहुंचने लगे हैं वहां, बड़ी मुश्किल हो गयी है। बहुत रिश्वत चल पड़ी है वहां। लाने भी हों अगर दो-चार वस्त्र तो करोड़ों रुपये खर्च हो जायेंगे। "

सम्राट ने कहा, "करोड़ों रुपये!"

उस आदमी ने कहा, "दिल्ली में सिर्फ जाना हो, तो लाखों खर्च हो जाते हैं। वह तो स्वर्ग है, वहां करोड़ों रुपये खर्च होना स्वाभाविक है। चपरासी भी वहां करोड़ों से नीचे की बात नहीं करते। "

राजा ने कहा, " धोखा देने की कोशिश तो नहीं कर रहे हो?"

उस आदमी ने कहा, "सम्राट को धोखा देना मुश्किल है, क्योंकि उनसे बड़े धोखेबाज जमीन पर दूसरे नहीं हो सकते; उनको क्या धोखा दिया जा सकता है? डाकुओं को क्या लूटा जा सकता है? हत्यारों की क्या हत्या का जा सकती है? मैं मामूली आदमी, आपको क्या धोखा दूंगा? चाहें तो आप पहरा बैठा लें, मुझे भीतर बंद कर लें। मैं महल के भीतर ही रहूंगा, क्योंकि देवताओं के यहां जाने का रास्ता आंतरिक है। इसलिए बाहर की कोई यात्रा नहीं करनी है। लेकिन करोड़ों रुपये खर्च होंगे और छह महीने लग जायेंगे। "

राजा ने कहा "छः महीने! मैं तो सोचता था, तू दिन भर में ले आयेगा। " उसने कहा कि "दिन दो-दिन '। तो दिल्ली में फाइल नहीं सरकती, तो स्वर्ग में क्या इतना आसान है मामला? कोशिश मैं अपनी करूंगा कि जन्य;। ले आऊं।

राजा ने कहा, "ठीक है। "

दरबारियों ने कहा, "यह आदमी धोखेबाज मालूम पड़ता है। देवताओं के वस्त्र कभी सुने हैं आपने?"

"राजा ने कहा,"लेकिन धोखा देकर यह जायेगा कहां?"

नंगी तलवारों का पहरा लगा दिया है और उस आदमी को महल में बंद कर दिया है। वह रोज कभी करोड़ कभी दो करोड़ रुपये मांगने लगा। छह महीने में उसने अरबों रुपये मता लिए। राजा ने भी सोचा, "कोई फिक्र नहीं है। जायेगा कहां?"

ठीक छह महीने पूरे हुए। वह आदमी एक पेटी लेकर महल के बाहर आ गया। उसने सैनिकों से कहा, "मैं कपड़े ले आया हूं चलें सम्राट के पास।"

तब तो शक की कोई बात न रही। सारी राजधानी महल के द्वार पर इकट्ठी हो गयी। दूर-दूर से लोग देखने गये थे। दूर-दूर से राजे-महाराजे बुलाये गये थे, सेनापति बुलाये गये थे, बड़े लोग बुलाये गये थे, धनपति 'गये थे। दरबार ऐसा सजा था, जैसा कभी न सजा होगा। वह आदमी पेटी लेकर जब उपस्थित हुआ, तब की हिम्मत में हिम्मत आयी। अभी तक तो वह

डरा ही हुआ था कि अगर बेईमान न हुआ और पागल हुआ, भी हम क्या कर सकेंगे! उसने आकर कह दिया कि नहीं मिले, तो भी हम क्या कर लेंगे? लेकिन वह पेटी लेकर गया तो सम्राट को विश्वास हुआ।

उस आदमी ने आकर पेटी रखी और कहा कि, "महाराज, वस्त्र ले आया हूं। यहां आ जायें आप, पहने हुए वस्त्र छोड़ दें, और मैं आपको देवताओं के वस्त्र देता हूं उन्हें पहन लें।"

पगड़ी लेकर राजा की उसने अपनी पेटी के भीतर डाल दी और पेटी के भीतर अपना हाथ डालकर बाहर निकाला। हाथ बिलकुल ही खाली था। उसने कहा, "यह संभालिए देवताओं की पगड़ी। दिखायी तो पड़ती है आपको? क्योंकि देवताओं ने चलते वक्त कहा था कि ये कपड़े उन्हीं को दिखायी पड़ेंगे, जो अपने बाप से पैदा हों।

"पगड़ी तो थी नहीं, दिखायी कहां से पड़ती? लेकिन एकदम से दिखायी पड़ने लगी!

सम्राट ने कहा, 'क्यों नहीं दिखायी पड़ती, दिखायी पड़ती है! "मन में सोचा सम्राट ने, "लेकिन मेरा बाप धोखा दे गया है। पगड़ी दिखायी तो नहीं पड़ती है! लेकिन, यह भीतर की बात अब भीतर ही रखनी है।"

दरबारियों ने भी देखा, गर्दनें बहुत ऊपर उठायीं, आंखें तो उनकी भी साथ थीं, लेकिन पगड़ी दिखायी नहीं देती थी। लेकिन सबको दिखायी पड़ने लगी! कोई यह न समझ ले कि उसे पगडी दिखायी नहीं पड़ती है, इसलिए सब दरबारी एक-दूसरे के आगे आ-आकर कहने लगे, जोर-जोर से कहने लगे। कहीं धीरे से कहा और किसी को शक हो गया कि यह आदमी धीरे बोल रहा है, कहीं ऐसा तो नहीं है कि इसको पगड़ी दिखायी नहीं पड़ती है। इसलिए सब दरबारी आगे बढ़कर कहने लगे, "महाराज, ऐसी पगड़ी तो कभी देखी नहीं थी! "

सम्राट ने सोचा कि सब दरबारियों को दिखायी पड़ती है, लेकिन मुझे क्यों नहीं दिखायी पड़ती? "क्या मैं अपने....? फिर हरेक ने यही सोचा कि सबको दिखायी पड़ती है, लेकिन मुझे क्यों.. क्या मैं अपने बाप..?"

सम्राट ने पगडी पहन ली, कोट पहन लिया, जो नहीं था। कमीज पहन ली, जो नहीं थी। फिर धोती भी निकल गयी। फिर आखिरी वस्त्र निकलने की नौबत आ गयी। तब राजा घबड़ाया कि कहीं कुछ धोखा तो नहीं है? सम्राट डरने लगा।

तब उस आदमी ने कहा, "डरिये मत महाराज, नहीं तो लोगों को शक हो जायेगा। जल्दी से आखिरी वस्त्र निकाल दीजिये...! "

भीड़ की यात्रा बड़ी खतरनाक है। पहले कदम पर कोई रुक जाये तो रुक जाये, बाद में रुकना बहुत मुश्किल हो जाता है।

...... अब सम्राट ने भी सोचा "इतनी दूर चले ही आये, आधे नंगे हो ही गये, अब जो होगा, होगा। " सम्राट ने हिम्मत करके आखिरी कपड़ा भी निकाल दिया। लेकिन सारा दरबार कह रहा था, "महाराज धन्य हैं, अद्भुत वस्त्र हैं, दिव्य वस्त्र हैं। इसलिए सम्राट को हिम्मत भी थी कि कोई फिक्र नहीं, नंगापन तो सिर्फ मुझे ही पता चल रहा है। तो अपना नंगापन अपने को पता रहता ही है। उसमें तो कोई हर्जा भी नहीं है ज्यादा। लेकिन उस बेईमान आदमी ने, जो यह वस्त्र लाया था देवताओं के..।

और देवताओं से वस्त्र लाने वाले... और देवताओं की खबर लाने वाले. देवताओं तक पहुंचाने वाले लोग-सब बेईमान होते हैं।.. सब। इधर आदमी तक पहुंचना मुश्किल है, देवताओं तक पहुंचना आसान है। आदमी को समझना मुश्किल है, और स्वर्ग के नक्शे बनाये हुए बैठे हैं! बडौदा की ज्योगरफी का जिनको पता नहीं, वे स्वर्ग और नर्क के लिए बनाये बैठें हैं!

.. उस आदमी ने कहा, "महाराज, देवताओं ने चलते वक्त कहा था, पहली दफे पृथ्वी पर जा रहे हैं ये वस्त्र, इनकी शोभा-यात्रा नगर में निकलनी बहुत जरूरी है। रथ तैयार है। अब आप आकर रथ पर सवार हो जाइए। लाखों-लाखों जन भीड़ लगाये हुए हैं। उनकी आंखें तरस रही हैं इन वस्त्रों को देखने के लिए।"

राजा ने कहा, "क्या कहा?' अब तक तो महल के भीतर थे, जहां अपने ही लोग थे। अब, महल के बाहर, सड़कों पर भी जाना होगा?"

लेकिन, उस आदमी ने धीरे से कहा, "घबडाइए मत, जिस तरकीब से यहां सबको वस्त्र दिखायी पड़ रहे है, उसी तरकीब से वहां भी सबको दिखायी पड़ेंगे। आपके रथ के आगे यह डुगडुगी पीटी जायेगी सारे नगर में कि यह वस्त्र उसी को दिखायी पडेंगे, जो अपने बाप से पैदा हुआ है। आप घबडाइए मत। अब जो हो गया, हो गया। अब चलिये।"

राजा समझ तो गया कि वह नंगा है और किसी को वस्त्र दिखायी नहीं पड़ रहे हैं, लेकिन अब कोई भी अर्थ न था। जाकर बैठ गया वह सिंहासन पर, रथ पर। स्वर्ण-सिंहासन रथ पर लगा था। नंगा राजा, बैठा न। स्वर्ण-सिंहासन पर....।

स्वर्ण-सिंहासनों पर नंगे लोग ही बैठते हैं।

.... शोभा-यात्रा निकली। लाखों लोगों की भीड़ थी। और नगर के लाखों लोगों को एकदम से वस्त्र दिखायी पड़ने लगे थे.....!

वही लोग जो महल के भीतर थे, वही महल के बाहर भी हैं। वही आदमी, वही भीड़ वाला आदमी।

.. सब वस्त्रों की प्रशंसा करने लगे। कौन झंझट में पड़े। जब सारी भीड़ को दिखायी पड़ता हो तो एक व्यक्ति अपने को कैसे इंकार करे; कैसे कहे कि मुझे दिखायी नहीं पड़ता। इतना बल जुटाने के लिए बड़ी आत्मा चाहिए। इतना बल जुटाने के लिए बड़ा धार्मिक व्यक्ति चाहिए। इतना बल जुटाने के लिए परमात्मा की आवाज चाहिए। कौन इतना बल जुटाये? इतनी बड़ी भीड़! फिर मन में यह प्रश्न आता है कि जब इतने लोग कहते हैं, तो ठीक ही कहते होंगे। इतने लोग गलत क्यों कहेंगे? लेकिन, कोई भी यह नहीं सोचता कि ये इतने लोग भी इकट्ठे नहीं हैं, ये भी एक-एक आदमी हैं, अपने लिए- 'मेरे-ही-जैसा '। जैसा मैं कमजोर हूं वैसा ही यह भी कमजोर है। यह भी भीड़ से डर रहा है, मैं भी भीड़ से डरता हूं..।

जिससे हम डर रहे हैं, वह कहीं है ही नहीं। एक-एक आदमी का समूह खड़ा हुआ है, और सब भीड़ से डर रहे है?

.....लोग अपने बच्चों को घर ही छोड़ आये थे; लाये नहीं थे भीड़ में। क्योंकि बच्चे का क्या भरोसा, कोई बच्चा दे कि राजा नंगा है.....तो?

बच्चों का क्या विश्वास? बच्चों को बिगाड़ने में वक्त लग जाता है। स्कूल, कॉलेज, युनिवर्सिटी सब जुटे हुए फिर भी मुश्किल से बिगाड़ पाते हैं। एकदम आसान नहीं बिगाड़ देना।

..... छोटे-छोटे बच्चों को अपने साथ कोई नहीं लाया था। लेकिन कुछ बच्चे जिद्दी होते हैं। और कुछ बच्चे ऐसे हैं, जिनकी माताओं की वजह से पिताओं को उनसे डरना पडता है। उनको लाना पड़ा। वे कंधे पर सवार होकर गये। एक बच्चे ने जोर से कहा, " अरे! राजा नंगा है! "

उसके बाप ने कहा, "चुप नादान! अभी तुझे अनुभव नहीं है, इसलिए तुझे नंगा दिखायी पड़ता है। ये बातें गहरे अनुभव की हैं। अनुभवियों को दिखायी पड़ती हैं। जब उम्र तेरी बढ़ेगी, तो तुझको भी दिखायी पड़ने लगेंगा। यह उम्र से आता है ज्ञान। उम्र के बिना दुनिया में कोई ज्ञान कभी नहीं आता...। "

उम्र के भरोसे मत बैठे रहना। उम्र से बेईमानी आती है, चालाकी आती है, कनिगनेस आती है; उम्र से ज्ञान नहीं होता। लेकिन, सभी चालाक लोग यही कहते हैं कि उम्र से ज्ञान होता है।

.. उस बच्चे ने पूछा, 'आपको दिखायी पड़ रहे हैं वस्त्र?"

"हां, मुझे दिखायी पड़ रहे है", उसके पिता ने कहा। "बिलकुल दिखायी पड़ रहे हैं। हम अपने ही बाप से हुए हैं। ऐसा कैसे हो सकता है कि हमको दिखायी न पड़े। और, तुम अभी बच्चे हो -नासमझ हो, भोले अभी तुम्हें समझ कहां है! "

जिस बच्चे को सत्य दिखायी पड़ा था, उसे भीड़ के भय का कोई पता नहीं था; इसीलिए दिखायी पड़ा था। भी बड़ा होगा, तो भीड़ से भयभीत हो जायेगा। तब उसे भी वस्त्र दिखायी पड़ने लग जायेंगे। यह भीड़ डराये है चारों तरफ से एक-एक आदमी को।

इसलिए जीसस ने कहा है:

.. एक बाजार में वे खड़े थे। कुछ लोग उनसे पूछने लगे कि तुम्हारे स्वर्ग के राज्य में, तुम्हारे परमात्मा के दर्शन (कौन उपलब्ध हो सकता है? तो जीसस ने चारों तरफ नजर दौड़ायी, और एक छोटे-से बच्चे को उठाकर ऊपर लिया, और कहा कि 'जो इस बच्चे की तरह है। '

क्या मतलब रहा होगा...? क्या कद छोटा होने से ईश्वर के राज्य में चले जाइयेगा..,? कि उम्र कम होगी तो के राज्य में चले जाइएगा...! या बच्चे बन जायेंगे, तब ईश्वर के राज्य में चले जायेंगे...?

जो बच्चों की तरह है, इसका मतलब है, जो भीड़ से भयभीत नहीं हैं। जो शुद्ध हैं और साफ हैं। जो दिखता वही कहते हैं कि दिखता है। जो नहीं दिखता, कहते हैं कि नहीं दिखता। जो झूठ को मान लेने को राजी नहीं। जो बच्चों कि तरह हो गये हैं।

बच्चे नहीं हो गये हैं, बच्चों की तरह हो गये हैं।

बच्चों की तरह होने का क्या मतलब है...?

बच्चे अकेले हैं, बच्चे इंडिविजुअल हैं। बच्चों को भीड़ से कोई मतलब नहीं है। अभी भीड़ की उन्हें फिक्र नहीं है। अभी भीड़ का उन्हें पता भी नहीं है कि भीड़ भी है।

भीड़ बड़ी अदभुत चीज है। एक अनजानी ताकत जकड़े हुए है आदमी को चारों तरफ से।

इसलिए दूसरा सूत्र मैंने कहा, अगर तुम्हें जीवन के सत्य की तरफ जाना हो, तो भीड़ की खूंटी से मुक्त हो जाना। इसका यह मतलब नहीं कि आप भीड़ से भाग जायें। भागेंगे कहां, भीड़

सब जगह है। कहां भागेंगे? जहां जायेंगे, वहीं भीड़ है। और अभी तो थोड़ी बहुत पहाड़ियां बच भी गयी हैं। जहां भागकर जा भी सकते हैं, लेकिन कुछ ही दिनों में पहाड़ियां भी नहीं बचेंगी।

वैज्ञानिक कहते हैं कि सौ वर्षों में अगर भारत जैसे देश बच्चों को पैदा करने के अपने महान कार्य में संलग्न रहे, तो दुनिया में कुहनी हिलाने की जगह भी नहीं रह जाने वाली है। तब हमें सभा करने की जरूरत नहीं रहेगी। कहीं भी खड़े हो जाइये और सभा हो जायेगी।

कहां भागियेगा भीड़ से....? जंगलों में, पहाडों में कोई खटपट नहीं है.?? भीड़ वहां भी बहुत सूक्ष्म रूप में पीछा करती है।

एक आदमी साधु हो जाता है, भाग जाता है जंगल में। जंगल में बैठा है, उससे पूछिये, ' आप कौन हैं?' वत्र कहता है, 'मैं हिंदू हूं! '

भीड़ पीछा कर रही है। अभी भी तुम अपने को हिंदू कहते हो! अभी तुम आदमी नहीं हुए?

आदमी होना बहुत मुश्किल है, हिंदू होना बहुत आसान है।

एक आदमी साधु हो जाता है, वह कहता है, 'मैं जैन हूं! 'अब तुमने समाज को छोड़ दिया है, तो अब तुम जैन कैसे हो? यह जैन-वैन होना तो समाज ने सिखाया था।

साधु भी-हिंदू, जैन और मुसलमान हैं, तो फिर असाधुओं का क्या हिसाब रखना। गांधी जैसे अच्छे आदमी भी इस भ्रम से मुक्त नहीं हो सके कि मैं हिंदू हूं। चिल्लाये चले जाते हैं कि मैं हिंदू हूं। तो साधारण लोगों की क्या हैसियत है। गांधी जैसा अच्छा आदमी भी हिम्मत नहीं जुटा पाता कि कहे कि मैं आदमी हूं बस; और कोई विशेषण नहीं लगाऊंगा। अगर अकेले गांधी ने भी हिम्मत जुटा ली होती, और यह कहा होता कि मैं सिर्फ आदमी हूं तो जिन्ना की जान निकल गयी होती। लेकिन गांधी के हिंदू होने ने जिन्ना की जान न निकलने दी।

हिंदुस्तान का बंटवारा हुआ गांधी के हिंदू होने की वजह से; अन्यथा हिंदुस्तान कभी नहीं बंटता। लेकिन खयाल में नहीं आता हमें यह, कि इतनी छोटी-सी बात कितने बड़े परिणाम ला सकती है। गांधी का: हिंदू होना संदिग्ध करता रहा मुसलमान के मन को। गांधी का आश्रम, गांधी के हिंदू ढंग, गांधी की प्रार्थना, पूजा, पत्र-सब यह वहम पैदा करते रहे कि वे हिंदू महात्मा हैं।

और हिंदू महात्मा से, हिंदू भीड़ से सावधान होना जरूरी है मुसलमान को। दूसरी भीड़ सदा सावधान होती है; क्योंकि एक भीड़ से दूसरी भीड़ को डर है; एक दुकान को दूसरी दुकान से डर है।

जिन्ना का मुसलमान होना खत्म हो जाता, पर गांधी का हिंदू होना ही खत्म नहीं हो सका। और जिन्ना से हम आशा नहीं करते हैं कि उसका खत्म हो, वह आदमी साधारण है; गांधी से हम आशा कर सकते हैं। लेकिन गाढ़ा। का ही खत्म नहीं हुआ, तो जिन्ना का कैसे खत्म होगा!

भीड़ पीछा करती है; भीड़ बहुत सचेत, बहुत सूक्ष्म रास्ते से पीछा करती है.?.?

बर्ट्रेड़ रसेल ने कहीं कहा है कि मैंने बहुत पढ़-लिखकर, बहुत सोच समझकर पाया कि बुद्ध से ज्यादा अदभुत आदमी दूसरा नहीं हुआ पृथ्वी पर। लेकिन जब भी मैं यह सोचता हूं कि बुद्ध सबसे महान हैं, तभी मेरे भीतर एक होने लगती है और कोई कहता है कि नहीं, बुद्ध क्राइस्ट से ज्यादा महान नहीं हो सकते!

..... भीड़ पीछा करती है। वह भीतर बैठी है। वह बचपन से जो सिखा देती है, जो कंडीशनिंग कर देती है, जैसा को संस्कारित करती है, फिर वह जीवन भर पीछा करता है; मरते दम तक पीछा करता है।

एक सज्जन हैं। बहुत विचारशील हैं। उनका नाम नहीं लूंगा; क्योंकि किसी का नाम लेना इस युग में ऐसा खतरनाक हैं, जिसका कोई हिसाब नहीं। किसी का नाम नहीं लिया जा सकता। अंधेरे में बात करनी पड़ती है।

वे बड़े विचारक हैं। वे मुझसे कहते थे, "मेरा सब छूट गया; जप, तप, पूजा-पाठ-मैंने सब छोड़ दिया है। मैं सबसे मुक्त हो गया हूं। "

मैंने कहा, "इतना आसान नहीं है मामला। यह मुक्त हो पाना इतना आसान नहीं है। क्योंकि जब आप कहते है मैं मुक्त हो गया हूं तभी मैं आपकी आंख में झांकता हूं और मुझे लगता है कि आप मुक्त नहीं हुए। अगर हो गये होते तो- 'मुक्त हो गया हूं यह खयाल भी छूट गया होता। "

उन्होंने कहा, "नहीं, नहीं, मैं मुक्त हो गया हूं। " मैंने कहा, "जितने जोर से आप कहेंगे मुझे, मेरा शक उतना बढ़ता जायेगा। वक्त आने दीजिये, पता चल जायेगा। "

फिर जब उनको हार्टअटैक हुआ तो मैं उन्हें देखने गया। आंख बंद किये वे कुछ बेहोशसे पडे थे और -राम, राम-राम का जाप चल रहा था। मैंने उनको हिलाया और कहा, “ये क्या कर रहे है?”

उन्होंने कहा, “मैं बड़ी हैरानी में पड़ गया हूं। जिस क्षण हार्ट अटैक हुआ, ऐसा लगा कि मर जाऊंगा और जिस -पाठ को सदा के लिए छोड़ दिया था, वह एक दम से चलना शुरू हो गया! अब मैं रोकना भी चाहता हूं तो ‘ रुकता है; भीतर चले ही जा रहा है जोर से-राम-राम, राम-राम। मैं सोचता था सब छूट गया है। लेकिन, ‘आप ठीक कहते थे, ‘छोड़ना बहुत मुश्किल है। ‘

बहुत गहरे में जड़ें रहती हैं भीड़ की। वह जो सिखा देती है, वह भीतर बैठा रहता है। वह राम-राम का जाप गहरे से गहरे चला गया था।

अब गांधी जी कितना कहते थे- ‘अल्लाह ईश्वर तेरे नाम। ‘ लेकिन जब गोली लगी, तब अल्लाह का नाम नहीं आया। तब ‘हे राम’! ही याद आया, अल्लाह का नाम याद नहीं आया! गोली लगी तो याद ‘- ‘हे राम! ‘

वह हिंदू भीतर बैठा है। वह राम आत्मा में भीतर गहरे से गहरा घुस गया है। वह जब गोली लगी, सब भूल है ‘ अल्लाह ईश्वर तेरे नाम। ‘ निकला, ‘हे राम!’‘हे अल्लाह!’ निकलता, तो शायद गांधी.. लेकिन बड़ा मुश्किल था नहीं हो सका। वह असंभव था, वह हो नहीं सका।

गहरे में भीड़ घुस जाती है आदमी के। भीड़ से बचने का मतलब यह नहीं है कि जंगल चले जाना। भीड़ से का मतलब है- अपने भीतर खोजना। और जहां-जहां भीड़ के चिन्ह मिलें, उन्हें अलग करते जाना और कोशिश जारी रखना कि व्यक्ति का अविर्भाव हो जाये। भीड़ से मुक्त होकर व्यक्ति ऊपर उठ जाये; भीड़ छूट जाये, भीतर, अंतस में, चित्त में।

जो आदमी अपने चित्त की वृत्तियों को दबाता है, वह जिन वृत्तियों को दबाता है, उन्हीं से बंध जाता है। जिससे बंधना हो, उसी से लड़ना शुरू कर देना। दोस्त से उतना गहरा बंधन नहीं होता है, जितना दुश्मन से होता है, दोस्त की तो कभी-कभी याद आती है; सच तो यह है, याद कभी आती ही नहीं। जब मिलता है, तभी कहते हैं कि बड़ी याद आती है। लेकिन, दुश्मन की चौबीस घंटे याद बनी रहती है। रात सो जाओ, तब भी वह साथ सोता है। सुबह उठो, तो उठने के साथ उठता है। जितनी गहरी दुश्मनी हो, उतना गहरा साथ हो जाता है।

इसलिए दोस्त कोई भी चुन लेना, दुश्मन थोड़ा सोच-विचार से चुनना चाहिए। क्योंकि उसके चौबीस घंटे साथ रहना पडेगा। दोस्त कोई भी चल जाता है; ऐरा-गैरा-क, ख, ग-कोई भी चल जाता है; लेकिन, दुश्मन? दुश्मन के साथ हमेशा रहना पड़ता है।

और तीसरे सूत्र में मैंने कहा कि दमन भूल कर भी मत करना। क्योंकि दमन अच्छी चीजों का तो कोई करता नहीं है, दमन करता है बुरी चीजों का। और जिनका दमन करता है, जिनसे लड़ता है, उन्हीं के साथ उसका गठबंधन हो जाता है, उन्हीं के साथ फेरा पड़ जाता है। जिस चीज को हम दबाते हैं, उसी से जकड़ जाते हैं।

मैंने सुना है, एक होटल में एक रात के लिए एक आदमी ठहरने के लिए आया। लेकिन होटल के मैनेजर नें उसे कहा, "यहां जगह नहीं है, आप कहीं और चले जायें। एक ही कमरा खाली है और वह हम देना नहीं चाहते। ऊपर का कमरा खाली है और नीचे के कमरे में एक सज्जन ठहरे हुए हैं। अगर जरा भी खड़बड़ हो जाये, आवाज हो जाये, या कोई जोर से चल दे तो झगड़ा हो जाता है। पहले भी ऐसा हो चुका है। तो जब से पिछले मेहमान ने कमरा खाली किया है, हमने तय किया है, कि अब ऊपर का कमरा खाली ही रखेंगे, जब तक कि नीचे के सजा विदा नहीं हो जाते...। "

कुछ सज्जन ऐसे होते हैं, जिनके आने की राह देखनी पड़ती है और कुछ ऐसे होते हैं, जिनके जाने की भी रा;! देखनी होती है। और दूसरी तरह के ही सज्जन ज्यादा होते हैं; पहली तरह के सज्जन तो बहुत कम ही होते हैं, जिनके आने की राह देखनी पड़ती है।

.. उस मैनेजर ने कहा, " क्षमा करिये, हम उनके जाने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जब वे चले जायें, तब 'राग आइए। "

उस आदमी ने कहा, " आप हैरान न हों, घबडाएं न, मैं सिर्फ दो-चार घंटे रात सोऊंगा। दिन भर बाजार में काम करूंगा, रात दो बजे लौटूंगा, और सो जाऊंगा। सुबह छः बजे उठकर मुझे गाड़ी पकड़नी है। नींद में उन सज्जन से कोई झगड़ा होगा, इसकी आशा नहीं है। नींद में चलने की मेरी आदत भी नहीं है। कोई गड़बड़ नहीं होगी, मैं आराम से सो जाऊंगा, आप फिक्र न करें।"

मैनेजर मान गया। वह आदमी दो बजे रात लौटा, थका-मादा-दिन भर के काम के बाद। बिस्तर पर बैठकर उसने जूता खोलकर नीचे पटका। तब उसे खयाल आया, 'कहीं नीचे के मेहमान की जूते की आवाज से नींद न खुल जाये?' दूसरा जूता धीरे से निकालकर रखकर वह सो गया। घंटे भर बाद नीचे के सज्जन ने दस्तक दी; "महाशय, दरवाजा खोलिये! "वह बहुत हैरान हुआ कि घंटे भर तो मेरी नींद भी हो चुकी, अब क्या गलती हो गयी होगी?' दरवाजा उसने खोला डरते हुये।

उस सज्जन ने पूछा कि "दूसरा जूता कहां है? मुझे बहुत मुश्किल में डाल दिया है। जब पहला जूता गिरा, मैं समझा कि ऊपर के महाशय आ गये हैं। फिर दूसरा जूता गिरा ही नहीं! तब से मैं प्रतीक्षा कर रहा हूं कि जूता अब गिरा, अब गिरा। फिर मैने अपने मन को समझाया कि

मुझे किसी के जूते से क्या लेना-देना? ओ, कुछ भी हो, मुझे क्या मतलब? लेकिन, जितना मैंने हटाने की कोशिश की, उतना ही दूसरा जूता मेरी छ' में घूमने लगा। आंख बंद करता हूं तो जूता दिखाई पडता है, आंख खोलता हूं तो जूता दिखाई पड़ता है!

...... बेचैनी हो गयी है। नींद बड़ी मुश्किल हो गयी है। जूता भीतर धक्के देने लगा है। बहुत समझाया मन को कि भी कैसा पागल है! किसी के जूते से अपने को क्या मतलब है; चाहे एक जूता पहनकर सोया हो, चाहे एक न पहनकर सोया हो। लेकिन, जितना मैंने मन को समझाया, दबाया, लड़ा-उतना ही वह जूता बड़ा होता , और तेजी से मन में घूमने लगा...!"

अपनी-अपनी खोपड़ी की तलाश अगर आदमी करे, तो पायेगा कि दूसरे के जूते वहां घूम रहे हैं, जिनसे कुछ -देना नहीं है।

....उन सज्जन ने कहा, "क्षमा कीजिये! इसलिए मैं पूछने आया हूं ताकि पता चल जाये तो मैं सो जाऊं शांति और झगड़ा बंद हो जाये। "

जो उस आदमी के साथ हुआ, वही सबके साथ होता है।

सप्रेसिव माइंड, दमन करने वाला चित्त हमेशा व्यर्थ की बातों में उलझ जाता है।

सेक्स को दबाओ-और चौबीस घंटे सेक्स का जूता सिर पर घूमने लगेगा। क्रोध को दबाओं-और चौबीस क्रोध प्राणों में घुसकर चक्कर काटने लगेगा। और एक तरफ से दबाओ, तो दूसरी तरफ से निकलने की चेष्टा हो जायेगी, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति में ऊर्जा है, एनर्जी है। आप दबाओगे एनर्जी को तो वह कहीं से निकलेगी? झरने को आप इधर से रोक दो, तो वह दूसरी तरफ से फूट कर बहने लगेगा। उधर से दबाओ, तो तीसरी तरफ बहने लगेगा।

एक आदमी एक दफ्तर में नौकरी करता था। एक दिन उसके मालिक ने उसे कुछ बेहूदी बातें कह दीं...।

और मालिक तो बेहूदी बातें कहते हैं; नहीं तो मालिक होने का मजा ही खतम हो जाये। मजा क्या है मालिक में...? किसी से बेहूदी बातें कह सकते हो, यही मजा है। और नौकर यह भी नहीं कह सकता कि आप बेहूदी बात कर रहे हैं। और फिर मालिक बेहूदी बातें कहे या न कहे, नौकर को मालिक की सब बातें बेहूदी मालूम पड़ती। नौकर होना भी बेहूदगी है; क्योंकि मालिक जो भी कहे,नौकर को बेहूदगी ही मालूम पड़ती है। मालिक जब से बोलता है, क्रोध की बातें कहता है, तो भी नौकर को खड़े होकर मुस्कुराना पड़ता है। भीतर आग लगी होती कि गर्दन दबा दें...।

ऐसा कौन नौकर होगा, जिसको मालिक की गर्दन दबाने का खयाल न आता हो? आता है, जरूर आता है। भी चाहिए, नहीं तो दुनिया बदलेगी भी नहीं!

.. मगर ऊपर से ओठों पर मुस्कुराहट फैला लेगा, धन्यवाद देने लगेगा, कहेगा- "बड़ी अच्छी बातें कर रहे। बड़े वेद वचन बोल रहे हैं। बड़ी वाणी आपकी मधुर है। उपनिषद के ऋषि भी क्या बोलते होंगे, ऐसी बातें! 'भाग मेरे कि आपके अमृत-वचन मेरे ऊपर गिरे! "

भीतर क्रोध की आग जल रही है। दबा लेना अपने क्रोध को। लेकिन क्रोध को दबाकर कितनी देर चल सकते हैं। साइकिल चलायेगा तो पैडल जोर से मारने लगेगा। कार ड्राइव करेगा तो' एकदम से स्पीड छोड़ देगा। वह जो क्रोध दबाया है, वह सब तरफ से निकलने की कोशिश करेगा।

अमेरिका के मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि अगर आदमी को क्रोध की कोई समझ पैदा हो सके, तो अमेरिका एक्सिडेंट पचास प्रतिशत कम हो जायेंगे। वह जो एक्सिडेंट हो रहे हैं, वे सड़क की वजह से कम हो रहे हैं, दिमाग की वजह से ज्यादा हो रहे हैं।

आपको पता है, जब आप क्रोध में साइकिल चलाते हैं, तो किस तरह से चलाते हैं? एकदम से जैसे आपको पर लग जाते हैं! फिर कोई नहीं दिखता सामने। ऐसा मालूम होता है-रास्ता खाली है, एकदम। और सामने कोई आ जाये तो ऐसा मन होता है कि टकरा दूं जोर से; क्योंकि भीतर टकराहट चल रही होती है।

क्रोध से भरा हुआ आदमी तेजी से साइकिल चलाता हुआ घर पहुंचेगा। रास्ते में दो-चार बार बचेगा टकराने से। क्रोध और भारी हो जायेगा। और जाकर घर वह प्रतीक्षा करेगा कि कोई मौका मिल जाये और पत्नी की गर्दन दबा दे...।

पत्नी बडी सरल चीज है। वह है ही इसलिए कि आप घर आइए और उसकी गर्दन दबाइए। उसका मतलब क्या है और? उसका उपभोग क्या है और? उसका असली उपयोग यही है कि जिंदगी भर जो व्यथा आपके ऊपर गुजरे, वह जाकर पत्नी पर रिलीज कीजिये।

.. घर पहुंचते ही सब गड़बड़ दिखायी पड़ने लगेगी। पली, जिसको कल रात ही आपने कहा था कि तू बढ़ी सुंदर है, एकदम से मालूम पड़ेगी कि यह सूर्पणखा कहां से आ रही है? सब प्रेम खतम हो जायेगा। फिल्म की अभिनेत्रियां याद आयेंगी कि सौंदर्य इसको कहते हैं, और यह औरत...?

.. रोटी जली हुई मालूम पड़ेगी। सब्जी में नमक नहीं मालूम पड़ेगा। सब अस्त-व्यस्त मालूम पड़ेगा। घर अस्त-व्यस्त घूमता हुआ मालूम पडेगा। पिल पड़ेंगे उस पर। कल भी रोटी ऐसी ही थी; क्योंकि कल भी पली वही थी। कल भी पत्नी वही थी, जो आज है; लेकिन आज सब बदला हुआ मालूम पड़ेगा। वह जो भीतर दबाया दे, वह निकलने के लिए मार्ग खोज रहा है।

और, ध्यान रहे! जैसे पानी ऊपर की तरफ नहीं चढ़ता, ऐसे क्रोध भी ऊपर की तरफ नहीं चढ़ता। पानी भी नीचे की तरफ उतरता है, क्रोध भी नीचे की तरफ उतरता है। कमजोर की तरफ उतरता है, ताकतवर की तरफ नहीं उतरता। मालिक की तरफ नहीं चढ़ सकता है क्रोध। चढ़ाना हो तो बड़ा पंप लगाना जरूरी है। कम्युनिज्म वगैरह के पम्प लगाओ, तब चढ़ सकता है मालिक की तरफ; नहीं तो नहीं।

पत्नियों की तरफ एकदम उतर जाता है और पत्नी कुछ भी नहीं कर सकती, क्योंकि पति परमात्मा है। ये पति यह भी समझा रहे हैं पत्नियों को कि हम परमात्मा है।

बड़े मजे की बातें दुनिया में चल रही हैं! कोई स्त्री यह नहीं कह रही है कि महाशय, आप और परमात्मा! आप ही परमात्मा हैं तो परमात्मा पर भी शक पैदा हो रहा है। और आप भी परमात्मा हैं! आपकी इज्जत नहीं बढ़ती है परमात्मा होने से, परमात्मा की इज्जत घटती है आपके होने से। कृपा करके, परमात्मा को बाइज्जत जीने दो, ला।'र परमात्मा मत बनो; लेकिन कोई स्त्री नहीं कहेगी!

स्त्री के पास व्यर्थ की बकवास करने के लिए बहुत ताकत है, लेकिन बुद्धिमत्ता की एक बात स्त्री को नहीं करनी स्त्री, पति-परमात्मा पर क्रोध नहीं करेगी। उसको भी राह देखनी पड़ेगी। आग जो लगी है उसके भीतर, वह देखेगी। उसे बच्चे का रास्ता देखना पड़ेगा। कि आओ बेटा, आज तुम्हारा सुधार किया जाये। बेटे बेचारे को कुछ पता भी नहीं है। वह अपना नाचता हुआ, अपना बस्ता लिए हुए स्कूल से चला आ रहा हैं। उसको पता ही नहीं है कि क्या होने जा रहा है। उधर मां तैयार बैठी है। प्रतीक्षा कर रही है, सुधार करने की...।

जितने लोग सुधार करने की प्रतीक्षा करते हैं- ध्यान रखना, उनके भीतर कोई क्रोध है, जिसकी वजह से उनके भीतर सुधार की आयोजना चलती है। जिनके अपने बेटे नहीं होते हैं, वे अनाथालय खोल लेते हैं; जिनका घर नहीं होता है, वे आश्रम बना लेते हैं; लेकिन सुधार करते हैं! जिनको कोई नहीं मिलता, वे कोई भी तरकीब निकाल कर समाज-सुधार करने में लग जाते हैं।

भीतर क्रोध है, भीतर आग है; किसी को तोड़ने, मरोड़ने, बदलने की इच्छा है।

......यह बच्चा आते ही थक जायेगा। कल भी वह ऐसे ही आया था नाचता हुआ, लेकिन आज उसका नाच, उपद्रव मालूम पड़ेगा...।

हमें वही दिखाई पड़ता है, जो हमारे भीतर है। हमारा सब देखना प्रोजेक्शन है।

... आज उसके कपड़े गंदे मालूम पड़ेंगे। वह रोज ऐसे ही आता है। बच्चे कपडे गंदे नहीं करेंगे तो क्या बूढ़े.....गंदे करेंगे? बच्चे तो कपडे गंदे करेंगे ही। क्योंकि, बच्चों को कपड़ों का पता भी नहीं हैं। कपडों का पता रखने के लिए भी आदमी को बहुत चालाक होने की जरूरत है। बच्चों को कहां होश?

.....कपड़े फट गये हैं?.. किताब फट गयी है?. स्लेट फूट गयी है?. इसलिए, आज बच्चे का सुधार किया है। लेकिन मां को पता भी नहीं चलेगा कि वह बच्चे की शक्ल में पति को चांटे मार रही है; कि ये चांटे पति पड़ रहे हैं।

और बच्चे भली-भांति जानते हैं कि उनकी पिटायी कब होती है! जब मां-बाप का आपस में झगड़ा चलता तब। जब मां-बाप लड़ते हैं, तब बच्चे पिटते हैं। इसलिए, जिनके बच्चे नहीं होते हैं, उनके घर में बड़ी मुश्किल जाती है; क्योंकि पिटने के लिए कोई कामन मेन नहीं होता; कि किसको पीटो! अगर ऐसा न हो तो प्लेटे टूट हैं, रेडियो गिर जाता है; दूसरे उपाय खोजने पड़ते हैं। आपको मालूम होगा, प्लेट कब टूटती है? और पत्नियों भी मालूम रहता है कि अब एकदम हाथ से प्लेटे छूटने लगती हैं।

.. लेकिन, बच्चा पिटेगा। बच्चा क्या कर सकता है? वह मां के प्रति क्रोध कैसे करे? अगर मां के प्रति क्रोध है तो जरा प्रतीक्षा करनी पडेगी। पन्द्रह-बीस साल बहुत लंबी प्रतीक्षा है। जब एक औरत और आ जाये। ताकत देने को; क्योंकि किसी भी औरत से लड़ना हो तो एक औरत का साथ जरूरी है। नहीं तो हार निश्चित है।

औरत से औरत ही लड़ सकती है, आदमी नहीं लड़ सकता।

राह देखनी पड़ेगी। बहुत लंबा वक्त है। वक्त देखना पड़ेगा कि कब मां बूढ़ी हो जाये; क्योंकि तब पांसा बदल जायेगा। अभी मां ताकतवर है, बच्चा कमजोर है। जब बच्चा ताकतवर होगा, मां कमजोर हो जायेगी, तब...। वह जो बूढ़े मां-बाप को बच्चे सताते है; और जब तक मां-बाप बच्चों को सताते रहेंगे, तब तक बूढ़े मां-बापों

को सावधान रहना चाहिए, कि उनके बच्चे उनको सतायेंगे।

......यह तो बहुत लंबी बात है। इतनी देर तक प्रतीक्षा नहीं की जा सकती। क्रोध इतनी देर रुकने के लिए राजी नहीं हो सकता। तो बच्चा क्या करेगा?.. जायेगा, अपनी गुड़िया की टांग तोड़ देगा! किताब फाड़ देगा!.. कुछ करेगा। जो भी वह कर सकता है, वह करेगा!

दबाया हुआ क्रोध किसी भी रास्ते ले जायेगा; तकलीफों में डालेगा; मुश्किलों में डालेगा। दबाया हुआ अहंकार नये-नये रास्ते पर ले जायेगा। दबाया हुआ लोभ नये-नये रास्ते खोजेगा।

मैं एक संन्यासी के पास था। उनसे मेरी बात होती थी। वे संन्यासी मुझसे बार-बार कहते..।

और संन्यासी बेचारे के पास और कुछ कहने को तो होता नहीं..। धनपति के पास जाइए, वह अपने धन का हिसाब बताता है : कि इतने करोड़ थे, इतने करोड हो गये; मकान छः मंजिला था सात मंजिल हो गया। पंडितों के पास जाइए तो वे अपना बताते हैं : कि अभी एम. ए. भी हो गये, पी. एच. डी. भी हो गये, अब डी. लिट भी हो गये; अब यह हो गये, वह हो गये! पांच किताबें छपी थीं, अब पंद्रह छप गयीं! वह अपना बतायेंगे। साधु संन्यासी क्या बतायें? वह भी अपना हिसाब रखता है, त्याग का!

......वे मुझसे बार-बार कहते, "मैंने लाखों रुपयों पर लात मार दी। " सत्य ही कहते होंगे।

चलते वक्त मैंने पूछा- "महाराज, यह लात मारी कब?" कहने लगे, "कोई बीस-पच्चीस साल हो गये। " मैंने कहा "लात ठीक से लग नहीं पायी, नहीं तो पच्चीस साल तक याद रखने की क्या जरूरत है? पच्चीस साल बहुत लंबा वक्त है। अब लात मार ही दी तो खत्म करो बात। पच्चीस साल याद रखने की क्या जरूरत है।

"लेकिन वे अखबार की कटिंग रखे हुए थे अपनी फाइल में, जिसमें छपी थी पच्चीस साल पहले यह खबर। कागज पुराने पड़ गये थे, पीले पड़ गये थे, लेकिन मन को बड़ी राहत देते होंगे। दिखाते-दिखाते गंदे हो गये ने। अक्षर भी समझ में नहीं आते थे। लेकिन उनको बड़ी तृप्ति मिलती होगी।

दस-बीस साल पहले उन्होंने लाखों रुपये पर लात मारी। मैंने उनसे कहा, "लात ठीक से लग जाती तो रुपये भूल जाते। लात ठीक से लगी नहीं। लात लौटकर वापस आ गयी....। "

पहले अकड़ रही होगी कि मेरे पास लाखों रुपये हैं। अहंकार रहा होगा। सड़क पर चलते होंगे तो भोजन को कोई जरूरत न रही होगी। बिना भोजन के भी चले जाते होंगे। ताकत गयी नहीं, रही होगी। भीतर ख्याल रहा होगा कि लाखों रुपये मेरे पास हैं। फिर रुपयों को छोड़

दिया, त्याग कर दिया। जबसे त्याग किया, तबसे अकड़ दूसरी आ गयी : कि मैंने रुपयों को लात मार दी! मैं कोई साधारण आदमी हूं?

और पहली अकड़ से दूसरी अकड़ ज्यादा खतरनाक है। पहले अहंकार से दूसरा अहंकार ज्यादा सूक्ष्म है।

..... दबाया हुआ अहंकार वापस लौट आया। अब वह और बारीक होकर आया है, कि जिसकी पहचान भी न हो सके।

जो भी आदमी चित्त के साथ दमन करता है, वह सूक्ष्म से सूक्ष्म उलझनों में उलझता चला जाता है; यह मैंने तीसरे सूत्र में कहा।

दमन से सावधान होना। दमन करने वाला आदमी रुग्ण हो जाता है, अस्वस्थ हो जाता है, बीमार हो जाता ओ'। और दमन का अन्तिम परिणाम विक्षिप्तता है, मैडनेस है।

तीन सूत्रों पर मैंने आपसे कुछ बातें कहीं। अब चौथे और अंतिम सूत्र के संबंध में आपसे थोड़ी-सी बात कहना हूं।

चौथा सूत्र, छोटा-सा सूत्र है।

सूत्र छोटा है, लेकिन बड़ी विस्फोटक शक्ति है उसमें। जैसे एक छोटे से अणु में इतनी ताकत रहती है कि सारी पृथ्वी को वह नष्ट कर सकता है, वैसा ही, इस छोटे-से सूत्र में शक्ति है।

इन तीनों जंजीरों से मुक्त होने के लिए एक ही सूत्र है, और वह सूत्र है-जागरण, जागना, अवेयरनेस, ध्यान, अमूर्छा, होश, माइंड- फुलनेस या कोई भी नाम दें। एक ही सूत्र है, छोटा-सा- 'जागो।'

जागो उन सिद्धातों के प्रति, जिनको पकड़े हुए हो। और जागते ही उन सिद्धांतों से छुटकारा शुरू हो जायेगा; क्योंकि सिद्धांत आपको नहीं पकड़े हैं, आप ही उन्हें पक्के हुए हैं। और जैसे ही आप जागेंगे, आपको लगेगा अजीब बात है कि मैं अपने ही हाथों से गुलाम बना हुआ हूं और मेरी गुलामी की जंजीर मेरे अपने ही हाथ है! और एक बार यह दिखाई पड़ जाये, तो फिर छूटने में देर नहीं लगती।

पहला जागरण सिद्धांतों, वादों, संप्रदायों, धर्मों गुरुओं, महात्माओं के प्रति, जिनको हम जोर से पकड़े हुए हैं। कुछ भी नहीं है हाथ में, कोरी राख है शब्दों की, लेकिन जोर से पकड़े हुए हैं।

कभी हाथ खोलकर भी नहीं देखते। डर लगता है कि कहीं देखा तो बहुत मुश्किल हो जायेगी। लेकिन गौर से देखना जरूरी है कि मैं किन-किन चीजों से जकड़ा हुआ हूं; मेरी जंजीरें कहां-कहां हैं? मेरी स्लेवरी, मेरी गुलामी कहां है; मेरी आध्यात्मिक दासता कहां टिकी है?

एक-एक चीज के प्रति जागना जरूरी है। जागने के अतिरिक्त, गुलामी को तोड़ने के लिए और कुछ भी नहीं पड़ता है। और जागते ही गुलामी छूटनी शुरू हो जाती है। क्योंकि, यह गुलामी कोई लोहे की जंजीरों की नहीं है, जिसे तोड़ने के लिये हथोड़े की चोट करनी पड़े। ये गुलामी हमारे सोये हुए होने के कारण है। हमने कभी होश से देखा ही नहीं है कि हमारे भीतर की मनोदशा क्या है। बस, हम चलते रहे अंधेरे में। जाग जायेंगे तो पता कि यह तो हमने अपने ही हाथों में पागलपन का इंतजाम कर रखा है।

और, इसके लिए कोई दूसरा जिम्मेवार नहीं है, हम खुद ही जिम्मेवार हैं। इसे हम तोड़ देसकते हैं, जागरण से। जागरण-सिद्धांतों, शाखों, संप्रदायों के प्रति।

जागरण-हिंदू होने के प्रति, मुसलमान होने के प्रति, हिंदुस्तानी होने के प्रति, चीनी होने के प्रति।

जागरण-सारी सीमाओं के प्रति, सारे बंधनों के प्रति, समस्त मोह के प्रति।

यह जो कंडीशनिंग है भीतर माइंड की, उसके प्रति जले, देखें कि यह क्या है? यह मैं क्यों बंधा हूं? किसने उसे हिंदू बना दिया है? किसने मुझे सिद्धांत से अटका दिया है?

मन में भीड़ घुस जाती है। चीजें बाहर से आती हैं और हम उन्हें पकड़ लेते हैं। उन्हें छोड़ देना है। उन्हें छोड़ते चित्त को एक फ्रीडम, एक व्यक्ति की अवस्था उपलब्ध हो जाती है।

भीड़ के प्रति जागना है कि मैं जो भी कर रहा हूं वह भीड़ को देखकर तो नहीं कर रहा हूं?

आप मंदिर चले जा रहे हैं-सुबह ही उठकर, भागते हुए, राम-राम जपते हुए-सुबह की सर्दी में! सान लिया है और भागते चले जा रहे हैं। सोचते हैं कि मंदिर जा रहा हूं। जरा जागकर देखना-कहीं इसलिए तो सब मंदिर नहीं जा रहे हैं कि लोग आप को देख लें : कि मैं आदमी धार्मिक हूं!

कौन मंदिर जाता है...? भीड़ देख ले कि यह आदमी मंदिर जाता है, इसलिए आप मंदिर जाते हैं। किसको प्रयोजन है दान देने से...? लोग देख लें, कि ये आदमी दानी है, इसलिए आप देते हैं।

अगर एक आदमी भीख मांगता है सडक पर, तो आपको पता होगा कि भिखारी अकेले में किसी से भीख मांगने में झिझकता है। चार-छह आदमी हों, तो जल्दी से हाथ फैलाकर खड़ा हो जाता है, क्योंकि उसे पता है कि पांच आदमियों के सामने यह छठवां आदमी भीख देने से इंकार नहीं कर सकेगा। यह ख्याल रखेगा कि पांच आदमी क्या सोचेंगे? कि इतना बड़ा आदमी है, दस पैसे नहीं छोड़ सकता!

तो भिखमंगा भीड़ में जल्दी से पीछा करता है। और दस आदमी को देखकर आपको दस पैसे देने पड़ते हैं। वह दस पैसे आप भिखारी को नहीं दे रहे हैं, वह दस पैसे से आप इंश्योरंस कर रहे हैं अपनी इज्जत का, दस आदमियों में। उन दस पैसों का आप क्रैडिट बना रहे है, इज्जत बना रहे है, बाजार में।

और आपको खयाल भी नहीं होगा, आप घर लौटकर कहेंगे-बड़ा दान किया, आज एक आदमी को दस पैसे दिये! लेकिन, भीतर पूरे जागकर देखना कि किसको दिये? क्या भिखमंगे को दिये? उसके लिए तो भीतर से गाली निकल रही थी कि यह दुष्ट कहां से आ गया! दिये उनको, जो साथ थे। भीड़ सब तरफ से पकड़े हुए है।

एक गांव में मैंने देखा, एक नया मंदिर बन रहा था; भगवान का मंदिर बन रहा था...। कितने भगवान के मंदिर बनते चले जाते हैं।

.. नया मंदिर बन रहा था। उस गांव में वैसे ही बहुत मंदिर थे...!

आदमियों के रहने के लिये जगह नहीं है और भगवान के लिये मंदिर बनते चले जाते हैं! और भगवान का कोई पता नहीं है कि वे मंदिर में रहने को कब आयेंगे, आयेंगे कि नहीं आयेंगे, इसका कुछ पता नहीं है।

.. नया मंदिर बन रहा था तो मैंने उस मंदिर को बनाने वाले एक कारीगर से पूछा, “बात क्या है? बहुत मंदिर है गांव में, भगवान का कहीं पता नहीं चलता! ये एक और मंदिर किसलिए बना रहे हो?”

बूढ़ा था कारीगर। अस्सी साल की उम्र रही होगी। बामुश्किल मिट्टी खोद रहा था। उसने कहा, ”आपको शायद पता नहीं, मंदिर भगवान के लिए नहीं बनाए जाते हैं। ”

मैंने कहा, “बड़े नास्तिक मालूम होते हो। मंदिर भगवान के लिए नहीं बनाये जाते तो किसके लिए बनाये जाते है। ”

उस बूढ़े ने कहा, “पहले मैं भी यही सोचता था, लेकिन जिंदगी भर मंदिर बनाने के बाद इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि भगवान के लिए इस जमीन पर मंदिर कभी नहीं बनाया गया। ”

मैंने पूछा, “मतलब क्या है तुम्हारा? उस बूढ़े ने मेरा हाथ पकड़ा और कहा कि भीतर आओ...।

... और बहुत कारीगर वहां काम कर रहे थे। लाखों रुपये का काम था। वह कोई साधारण आदमी मंदिर नहीं बनवा रहा था। सबसे पीछे, जहां कारीगर पत्थरों को खोदते थे, उस बूढ़े ने ले जाकर मुझे वहां खड़ा कर दिया, एक पत्थर के सामने, कहा, “इसलिए मंदिर बन रहा है। ”

उस पत्थर पर मंदिर के बनाने वाले का नाम स्वर्ण-अक्षरों में खोदा जा रहा था...!

उस बूढ़े ने कहा, सब मंदिर इस पत्थर के लिए बनते हैं। असली चीज यह पत्थर है, जिस पर नाम लिखा रहता है किसने बनवाया।

मंदिर तो बहाने हैं, पत्थर को लगाने के। वह पत्थर असली चीज है। उसकी वजह से मंदिर भी बनाना पड़ता। मंदिर बहुत महंगा पड़ता है, लेकिन उस पत्थर को लगाना हो तो कोई क्या करेगा, इसलिये बनाना पड़ता है। पत्थर लगाने के लिए बनते हैं, जिस पर खुदा रहता है कि किसने यह मंदिर बनाया।

लेकिन, मंदिर बनाने वाले को शायद यह होश नहीं होता कि यह मंदिर भीड़ के चरणों में बनाया जा रहा है, भगवान के चरणों में नहीं। इसलिए तो मंदिर हिदू का होता है, मुसलमान का होता है, जैन का होता है; मंदिर भगवान का कहां होता है?

भीड़ से सावधान होने का मतलब यह है कि भीतर जागकर देखना अपने चित्त की वृत्तियों को : कि कहीं भीड़ मेरा निर्माण नहीं करती है; चौबीस घण्टे भीड़ तो मुझे मोल्ड नहीं करती है, कहीं भीड़ के सांचे में तो मुझे नहीं जा रहा है?

और ध्यान रहे, भीड़ के सांचे में कभी किसी आत्मा का निर्माण नहीं होता, भीड़ के सांचे में मुर्दे आदमी ढाले हैं; और पत्थर हो जाते हैं।

जिन्हें आत्मा को पाना होता है, वे भीड़ के सांचे को छोड़कर ऊपर उठने की कोशिश करते हैं। लेकिन, कुछ करने की जरूरत नहीं है, सिर्फ जागने की जरूरत है। चित्त की वृतियों को जागकर देखते रहें कि मुझे पकड नहीं रही हैं?

और बड़े मजे की बात है, अगर कोई जागकर देखता है तो भीड़ की पकड़ उस पर बंद हो जाती है। बहुत हल्कापन, बहुत वेटलेसनेस मालूम होती है, क्योंकि वजन भीड़ का है हमारे सिरों पर।

हम दिखायी पड़ रहे हैं कि अकेले खड़े हैं, हमारे सिर पर कुछ भी नहीं है। लेकिन जरा गौर से देखना किसी सिर पर गांधी बैठे हैं, किसी के सिर पर मुहम्मद बैठे हैं, किसी के सिर पर महावीर बैठे हैं और अकेले नहीं बैठे अपने चेले चांटियों के साथ बैठे हुए हैं! और एक-दों दिन से नहीं बैठे हुए हैं, हजारों, लाखों साल से बैठे हुए है।

सिर भारी हो गया है, कतार लग गयी है, कतार आकाश को छू रही है; इतने लोग ऊपर बैठे हुए हैं। इन सबको उतार देने की जरूरत है।

अगर अपने को पाना है, तो अपने सिर से सबको उतार देने की जरूरत है, कोई हक नहीं है किसी को कि किसी आत्मा पर पत्थर होकर बैठ जाये।

लेकिन वे बेचारे नहीं बैठे है, आप ही उन्हें बिठाये हुए हैं। उनका कोई कसूर नहीं है। वह तो घबराये हुए हैं यह आदमी कब तक ढोता रहेगा! हमारे प्राण निकले जा रहे है, कितने दिन से बिठाए हुए है यह आदमी, हमें छोड़ता ही नहीं!

आप ही उन्हें बिठाये हुए है। जागते ही टूट जायेगा यह मोह। फिर सिर हल्का हो जायेगा; मन हलका हो जाएगा। उड़ने की तैयारी शुरू हो जायेगी। पंख खुल जायेंगे।

और, तीसरी बात : जागना है, दमन के प्रति।

लोग सोचते हैं-दमन छोड़ देंगे तो भोग शुरू हो जायेगा। लोग सोचते हैं- अगर क्रोध नहीं दबाया तो क्रोध हो जायेगा, और झंझट हो जायेगी।

अगर मलिक की गर्दन पकड लेंगे, तो और दिक्कत की बात हो जायेगी। पत्नी की गर्दन पकड़ना ज्यादा कन्वीनियएंट, ज्यादा सुविधापूर्ण है। यह झंझट की बात हो जायेगी। इसके आर्थिक दुषपरिणाम हो जायेंगे- अगर मालिक की गर्दन पकड़ेंगे। और मालिक की गर्दन पकड़ने के लिये पत्नी भी कहेगी, 'उसकी गर्दन मत पकड़ना; मेरी ही पकड़ना, क्योंकि मालिक की गर्दन पकड़ी तो बच्चों का क्या होगा? पत्नी का क्या होगा? बहुत दिक्कत में पड़ जायेंगे। तुम तो मेरी ही गर्दन पकड़ लेना। 'पत्नी भी यही कहेगी। 'यही ज्यादा सुविधापूर्ण, ज्यादा समझदारी का काम है कि मालिक को छोड़कर, आकर मुझ पर टूट पड़ना। '

नहीं, मैं आपसे कहना चाहता हूं-क्रोध को दबाने की जरूरत नहीं है, क्रोध को भी देखने, और जानने की जरूरत है। जब किसी के प्रति मन में क्रोध पकड़े, तो जागकर देखना कि क्रोध पकड़ रहा है; होश से भर जाना कि क्रोध आ रहा है; देखना अपने भीतर कि क्रोध का धुआ उठ रहा है। क्रोध क्या-क्या कर रहा है भीतर-देखना। और एक अदभुत अनुभव होगा जीवन में पहली बार : कि देखते ही क्रोध विलीन हो जाता है; न दबाना पड़ता है, न करना पड़ता है।

आज तक दुनिया में कोई आदमी जागकर क्रोध नहीं कर पाया है।

बुद्ध एक गांव से गुजरते थे। कुछ लोगों ने भीड़ लगा ली और बहुत गालियां दीं बुद्ध को..।

अच्छे लोगों को हमने सिवाय गालियां देने के और कुछ भी नहीं दिया। जब वे मर जाते हैं तो पूजा वगैरह भी करते हैं, लेकिन वह मरने के बाद की बात है। जिंदा बुद्ध को तो गाली देनी ही पड़ेगी। लेकिन, ऐसे लोग थोड़े डिसटर्बिंग होते हैं; थोड़ी गड़बड़ कर देते हैं; नींद तोड़ देते है। इसलिये गुस्सा आ जाता है। तो आदमी गाली देने लगता है। कसूर भी क्या है।

.. गांव के लोगों ने घेरकर बुद्ध को बहुत गालियां दीं। बुद्ध ने उनसे कहा, "मित्रों, तुम्हारी बात अगर पूरी हो गयी हो तो अब मैं जाऊं, मुझे दूसरे गांव जल्दी पहुंचना है। "

वे लोग कहने लगे, "बात? हम गालियां दे रहे हैं, सीधी-सीधी। समझ में नहीं आती आपको? क्या बुद्धि बिलकुल खो दी है? हम सीधी-सीधी गालियां दे रहे हैं, बात नहीं कर रहे हैं। "

बुद्ध ने कहा, "तुम गालियां दे रहे हो, वह मैं समझ गया। लेकिन मैंने तो गालियां लेना बंद कर दिया है; तुम्हारे देने से क्या होगा, जब तक मैं ले न सकूं? और मैं ले नहीं सकता। क्योंकि जब से जाग गया हूं तब रो गाली लेना असंभव हो गया है। जागकर कोई गलत चीज कैसे ले सकता है?

आप बेहोशी में चलते हैं, इसलिए पैर में कांटा गड़ जाता है; अगर देखकर चलते हों, तो कैसे काटा गप सकता है! गलती से आदमी दीवाल से टकरा सकता है; जब आंखें खुली हों तो दरवाजे से निकलता है।

"बुद्ध ने कहा, "मैं आंखें खोलकर, जागकर, जब से जीने लगा हूं तब से गालियां लेने का मन ही नहीं करता। अब मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया हूं। कोई दस साल पहले तुम्हें आना चाहिए था। तुम जरा देर करके आये दो। दस साल पहले आते, तो मजा आ जाता। तुमको मजा आ जाता, लेकिन हमको तो बहुत तकलीफ होती। हमन।। तो मजा आ रहा है। लेकिन तब तुम्हें

बहुत मजा आ जाता; क्योंकि मै भी दुगने वजन की गाली तुम्हें देता। क्योंकि अब बडी मुश्किल है। होश से भरा हुआ आदमी गाली नहीं दे सकता है।.. तो मैं जाऊं?"

वे लोग बड़े हैरान हो गये। बुद्ध ने कहा, "जाते वक्त एक बात और तुमसे कह दूं पिछले गांव में कुछ लोग मिठाईया लेकर आ रहे थे। मैंने कहा कि मेरा पेट भरा है। वह भी जोगा हुआ था, इसलिए कह सका; क्योंकि हुआ आदमी मिठाइयां देखकर भूल जाता है कि पेट भरा है। बेहोश आदमी भूख देखकर नहीं खाता; बेहोश आदमी चीजें देखकर खाता है। होश से भरा आदमी पेट की भूख देखकर खाता है।

"मेरा पेट भरा हुआ था। वह भी होश की वजह से। दस साल पहले अगर वे भी आये होते, तो उनकी थालियां उन्हें वापस न ले जानी पड़ती। मैं उन्हें जरूर खा लेता। लेकिन, जब से होश आ गया है, जागकर देखता हूं। इसलिए गलती करनी बहुत मुश्किल हो गई है। वे बेचारे थालियां वापस ले गये। तो मैं तुमसे पूछता उन्होंने उन मिठाइयों का क्या किया होगा "?

उस गाली देने वाली भीड़ में से एक आदमी ने कहा, "क्या किया होगा? घर में जाकर मिठाइयां बांट दी बुद्ध ने कहा, "यही मुझे चिंता हो रही है कि तुम क्या करोगे? तुम गालियों की थालियां लेकर आये हो-और लेता नहीं; अब तुम उन गालियों का क्या करोगे; किसको बाटोगे?

बुद्ध कहने लगे, "मुझे बड़ी दया: आती है तुम पर। अब तुम करोगे क्या? इन गालियों का क्या करोगे? मैं लेता नहीं; मैं ले सकता नहीं। चाहूं भी तो नहीं ले सकता। मुश्किल में पड़ गया है जाग जो गया हूं।"

कोई आदमी जाग कर क्रोध नहीं कर सकता।

दमन निद्रा में चलता है और जागृत आदमी को दमन की जरूरत नहीं रहती।

एक आदमी मेरे पास आता था, कुछ समय हुआ। उसने कहा, मुझे बहुत क्रोध आता है। आप कहते हैं, जागो,। मुझसे नहीं होता है यह जागना। जब वह आता है, तब आ ही जाता है।

तो मैंने एक कागज पर उसको लिखकर बड़े-बड़े अक्षरों में दे दिया, "अब मुझे क्रोध आ रहा है" और कहा, कि इसे खीसे में रख लो। और जब भी क्रोध आये तो निकाल कर एक दफा पढ़ कर इसी खीसे में वापिस रख लेना जो तुम्हें समझ में आये करना।

वह आदमी पंद्रह दिन बाद आया और कहने लगा, बड़ी हैरानी की बात है। इस कागज में न-जाने कैसा मंत्र ! जब भी क्रोध आता है, हाथ ले जाता हूं खीसे की तरफ कि क्रोध की जान निकल जाती है! क्रोध आ रहा जैसे ही यह खयाल आया कि हाथ भीतर खीसे की तरफ बढ़ने लगते हैं और क्रोध वापिस लौट जाता है! बस, थोड़ी-सी समझ की जरूरत है जीवन के प्रति। जीवन छोटे-छोटे राजों पर निर्भर है।

और, बड़े से बड़ा राज यह है कि सोया हुआ आदमी भटकता चला जाता है चक्कर में, और जागा हुआ आदमी चक्कर के बाहर हो जाता है।

जागने की कोशिश ही धर्म की प्रक्रिया है। जागने का मार्ग ही योग है।

जागने की विधि का नाम ध्यान है।

जागना ही एकमात्र प्रार्थना है।

जागना ही एकमात्र उपासना है।

जो जागते हैं, वे प्रभु के मन्दिर को उपलब्ध हो जाते हैं।

जागते ही वृत्तियां, व्यर्थताएं कचरा, कूड़ा-करकट चित्त से गिरना शुरू हो जाता है। धीरे- धीरे चित्त निर्मल होता चला जाता है जागे हुए आदमी का। और जब चित्त निर्मल हो जाता है, तो चित्त दर्पण बन जाता है।

जैसे, झील निर्मल हो, तो उसमें चांद-तारों की प्रतिछवि बनती है, और आकाश में भी चांद-तारे उतने सुंदर नहीं मालूम पड़ते, जितने की निर्मल झील की छाती पर चमक कर मालूम पड़ते हैं-वैसे ही, जब चित्त निर्मल हो जाता है जागे हुए आदमी का, तो चित्त की निर्मलता में परमात्मा की छवि दिखाई पड़नी शुरू हो जाती है। फिर वह निर्मल-चित्त आदमी कहीं भी जाये-फूल में भी उसे परमात्मा मिलता है, पत्थर में भी, मनुष्यों में भी; पक्षियों में भी; पदार्थों में भी। फिर उसके लिए पूरा जीवन ही परमात्मा हो जाता है।

जीवन की क्रांति का अर्थ है, 'जागरण की क्रांति'।

इन तीन दिनों में इस जागरण के बिन्दु को समझाने के लिए मैंने ये सारी बातें कहीं। लेकिन, इससे जागरण समझ में नहीं आ सकता है। वह तो आप जागेंगे तो ही समझ में आ सकता है।

और, कोई दूसरा आपको नहीं जगा सकता, आप ही-बस, सिर्फ आप ही अपने को जगा सकते हैं।

तो देखें अपने भीतर और एक-एक चीज के प्रति जागना शुरू करें। जैसे-जैसे जागरण बढ़ेगा, वैसे-वैसे जीवन बढ़ेगा-मृत्यु कम होगी। जिस दिन जागरण पूर्ण होगा, उस दिन मृत्यु विलीन हो जायेगी; जैसे थी ही नहीं। जैसे कोई अंधेरे कमरे में एक आदमी दिया लेकर पहुंचता है कि अंधेरा खो जाता है। जैसे था ही नहीं। ऐसे ही जो आदमी जागरण का दिया लेकर भीतर जाता है, उसकी मृत्यु खो जाती है, दुख खो जाता है, अशांति खो जाती है और उसे अमृत उपलब्ध होता है। और, वह-जिसका कोई अन्त नहीं; वह-जिसका कोई प्रारम्भ नहीं; वह-जों असीम है; वह-जों प्रभु है, उसके मन्दिर में प्रवेश हो जाता है।

अंत में यही प्रार्थना करता हूं कि उस मंदिर में सबका प्रवेश हो जाये। लेकिन, किसी की कृपा से नहीं होगा यह; किसी के प्रसाद से, आर्शीवाद से नहीं होगा। अपने ही श्रम, अपने ही संयम, अपनी ही साधना से होगा।

जो जागते हैं, वे पा लेते हैं। जो सोये रह जाते हैं, वे खो देते हैं।

मेरी बातों को इन चार दिनों में प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुग्रहीत हूं और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं।

मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

‘जीवन क्रांति के सूत्र’
बड़ौदा

15 फरवरी 1969

संभोग से समाधि की ओर

समाप्त